उत्तरशती की हिन्दी और तेलुगु कहानी : प्रवृत्तिमूलक विश्लेषण

(1951 – 1990)

हैदराबाद विश्वविद्यालय, हैदराबाद की पी एच० डी० उपाधि के लिए प्रस्तुत शोध – प्रबन्ध

प्रस्तुतकर्ता :

पाल्लेपु सुब्बाराव

एम. ए. (हिन्दी), एम. ए (तेलुगु), एम. फिल

निर्देशक एवं अध्यक्ष :

आचार्य वै. वेंकटरमणा राव,

एम. ए. (हिन्दी), एम. ए. (तेलुगु) पी-एच. डी.,

हिन्दी विभाग, हैदराबाद विश्वविद्यालय, हैदराबाद–500046

1996

Palepu Subba Rao
Research Scholar
Department of Hindi
University of Hyderabad
Hyderabad 500 046 (A.P.)

Date : May,1996

This is to certify that I, Palepu Subba Rao, have carried out the research embodied in the present thesis for the full period prescribed under the Ph.D. ordinances of the University.

I declare that no part of this thesis was earlier submitted for the award of any Research Degree or Diploma to any University.

Date : 28/5/96

P. Subba Rao
Signature 28/5/96

(RESEARCH SUPERVISOR)
31/5/96

(HEAD OF THE DEPARTMENT) 31/5/96
Prof. & Head, Dept. of Hindi
School of Humanities
University of Hyderabad
HYDERABAD-500 134

5/6/96
(DEAN OF SCHOOL)
DEAN
SCHOOL OF HUMANITIES
University of Hyderabad
Hyderabad-500 134

विषयानुक्रमणिका

प्राक्कथन

प्रथम अध्याय

P. Nos.

1. उत्तरशती की हिन्दी और तेलुगु कहानी : विकास के सूत्र 1 – 62

I. साहित्य और कहानी 1 – 2

II. कहानी का उद्भव और विकास 3 – 6

III. पाश्चात्य देशों में कहानी 6 – 9

IV. हिन्दी कहानी का विकास 9 – 30

(अ) प्रमुख कहानीकारों का संक्षिप्त परिचय :

प्रेमचन्द – जयशंकर प्रसाद

प्रेमचन्द – प्रसादोत्तर विकास

जैनेन्द्र, अज्ञेय, इलाचन्द्र जोशी, यशपाल,

उपेन्द्रनाथ अश्क, रांगेयराघव

V. तेलुगु कहानी का विकास 30 – 58

(अ) सुधारवादी परंपरा

(आ) राष्ट्रीय आन्दोलन

(इ) हेतुवाद

(ई) तेलंगाना आन्दोलन की कहानियाँ

(उ) द्वितीय विश्व युद्ध संबंधी कहानियाँ

(ऊ) तेलुगु के प्रसिद्ध कहानीकारों का संक्षिप्त परिचय :

चिन्तादीक्षितुलु, श्री वेलूरि शिवराम शास्त्री, श्रीपाद सुब्रह्मण्य शास्त्री, श्री मोक्कपाटि नरसिंहशास्त्री, गुडिपाटि वेंकटचलम, विश्वनाथ सत्यनारायण, कल्लूरि कुमार, कोडवटिगंटि कुटुंबराव, गोपीचन्द बुच्चिबाबु

VI. आधुनिक हिन्दी और तेलुगु कहानियाँ : साम्य और वैषम्य : 58 – 62

द्वितीय अध्याय

2• कहानी की नयी दिशायें : नयी कहानी (1951-60) 66-157

1. पूर्व भूमिका 66-70
2. नयी कहानी : नामकरण 70-75
3. कहानी परंपरा और नयी कहानी 75-79
4. नयी कहानी में भारतीय जीवन का चित्रण : शहर और गाँव 79-84
5. अस्तित्ववाद का प्रभाव 85-88
6. प्रवृत्तियाँ (हिन्दी - तेलुगु) 88-102
7. उपलब्धियाँ (हिन्दी - तेलुगु) 103-104
8. हिन्दी और तेलुगु की नयी कहानियाँ 104-105
9. प्रवृत्तियाँ : तुलनात्मक अनुशीलन 106-156

(अ) परिन्दे (निर्मल वर्मा) - मच्चलांकम (हितश्री) - तुलना ।

(आ) जहाँ लक्ष्मी कैद है (राजेन्द्र यादव) - एदुरुचूसुन्न मुहूर्तम (पालगुम्मि पद्मराजु) -- तुलना ।

(इ) चीफ की दावत (भीष्म साहनी) - नया जीवन, अन्तरात्मा (कोडवटिगंटि कुटुंबराव) भोगम मनिषि (मुनिपल्ले राजु) -- तुलना

(ई) पिता (ज्ञानरंजन) वापसी (उषा प्रियंवदा) - पातपगलु कोत्तपगलु (गोपीचन्द) -- तुलना ।

(उ) तीसरी कसम उर्फ मारे गये गुलफाम (रेणु) -- गालीवाना (पालगुम्मि पद्मराजु) -- तुलना ।

(ऊ) जिन्दगी और जोंक (अमरकान्त) -- रम्पु (चागंटि सोमयाजुलु) -- तुलना

{ऋ} मलबे का मालिक { मोहन राकेश } -- नीति {पुराणम
सुब्रह्मण्य शर्मा } -- डाक्टर्स डैलमा { रावूरिभर द्वाजा }
-- तुलना ।

{ए} दिल्ली में एक और मौत { कमलेश्वर }
यही सच है { मन्नू भण्डारी }
बिल्लमोलत्राडु { करुणा कुमार }
नन्नुगुरिंच कथ्रायवु { बुच्चि बाबु } -- एक अनुशीलन ।

IX. निष्कर्ष 157

तृतीय अध्याय

3. कहानी के नये कथ्य और नये प्रयोग { 1961-70 } 161 – 252

1. पूर्व भूमिका { हिन्दी और तेलुगु } 161 – 162
2. (अ) अकहानी : नामकरण एवं परिभाषायें 163 – 167
(आ) कहानी परंपरा और अकहानी की प्रवृत्तियाँ 167 – 177
(इ) सचेतन कहानी : उद्भव तथा नामकरण 178 – 181
(ई) सचेतन कहानी की प्रवृत्तियाँ 181 - 183
(उ) सहज कहानी 184 - 187

3. (अ) दिगंबर साहित्य 188 - 191
(आ) तत्व परिशीलन 192 – 194
(इ) अतिनव्य साहित्य 195
(ई) अतियथार्थवादी साहित्य 196
(उ) मानवतावाद 197

४. हिन्दी और तेलुगु कहानियों की प्रवृत्तियाँ : एक तुलना १९९-२४८

१. (क) गिरिराज किशोर " पेपरवेट " - कालोपट्नम
रामाराव " यज्ञम " तुलना ।

(ख) काशीनाथ सिंह " सुधीर घोषाल " -- नग्नमुनि
'पंट तेगुल्लु' -- तुलना ।

(ग) सुवास कुमार " स्थान पूर्ति " -- नग्नमुनि " सिमेंटु -
संतति " राविशास्त्री " न्यायम " -- तुलना

(घ) कृष्णलदेव वैद " त्रिकोण " -- तिलक " परिवर्तना "
-- तुलना ।

(ङ) दूधनाथ सिंह " रीछ " -- प्रभाकर मंदारा "
सारे जहासे अच्छा " -- तुलना ।

(च) गंगा प्रसाद विमल " शीर्षकहीन " -- शारदा
अशोकवर्धन " प्रतिष्ठा " -- तुलना

(छ) महेन्द्र भल्ला " एक पति के नोट्स " -- रवीन्द्र कालिया -
नौ साल छोटी पत्नी " -- वाकाटि पांडुरंगाराव "
तप्पुकु काल्लु - रावालि " -- तुलना ।

(ज) महीप सिंह " कील " माहेश्वर " पेशाब " - नग्नमुनि "
विलोम कथलु " ब लिवाड कांताराव " मीनीव - पशुवु "
मुल्लपूडि वेंकटरमणा " छाया में "

5. साम्य और वैषम्य 249-250

6. निष्कर्ष 251-252

चतुर्थ अध्याय

4. समांतर कहानी (1971 - 80) 256 - 328

1. पूर्व भूमिका 256 - 257

2. कहानी परंपरा : समांतर कहानी 257 - 261

3. स्वरूप और प्रवृत्तियाँ 261 - 268

4. उपलब्धियाँ 268 - 269

5. कहानी परंपरा और जनवादी कहानी 269 - 272

6. जनवादी कहानी स्वरूप और प्रवृत्तियाँ 272 - 279

7. तेलुगु कहानी की प्रवृत्तियाँ 279 - 284

(क) आन्ध्रा प्रान्त, (ख) रायलसीमा, (ग) तेलंगाना

8. विरसम

9. हिन्दी और तेलुगु की समांतर कहानी की प्रवृत्तियाँ : एक तुलना 285 - 327

(अ) इब्राहीम शरीफ " मक्कार " -- राविशास्त्री -- " लोकुपल्ली " -- तुलना ।

(आ) कामतानाथ " छुट्टियाँ " -- केतुविश्वनाथ रेड्डी " सपुभूति " -- तुलना ।

(इ) मधुकर सिंह " पूरा सन्नाटा " - सदानंद शारदा " तोकचुक्का " -- तुलना ।

(ई) आशीस सिन्हा " आदमखोर " -- अप्पलनायुडु
" पाडु-पोरु " -- तुलना ।

(उ) सतीशजमाली " प्रथम पुरूष " -- वि.राजाराम मोहन राव
" आदि होता जा रहा हूँ " -- तुलना ।

(ऊ) जितेन्द्र भाटिया " शब्दातनामा " राविशास्त्री " पिपीलिकम "
रमेश उपाध्याय " देवी सिंह कौन " -- तुलना ।

(ऋ) सुदीप -- अंतहीन -- पेद्दिद भोट्ल सुब्बरामय्या
" अलजीड " -- तुलना ।

(ए) संजीव " अपराध " -- अल्लमराजय्या " भूमि " ‖ जमीन ‖
तुलना ।

(ऐ) कमलेश्वर " माँस का दरिया " -- भीमिडपाटि रामगोपालम
" मनोधर्मम् " -- तुलना ।

10. निष्कर्ष 328

पंचम अध्याय

5. नये संदर्भ और नयी दिशायें: कहानी का नया चरण ‖ 1971-90 ‖ 332-399

1. सक्रिय कहानी 332-338

2. सक्रिय कहानी की प्रवृत्तियाँ 338-340

3. दलित कहानी ‖ तेलुगु ‖ साहित्य 340-344

4. स्त्रीवाद कहानी साहित्य 345-351

5. हिन्दी और तेलुगु : प्रवृत्तियों की तुलना 351-390
‖ नौवें दशक की भूमिका में ‖

(अ) संजय " कामरेड का कोट " -- भायमंगय्या " दुन्ना "
‖ भैंसा ‖ — तुलना ।

(आ) उदय प्रकाश " टेपचू " -- भूचण्म " तोर्पू " तुलना ।

(इ) पंकजबिष्ट " बच्चे गवाह नहीं हो सकते - केतु विश्वनाथ रेड्डी
" मोदे मोदे समस्त देशम " कोलकलूरि इनाख " आकलि " ‖भूख‖
-- तुलना ।

(ई) शैवाल " दामुलबन्ध " -- कोलकलूरि इनाक " सूर्यडुतलेत्ताडु "
-- तुलना ।

(उ) अब्दुरबजाहत " दिल्ली पहुँचना है " -- भर्गवी राव "निश्चयम"
-- तुलना ।

(ऊ) रमाकान्त श्रीवास्तव " खानदान में पहली बार " -- पापि -
नेनिशिष शंकर " सुशीला " - तुलना ।

(ऋ) राजेन्द्र अवस्थी " उसका हिस्सा " -- बी॰यन॰रामुलु " पालु "
-- तुलना ।

(ए) सुधाशुक्ल " क्रोधवध " -- पी॰सत्यवति " मादुसूर्यकांति " --
-- तुलना ।

(ऐ) इसराइल " रोजनामचा " दुग्गेरि रघोत्तम रेड्डी " नोल्ल तगवु "
तगवु

(ओ) बलराम " कलम हुए हाथ " पैदिद्दबोट्ल सुब्बरामय्या " नोल्लु "
विनायक कराडे " कथा नायक " महेन्द्रा " बोसनीब्रुझो दग्गरा "
--- तुलना ।

6. निष्कर्ष: 399
उपसंहार 401-405

परिशिष्ट 407-446
तेलुगु कहानीकारों का संक्षिप्त परिचय 407-420
सहायक ग्रंथ सूची । 421-446

प्राक्कथन

प्राक्कथन

उत्तरशती में विकसित प्रभावशाली साहित्यिक विधाओं में उपन्यास और कहानी का सर्वोच्च स्थान है । अपनी लघुता और प्रभावशालीता के कारण जनमानस को कहानी अधिक आकर्षित कर सकी है ।वह समय की गतिविधियों, समाज में उभरे आन्दोलनों, वैचारिक संघर्षों, पारिवारिक एवं वैयक्तिक समस्याओं आदि को लेकर हर दशक में अपने बढ़ते हुए चरणों को छाप देकर आगे बढ़ी है । इसीलिए प्रस्तुत विषय शोध के लिए मुझे आकर्षित कर सका है । समय की सीमा, सामग्री का विस्तार दोनों को दृष्टि में रखते हुए देखा जाए तो अध्ययन का क्षेत्र अतिविस्तार से ग्रसित होता है लेकिन प्रवृत्तिपरक विश्लेषण एवं सामाजिक परिवर्तनों की शीघ्रगति को जोडकर देखा जाए तो विकास के चरणों का यह अध्ययन उपयुक्त ही भासित होगा । कहानी के प्रति मेरा आकर्षण एवं चार दशकों का विशिष्ट विकास, इन दोनों ने मुझे प्रस्तुत विषय को शोध के लिए स्वीकारने की प्रेरणा दी है । इस संदर्भ में मेरा एम॰फिल॰ उपाधि से संबंधित शोध विषय " ज्ञानरंजन की कहानियों में पारिवारिक जीवन का स्वरुप भी मेरे लिए प्रेरणाप्रदायक और दिशानिर्देशक रहा है । जब मैंने चार दशकों के कहानीसाहित्य के अनुशीलन करने का प्रस्ताव हैदराबाद विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के सामने रखा तो विभाग ने प्रोत्साहित किया और शोध का विषय बना " उत्तरशती की हिन्दी और तेलुगु कहानी: प्रवृत्तिमूलक विश्लेषण " इस विषयपरक अध्ययन को पाँच अध्यायों में विभाजित कर प्रस्तुत किया गया है । अध्ययन का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है ।

कहानी ‡ प्रमुखत: आधुनिक कहानी ‡ के माध्यम से समाज में प्रचलित अंधविश्वास, व्यवस्थाएँ, स्त्रियों का स्थान, आचार-व्यवहारों की स्थिति आदि की एक भूमिका मिलती है । आधुनिक कहानी साहित्य के आरंभ में

सुधारवादी प्रवृत्ति ⁅ हिन्दी और तेलुगु में ⁆ दिखायी देती है । जब से भारत-वासी, अंग्रेजों के शोषण-तंत्र में आ जाते हैं तब से स्वतंत्रता पाने के लक्ष्य की ओर उसकी प्रवृत्ति मोड़ लेती है । स्वतंत्रता से पहले ही हिन्दी क्षेत्र में प्रगतिशील लेखक-संघ की स्थापना ⁅1936⁆ और तेलुगु क्षेत्र में अभ्युदय लेखक-संघ की स्थापना ⁅1944⁆ हुई थी । दोनों में मार्क्सवादी चेतना ही सक्रिय थी । दोनों का मूल लक्ष्य शोषण का विरोध करना था । " आन्ध्र " में, खास कर तेलंगाना में, शोषण के विरुद्ध आन्दोलन भी उठे, निजाम के खिलाफ, उनके शोषणतंत्र के विरोध में ।

इसी परिदृश्य को प्रस्तुत शोध प्रबन्ध का प्रथम अध्याय प्रस्तुत करता है । सुधारवादी दृष्टि, राष्ट्रीयता की भावना एवं मार्क्सवादी प्रवृत्ति पूर्ववर्ती की कहानियों की प्रवृत्तियों को उभार देती मिलती है । इनका एक तुलनात्मक विवेचन यहाँ अभिप्रेत रहा है । इस अध्याय में हिन्दी और तेलुगु कहानी साहित्यों की समकालीन परिस्थितियों की भूमिका में उत्पन्न प्रवृत्तियों को स्पष्ट किया गया । साथ-साथ हिन्दी में प्रेमचन्द से मार्क्सवादी परंपरा और प्रसाद से मनोवैज्ञानिक, व्यक्तिवादी परंपराओं का विश्लेषण करते हुए, समकालीन हिन्दी और तेलुगु कहानीकारों का भी संक्षिप्त परिचय दिया गया है ।

द्वितीय अध्याय में हिन्दी और तेलुगु की नयी कहानी की प्रवृत्तियों का विश्लेषण है । सन् 1951-60 के बीच का समय शहर और गाँव के पार्थक्य, संघर्ष, समस्याओं एवं अन्य स्थितियों को रेखांकित करता है । शहर की समस्याओं को और बदली हुई परिस्थितियों को एवं गाँव की परिस्थितियाँ और समस्याओं को नयी कहानी में चित्रित किया गया है । " नयी कहानी " के सूत्रपात का श्रेय राजेन्द्रयादव, कमलेश्वर और मोहनराकेश को दिया गया है । इनके अलावा और भी अनेक नये कहानीकार हैं । तेलुगु में कोडवटिगंटि

कुटुंबराव को नयी कहानी का सूत्रधार माना गया है । इनके साथ चागंटि सोम-याजुलु, पालगुम्मि पद्मराजु आदि आते हैं । हिन्दी और तेलुगु कहानीकारों का सामान्य परिचय देते हुए उनकी प्रसिद्ध कहानियों की भी चर्चा द्वितीय अध्याय का लक्ष्य रहा है ।

नयी कहानी से पहले की कहानियों में कहानीकार अपने सामने कोई विचार (चाहे वह मार्क्सवादी हो या फ्रायडवादी), दर्शन, सामाजिक समस्या या बौद्धिक मान्यता रखकर, उनके अनुकूल कथा-विधान की सृष्टि करता था । लेकिन नयी कहानी का लेखक, अपने अनुभव को ही कहानी के रूप में बदल देता है । कहानीकार " भोगा हुआ यथार्थ " को ही पाठक को परिचित कराता है । नये कहानीकार, व्यक्ति के परिवेशीय जीवन की यथार्थता पर बल देता है । इसी-लिए नयी कहानी के अन्तर्गत " परिवेश से प्रतिबद्धता " अनुभूति की प्रामाणिकता " और " भोगे हुए यथार्थ " का चित्रण जैसी प्रवृत्तियाँ दिखायी पड़ती हैं । नये कहानीकारों पर अस्तित्ववाद का प्रभाव भी है ।

हिन्दी की नयी कहानी में व्यक्तिवादी तत्व अधिक होने के कारण, उसका व्यापक फलक धीरे-धीरे स्त्री-पुरुष संबंधों तक ही सीमित रह जाता है । वह भी वैयक्तिक जीवन के संदर्भ में ही है । इतना ही नहीं कुछ नये कहानीकारों ने, अपने आप को प्रतिष्ठित करने के लिए पाश्चात्य लेखकों का सहारा भी लिया है । इसीका परिणाम " अकहानी " का आगमन है । लेकिन तेलुगु में यह परिणाम अल्पमात्रा में ही दिखायी देता है । वह एक बहती नदी के समान है ।

इसके सूत्रदार तेलुगु के दिगंबर कवि हैं (नग्नमुनि, चेरबंडराजु निखिलेश्वर, महास्वप्ना, ज्वालामुखि, भैरवय्या) इनको कहानियों में अकहानी के कुछ तत्व मिलते है । इन सबका विवेचन तृतीय अध्याय में केन्द्रित है ।

तृतीय अध्याय में कहानी के क्षेत्र में " नये कथ्य एवं नये प्रयोगों का विश्लेषण " है । चाहे कहानी आन्दोलनों के नाम भिन्न हो, फिर भी प्रवृत्तियों का अनु - शीलन ही अध्ययन का लक्ष्य रहा है । अकहानी मात्र शारीरिक यौनसंबंधों का ही खुला चित्रण करती है तो दिगंबर कवियों की कहानियाँ मानव के शारीरिक अंगों को अलग-अलग करके विदेशियों को बेचने की स्थिति को अंकित करती है । तेलुगु में " यज्ञम " (कालीपट्नम रामाराव), " आरु सारा कथलु (राचकोंड विश्वनाथ शास्त्री) जैसी कहानियों का आविर्भाव हुआ जो आन्ध्र प्रांत में उठने- वाले आन्दोलनों के लिए नींव बन गयी । हिन्दी की सचेतन, सहज-कहानी साहित्य में ठीक तरह से जम नहीं सकी । तृतीय अध्याय में हिन्दी में अकहानी, सचेतन कहानी, सहजकहानी आदि प्रवृत्तियाँ और तेलुगु में दिगंबर (कवियों की) कहानी की प्रवृत्ति के साथ-साथ तेलुगु प्रांतों में उनके पश्चात उभरे आन्दोलनों की नींव डालनेवाली बहुचर्चित कहानियों का परिचय भी अभिप्रेत रहा है ।

चतुर्थ अध्याय में कमलेश्वर से स्थापित " समान्तर " कहानी के बारे में और उसके विरुद्ध उठी जनवादी कहानी के बारे में विश्लेषण किया गया है । विवेच्यदशक में " समांतर और जनवाद " अति प्रचलित होने के कारण प्रवृत्तियों के रूप में लिये गये हैं । समांतर कहानी का मूल लक्ष्य आमआदमी का चित्रण है तो जनवादी कहानी का मूल लक्ष्य वर्गरहित समाज की स्थापना और आर्थिक समानता लाना है । समांतर कहानी ने आम आदमी के संघर्ष को व्यापक

सामाजिक संदर्भों में चित्रित किया । उसके लिए शोषित सामान्य संश्लिष्ट इकाई है, जो न जाने कितने मोर्चों पर आज भी लड़ रहा है और वह (समांतर कहानी) सामान्यजन को इस लड़ाई में भागीदार है तथा नयी दिशा प्रदान करनेवाली है ।

आठवें दशक में, तेलुगु में विप्लव रचयितल संघम् (विप्लव लेखक संघ) की स्थापना एक महत्वपूर्ण घटना है । इन लेखकों का विश्वास है कि "क्रांति से ही सारे परिवर्तन संभव है ।" बिना क्रांति से कुछ भी नही पा सकते । समांतर और जनवादी कहानियों के तत्व तेलुगु कहानी में भी मिलते हैं । तेलुगु प्रांत में जो भी आन्दोलन उठे, उनसे जुडी हुई कहानियाँ आयीं । पूरी कहानियों में क्षेत्रीय समस्याओं का स्पष्ट चित्रण है । तेलुगु कहानीकारों के निवास क्षेत्र का प्रभाव भाषा-शैली पर भी दिखायी देता है ।

पंचम अध्याय में "नये संदर्भ और नयी आशायें कहानी का नया चरण" का विश्लेषण किया गया है । समान्तर और जनवादी आन्दोलनों के विरुद्ध हिन्दी में उत्पन्न आन्दोलन है "सक्रिय कहानी आन्दोलन" । यह आन्दोलन राकेशवत्स से चलाया गया है । एक तरह से यह समान्तर और जनवादी आन्दोलनों का ही मिश्रण है । इस आन्दोलन को व्यापकता देने के लिए "मंच" पत्रिका की भूमिका रही है । सक्रिय कहानी, समाज से सभी प्रकार के शोषण और उत्पीडनों को समाप्त करना चाहती है ।

तेलुगु में नौवे दशक में दिखायी देनेवाली मूल प्रवृत्तियाँ है "स्त्रीवाद" साहित्य और दलित "साहित्य । इन दोनों के केन्द्र में तो बहुत पहले से ही कहानियाँ लिखी जा रही हैं । लेकिन नौवे दशक में इन दोनों की प्रवृत्तियाँ तीव्र रूप में चलीं । ये सब कहानी के विषय बने । दलितों पर करुणा कुमार से

लेकर अनेक कहानीकार उभर आये । " स्त्रियों की समस्याओं पर भी तेलुगु में चलम् " से लेकर अनेक कहानिकारों ने कहानियाँ लिखी हैं । तेलुगु कहानी में गुडि - पाटि वेंकटा चलम् ने, साहित्यजगत में एक तहलका मचा दिया । " स्त्री " को लेकर विभिन्न कोणों में अनेकानेक कहानियाँ लिखी गयी । उनमें " स्त्री " की मुक्ति प्रमुख है । इस मुक्ति के अनेक आयाम भी रेखांकित हुए है । नौवे दशक का ही नहीं, स्त्रियों पर जो भी कहानियाँ लिखी गयी, उनपर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में " चलम् " का प्रभाव दिखायी देता है । इस प्रकार पंचम अध्याय दो दशकों की सीमा को घेर लेता है । उस समय का विवेचन प्रस्तुत करता है ।

उपसंहार में उत्तरशती के चार दशकों के कहानी साहित्य की विशिष्टताओं का तुलनात्मक अनुशीलन समग्र रूप में प्रस्तुत किया गया है ।

अनुसंधान कार्य सामूहिक कार्य है । इसमें गुरुजनों विद्वानों एवं मित्रों की सहायता की आवश्यकता होती है । मेरा सौभाग्य है मुझे हर दिशा से सहायता मिली हैं । विशेषतः गुरुजनों का मार्गदर्शन बहुत आवश्यक है । मैं उन सभी को धन्यवाद समर्पित करता हूँ, जिनकी सहायता मुझे इस शोध कार्य के लिए प्राप्त हुई थी ।

मै सर्व प्रथम अध्यक्ष और मेरे गुरु एवं निर्देशक आचार्य वाई॰वेंकटरमण राव, एम॰ए॰ ﴾हिन्दी﴿, एम॰ए॰ ﴾तेलुगु﴿, पी-एच॰डी॰ के प्रति आभारी हूँ जिन्होंने सहनशीलता एवं एकाग्रता के साथ इस शोध कार्य का निर्देशन किया । इनके लिए शब्दों से आभार प्रकट नहीं कर सकता । हैदराबाद विश्वविद्यालय के तेलुगु विभाग के गुरुजनों को भी मैं आभार प्रकट करता हूँ जिन्होंने मेरे मन में उत्पन्न अनेक संदेहों को दूर करने में मेरी सहायता की । साथ-साथ वेंकटेश्वर विश्वविद्यालय,

श्री कृष्णदेवराय विश्वविद्यालय और आन्ध्र विश्वविद्यालय के हिन्दी और तेलुगु विभागों के गुरुजनों को भी मैं आभार प्रकट करता हूँ। आचार्य वेटूरि विश्वनाथ रेड्डी, शेक मोहम्मद इक्बाल जी को भी मैं मन पूर्वक आभार प्रकट करता हूँ। मेरे सन्निहित मित्र डॉ॰ के॰ श्रीनिवासचारी, रामशास्त्री, मोहिनुद्दीन आदि सब को आभार प्रकट करता हूँ। इस शोध कार्य को संपन्न करने में मुझे हर क्षण प्रोत्साहन देते हुए तथा मनोधैर्य प्रदान करनेवाले मेरी पूजनीया नानी पुन्नम्मा ताऊ श्री मदन मोहनराव, माताजी श्रीमति सुजाता और पिताजी श्री नरसिंहा राव का मैं सदा आभारी हूँ। इस शोध कार्य को संपन्न करने में मुझे हर दिशा में साथ देनेवाली मेरी जीवन साथी श्रीलक्ष्मी को मैं आभार प्रकट करता हूँ। अनेक लेखकों की कृतियों की सहायता से मैंने यह अनुष्ठान संपन्न किया है सभी को मैं आभार प्रकट करता हूँ। मेरे कार्यालय के संचालक श्री एन॰ आर॰ वी॰ प्रसाद, सह संचालक श्री वै॰ इ॰ वरदराज, सुब्रह्मण्येश्वर राव, डॉ॰ एल॰ एन॰ शास्त्री, रामचन्द्र मूर्ति, सुब्रह्मण्यम आदि सब को मैं आभारी हूँ।

— पालेपु सुब्बाराव

प्रथम अध्याय
उत्तरशती की हिन्दी और तेलुगु कहानी : विकास के सूत्र

उत्तरशती की हिन्दी और तेलुगु कहानी : विकास के सूत्र

I. साहित्य और कहानी :-

सामाजिक गति-स्थिति को यथार्थ चित्रण द्वारा जनता तक पहुँचाना आधुनिक कहानी का प्रमुख लक्ष्य माना जा सकता है । हिन्दी और तेलुगु दोनों क्षेत्रों में आधुनिक कहानी इसी उद्देश्य की पूर्ति में अग्रसर होकर अनवरत विकासशील रही है । हिन्दी में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और तेलुगु में गुरजाड अप्पाराव के आगमन समय से सामाजिक यथार्थता का चित्रण ही नहीं बल्कि समाज व्यवस्था में नई क्रान्ति और नये परिवर्तन लाने की दिशा में भी कहानी आगे बढ़ने लगी ।

समाज में संभावित परिवर्तनों को " ज्ञानी या प्रतिभा संपन्न " पहले ही जान लेता है और सबको इसकी जानकरी देता है । इतना ही नहीं, सचेत भी करता है ताकि समाज अपनी स्थितिगति को अच्छी तरह से अवगाहन कर आगे के स्वरूप को स्थापित कर सके । जिस समाज ने इस चेतावनी को पहचाना नहीं, उस समाज में क्रांति की संभावनाये बढ़ जाती है ।

तेलुगुप्रांत की समाज व्यवस्था में कंदुकूरिवीरेश लिंगम ने सुधार चाहा है तो समाज और साहित्य में सुधार की दिशा में गुरजाडा स्पंदित हुए । उस समय आधुनिक भारत में, अंग्रेजों के शासन तंत्र से स्वतंत्र होने की इच्छा प्रबल हो रही थी । उसी समय पाश्चात्य देशों में काल्पनिक आन्दोलन के प्रभाव से छायावादी काव्य चेतना होने लगी । फलत: मन के भावों को निस्संकोच व्यक्त करने की प्रवृत्ति भी बढ़ी ।

इस भूमिका में कहानी विधा ने अनेक सुधारवादी परि - वर्तनों को लेकर नयी दिशा का प्रवर्तन किया है । यही आगे अनेक क्रांतिकारी आन्दोलनों के साथ जुडकर कहानी को एक सबल साहि- त्यिक विधा के रूप में प्रतिष्ठित कर सकी है । इसकी विशेषताओं के तुलनात्मक अनुशीलन के लिए कहानी के ऐतिहासिक विकास को समझना असमीचीन नही होगा ।

II. कहानी का उद्भव और विकास :-

मानव विकास की आरंभिक स्थितियों के साथ कहानी भी चली और समस्त संसार में व्याप्त हुई। कहानी के विभिन्न रूप प्राप्त होते हैं। भोज ने " शृंगार प्रकाशम " में कथा की व्याख्या इस प्रकार की है --

" या नियमितगति भाषा, दिव्यादिव्यो भवेति वृत्तवर्ती।
कादंबरीव लीलावतीव वासा कथाकथिता।" [1]

अर्थात् " दिव्यादिव्यों के चारित्रिक विशेषताओं से नियमबद्ध भाषा से भरी हुई कादंबरी [बाणभट्ट], लीलावती कुतूहल कवि काव्यों को कथा मान सकते हैं। [1]

" अग्निपुराण " में आख्यायिका [कथा] के बारे में स्पष्ट किया गया है - " नायक को खुद बोलने का नियम नहीं है। किसी भी अन्य पात्र से कहवा सकता है। भारतीय लक्षणकारों से पता चलता है कि नायक जब खुद अपने बारे में बोलेगा तब वह " आख्यायिका " है। रचयिता से जो बोला जायेगा या लिखा जायेगा तो वह कथा है।

भारतीय साहित्य में कहानी का प्राचीनतम रूप ऋग्वेद के यम-यमी, पुरूरवा-उर्वशी, सरमा और पणिगण जैसे लाक्षणिक संवादों, ब्राह्मणों के सौपर्णी-काद्रव जैसे रूपकात्मक व्याख्यानों, उपनिषदों के सनत्कुमार नारद जैसे ब्रह्मर्षियों की भावमूलक आध्यात्मिक व्याख्याओं, महाभारत के गंगावतरण, श्रृंग, नहुष, ययाति शकुन्तला, नल आदि के उपाख्यानों, गीता के प्रवचनों, हरिवंश परिशिष्ट, ब्रह्माण्ड, शिवस्कन्द जैसे पुराणों के वर्तालापों में खोजा जा सकता है । भारत में कहानी का प्राचीनतम रूप है " कथा " । अग्निपुराण में इसकी व्याख्या इस प्रकार है --

" आख्यायिका कथा खण्ड कथा परिकथा
कथानिका इतिमन्यंते गद्यकाव्यंमें पंचद ।"[1]

इससे यह स्पष्ट होता है कि आख्यायिका, कथा, खण्ड कथा, परिकथा, कथानिका आदि सब गद्यकाव्य के विभिन्न रूप कहानी की परिधि में आते है ।

अग्निपुराण में कथानिका के लक्षण है --

---

1. कथावेदिका { वार्षिक संपिका } पृ. 40.

" भयानकम्, सुखपरम गर्भेचकरुणोरस:
अद्भुतोत्संसुक्लृप्तार्दो सोदात्तासा क्यानिका " [1]

अर्थात् कहानी के आदि, मध्य और अंत होते हैं। उसमें आदि में दु:ख न पहुँचानेवाला भयानकरस, मध्य में करुण रस, अंत में अद्भुत रस रहता है। साथ-साथ सुखपरकता, संक्षिप्तता और अनुदात्तता आदि से कहानी युक्त होती है।

" भारत में उपलब्ध और बहुप्रचलित प्रथम कथा काव्य गुणाढ्य की " बृहत्कथा " है। यह विश्व में कहानी के उद्भव की प्रथम दशा मानी जा सकती है। कहानियों की कहानी माननेवाली इसे, सोमदेवसूरि ने " कथा सरित्सागरम " नाम से संस्कृत में अनुवादित किया। "[2]

बृहत्कथा के बाद पंचतंत्र, हितोपदेश की कहानियाँ, तंत्राख्यान " कथामृतनिधि, सिंहासनद्वात्रिंशिका, शुकसप्तति, भौतिक पंचविंशति, कथा महोदधि, पुरुषपरीक्षा आदि कहानी संग्रह आये।

---

1. मल्लादि रामकृष्ण शास्त्रि कथलु - पृ. 35.
2. कथाचरित्रा - पृ. 15.

भारत में कहानी विधा अनेक नामों से जानी गयी है । भारतवासी ईसा पूर्व से ही " कथा " को पुराणकथा, पुरातन कथा, चारित्रिक कथा, अद्भुत कथा, नीतिकथा, उपकथा, बृहत्कथा, गाथा, भक्त कथा, जातककथा आदि नामों से जानते आये हैं ।

III. पाश्चात्य देशों में कहानी :-

पाश्चात्य देशों में भी कहानी का विकास भारतीय कहानी के विकास के समानांतर में हुआ है । मानव के ज्ञानार्जन को स्पष्ट करते हुए 'The story of Atapa' 'The Heavenly Bow and the king who forgot' 'The War at gods' आदि कहानियाँ लिखी गयीं । वहाँ ये 'Cuneiform of clay' मानी ईंटों पर, मिट्टी की छपड़ों पर लिखी गयी, उस समय की कथा साहित्य के लिए गवाह बन चुकी हैं ।

" The Story of exile' 'Sinuhe' 'The story of the kind khufu and the Magicians''The cake of the two brothers' आदि कहानियाँ देहाती प्रतीकों से, चमकीले शब्दों में लिखी गयी है । इनकी वस्तु सुदृढ़ और गद्य में लिखी गयी है । इनका समय ईसापूर्व प्रथम शताब्द माना गया है ।

ईसा के बाद चौथी शताब्दी तक कहानीकारों ने अपना ध्यान श्रृंगार को केन्द्र में रखते हुए अनेक अच्छी कहानियाँ लिखी । उनमें 'Abreantes and his wife lovely panthes''Emerald Ring''Rhampsinitus stolen King'

नामक कहानियाँ बहुप्रचलित है । आलोचकों ने इन कहानियों को पाश्चात्य देश की प्रथम श्रृंगार कहानियाँ मानी ।

भारतीयों की तरह पाश्चात्यों में भी कहानी को एक नूतन विधा के रूप में स्वीकार किया --

'Before 19th century it was not regarded as distinct literary form, it seems to be uniquely modern genre, but it is as old as language itself. Throughout history man has enjoyed various types of brief narratives, jests, anecdotes, short allegorial romances moralicing fairy tales short myths and abreviated history legends none of these constitute a short story"[1]

1.'ENCYCLOPAEDIA OF BRITANICA' (VOLUME - 16)
- MACROPAEDIA ([illegible]) P.NO.711.

इससे स्पष्ट है कि भारतीयों की तरह पाश्चात्य भी आचार-व्यवहार, विभिन्न सभ्यताओं को, सृष्टि रहस्यों को, भू-खगोल आदि संबंधों को स्पष्ट करनेवाली कहानियाँ मात्र आनन्द प्रदान करनेवाली मानकर, उन्हें साहित्य की सीमा में नहीं लाये । उन्होंने छोटी कथा (SHORT STORY) के रूप में भी नहीं लिया । उन्नीसवी सदी में उत्पन्न " छोटी कथा " को नूतन विधा के रूप में स्वीकार करने लगे ।

ब्रिटन में प्रचलित " छोटी कथा " को लेकर ' ENCYCLOPAEDIA OF WORLD LITERATURE ' नामक विश्वकोश ने कथा साहित्य को एक विधा (A work of fiction) कही है । इसके अनुसार समकालीन समाज में प्रचलित सामाजिक, सात्विक, साहित्यक, सांकेतिक आवश्यकताओं को लेकर जिस प्रक्रिया को शुरूआत हुई है वही " छोटी कहानी " है । इस विकास को सूचित करते हुए उस ग्रन्थ में कहा गया है ---

" कहानी का जनता के दैनिक जीवन से जो संबंध था वह मिट गया लेकिन उसके मानसिक परिवर्तन, जीवन में उभरनेवाली समस्याओं को, संघर्षों को, सफलताओं आदि को समसामयिक जीवन के अनुसार कहानी में चित्रण किया जाता है । "[1]

---

1. कथाचरित्र - पृ. 24 - 25.

प्राचीन भारतीय कथापरम्परा से " कहानी " को अलग कर उसे एक निश्चित साहित्यिक विधा के रूप में रूपान्तरित करने का श्रेय पाश्चात्यों को ही है। वहाँ से विभिन्न भारतीय भाषा साहित्यों में कहानी पहले अनुवादों के माध्यम से तथा बाद में मौलिक रूप में प्रतिष्ठित हुई। आज वह यन्त्र तुल्य व्यस्त मानव के श्रम का परिहार कर उसका मनोरंजन करने के साथ-साथ उसे किसी जीवन सत्य अथवा समस्या के बारे में विचारने के लिए प्रेरणा देनेवाली उपयोगी साहित्यिक विधा बन गयी।

IV. हिन्दी कहानी का विकास :-

अठारहवीं सदी की कहानियाँ संस्कृत के कथाग्रन्थों के अनुवाद मात्र थीं। सन् 1767 में सूरतिमिश्र द्वारा संस्कृत के " बैताल पंचविंशति " के आधार पर ब्रजभाषा में रचित " बैताल-पच्चीसी " एक उदाहरण है। इसी प्रकार " किस्सा-तोता-मैना " " छबीली भटियारन " आदि हैं।

उन्नीसवीं शती के पूर्वार्द्ध की कहानियाँ पौराणिक कथाओं पर आधारित हैं। इनमें आकस्मिक घटनाओं की प्रधानता है। पाठकों का कौतूहल, और मनोरंजन इस समय की कहानी के विशेष गुण हैं। इंशा अल्लाखान की " रानी केतकी की कहानी " पूर्वार्द्ध की ही उपलब्धी मानी जा सकती है।

उन्नीसवी सदी के उत्तरार्द्ध में लिखी गयी कहानियों की कथावस्तु में एक निश्चित परिवर्तन दिखाई देता है । राजा शिव प्रसाद " सितारेहिन्द " की " राजा भोज का सपना ", राधा चरण गोस्वामी की " यमलोक की यात्रा ", भारतेन्दु की " एक अद्भुत अपूर्व स्वप्न " " मूसा पैगम्बर " आदि अन्योक्ति पद्धति की सफल कहानियाँ थीं । इनमें ही लेखक पहले पहल समाज-चित्रण की ओर उन्मुख हुए थे जो अन्य सम - कालीन साहित्यिक विधाओं के अनुरूप प्रवृत्ति थी । इनमें प्राचीन उपदेशात्मकता के स्थान पर स्वच्छन्दता और तीखे व्यंग्य को अभिव्यक्ति मिली थी । यद्यपि कथाएँ भी तो यम-लोक और स्वप्न लोक की, परन्तु इनके लेखक संसार के कटु यथार्थ से क्षणभर के लिए भी दूर नहीं रह पाए । इन कहानियों में ही सामाजिक चेतना का पहली बार दर्शन होता है ।

उन्नसवी शती के उत्तरार्ध में हिन्दी कहानी का स्वरूप निखरा । पाश्चात्य संपर्क के फलस्वरूप आधुनिक कहानी का स्वरूप निश्चित होने लगा । हिन्दी कहानी के इस विकास के पीछे बंगला कहानी साहित्य का भी विशिष्ट योगदान रहा है ।

हिन्दी की पहली आधुनिक कहानी पर अनेक वाद-विवाद है पर माधव राव सप्रे की " एक टोकरी भर मिट्टी " को ही यह गौरव दिया गया है । इसका प्रकाशन " छत्तीसगढ़

मित्र " नामक पत्रिका में सन् 1901 ई॰ में हुआ । इस कहानी में विधवा की गरीबी के आगे जमीन्दार की स्वार्थ लिप्सा की पराजय और उसका पश्चाताप है जो वस्तुत: धन और शक्ति के मद को बहुत फीका साबित करता है ।

इस कहानी के समांतर में किशोरीलाल गोस्वामी की प्रणयिनी परिणय §1887 ई॰§ इन्दुमती §1900§, श्री केशव प्रसाद सिंह की " चन्द्रलोक की यात्रा " §1900§, श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर की मुक्ति का उपाय §1901§, भगवानदास प्लेग की चुड़ैल §1902§, रामचन्द्र शुक्ल की ग्यारह वर्ष का समय §1903§, गुलेरी की "उसने कहा था " आदि कहानियाँ हैं।

प्रेमचन्द §1880-1936§ :-

कहानी सम्राट मुंशी प्रेमचन्द जी के आगमन से कहानी क्षेत्र जगमगाया । कई नये कहानीकार उभरे । चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, जयशंकर प्रसाद, प्रेमचन्द, सुदर्शन, चतुरसेन शास्त्री आदि ने कहानी के क्षेत्र को चमका दिया ।

प्रेमचन्द ने कहानी को परिभाषित करते हुए लिखा था " सबसे उत्तम कहानी वह होती है, जिसका आधार किसी मनोवैज्ञानिक सत्य पर हो ।" [1]

संसार का सबसे " अनमोल रत्न " (1907) से शुरू करके पंचपरमेश्वर " नमक का दारोगा ", " बड़े घर की बेटी " " कफन " आदि प्रेमचन्द की लगभग तीन सौ कहानियाँ हिन्दी क्षेत्र को अनुप्लावित कर गयी । " . " तो कहानी क्षेत्र में " क्रांति " का झण्डा बुलन्द करती है ।

प्रेमचन्द ने साहित्य जगत में आते ही कल्पना को यथार्थ की ओर उन्मुख कर दिया । फलस्वरूप सामाजिक जीवन की घटनाओं पर कहानियाँ लिखी जाने लगी । जाने-पहचाने पात्र आये और कहानी में लेखक का अनुभव और वातावरण स्पष्ट होने लगा । कहानियाँ व्यक्तित्व से अनु-प्राणित होकर, समस्या, विरोध, विचार और तीव्र अनुभूति से गूँजने लगी । कहानियों का आधार निजी अनुभव होने लगा ।"[2] कहा भी गया है कि प्रेमचन्द कलाकार की तटस्थता में विश्वास नहीं रखते थे । वह जनता के दु:ख-सुख में भाग

1· हिन्दी कहानी के सौ वर्ष - पृ· 19·

2· संतबख्श सिंह - नयी कहानी " कथ्य और शिल्प पृ· - 190·

लेनेवाले कलाकार थे ।[1] यही कारण है कि प्रेमचन्द की कहानियाँ अपने सामाजिक परिवेश से जुड़ी हुई हैं । प्रेमचन्द की कहानियों का पाठक, उनके माध्यम से भारतीय जीवन के प्राय: सभी दलित वर्गों और जैविक गतिविधियों से परिचित हो जाता है । स्वाधीनता की लड़ाई, संयुक्त परिवार में विघटन, जातीय एकता, किसानों की समस्याएँ अछूतोध्दार, विधवा समस्या, देशी रियासतों की समस्याएँ, औद्योगीकरण, सांप्रदायिक द्वेष, समाज के रूढ़िग्रस्त रिवाज, जाति, धर्म और परंपरा आदि अनेक ऐसे कोण हैं जो प्रेमचन्द की कहानियों के मूल विषय बन चुके थे । अपने समाज की ऐसी पहचान विरले लोगों को ही होती है । प्रेमचन्द का कथा-संसार अपने घेरे में जीवित उस " व्यक्ति " को भी रेखांकित करता है, जो एक " खास किस्म की सामाजिकता से युक्त है और समय-समय पर अपने वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है ।

प्रेमचन्द ने हिन्दी साहित्य को यथार्थ की आधार भूमि प्रदान की यद्यपि उनकी दृष्टि आदर्शवादी भी थी । रमाकान्त श्रीवास्तव कहते हैं -- " प्रेमचन्द का मानना यह था कि आदमी के पास यथार्थ और आदर्श दोनों की संवेदनाएँ होनी चाहिए । यथार्थ के बगैर हम अपने समाज की

---

1. रामविलास शर्मा - प्रेमचन्द और उनका युग - पृ. 158.

समस्याएँ नही पहचान सकते और आदर्श के बिना अपने समुचित विकास को कल्पना नहीं कर सकते । आदर्श को पाने के लिए ही लेखक सपने देखता है । प्रेमचन्द का यथार्थ और आदर्श के लिए एक सार्थ संघर्ष हिन्दी में नयी शुरूआत है ।" [1]

जयशंकर प्रसाद ‖ 1887-1937 ‖ :-

प्रसाद की कहानियाँ भाव जगत के स्थायी आदर्शों का चित्र अंकित करती है । उन्होंने अपनी कहानियों में व्यक्ति-मन के भाव-जगत में निहित प्रेम, करुणा, सहानुभूति ईर्ष्या आदि वृत्तियों को चित्रित किया है । साथ ही व्यक्ति-मन के भीतरी अंतर्द्वंद्व को उभारने की भी चेष्टा की है । प्रसाद मूलत: छायावादी कवि हैं । अत: उनकी कहानियों में छायावाद की मूल प्रवृत्ति वैयक्तिकता की सूक्ष्म प्रतिच्छाया दिखायी देती है । उनके पात्र प्रेम और सौन्दर्य की चेतना लेकर अवतरित हैं । इसीलिए उनकी अधिकांश कहानियों में वैयक्तिक द्वंद्व और सुख-दु:ख, विरह-वियोग का चित्रण मिलता है । इनकी अधिकांश कहानियाँ-चाहे वह आकाश - दीप हो या पुरस्कार ", " मधुआ " हो या " ममता " के

1· कहानी की वर्णमाला - सं·राजेन्द्र अरुण - पृ· 32-33·

पात्रों की निजी समस्याएँ हैं और उनकी नायिकायें प्राय: उस मानसिक स्थिति की शिकार है जिसे मनोविज्ञान में "ऐम्बिवैलेंजी " कहते हैं -- अर्थात् एक ही व्यक्ति या वस्तु के प्रति प्यार और घृणा की समान तीव्र भावना न होना । " मैं तुमसे घृणा करती हूँ जलदस्यु, लेकिन तुम्हें प्यार भी करती हूँ वाली स्थिति की अभिव्यक्ति केवल "आकाश दीप में ही नहीं, उनकी कई कहानियों में है ।"[1]

इस प्रकार इस समय की कहानी के लिए दो मूर्धन्य लेखकों का योगदान महत्वपूर्ण रहा है । प्रेमचन्द की समाजवादी परंपरा और प्रसाद की छायावादी प्रवृत्तियों से अनुप्राणित मनोवैज्ञानिक कथाधारा कह सकते हैं । इन दोनों धाराओं के बीच विभाजिक रेखा भारत में सन् 1936 में प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना तथा प्रगतिशील आंदोलन के सूत्रपात के साथ और भी स्पष्ट होती गयी ।

प्रेमचन्द की यथार्थवादी परंपरा में समसामयिक सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक व सांस्कृतिक युगीन परिवेश को प्रतिबिम्बित किया गया है । तत्कालीन सामाजिक कुरीतियाँ और उनके सुधार के प्रति उत्कट आग्रह, दलित,

---

1· राजेन्द्रयादव - कहानी : स्वरूप और संवेदना - पृ· 23·

शोषित, निर्धन, किसान, मजदूर के साथ अपनी सहानुभूति तथा राष्ट्रीय जागरण की प्रेरणा, प्रेमचन्द तथा उनके अनुयायियों की कहानियों में प्राप्त वस्तुगत मुख्य विशेषतायें हैं।

भाव-प्रवणता, रसात्मकता, आदर्शवादिता, सहज संवेदन-शीलता, उच्चस्तरीय सौन्दर्य तथा प्रेमचित्रण आदि विशेषताओं को लेकर प्रसाद तथा प्रसाद सम्प्रदाय के कहानीकारों ने हिन्दी कहानी को उत्तरोत्तर विकसित एवं संपन्न किया।

विषय वैविध्य की दृष्टि से भी इन लेखकों की रचनाएँ अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। ऐतिहासिक परिवेश की अभिव्यक्ति, प्रकृति सौन्दर्य की प्रस्तुति, सामाजिक रूढ़ियों पर व्यंग्य, मध्य युगीन विलास जीवन का चित्रण, पात्रों के विशिष्ट मनोवैज्ञानिक धरातल का उद्घाटन तथा प्रणय और रोमांसपूर्ण जीवन का चित्रण इन कहानियों को रसपूर्ण, आकर्षक और महत्व पूर्ण बनाने में सहायक सिद्ध हुआ है।

प्रसाद जी की भावमूलक प्रवृत्ति की कहानियों की सफलता का रहस्य यही है कि उनका मूल धरातल समाज इतिहास और परिस्थिति जन्य कल्पना होते हुए भी कलात्मकता के उच्च शिखर पर स्थित है।

प्रेमचन्द-प्रसादोत्तर विकास :-

प्रेमचन्द और प्रसाद के बाद हिन्दी कहानी के विकास को मुख्यतः तीन दिशाओं में देख सकते हैं। वे हैं-- मनोवैज्ञानिक कहानियाँ ﴾जैनेन्द्र, अज्ञेय, इलाचन्द जोशी आदि की कहानियाँ﴿, मार्क्सवाद चिंतन से प्रभावित समाजवादी कहानियाँ ﴾यशपाल, रांगेयराघव, भैरव प्रसाद गुप्त, अमृतराय आदि﴿, मनोवैज्ञानिक और समाजवादी चिंतन समन्वय से प्रभावित कहानियाँ ﴾उपेन्द्रनाथ अश्क, अमृतलाल नागर, भगवती चरण वर्मा आदि﴿

1. मनोवैज्ञानिक पक्ष :-

विश्व के जिन चिन्तकों ने परम्परागत विचारों को झटके देकर नये ढंग से सोचने को विवश किया है, उनमें अति-प्रमुख चिन्तक हैं "मार्क्स, फ्रायड"। फ्रायड ने "मनो-विश्लेषण" की अवधारणा प्रस्तुत करते हुए अचेतन मन के महत्व को ही नहीं बल्कि कामभावना से संबद्ध अनेक ग्रंथियों का भी परिचय दिया। जीवन सम्बन्धी प्राचीन मूल्यों का विरोध एवं नवीनता का आह्वान पूर्ववर्ती की विशेषतायें हैं। विज्ञान के प्रहार ने विश्व चिन्तकों की तार्किक शक्ति को विकसित

किया । फलत: रूढ़िवादी परम्पराओं एवं समाज की संकुचित सीमाओं तक जीवन में स्थिरता आदि के प्रति लोगों का मोह नहीं रहा गया । लोग जीवन में विविधता की आकांक्षा लेकर नवीनता एवं आधुनिकता की ओर आकर्षित होने लगे ।

प्रेमचन्दोत्तर युग की कहानियों में सामाजिक जीवन के यथार्थ, युगबोध एवं भाव-बोध प्रतिच्छवित हैं । व्यक्तिवादी प्रवृत्ति की कहानी-साहित्य में सामाजिक मान्यताओं एवं धारणाओं को व्यक्ति विकास एवं व्यक्तिहित की कसौटी पर देखती है ।

इस विकास की गति में कहानी व्यक्ति को केन्द्र में रखकर, सामाजिक मान्यताओं, धारणाओं आदि का मूल्यांकन करती है और उन रूढ़ियों का विरोध भी जो व्यक्ति विकास को अवरुद्ध करती हैं । इन मनोवैज्ञानिकों की स्थापनाओं को आधार बनाकर हिन्दी के कुछ कहानीकारों ने अपनी कहानियों में मानव मन की गहराइयों में झाँकने का प्रयास किया है । उनमें जैनेन्द्र, अज्ञेय, भगवती प्रसाद वाजपेयी, रामप्रसाद घिल्डियाल " पहाडी " आदि के नाम लिये जा सकते हैं।

जैनेन्द्र :-

जयशंकर प्रसाद की अपेक्षा अधिक बौद्धिक और कम रोमाँटिक है " जैनेन्द्र " । जैनेन्द्र से पूर्व " सामाजिकता " और " अतीत प्रेम " के मुहावरे कहानी में लोकप्रिय थे । परेश के कथन से स्पष्ट होता है -- " जैनेन्द्र ने कथा के ये दोनों मंच छोड़े ही नहीं तोड़ भी दिये । न उन्होंने अतीत को चुना, न समाज को । इस रूप में उन्होंने प्रेमचन्द और प्रसाद की स्थापित प्रतिमा को हिला दिया । लगभग वैसे ही जैसे एक रुग्ण व्यक्ति अपने आसपास को, अपने अनुभव की भयावहता से आतंकित कर देता है । "[1]

जैनेन्द्र की कहानियों में बाहरी संदर्भ भी है, लेकिन प्रधानता मानसिक परिवेश की ही है । डॉ॰ इन्द्रनाथ मदान ने सही मूल्यांकन किया है कि " इसके लिए सामूहिक मुक्ति या सामाजिक मोक्ष का प्रश्न ही नहीं उठता । इस मूल समस्या को एकाकीपन से मुक्ति पाने की समस्या को प्राय: प्रेम तथा विवाह के माध्यम से उठाया गया है । "[2] जैनेन्द्र के चिंतन पर मनोवैज्ञानिक चिंतन के साथ-साथ गाँधीवाद का प्रभाव

1· हिन्दी कहानी का परिदृश्य - परेश - पृ॰ 21·

2· हिन्दी कहानी : पहचान और परख - इन्द्रनाथ मदान पृ॰ - 17·

भी है । उनके चरित्र प्राय: दुर्बल और आत्मपीडन की भावना को ढोने के लिए अभिशप्त है । जैनेन्द्र की वे कहानियाँ अच्छी बन पडी है, जो किसी स्थिति का मनोविश्लेषण करती है या जो व्यंग्य प्रधान है ।

अज्ञेय (1911-1987) :-

इनकी कहानियाँ दो प्रकार की है । " शरणार्थी " कहानी संग्रह की भूमिका में अज्ञेय ने स्पष्ट किया है -- " कलाकार निरा व्यक्ति नहीं सामाजिक भी है, व्यक्ति और समाज के प्रति उत्तरदायित्व के अतिरिक्त कलाकार का कला के प्रति उत्तरदायित्व होता है । "[1]

उन्होंने यथार्थ को लेकर प्रगतिशील दृष्टिकोण से वैयक्तिक संवेदना प्रधान कहानियाँ लिखीं हैं । आज के अनिश्चय, अव्यवस्था एवं जटिलता के युग में एक व्यक्ति के भीतर जो बहुमुखी व्यक्तित्व उभर आते हैं और उसके कारण जो संघर्ष चल रहा है, उसका चित्रण इनकी कहानियों में देखा जा सकता है । " विपथगा (1937) परम्परा (1944), कोठरी की बात (1945) शरणार्थी (1948) आदि उनके प्रतिनिधि कहानी संग्रह हैं ।

---

1. " शरणार्थी " कहानी संग्रह की भूमिका में (भूमिका अज्ञेय)

राष्ट्रीय स्वतन्त्रता, क्रान्तिकारिता, सशस्त्र आन्दोलन, सामाजिक ह्रासोन्मुखता, मानसिक अन्र्द्वन्द्व एवं कुण्ठाएँ, स्वप्न मनोविज्ञान आदि इनकी कहानियों के विषय है। अपनी समग्र चेतना में " अज्ञेय " की कहानियाँ मनोवैज्ञानिक कहानियों की श्रेणी में आती हैं। " रोज " पेगाडावृक्ष ", " पुष्प का भाग्य", "पठार का धीरज ", " साँप ", " कोठरी की बात ", " कविप्रिया ", "बसन्त " " अछूतेफूल " सभी मनोवैज्ञानिक कहानियाँ हैं। इनकी कहानियों में कुंठा, हताशा, वैयक्तिकता और पलायन भावों को नये सन्दर्भ मिले। अधिकांशतः मध्यवर्गीय तथा अंशतः निम्न मध्यवर्गीय पात्रों की समस्याओं तथा मानसिक स्थितियों का चित्रण अज्ञेय की कहानियों में अधिक यथार्थ तथा कलात्मक रूप में चित्रित हुए है। डॉ· चन्द्रशेखर कर्ण के अनुसार -- " अज्ञेय की कहानियाँ प्रेमचन्दोत्तर हिन्दी कहानी की विशिष्ट उपलब्धि हैं। उनकी कहानियाँ अर्थ की दृष्टि से गहरी और संवेदना की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।" [1]

1· अज्ञेय - मनःस्थितियों के कहानीकार [लेख] - डॉ· चन्द्रशेखर कर्ण " चित्रेतन " जनवरी - 1976

इलाचन्द्र जोशी [1902]

जोशी ने कथा साहित्य में व्यक्तिवाद को प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया । आपने मानवमन की गहराइयों में झाँककर व्यक्ति मन के भीतर वासनाओं तथा कुंठाओं का विश्लेषण भी वैयक्तिक समस्याओं के स्तर पर ही किया है । व्यष्टि और समष्टि में " सामंजस्य " खोजने का प्रयत्न भी रहा है । एडलर की हीन भावना संबंधी धारणा की पुष्टि इनके पात्रों के अध्ययन से होती है । डॉ॰इन्द्रनाथ मदान ने कहा भी है कि -- 'इलाचन्द्र जोशी का कथा-साहित्य फ्रायड के यौन सम्बन्धी सिद्धान्तों से इतना प्रभावित नहीं है जितना एडलर के हीन भावना संबंधी मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों से प्रेरित ।"[1] मनुष्य के अहं, कुण्ठाओं और मानसिक विकृतियों से सम्बन्धित सैद्धान्तिक तत्वों की व्यावहारिक व्याख्या भी उनकी कहानियों में मिलती हैं । " विडम्बना, प्रेम और घृणा, आत्महत्या का खून, विद्रोही, पागल की सफाई, यज्ञ की आहुति, सजनवा, कोटो, अनाश्रित, क्रय-विक्रय आदि जोशी जी की लोक प्रिय कहानियाँ हैं ।

---

1. इन्द्रनाथ मदान [भूमिका] प्रेम भटनागर " इलाचन्द्र जोशी " साहित्य और समीक्षा, बिलासपुर, मध्य प्रदेश साहित्य प्रकाशन - 1959.

इस युग [1937-47] की कहानियों में मनो - वैज्ञानिक तत्व की प्रधानता के कारण बताते हुए जोशी जी कहते है -- " इस मनोवैज्ञानिक तत्व की प्रधानता का मूल कारण है युगजीवन की जटिलता । युग जीवन ज्यों-ज्यों जटिल से जटिलतर होता चला गया, त्यों त्यों कथाकारों ने सहज ही यह महसूस किया कि उस जीवन से सम्बन्धित पात्रों के जीवन के यथार्थ चित्रण के लिए एक मात्र उपाय यही है कि मनोवैज्ञानिक विश्लेषण की विधा को अपनी रचना प्रक्रिया में विशेष रूप से अपनाया जाए, तभी पाठक के आगे युग का आईना ऐसी सफाई से रखा जा सकेगा कि युग के विभिन्न प्रतिबिम्ब अपने सही परिप्रेक्ष्यों में उतर सकेंगे ।" [1]

अज्ञेय जी ने जिस अहं या " मैं " के अन्तरंग रूप को अपने विश्लेषण का माध्यम बनाया, उसी अहं रूप पर जोशी जी ने प्रहार करते हुए उसके अंतरंग एवं बहिरंग दोनों रूपों का सुन्दर समन्वय मनोवैज्ञानिक शैली में किया है ।

---

1. हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास -- डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल - पृ. 250.

यशपाल (1903 - 1977) :-

यशपाल ही ऐसे समस्त कहानीकार है जिन्होंने समाज में होनेवाले अत्याचारों, विभीषिकाओं, कुरूपताओं, अंधविश्वासों, धार्मिक आडंबरों व अनैतिक आचरणों पर मर्म भेदी दृष्टि डाले । इन्होंने साहित्य के माध्यम से समाज में फैली कुरूपताओं का नग्न प्रदर्शन ही नहीं किया, अपितु उनपर सख्त प्रहार भी किया । इनकी कहानियों के सभी पात्र इन्ही सामाजिक विषमताओं और विडंबनाओं में बनते मिटते हैं । डॉ॰ इन्द्रनाथ मदान के अनुसार -- " इनकी रचना-प्रक्रिया के मूल में जो जीवन बोध है वह समष्टि-चिन्तन से प्रभावित है । "[1]

इनका मूल उद्देश्य सामाजिक वैषम्य का उद्घाटन करना है । यशपाल साहित्य में पलायनवादी दृष्टिकोण से चिढ़ते हैं । उन्हें जीवन में संघर्ष प्रिय है । अपनी कहानियों में उन्होंने जीवन-संघर्ष का ही यथार्थ चित्रण किया है ।[2] उनके लिए जीवन में व्यक्ति, समाज और

---

1. इन्द्रनाथ मदान " हिन्दी कहानी " - पहचान और परख - पृ॰ 15॰
2. सुरेश सिन्हा " हिन्दी कहानी " - उद्भव और विकास इलाहाबाद, कल्पना प्रकाशन - 1966 - पृ॰ 520॰

उसकी परिस्थितियाँ ही महत्वपूर्ण हैं । वह समाज में किसी भी व्यक्ति को जीवन के आवश्यक साधनों से वंचित नहीं रहने देना चाहते । इनकी यह मानवतावादी दृष्टि समाज में समता का आदर्श स्थापित करना चाहती है, जहाँ प्रत्येक को अपने विकास और उन्नति तथा जीवन निर्वाह के उपायों की प्राप्ति के लिए समान अवसर हो और प्रत्येक व्यक्ति को अपने परिश्रम का फल पाने का भी समान अवसर हो और समाज के शासन और व्यवस्था में भाग लेकर आत्म-निर्णय का समान अधिकार हो ।"[1] यशपाल के इस चिन्तन पर मार्क्सवाद का प्रभाव है ।

यशपाल यह स्वीकार करते हैं कि "आज मैं जो कुछ हूँ वह अपनी सामाजिक परिस्थितियों, समाज से पाये संस्कारों और चेतना की क्रियाओं और प्रक्रियाओं के प्रभाव से बन गया हूँ । समाज से भिन्न मेरा कोई अस्तित्व अथवा चेतना नहीं रही है और न हो सकेगी । मेरा जीवन अथवा व्यक्तित्व समाज के विराट शरीर के असंख्य जीवकोशों में से एक है ।"[2]

---

1. यशपाल " मार्क्सवाद " लखनऊ - विप्लव कार्यालय

2. योजना - जनवरी - 1961

वह " व्यक्ति " मात्र के छोटे से सीमित दायरे से बाहर निकलकर समष्टि हित, समिष्टि सत्य की बात करते हैं । समाज के विकासशील मार्ग में बाधा पहुँचाने-वाली समस्त रूढ़ियों व अंधविश्वासों को जड़ से उखाड़ देना चाहते हैं।

यशपाल की धारणा है कि समाज की आर्थिक समस्या की बहुमुखी होने के कारण अनेक पहलुओं से उस व्यवस्था की विषमता के मूल की ओर पहुँचा जा सकता है और इस व्यवस्था पर आघात किया जा सकता है और किया जाना चाहिए ।"[1] उन्होंने समाज में व्याप्त आर्थिक वैषम्य को सामाजिक विकृति और विद्रूप का प्रधान कारण माना तथा मार्क्सवादी दृष्टि से उसका समाधान भी अपनी कहानियों में प्रस्तुत किया ।

यशपाल की कहानियों में समाज के प्रति दायित्व, शोषण का विरोध, रूढ़िवाद का खण्डन, समष्टि हित की आकांक्षा, यथार्थबोध, नारी स्वातन्त्र्य का समर्थन, नारी शोषण का विरोध, वेश्या-समस्या, यौन एवं नैतिक समस्या आदि का चित्रण मिलता है ।

---

1. धर्मयुद्ध - यशपाल - भूमिका - पृ. 5.

उन्होंने यह स्पष्टतः स्वीकार किया है " मैं सर्व साधारण जनता को शोषित और अन्याय-पीड़ित समझता हूँ " इस अन्याय से जनता को मुक्ति का उपाय साम्यवादी की द्वंद्वात्मक भौतिकवादी विचार धारा को मानता हूँ।"[1] यशपाल ने अपनी कहानियों का चुनाव मध्यवर्गीय समाज के यथार्थ से किया है। फूलों का कुरता, लखनऊवाले, डिप्टी साहब " "चन्दन महाशय ", " हुकूमत का जुनून आदि उनकी प्रसिद्ध कहानियाँ हैं।

उपेन्द्रनाथ अश्क (1910)

प्रेमचन्द की यथार्थवादी परम्परा के प्रगतिशील कहानीकार हैं 'श्री उपेन्द्रनाथ अश्क'। प्रेमचन्द, सुदर्शन आदि कहानीकारों के समान " अश्क " जी भी उर्दू से हिन्दी में आये थे। " छोटें ", " कालेसाहब ", " दो धारा ", " पिंजरा ", " खुदाई की शाम का गीत " बैंगन का पौधा ", " कहानी लेखिका " और " जेहलम के सात पूल ", " पंलक ", " आकाश चारी " आदि संकलनों में संगृहीत हैं।

---

1. यशमाल " देखा, सोचा और समझा " लखनऊ - विप्लव कार्यालय - पृ. 108.

शोषित-पीड़ित जनता के प्रति अश्क जी की गहरी सहानुभूति आक्रोश और वेदना के रूप में साहित्य का स्वरूप धारण कर मुखरित हो उठती है। इसीलिए उनको प्रगतिशील कहानीकार माना जाता है।

सामाजिक विषमताओं के प्रति अपनी विद्रोहपूर्ण दृष्टि का कारण बताते हुए अश्क जी लिखते हैं कि "मेरे कहानीकार बनने के पीछे एक अनजाने विद्रोह की भावना काम करती थी, मैं जिस परिवार और वातावरण में पल रहा था, उनकी असंगतियाँ और कुण्ठाओं ने मुझे कवि और कथाकार बना दिया। इसीलिए बहुत देर तक अपने वातावरण और समाज को भूलकर काल्पनिक कहानियाँ बुनना मेरे लिए सम्भव था।"[1]

अश्क जी की कहानियों की आलोचना करते हुए डॉ॰ इन्द्रनाथ मदान ने लिखा है कि "अश्क जी ने अपनी कहानी को भावना के कुहासे निकालकर विचार की धुन्ध में डाल दिया।"[2]

---

1. मेरे कहानी लेखन के बत्तीस वर्ष - सत्तर श्रेष्ठ कहानियाँ उपेन्द्रनाथ अश्क - पृ॰ 25॰
2. कहानी और कहानी - इन्द्रनाथ मदान - पृ॰ 23॰

रांगेयराघव ३ 1923-1961 ३ :-

" रांगेयराघव " मार्क्सवादी सिद्धान्तों से प्रभावित कहानीकारों में से हैं । वे यथार्थ संवेदनाओं को सामाजिक धरातल पर प्रस्तुत करनेवाले लेखक थे ।

रांगेय राघव ने मुख्यत: सामाजिक रूढ़ियों और आर्थिक शोषण पर विचार किया है । उनकी वे कहानियाँ अपेक्षाकृत महत्वपूर्ण हैं, जिन में श्रमजीवियों के संघर्ष के निरन्तर तेज और कारगर होने की सम्भावना व्यक्त हुई है । " यह ग्वालियर है ", " धूल की आँधी " आदि कहानियाँ इसी प्रकार की हैं । " गदल " रांगेयराघव की अच्छी कहानी है । इसमें प्रेम की मरजाद एक नये तेवर के साथ चित्रित हुई है ।

निष्कर्ष :-

उत्तरशती की हिन्दी कहानी ने अपनी भूमिका में विरासत के रूप में एक महत्वपूर्ण भारतीय कहानी परंपरा को लेकर विकास पाया है । इसकी विकासधारा में दार्शनिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, समाजवादी, छायावादी क्रान्ति-कारी आदि अनेक प्रेरक तत्वों का योगदान देखा जा सकता है ।

इस योगदान के कारक अनेक व्यक्तियों ने हिन्दी कहानी को एक सबल एवं महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है ।

V. तेलुगु कहानी का विकास :-

19 वीं शती के पूर्वार्द्ध में नई शिक्षा प्रणाली के विस्तार के उद्देश्य से, शिक्षा संस्थाओं के द्वारा भाषा के अध्ययन के लिए तथा पाठ्य-पुस्तकों के निर्माण के उद्देश्य से तेलुगु में गद्य कथा रचनाओं का निर्माण हुआ । ऐसी कहानियों में श्री राविपाटि गुरुमूर्ति शास्त्री की विक्रमार्कीन कथलु (1819), पंचतन्त्र कथलु (1834), पाट्टूर रामस्वामी शास्त्री की शुकसप्तति कथलु (1840) आदि हैं ।

उन्नीसवीं शती के उत्तरार्द्ध की कहानियों में राजनीतिक, सामाजिक व धार्मिक जागरण लाने के लिए समाज सुधार, स्त्री शिक्षा, नारी जागरण, विधवा-विवाह आदि का समर्थन है । अधिकांश तेलुगु कहानियाँ प्राचीन काव्य कृतियों और अंग्रेजी कहानियों का रूपान्तरण, अनुसरण अथवा अनुवाद होता रहा है । इस समय की उपलब्धि है - चिन्नयसूरि की नीतिचन्द्रिका, ताताचार्य की कहानियाँ । उन्नीसवी शती के तेलुगु कथा साहित्य को " अनुवाद युग " कहा जा सकता है ।

बीसवी शती के प्रथम दशक में पहुँचते ही तेलुगु कहानी ने परम्परागत अनुवाद प्रक्रिया को छोडकर, काल्पनिक जगत् से वास्तविक जगत् में प्रवेश किया । उन्नीसवी शती तक के तेलुगु कहानी में आकस्मिक घटनाओं एवं अलौकिक तत्वों को प्रधानता रहती थी और नीतिसूत्र संदेश वाक्य बनकर, मनोरंजन प्रवृत्ति को ही प्रमुखता दी जाती थी । लेकिन बीसवी शती के आरंभ से ही प्रतीक एवं बिम्बविधान ने कहानी को नवीन मूर्त विधान दिया । कहानी में जीवन के गहन अनुभवों, उलझनों एवं जीवन की जटिलताओं ने प्रमुख स्थान ग्रहण किया ।

तेलुगु में सर्व प्रथम मौलिक कहानी के सम्बन्ध में कोई विवाद नही रहा । आन्ध्र भारती में प्रकाशित श्री गुरजाड वेंकट अप्पाराव की "दिद्दुबाटु" (सुधार) (1910) ही प्रथम कहानी है । व्यावहारिक भाषा का सर्व प्रथम प्रयोग इस कहानी में ही किया गया है ।

हिन्दी में प्रेमचन्द परंपरा के कहानीकारों में यशपाल, अश्क , रांगेयराघव आदि ने जिस आदर्शोन्मुख यथार्थवादी दृष्टिकोण को अपनाया है, उसी प्रकार के दृष्टिकोण को तेलुगु में चिन्तादीक्षितुलु तथा मोक्कपाटि नरसिंह शास्त्री की कहानियों में लगभग अवतरित पाया जा सकता है । प्रसाद परंपरा के भाव मूलक आदर्शवादी दृष्टिकोण को अपनानेवाले तेलुगु के कहानीकारों मे वेलूरिशिव राम शास्त्री, श्रीपाद सुब्रह्मण्य शास्त्री, विश्वनाथ

सत्यनारायण तथा अडिविबापिराजु के नाम उल्लेखनीय हैं, इनमें प्रान्तीय संस्कृति तथा सौन्दर्य के प्रति विशेष आग्रह है ।

लेकिन तेलुगु कथा साहित्य का विकास हिन्दी कथा साहित्य की तरह आदर्शोन्मुख यथार्थवाद, भावमूलक यथार्थवाद आदि प्रेमचन्द और प्रसाद परंपराओं की तरह नहीं है । फिर भी प्रवृत्तियाँ तेलुगु में भी दिखायी देती हैं । लेकिन तेलुगु में सुधारवादी आन्दोलन, राष्ट्रीय आन्दोलन, तेलंगाना आन्दोलन, अभ्युदय आन्दोलन आदि आन्दोलनों से युक्त विकास सामने आता है --

(अ) सुधारवादी परंपरा :-

बीसवी शती के आरंभ के कहानीकार सुधारवादी प्रवृत्ति से चालित हैं । सुप्रसिद्ध आलोचक श्री वासिरेड्डी नवीन जी कहते हैं -- " इस सुधारवादी आन्दोलन के प्रभाव से उत्पन्न नवीन भावनायें, तदानुसार परिवर्तन आदि ने राष्ट्रीय आन्दोलन के लिए अच्छी प्रेरणा दी । इतना ही नही, बाद के साम्यवादी दल के नेतृत्व में पनपे जनता के आन्दोलनों को जनता से सहयोग मिलने से इनका प्रभाव कम से कम परोक्ष रूप से सही रहा ही है । साहित्यक दृष्टि से देखने

पर इस समय की रचनाओं में साहित्य के क्षेत्र में उभरी उन्मुक्त भावनाओं के लिए नींव बनीं है ।" [1]

उक्त विचार से स्पष्ट होता है कि सुधारवादी प्रवृत्ति से प्रभावित होकर जो भावनायें उभरी हैं । उनके अनुसार जो परिवर्तन आये, वे राष्ट्रीय आन्दोलन को आगे बढ़ाने में बहुत सहायक सिद्ध हुए । इसके अलावा बाद में जब साम्यवादी दल से जो भी आन्दोलन चलाये गये, उनकी सफलता में सुधारवादी आन्दोलन का प्रमुख स्थान रहा है । साहित्यक धरातल पर भी उस समय की भावनाओं को स्पष्ट करने में ये कहानियाँ अत्यंत सफल हुई । गुरजाड अप्पाराव जी की कहानी " दिद्दुबाटु " सुधारवादी आन्दोलन की ही उपलब्धी मानी जा सकती है ।

(आ) राष्ट्रीय आन्दोलन :-

अंग्रेजी शासन के खिलाफ उठा आन्दोलन ही " राष्ट्रीय आन्दोलन " है । किसान, मजदूर, विद्यार्थी आदि सब ने इस आन्दोलन में भाग लिया । वृद्धों से भी अधिक नौजवान स्पंदित हुए । पूर्वपीढ़ी के लोग आजीविका के लिए अंग्रेजों के

---

1. वासिरेड्डी नवीन " रंजितरंजनी " [व्यास संकलन] पृ. - 55.

शासन में नौकरी कर रहे थे। लेकिन युवापोढ़ी गांधी जीकी आवाज से जाग उठो। सब अपना सर्वस्व त्यागकर एवं वैयक्तिक समस्याओं को विस्मृतकर आजादी के आन्दोलन में प्रवृत्त हुए। ऐसे ही लोग कहानी के पात्र भी बने।

करुण कुमार को "पोलध्या" कहानी राष्ट्रीय आन्दोलन के साथ-साथ सामाजिक समस्याओं को भी साथ लेकर चलती है। इसके केन्द्र में अछूतों की समस्या भी मुखरित है। "सेवाधर्म" कहानी में विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार का आन्दोलन प्रतिबिम्बित है। विश्वनाथ सत्यनारायण को कहानी "जोवुडि इष्टम्" को उस समय की यूरोपीय एवं भारतीय मूल्यों का अन्तर स्पष्ट है। जमदग्नि की "सर्किल इन्सपेक्टर" कहानी में देश को आजादी के लिए लडनेवाले देशभक्तों पर गोलियाँ चलानेवाले "सर्किल इन्सपेक्टर का चित्रण है। चलम को "सुशीला" कहानी में व्यक्ति प्रेम से भी देश की आजादी के आन्दोलन को प्रमुखता देनेवाली नारी का चित्रण है। गोपीचन्द को "देशम येमय्योट्टू" कहानी में राष्ट्रीय आन्दोलन के समय राजनैतिक दलों की अनैक्यता का चित्रण है। बुर्रा वेंकट सुब्रमण्यम्जी की "ज्योतिष्यम" मुद्दुकृष्ण को "ना मन्त्री", मल्लादिरामकृष्ण शास्त्री को "वेंकर्म", वेलूरिशिव रामशास्त्री की "अराधकम" आदि कहानियों में राष्ट्रीय आन्दोलन का प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। यह आन्दोलन 1915-1935 के बीच में चला।

राष्ट्रीय आन्दोलन के बाद तेलुगु कहानी को प्रभावित करने में हेतुवाद का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है । श्रीपाद, चांगींट सोमयाजुलु, कोड्वटिगंटि कुटुंबराव आदि कहानीकारों में हेतुवाद के सिद्धांतों की भूमिका दिखायी देती है।

(ड) हेतुवाद :-

प्रसिद्ध तेलुगु कवि ज्वालामुखि कहते है -- " तेलुगु कहानी के प्रारंभ में हेतुवाद "को एक जीवन दृष्टिकोण बनाकर किसी ने रचनायें नही की । लेकिन गोपीचन्द और पद्मराजु की कहानियों में हेतुवाद के लक्षण मिलते है । " हेतुवाद " एक समग्र तात्विक दृष्टिकोण की तरह मज़बूत नहीं हुआ । लेकिन उसमें सामाजिक, प्राकृतिक विषयों के प्रति जो वैयक्तिक जिज्ञासा है वह आर्थिक विषयों के प्रति नहीं है ।"[1]

फिर भी हेतुवाद, तेलुगु कहानी के विकास में एक प्रमुख मोड का कारण बना । आधुनिक कथा साहित्य में तथ्य या विषय को चुननेवाले कहानीकारों पर भी इसका प्रभाव रहा है ।

---

1. ज्वालामुखि " रजित रंजनी (व्यास संकलनम्)
   पृ. - 151.

हेतुवाद, वर्तमान कथासाहित्य में अभ्युदय भावनाओं के आगमन और सामाजिक समस्याओं को भौतिक यथार्थता में देखने के लिए कारण बना ।

(ई) तेलंगाणा आन्दोलन की कहानियाँ :-

1936-45 तक पूरा भारत अंग्रेजों के शासन में थी तो तेलंगानाप्रांत निज़ाम शासन में था । अंग्रेजी शासन से भी बहुत ही भयंकर था " निजाम शासन " । यह शासन पूर्णत: जमीन्दारों के हाथों में था ।

। उस जमाने में जमीन्दारों के दुश्चर्यों के विरूद्ध आम जनता की आवाज उठ ही नहीं सकती थी । मन मर्जी से शोषण करते रहे थे । सिर्फ जमीन्दार ही नहीं, सरकारी अफसर भी और उनके नौकर भी लोगों का शोषण करते रहे । उनका मूल लक्ष्य था लोगों को लूटना ।

निजाम की लूट का सामना करने के लिए गाँवों में संघों की स्थापना हुई । इन के नेताओं ने जनता में चेतना लाने की कोशिशें की । इस दशाब्दी के कहानीकार ने, अपनी कहानियों में, निजाम के शासन और जमीन्दारों की लूट से गाँवों में उत्पन्न जनता की समस्याओं का चित्रण किया ।

सुप्रसिद्ध तेलुगु कहानी के आलोचक श्री वासिरेड्डी नवीन कहते हैं — " निजाम के क्रूर उत्पीडन से लेकर जमीन्दार, देशमुख आदि के अत्याचार और यूनियन सेनाओं की घातक क्रियाओं तक साहित्य से अछूता अंश कोई नहीं रहा । प्राय: हर घटना कहानी की वस्तु बनी । जिस प्रकार लडने और आन्दोलन चलाने के लिए यह प्रान्त धुरी का काम कर रहा था, उसी प्रकार साहित्य सृजन के लिए भी । साहित्यक विधायें उस जमीन की चारों ओर, उस जमीन के लिए होनेवाले आन्दोलन के चारों ओर घूमती रही है । साहित्य में समस्त साहित्यिक विधाये आन्दोलन के विषय पर प्रकाश डाले । कहानी, उपन्यास, कविता आदि सब जनता के पास जाकर जीवन के गहरापन छू लिये ।"[1]

(3) द्वितीय विश्वयुद्ध सम्बन्धी कहानियाँ :-

द्वितीय विश्व युद्ध 1939-45 के बीच हुआ था । अंग्रेजों से युद्ध करने के लिए जापान ने भारत पर हमला किया था । आर्थिक दृष्टि से पिछडे भारत इस युद्ध से और पीछे रह गया । फलत: देशवासियों को कठोर आर्थिक संकट झेलना पडा ।

---

1. तेलंगाना पोराट कथलु (कहानी संग्रह) 1982 — वासिरेड्डी नवीन - पृ. 10.

द्वितीय विश्वयुद्ध से जनता के जीवन में और विद्वानों के दृष्टिकोणों में परिवर्तन आये । " कल्पना में, स्वप्नों में न दिखायी देनेवाली प्रेमिका के लिए तड़पना आदि सब धीरे-धीरे गायब होने लगे । वैयक्तिक समस्याओं से भी समाज की भलाई और प्रगति प्रमुख स्थान पाने लगी । " आम आदमी " कथानायक बन गया ।"[1] इस प्रकार तेलुगु साहित्य में " कहानी " ने प्रमुख स्थान पाया ।

प्रथम परंपरा के कहानीकार कथ्य और शैली को अधिक प्रमुखता देने लगे -- " आधुनिक कहानी, प्राचीन कहानी से पूर्णतः भिन्न है । यह समय काटने के लिए पुण्य कमाने के लिए सुख सुविधा के लिए पैदा नहीं हुई । यह पूर्णतः सामाजिक चेतना को साथ लेकर जन्मी । सुषुप्त समाज को जगाने के लिए पैदा हुई ।"[2]

इस के लिए कहानीकारों ने समकालीन समस्याओं को ही कहानियों के कथ्य बनाये । कथ्य में ही नहीं शैली में भी नयापन लाये । यह प्रथम परंपरा के कहानीकारों की विशेषता है । द्वितीय युद्ध के समान्तर में जो भी घटनायें घटीं और जो समस्यायें उठीं वे कहानियों में भी उभरीं ।

---

1. डी. वेंकटरामय्या (तेलुगु कथानिका) तेलुगु साहित्य विकासम पृ. 100.
2. गुरजाड तोलि तेलुगु कथलु - आर.चन्द्रशेखर रेड्डी - पृ. 10.

गोपीचन्द की " पिरिकिवाडु "[1] ﴾ कायर ﴿ चागंटिसोमयाजुलु की " भल्लूकस्वप्नम "[2] ईश्वरराव सेट्टी की " बांबुलु पइडनाडु "[3] लक्ष्मन्न क्रोविविडि की " विजयोत्सवम "[4] आदि द्वितीय युद्ध सम्बन्धी कहानियाँ हैं।

(ऊ) तेलुगु के प्रसिद्ध कहानीकार :

चिन्ता दीक्षितुलु " ﴾ 1891 - 1960 ﴿ :-

श्री गुरजाड अप्पाराव के पश्चात के प्रमुख कहानीकारों में श्री चिन्ता दीक्षितुलु का नाम उल्लेखनीय है। इन्हें तेलुगु के " कथक चक्रवर्ती " ﴾ कहानी सम्राट ﴿ की संज्ञा भी दी गयी। तेलुगु कहानी के स्वरूप एवं स्वभावों को निर्दिष्ट रूप प्रदान करने में उनका महत्वपूर्ण योगदान है। ये " बालवाङ्मय ब्रह्मा " कहलाते हैं। तेलुगु कहानी के विकास में उनका स्थान निर्धारण करते हुए श्री गोर्रेपाटि वेंकट सुब्बय्या जी लिखते हैं --

---

1. गोपीचन्द " भारती " - जून - 45.
2. चांगंटिसोमयाजुलु " प्रजाशक्ति " - दिसम्बर - 43
3. ईश्वरसेट्टी " प्रजाशक्ति कथलु " - अप्रैल - 1942 द्वितीय भाग।
4. लक्ष्मन्न क्रोविविडि - " भारती " - जून - 45.

" अप्पाराव जी के पश्चात् उनके कहानी साहित्य का सीधा प्रभाव दूसरों पर नहीं पड़ा । उनके बाद भी कुछ लोगों ने कहानियों की रचना की है । लेकिन कहानी के स्वरूप को सँवारने का श्रेय दीक्षितजी को ही मिलता है । तेलुगु साहित्य में इस विधा के लिए प्रमुख स्थान प्राप्त करने का श्रेय भी इन्हीं को है । "[1]

दीक्षितुलुजी आगे चलकर कई कहानीकारों के लिए मार्ग दर्शक बने । " विवेच्यकालीन अवधि के ही फ्रायडवादी सिद्धान्तों से प्रभावित भाव एवं भाषा जगत् में क्रान्ति मचाने-वाले श्री गुडिपाटि वेंकटाचलम दीक्षि[illegible] को अपनी कहानियाँ दिखाकर ही प्रकाशनार्थ भेजते रहे हैं । इस बात को स्वयं चलमजी ने ही " प्रेम लेखलु " में स्वीकार किया । "[2]

इस प्रकार दीक्षितुलुने स्वयं अपनी लेखनी द्वारा ही नहीं अपितु दूसरों की लेखनी को मार्ग-दर्शन प्रदान करते हुए तेलुगु भाषा के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है ।

---

1. अक्षराभिषेकम - गोर्रेपाटि वेंकट सुब्बय्या - पृ. 43-44.
2. " प्रेमलेखलु " भाग - 1, चलम - पृ. 86.

दोक्षितुलु सम्प्रदाय बद्ध जीवन के पक्षपाती हैं । इस साम्प्रदायिकता का निर्वाह उनकी अधिकांश कहानियों में देखा जा सकता है । इसी बात की आलोचना करते हुए भी गोरेंपाटि वेंकटसुब्बय्या लिखते हैं -- " दोक्षितुलु सम्प्रदायवादी हैं । यह सम्प्रदायिकता पक्षपाती कुछ निराशा वादी भी हैं । अपने पूर्वजों को महान एवं आधुनिकों को गिरे हुए चित्रित करने के सिवा इन्हें कुछ भी सूझता नहीं ··· ···· ।"[1]

चिन्ता दोक्षितुलु ने भी प्रेम, प्रकृति, सौन्दर्य, भक्ति, राष्ट्रप्रेम आदि से संबद्ध वस्तु को लेकर कहीं साम्प्रदायिकता के प्रचार के रूप में, कहीं आदर्शवादी के रूप में कहीं यथार्थवादी दृष्टिकोण को लेकर कहानियों की रचना की है । वन निवासियों के आचार-विचारों का, भोले एवं क्रूर स्वभावों का जीवित रीतियों का सुन्दर चित्रण इनकी कहानियों की प्रमुख विशेषता है । उन्होंने अपने अनुभव को कहानियों में प्रतिबिंबित किया है । नैतिक आदर्शों की स्थापना उनकी कहानियों का मूल स्वर है ।

---

1. अक्षराभिषेकम - गोरेंपाटि वेंकट सुब्बय्या - पृ. 50.

इनकी कहानियों में छोटे-बड़े, पण्डित-अपढ़, गँवार-शहरी, वनवासी-सभ्य, सनातनी-प्रगतिवादी, श्रमजीवी, सरकारी नौकर आदि विविध वर्गों का प्रतिनिधित्व करनेवाले पात्र दिखायी देते हैं। उन्होंने "गालिपाटु", "दासरिपाट" (खानाबदोश गायक का गीत), "सुगाली कुटुंबम" (सुगाली का परिवार), "पेंपुराणि", जैसी कहानियाँ ही नहीं बल्कि आधुनिकता को भरकर "चटोराव कहानियाँ" नाम से कहानियाँ भी लिखी थी। उनकी "लक्कपिडतलु" (लाक की पुतलियाँ) केन्द्रीय सरकार के द्वारा तथा "बंगारू पिलका" (सोने की शिखा) आन्ध्र प्रदेश सरकार के द्वारा पुरस्कृत भी हुई हैं।

श्री वेलूरि शिवराम शास्त्री : (1892-1967) :-

तेलुगु कहानी के आरंभिक चरण में उसके स्वरूप को सँवारनेवालों में श्री वेलूरि शिवराम शास्त्री अग्रणी है। गोरेपाटि वेंकट सुब्बय्या लिखते हैं --

"महान् कवि के लिए आवश्यक भावना-बल रूपी सहज संपत्ति तथा उत्तम कहानीकार के लिए आवश्यक यथार्थवाद का अद्भुत समन्वय शास्त्री जी की कहानियों में मिलता है। मानव मन की गहराइयों में झाँककर पैनी एवं यथार्थवादी दृष्टि से सजीव

चित्र उपस्थित करने की शक्ति आपकी हर कहानी में पाठक को मुग्ध कर देती है ।"[1]

इनकी कहानियों में जीवन सत्यों का उद्घाटन हुआ है । हर कहानी में जीवन का एक नया अनुभव संयोजित है । इनकी कहानियों में उदात्त भाव, प्रौढ़ शिल्प, सुन्दर चरित्र-चित्रण, मनोहर वर्णन, समुचित व्याख्या के साथ देखे जा सकते हैं । ये पात्रों की मनःप्रवृत्तियों का चित्रण करते हैं । इनकी कहानियों में समाज सुधारकों सी तीव्रता या प्रगतिवादियोंसी क्रूर दृष्टि, या सनातनों-सी संकीर्ण बुद्धि नहीं दिखाई देती । इन्होंने सनातन एवं अधुनातन भावनाओं का समन्वय समुचित रूप में किया है । इनकी तुलना प्रेमचन्द से करते हुए तेलुगु के मान्य आलोचक श्री गोर्रेपाटि वेंकट सुब्बय्या ने कहा -- "शास्त्री जी रवीन्द्र जैसे आदर्शवादी नहीं और शरत्चन्द्र जैसे यथार्थवादी भी नहीं । वे प्रेमचन्द के समान आदर्शोन्मुख यथार्थवादी हैं । उन्होंने किसी नीति का प्रतिपादन या समाज-सुधार या धर्मोपदेश को अपनी कहानियों का लक्ष्य न मानकर कहानियों की रचना करने पर भी उनकी कहानियाँ किसी न किसी आदर्श को व्यक्त करती हैं । शास्त्रीजी की कहानियाँ सामान्यों की तुलना में पण्डितों को अधिक अनुरंजित करती हैं ।"[2]

1· अक्षराभिषेकम् - गोर्रेपाटि वेंकट सुब्बय्या - पृ· 17·

2· - वही - पृ· 19·

शास्त्रोजो ने एक ओर जहाँ " माल""दासरो " ‖ चमार भक्त ‖ " वादि " ‖ रिश्ता ‖ -- व्यत्ययम ‖ अंतर ‖ जैसो सामाजिक इतिवृत्त प्रधान कहानियों को रचना को है तो दूसरो ओर राजनोतिक जागरण को स्पष्ट करने वालो " ओबय्या ", " नक्ल " हैदराबाद जैसो कहानियों को रचना को है । इसो प्रकार वहाँ एक ओर " दत्तु " ‖ गोद लेना ‖ , " तन्मयता ", " क्षमापण ", " वेलि " ‖ बहिष्कार ‖ जैसो भाव-प्रधान कहानियों को रचना को है, वहाँ दूसरो ओर " ड्प्रिश्रमचेंबु " ‖ ताँबे का लोटा ‖ जैसो यथार्थपरक कहानियों को रचना भो को है ।

श्रोपाद सुब्रह्मण्य शास्त्री ‖ 1891-1961 ‖ :-

श्रोपाद सुब्रह्मण्य शास्त्रो जो वास्तविक जोवन में जितने नियमबद्ध हैं उतने हो नोति नियम उनके रचना क्षेत्र में भी देखे जा सकते हैं । तेलुगु कहानो का शुद्ध रूप इन्हीं की कहानियों में देखा जा सकता है । पोरंकि दक्षिणामूर्ति ने लिखा है -- " आन्ध्रों को कथावस्तु को स्वोकार कर, व्यावहारिक तेलुगु भाषा में स्वतंत्र शिल्प विधान लिए बिना किसी पाश्चात्यपन या हिन्दोपन के शुद्ध तेलुगुपन में कहानियों

की रचना करना इनकी विशेषता है ।"[1] इन्होंने ग्रामीण जीवन से विशेषकर वहाँ के ब्राह्मण परिवारों से विषयवस्तु को ग्रहण किया है । इनकी कहानियों में सम-सामयिक सामाजिक समस्याओं का चित्रण पाया जाता है ।

इनकी कहानियाँ भी सुधारवादी दृष्टिकोण को लेकर लिखी गयी हैं । साहित्य के क्षेत्र में कहानी के माध्यम से सांस्कृतिक पथ का निर्माण करना ही इनका प्रधान लक्ष्य रहा है । उन्होंने अपनी कहानियों की विषयवस्तु को मुख्य रूप से आन्ध्रों के जन जीवन से ही स्वीकारा है । उनकी कहानियों को छोटी कहानियों की संज्ञा दी जाने पर भी अधिकांशत: कहानियाँ लंबी हैं । " गुलाबी अत्तरु " (गुलाब का इत्र) " राचमोनुमु तोडु लेकुंडा वेल्लदु " राजा की अर्थी अकेली नहीं बढ़ती " तल्लि प्राणम " (माँ के प्राण), कलुपु मोक्कलु (नार के पौधे), वड्लगिंजलु (धाने) आदि शास्त्रीजी की कहानीकला को प्रतिबिम्बित करनेवाली प्रतिनिधि कहानियाँ हैं ।

---

1. कथानिका वाङ्मयम् - पोरीक दीक्षणमूर्ति - पृ. 13.

श्री मोक्कपाटि नरसिंह शास्त्री (1892)

तेलुगु कहानी साहित्य के इतिहास में शिष्ट हास्य प्रधान कहानियाँ लिखनेवालों में श्री मोक्कपाटि नरसिंह शास्त्री का नाम (विशेष रूप से) उल्लेखनीय है। वे हास्य प्रधान कहानियों के अतिरिक्त भाव-प्रधान, व्यंग्य प्रधान एवं असाधारण वस्तु युक्त कई कहानियों की रचना की है। घटनाप्रधान हास्य की सृष्टि करनेवाली उनकी प्रतिभा विशिष्ट है। अपने देश-विदेश पर्यटन सम्बन्धी वैविध्यपूर्ण अनुभवों के कारण उनकी कहानियों में भी विविधता दर्शनीय है। " चित्रमु " (चित्र) " माँ बाव मरिदि पेल्लि " हमारे साले की शादी " भिक्षुु " (भिक्षुक) " महत्तु " शिल्पव्ययम ", " आखिरमाट" (आखिरी बात) आदि उल्लेखनीय कहानियाँ है।

मोक्कपाटिजी की कहानियों के पात्र अधिकतः मानवीय दुर्बलताओं से युक्त साधारण कोटि के मध्यवर्गीय पात्र है। इनके चरित्र का निर्माण यथार्थ के धरातल पर चित्रित होने पर भी या तो किसी आदर्श की स्थापना करते हैं या जीवन की विषमताओं एवं विभीषिकाओं का सामना करने में असमर्थ होकर आत्महत्या कर लेते हैं या जीवन से पलायन करते हैं।

श्री गुडिपाटि वेंकटाचलम् [1894]

कहानी क्षेत्र में भाव एवं भाषा की दृष्टि से एक नये अध्याय का श्रीगणेश करके तथा स्त्री-पुरुष संबंधों को लेकर थोडे से समय के लिए क्रान्ति उत्पन्न कर, पाठकों के हृदयों में तहलका मचाने के साथ ही समकालीन लेखकों पर अपनी धाक जमानेवाले कहानीकार हैं " श्री गुडिपाटि वेंकटाचलम् ।"[1] इन्होंने यौन सम्बन्धी समस्याओं, विशेषकर स्त्री सम्बन्धी समस्याओं, के चित्रण में अधिक रुचि ली है । श्री गुडिपाटि वेंकटाचलम् स्त्री को पुरुष की भाँति सभी क्षेत्रों में समान अधिकार प्राप्त कराने के पक्ष में हैं । स्त्री को पुरुष की दासी नहीं, बल्कि उसकी साथी के रूप में, सुख-दुःखों में उसका साथ देनेवाली के रूप में देखना चाहते हैं । यौन सम्बन्धी ज्ञान युवक-युवतियों को पूर्ण रूप से प्राप्त हो । वे चाहते है कि नारी को भी पुरुष की भाँति इतनी स्वतंत्रता अवश्य हो कि वह अपनी पति को किसी सामाजिक दबाव के बिना चुन सके । क्रान्तिकारी विचारों को अपनी कहानियों में प्रस्तुत कर आपने समकालीन साहित्य जगत् में तहलका मचा दिया । इन्होंने विवाह के नाम से होनेवाले अन्यायों तथा अत्याचारों का कटु विरोध किया ... ... ।"[2]

---

1. आनन्दम् - चलम् - पृ. 30.
2. अक्षराभिषेकम - गोरेपाटि वेंकट सुब्बय्या - पृष्ठ 75.

इसका आशय है कि जीवन का वास्तविक सुख एवं आनन्द एक स्वस्थ समाज में ही सम्भव है । इन्होंने समाज में स्त्री की दयनीय दशा में सुधार लाने की दृष्टि से अपनी कलम चलायी है ।

श्री वीरेशलिंगम पंतुलुजी को अगर गद्य निर्माता कहा जाता है तो चलमजी को तेलुगु कहानी के " युग निर्माता " की संज्ञा दी जा सकती है ।

चलमजी की कहानियों की कथावस्तु स्त्री-पुरुष सम्बन्धों को लेकर चलती है । सेक्स को वे महान शक्ति एवं आनन्द प्रदान करनेवाले के रूप में स्वीकारते है । उनका विश्वास है कि वैवाहिक बन्धन के कारणों से ही मानव-समाज में सुख-शान्ति लुप्त हो रही है । सहजप्रेम नष्ट हो रहा है । असल में विवाह की परिपाटी ही असभ्य है । विवाह के नाम पर स्त्री-पुरुषों पर किये जाने-वाले अन्याय एवं अत्याचारों का वे कुद्ध विरोध करते हैं । इनकी सभी रचनायें स्त्री-केन्द्रित हैं । नैतिक रूप से पतित रुक्मिणी समाज द्वारा उपेक्षित किये जाने पर अपना आक्रोश प्रकट करती हुई कहती है कि " सूद लेकर घर उजाडनेवाले बडे लोग, घूसखोर पुलिसवाले, बहुओं को आत्महत्या करने के लिए विवश करनेवाली विधवा सास, पति को धोखे में डालकर पतिव्रता का अभिनय करनेवाली स्त्रियाँ आश्चर्य यह है कि ये सब मेरे मुँह पर ही मुझे गालियाँ देते है ।"[1]

---

1. भार्या (कहानी व कहानी संग्रह) - चलम - पृ. 9.

अपने पति के द्वारा दी गयी यातनाओं के अतिरेक के कारण ही वह आत्महत्या करने से पहले भगवान से प्रार्थना करती है । " हे भगवान ! किसी भी जन्म में, कभी भी मुझे पति नहीं चाहिए । जन्म जन्मान्तर तक मुझे अविवाहिता रखने की कृपा करो । यही मेरी प्रार्थना है ।"[1]

नायुडु पिल्ल अनमेल विवाह की समस्या को प्रस्तुत करती है एक जगह नानम्मा कहती है --- " जग को अपनी मुस्कानों से भर देनेवाले बच्चों की माँ बनने के लिए ही सृष्टि ने मुझको पैदा किया है, बड़ा किया और दमन न कर सकने - वाली इस इच्छा को भी प्रदान किया है । लेकिन इस समाज, इस जाति एवं इस विवाह के नियम ने मुझे इस बुड्ढे को दिया है । सृष्टि नहीं रुकती । समाज नहीं रुकता । जलानेवाली ये इच्छाएँ भी नहीं रुकती । अन्दर ही अन्दर जल-जलकर नष्ट होनेवाली मैं ही हूँ । मुझे छूना । मेरा दूध पीना । मेरे बच्चों के लिए कितना प्रिय नहीं होगा ।"[2]

---

1. भार्या (कहानी व कहानी संग्रह) - चलम - पृ. 26

2. नायुडु पिल्ल - भार्या (कहानी संग्रह) पृ. 117.

वह सोचती है कि " मुझे माँ बनाने में असमर्थ व्यक्ति को अपना पति कैसे मानूँ ? क्या बच्चे पैदा करना मेरा हक नहीं ? सृष्टि में कोई भी मादा-प्राणी बिना बच्चे पैदा किये रह सकी है ? इस वृद्ध पति के कारण मैं अपना यह हक क्यों छोड़ूँ ? " इसीलिए वह अपने बचपन के मित्र पार्थसारथी से अपना शारीरिक संबंध जोड़ लेती है और उसके बच्चे को माँ बनती है । " स्त्री " को विभिन्न कोणों में देखने में चलम् पूर्णत: सफल हो गये थे ।

श्री विश्वनाथ सत्यनारायण : (1859 - 1972) :-

कवि, नाटककार, गीतकार, उपन्यासकार और कहानीकार के रूपों में आधुनिक तेलुगु वाङ्मय को समृद्ध करनेवालों में सर्वाधिक ख्यातिप्राप्त ज्ञानपीठपुरस्कार विजेता कवि सम्राट श्री विश्वनाथ सत्यनारायण जी है । वे प्राचीन और अर्वाचीन मान्यताओं के बीच सामंजस्य स्थापित करने के हिमायती है । भारतीय धर्म, दर्शन एवं इतिहास का प्रभाव उनपर बहुत है । वे भारतीय संस्कृति के पुजारी है । कहानीकार के रूप में तेलुगु साहित्य को उनकी देन महत्वपूर्ण है ।

" मावलो दुर्गम लो कुक्का " (मावली गढ़ नामक गाँव का कुत्ता) कहानी एक व्यंग्य प्रधान कहानी है। इसमें स्टेशन मास्टर कहता है -- " वर्ण व्यवस्था होनी चाहिए। हमारे पूर्वजों ने उसको बनाया है। उन्होंने जिस प्रयोजन सिद्धि के लिए इस व्यवस्था को बनाया है, उसे जाने बिना हमको उसे हटाना नहीं चाहिए।"[1] भद्र व्यक्ति कहता है --

" मैं कहूँगा कि उसे (वर्ण व्यवस्था) मिटा देना चाहिए। इसी व्यवस्था के कारण ही कई भेद उत्पन्न हो रहे हैं। कुछ लोग तो यूँ ही अपने आपको महान् समझने लग गये हैं। निम्नवर्णवालों पर अधिकार चला रहे हैं। वर्णेतर भोजन एवं वर्णेतर विवाह होते रहें, तो ही देश को मुक्ति मिलेगी।"[2] इसमें " कुत्तों " में भी वर्ण व्यवस्था सफल होने को कोशिश को। लेकिन नहीं हो पाया। उनकी एक और प्रसिद्ध कहानी है " मुग्गुरु बिच्च गाल्लु " (तीन भिखारी)। इस कहानी में एक जगह है -- " संसार में कितने ही धर्म है और इन धर्मों के बीच झगडे हैं। इन धर्मों की सृष्टि

---

1. मावली दुर्गम लो कुक्क (कहानी) " चिन्नक्थलु " भाग - 1 विश्वनाथ सत्यनारायण पृ. 34.
2. " मुग्गुरु बिच्चगाल्लु " - वही - पृ. 194.

किसने की है ? सन्यासी लोग संयासी का अर्थ है " भिखारी "
पोट्टूरि वीरब्रह्मन्न, वेमन्ना कौन है ? मुहम्मद, शंकराचार्य -
ये लोग सब कौन है ? सन्यासी, भिखारी । बुद्ध को भी
अपने धर्म की स्थापना करने के पूर्व सन्यासी बनना पडा ।"

श्री कृष्णकुमार (कन्दुकूरि अनन्तम) (1901-1956) :-

कृष्णकुमार ने आन्ध्र के ग्रामीण जीवन का अत्यन्त सूक्ष्म नीरीक्षण एवं परीक्षण किया । तेलुगु कहानी में ग्रामीण जीवन के सुख-दु:ख, वहाँ की समस्याएँ आर्थिक एवं सामाजिक विषमतायें आदि को करुण रस मिश्रित शैली में प्रस्तुत कर तेलुगु कहानी साहित्य में अपना एक विशिष्ट स्थान बना लिया है ।

कृष्णकुमार की कहानियों में किसानों की गरीबी, उनकी यातनाएँ, उनका शोषण, मजदूरों की विवशता एवं दैनन्दिन जीवन की समस्याएँ पिछडी हुई जातियों के प्रति उच्च जाति के लोगों की उपेक्षा दृष्टि, जमीन्दारों का विलासमय जीवन आदि ग्रामीण जीवन की समस्याओं का समग्र चित्रण प्रस्तुत किया है । " बिल्लल मोलताडु (कमर में बाँधा जानेवाला चपरास), सन्न-जीवालु (निम्न वर्गीय प्राणी (आकलिमंटलु (क्षुधा ज्वालाएँ), व्यथा कालुव (व्यारी मातव (आदि प्रमुख कहानियाँ हैं ।

कोडवटिगंटि कुटुम्बराव : [1909]

मध्यवर्गीय जीवन को लेकर यथार्थवादी दृष्टि से तेलुगु कहानी को समृद्ध करने का श्रेय श्री कोडवटिगंटि कुटुम्बराव को है। वे, अपने युग की परिस्थितियों के प्रति जागरूक तथा समकालीन समस्याओं के चित्रण में अधिक रुचि लेनेवाले सजग लेखक है।

मध्यवर्ग के लोगों के जीवन की अनेक समस्याओं को कथावस्तु के रूप में ग्रहणकर अनगिनत कहानियों की रचना करने में कुटुम्बराव अद्वितीय हैं। बोनादेवी ने इनकी कहानियों के संबंध में लिखा है -- " मध्यवर्ग के लोगों की समस्याओं को लेकर कई लेखकों की लेखिनियों से कई बैंगनों भर कहानियों की सृष्टि हुई है। लेकिन कुटुम्बरावजी की कहानियाँ इनसे भिन्न हैं। इनकी कहानियों में " सिल्ली सेंटिमेन्ट " के लिए स्थान नहीं। वैज्ञानिक प्रतिपादन तथा सामाजिक जागरण ही इनकी कहानियों में है। मध्यवर्ग की ऐसी कोई समस्या नही है जो उनकी समझमें न आयी हो और उनसे अछूती रह गयी हो।"[1]

मार्क्सवाद का अध्ययन करने के पश्चात् सामाजिक विषमताओं को समझने और कहानियों के द्वारा सामाजिक प्रयोजन साधनों की बात कुटुम्बरावजी ने पहचानी। तब से एक प्रगतिवादी साहित्यकार के रूप में साहित्य के माध्यम से लोगों को उद्वीलित करने और जीवन के

---

1. तेलुगु कथा वस्तुवु [लेख] " तेलुगु कथा " - बोनादेवी - पृ. 5

यथार्थ रूप को समझाने में विश्वास लेकर रचनायें करते रहे थे। अन्ध-विश्वास एवं सामाजिक रूढ़ियों का खण्डन करने में श्री चलम् के बाद कुटुम्बराव जी का ही नाम लिया जा सकता है।

उच्चवर्ग एवं निम्नवर्ग, शोषक एवं शोषित, स्त्री और पुरुष, धनिक तथा निर्धन, शिक्षित एवं अशिक्षित, बल एवं निर्बल के बीच के संघर्ष का, उच्च वर्गों, शोषक वर्ग, धनिकों एवं बलवानों को दमन प्रवृत्ति का चित्रण कर कमजोर पक्ष का समर्थन करना कुटुम्बरावजी की कहानियों में स्पष्टतः देखा जा सकता है।

श्री मधुरान्तक राजाराम, कुटुम्बरावजी के पात्रों के वैविध्य के सम्बन्ध में लिखते हैं-- " ढोंठ पतियों, सनातन पत्नियों, व्यवहारदक्ष कनकय्या जैसे लोगों, बेरोजगारों, बाल विधवाओं, बन्दर की पकड़वाले पार्वतीशम् जैसे लोगों, जीवन से डरनेवाले सीतय्या जैसे लोगों, पागल शंकरय्या " त्रैसन " जैसी लेखिकाओं का एक जुलूस यदि निकाला जाय तो उसमें अनन्त वैविध्य दृष्टिगोचर होता है।"[1]

निलवनीरु (रुका हुआ पानी) मोंडिवाडु (हठीला) स्वागतम्, कारुण्यम्, वरप्रसादम्, स्परितील्ल (सौतेली माँ) आडजन्म (स्त्री जन्म) महाप्रस्थानु, दीपावली आदि उनकी उल्लेखनीय कहानियाँ हैं।

---

1. तेलुगु कथा - पात्र चित्रण (लेख) " तेलुगु कथा " --- श्री मधुरान्तकम राजाराम - पृ. 43.

गोपीचन्द (1910-1962) :-

तेलुगु कहानी को राजनीतिक जागरण से मुक्त करने का श्रेय श्री गोपीचन्द को है। वे कला को कला के लिए न मानकर सामाजिक प्रयोजन की दृष्टि से देखते थे। उन्होंने राष्ट्रीय चेतना से प्रेरित होकर अपनी रचनाओं के द्वारा लोगों में भावात्मक क्रान्ति उत्पन्न करने का प्रयास किया। इनका विश्वास है कि जब तक भावना में क्रान्ति नहीं उत्पन्न हो सकती तब तक देश दास्य श्रृंखला से मुक्त नहीं हो सकता। अतः वे लोगों में भावना के स्तर पर क्रान्ति लाने के पक्षधर थे। इनकी कहानियों में मध्यवर्गीय जीवन को ग्रामीण जीवन से संबंधित विषयों को और वैयक्तिक भावनाओं को प्रधानता दी गयी है।

गोपीचन्द की प्रगतिशीलता के बारे में तेलुगु के प्रसिद्ध कहानीकार श्री पालगुम्मि पद्मराजु लिखते हैं — "गोपीचन्द की हर कहानी में एक नवीनता एवं विशिष्टता पायी जाती है। जीवन के उच्च विचारों तथा घटनाओं का संक्षिप्त रूप में थोड़े ही शब्दों में चित्रण करना आपकी अपनी विशेषता है।" [1]

"हिन्दू पातिव्रत्यम्" एक व्यंग्यात्मक कहानी है। पण्डित, वकील और डाक्टर सामाजिक परिस्थितियों के बारे में चर्चा करते। गोपी उसे सुनता। पण्डितजी हिन्दू देश पातिव्रत्य की महत्ता का बखानकरते हैं तो डाक्टर व्यंग्य से प्रेमचन्द के एक कथन का हवाला देते हैं —

---

1. गोपीचन्द स्मारक संचिका - पृ. 97.

" इंगलैण्ड व्यापार के लिए प्रसिद्ध है । फ्रांस विलासपूर्ण स्त्रियों के लिए प्रसिद्ध है । जर्मनी सेनाओं के लिए प्रसिद्ध है और भारत पातिव्रत्य के लिए प्रसिद्ध है । "[1]

एक जगह पर कहानीकार हिन्दू समाज की सडी हुई परिस्थितियों के बारे में व्यंग्य करते हैं -- " आज हिन्दू समाज की स्थिति ऐसी सड रही है ..... माता - पुत्र, सास-बहू, माता-पुत्री तथा पति-पत्नी में नहीं पटती । लेकिन उन सबको एक ही छत के नीचे रहना पड़ता है । "[2] हिन्दू स्त्री के तथाकथित पातिव्रत्य पर इन शब्दों में तीखा व्यंग्य किया गया है " पत्नी घर में पातिव्रत्य पकाती है तो पति दूसरे घर में चीजें खरीदता है । "[3]

समसामयिक, शहरी तथा ग्रामीण वातावरण का धार्मिक, सामाजिक तथा राजनीतिक दृष्टियों से पर्याप्त चित्रण उनकी कहानियों की विशिष्टता है ।

बुद्धिबाबु § 1916-1967 § :-

मानसिक अन्तर्द्वन्द्व को मनोवैज्ञानिक आधार देकर चित्रण करनेवालों में श्री बुद्धिबाबु का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है । इन्होंने स्त्री-पुरुषों की मानसिक प्रवृत्तियों का अत्यन्त सूक्ष्म परीक्षण कर अपनी रचनाओं में उनका

---

1. गोपीचन्द स्मारक संचिका " अन्ता भर्योल्लोनेउंडि " पृ. 62
2. - वही - पृ. 67.
3. - वही - पृ. 66 - 67.

यथार्थ अंकन किया है। प्रवृत्ति और परिस्थितियों का प्रभाव व्यक्ति पर कहाँ तक पड़ता है और उससे व्यक्ति अपना दृष्टिकोण कैसे बना लेता है, जीवन को बनाने और बिगाड़ने में इन प्रवृत्तियों का व्यक्ति के जीवन में कहाँ तक स्थान है, इनकी छानबीन जिस बारीकी और कुशलता के साथ अपनी रचनाओं में बुच्चिबाबु ने की है, उसकी समता तेलुगु का कोई अन्य कहानीकार नहीं कर सकता।

वस्तुग्रहण में तथा उसे कलात्मक ढंग से अभिव्यक्त करने केलिए उत्तम शिल्प विधान के प्रयोग में, कवि से बढ़कर अपने भावावेश को प्रभावोत्पादक शब्द-चित्रों में व्यक्त करने में, जीवन की समस्याओं तथा मानव प्रकृति को तार्किक ढंग से विश्लेषित कर, नयी परिभाषा गढ़ने तथा उसमें हास्य का समन्वय करने में बुच्चिबाबु ने जिस नये मार्ग को चुना है उससे तेलुगु कहानी साहित्य में एक नवीन धारा प्रवाहित हुई।

बुच्चिबाबु की कहानियों की आलोचना करते हुए आचार्य कोलकलूरि इनाक लिखते हैं -- "मानव के प्रति, समाज के प्रति, स्त्री-पुरुष सम्बन्धों के प्रति गौरव भाव रखनेवाला लेखक अपनी कहानियों में मानव की कमजोरियों को क्षमा दृष्टि से तो देख पाया है लेकिन मूर्खता को क्षमा नहीं कर पाया है। पूर्ण मूर्खत्व पर इनकी कहानियाँ चाबुक की चोटों के समान है।"[1]

---

1. साहित्य व्यासालु - श्री कोलकलूरि इनाक - पृ. 108.

उनकी कहानियाँ मनोविश्लेषण प्रधान कहानियाँ होने के कारण कथानक का विकास मन्द गति से चलता है लेकिन पात्रों के प्रत्येक कार्य का सूक्ष्म परीक्षण एवं विश्लेषण अधिक रहता है । बाह्य वातावरण की अपेक्षा आन्तरिक वातावरण के चित्रण को बुच्चिबाबु अधिक प्रमुखता देते हैं । इनकी अधिकांश कहानियाँ उत्तम पुरुष शैली में लिखी गयी हैं।

बुच्चिबाबु की प्रसिद्ध कहानियाँ हैं - पोगलेनि निप्पु ‹बिना धुएँ का अंगार›, चैतन्यस्रवन्ती, अडवि कापिनु वेन्नेल, नन्नु गुरिंचि कथ व्रायवु ‹मेरे बारे में कहानी नहीं लिखोगे ?› "बी", "कोत्तवंतेन पातनीरु ‹नया पुल पुराना पानी› आदि हैं।

VI-आधुनिक हिन्दी और तेलुगु कहानियाँ ‹साम्य और वैषम्य› :-

देश में राजनीतिक, सामाजिक धार्मिक तथा साहित्यिक वातावरण लगभग समान होने पर भी हिन्दी तथा तेलुगु प्रान्त अलग-अलग होने के कारण समस्याओं, प्रवृत्तियों, मान्यताओं तथा विचार धाराओं में भी समय तथा परिस्थिति के कारण कुछ अन्तर होना स्वाभाविक ही है । यही इनकी रचनाओं में भी परिलक्षित होता है । एक ही विचार, भावना अथवा कल्पना को भिन्न स्थानों के कहानीकार भिन्न-भिन्न रूपों में देखते और कहते रहते हैं । भाषा तथा संस्कारगत अन्तर के कारण एवं रीति रिवाजों की भिन्नता के कारण हिन्दी तथा तेलुगु के कहानीकारों के द्वारा समस्याओं के चित्रण में एवं प्रस्तुत करने में प्रवृत्तियों तथा अनुभूतियों में भिन्नता दृष्टिगोचर होती है । हिन्दी और तेलुगु की कहानियों में विकासात्मक और प्रवृत्तिमूलक जो भी साम्य अथवा वैषम्य दृष्टिगोचर होता हैं, वे निम्न प्रकार है —

साम्य :

1• हिन्दी और तेलुगु की उन्नीसवी शती के कहानी साहित्यों में बीसवी शती की कहानी के निर्माण अथवा विकास की जड़े मिलती हैं ।

2• उन्नीसवी शती के पूर्वार्द्ध की रचनाओं की प्रवृत्ति मनोरंजनात्मक और उपदेशात्मक रही है । जादुई, तिलस्मी तथा चमत्कारपूर्ण कथाओं के द्वारा लोगों का मनोरंजन करना ही कथाकारों का प्रधान लक्ष्य रहा है ।

3• प्राचीन वैदिक, पौराणिक कथाओं तथा पंचतन्त्र एवं जातक कथाओं का प्रभाव इस अवधि की दोनों कथा साहित्यों पर स्पष्ट दिखायी देता है ।

4• इस अवधि की कथा रचनाओं में रोमांचकारी घटनाओं तथा अमानवीय शक्तियों का समावेश पाया जाता है । " रानी केतकी की कहानी " इसका अच्छा उदाहरण है ।

5• समाज में सुधार लाने की प्रवृत्ति हिन्दी में भारतेन्दु हरिचन्द्र से, तेलुगु में कंदुकूरि वीरेशलिंगम जी से मिलती है ।

6• बीसवी शती के आरंभ से ही कहानीकार सामाजिक तटस्थता को छोडकर समाज सापेक्ष प्रवृत्ति को ग्रहण करने लगे ।

7• आधुनिक कहानीकारों में यथार्थवादी और आदर्शवादी प्रवृत्तियाँ तथा अंशत: मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति का समावेश देखा जा सकता है ।

आधुनिक कहानी में कई साम्य देखने पर भी क्षेत्रीय प्रभावों, प्रवृत्तियों तथा वैयक्तिक मान्यताओं के कारण अनेक वैषम्य भी दृष्टिगोचर होते हैं --

वैषम्य :

1. " रानी केतकी की कहानी " के समानान्तर की कहानी तेलुगु में उन्नीसवीं शती के आरंभ में नहीं लिखी गयी ।

2. हिन्दी में उन्नीसवीं शती के कथासाहित्य में नैतिक आदर्शों का तथा प्रेममूलक आदर्शों का प्रतिपादन हुआ है । लेकिन तेलुगु में इनके अतिरिक्त चारित्रिक आदर्शों का प्रतिपादन हुआ है । विशेष बात यह है कि " मर्यादरामन्न कथलु " , " विनोद कथलु ", " विचित्र कथलु " शीर्षकों से प्रकाशित कथा संग्रहों में संकलित कहानियों में अश्लीलता भी मिलती है ।

3. हिन्दी की सर्व प्रथम मौलिक कहानी कौन-सी है । इस सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न कहानियों के नाम सामने आते हैं । तेलुगु में सिर्फ श्री गुरजाड अप्पाराव की " दिद्दुबाटु " कहानी को ही यह गौरव प्राप्त है ।

4. हिन्दी में अरबी, मराठी, अंग्रेजी तथा बंगला से अनुवाद प्रस्तुत किये गये तो तेलुगु में केवल अंग्रेजी से ही विदेशी कहानियाँ अनूदित हुईं ।

5. हिन्दी में इंशाअल्लाह खाँ ने भाषा सम्बन्धी नये प्रयोग को लक्ष्य करके " रानी केतकी की कहानी " की रचना की तो कहानी के माध्यम से भाषा प्रयोग तेलुगु में उन्नीसवीं शती के उत्तरार्द्ध में " परवस्तु चिन्नयसूरि " की नीतिचंद्रिका द्वारा और बीसवीं शती के

प्रथम दशक में श्री अप्पाराव जी की " दिद्दुबाटु " [सुधार]
आदि कहानियों के द्वारा हुआ । दोनों ने ही अपने परवर्ती कथाकारों को भाषा की दृष्टि से प्रभावित किया । स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व तक श्री परवस्तु चिन्नयसूरि का प्रभाव देखा जाता है तो अप्पारावजी का प्रभाव धीरे-धीरे अपनी जड़ों को फैलाते हुए स्वातन्त्र्योत्तर काल में स्थिर हो गया है ।

6. हिन्दी कहानीकारों में प्रसाद परंपरा और प्रेमचन्द परंपरा का विभाजन है लेकिन उस प्रकार तेलुगु में नहीं किया जा सकता । तेलुगु का प्रत्येक कहानीकार अपनी अलग विशेषता को लिया हुआ है । यहाँ एक दूसरे का अनुकरण या अनुसरण करने की प्रवृत्ति दिखायी नहीं देती । कभी-कभी दो तीन कहानीकारों के दृष्टिकोण मिल सकते हैं लेकिन उनमें वस्तु एवं शिल्पगत अन्तर स्पष्ट दिखायी देता है ।

7. हिन्दी और तेलुगु कहानीकारों पर गाँधी जी के सिद्धान्तों तथा आदर्शों का प्रभाव पड़ा । देश प्रेम, आजादी के आन्दोलनों, विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार, अंग्रेजी शासन का विरोध, खादी का प्रचार, हरिजनोद्धार, छुआछूत का विरोध, गाँवों का पुनरुद्धार आदि का चित्रण हिन्दी कहानियों में ही अधिक दिखायी पड़ता है । तेलुगु में इसके विपरीत व्यक्ति-प्रेम, स्त्री-पुरुष का स्वच्छन्द प्रेम तथा वैयक्तिक समस्याओं आदि का चित्रण दिखायी देता है । हिन्दी कहानियों में समष्टिगत विचारधारा का प्रतिफलन अधिक हुआ है तो तेलुगु में व्यक्तिगत विचारधारा का ।

8· वस्तु तथा शिल्प को वैविध्य की दृष्टि से विवेच्यकाल के किसी भी एक कहानीकार को प्रेमचन्द के समकक्ष नहीं ठहराया जा सकता । वस्तु की दृष्टि से करुणकुमार को तथा आदर्शोन्मुख यथार्थवादी प्रवृत्ति की दृष्टि से चिन्तादीक्षितुलु तथा मोक्कपाटि नरसिंह शास्त्री जी को प्रेमचन्द के निकट ठहरा सकते हैं ।

9· तेलुगु में श्री मुनिमाणिक्यम नरसिंहराव की कान्तम् " आन्ध्र के घर-घर में मिल सकती है । इनकी पचहत्तर प्रतिशत कहानियों की नायिका " कान्तम् " ही है जो मुनिमाणिक्यम नरसिंह राव जी की अपूर्व सृष्टि है । " कान्तम " एक आदर्श गृहिणी, पत्नी, ममतामयी माँ ही नहीं है अपितु साधारण स्त्री सुलभ ईर्ष्या, द्वेष, प्रेम करुणा आदि गुणों से भी विभूषित है । यह पात्र तेलुगु कथा साहित्य को मुनिमाणिक्यम नरसिंहराव की अमरदेन है । " कान्तम " जैसे पात्रों की वैविध्यपूर्ण सृष्टि हिन्दी में किसी भी कहानीकार की कहानियों में नहीं हुई है ।

द्वितीय अध्याय

कहानी की नयी दिशाएं : नयी कहानी (1951 - 60)

2• कहानी की नयी दिशायें : नयी कहानी [1951-60]

1• पूर्व भूमिका

2• नयी कहानी : नामकरण

3• कहानी परंपरा और नयी कहानी

4• नयी कहानी में भारतीय जीवन चित्रण और: शहर और गाँव

5• अस्तित्ववाद का प्रभाव

6• प्रवृत्तियाँ [हिन्दी - तेलुगु]

7• उपलब्धियाँ [हिन्दी-तेलुगु]

8• हिन्दी और तेलुगु की नयी कहानियाँ

9• प्रवृत्तियाँ : तुलनात्मक अनुशीलन

[अ] परिंदे [निर्मल वर्मा] - मध्यलांकम [हितश्री] तुलना

[आ] जहाँ लक्ष्मी कैद है [राजेन्द्र यादव] - एदुरुचूसुन्न
मुहूर्तम - तुलना [पालगुम्मिपद्मराजु]

[इ] चीफ की दावत [भीष्म साहनी] - तुलना
नया जीवन [कोडवटिगंटि], अन्तरात्मा [कुटुंब राव]
भोगममिनीष [मुनिपल्लेराजु]

[ई] पिता [ज्ञानरंजन] - पातपगलु - कोत्तपगलु [गोपीचन्द]
वापसी [उषाप्रियंवदा] - तुलना

[उ] "तीसरीकसम उर्फ मारे गये - [तूफान]
गालीवाना [पालगुम्मि पद्मराजु]
गुलकाम [फणीश्वरनाथ रेणु] - तुलना

(ऊ) ज़िन्दगी और जोंक (अमरकान्त) एम्बु (पागोट्टिलोमयागुल) -- तुलना

(ऋ) मलबे का मालिक (मोहन राकेश) -- नोट्टि (पुराणम सुब्रह्मण्य शर्मा) ---- डाक्टर्स डैलमा (राघूर भरद्वाजा) तुलना

(ए) दिल्ली में एक और मौत (कमलेश्वर) यही सच है (मन्नू - भण्डारी) पिल्लमोलत्राहु (करूणकुमार) नन्नुगुरिंच कथा रायदु (बुच्चिबाबु) एक अनुशीलन

10. निष्कर्ष

-=-=-=-

2· कहानी को नयी दिशायें : नयी कहानी [1951-1960]

1· पूर्व भूमिका :-

द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति तथा भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति के बीच के समय में बहुत अंतराल नहीं रहा । फलत: द्वितीय विश्वयुद्ध के परिणामों ने देश के जीवन को भी व्यापक रूप से प्रभावित किया । 15 अगस्त, 1947 को एक ओर भारत ने परतन्त्रता की श्रृंखला को तोड़ा तो दूसरी ओर देश के विभाजन की विभीषिका सहनी पड़ी । विभाजन से दोनों ही देशों में साम्प्रदायिक दंगे, लूट-पाट आगजनी और हत्याकाण्ड हुए । स्त्रियों, बहिनों और बेटियों की इज्जत लूटी गई । नन्हें बच्चों को भी मौत के घाट उतार दिया गया । यह एक विचित्र स्थिति थी । जो हिन्दू और मुसलमान स्वतन्त्रता-संग्राम में साथ-साथ कार्य कर रहे थे, वे ही परस्पर खून के प्यासे बन गये । विस्थापितों और शरणार्थियों की समस्या ने देश में अस्थिरता उत्पन्न की ।

पर स्वतंत्र राष्ट्र की सरकार ने इस समस्या को सुलझाने का प्रयास किया था । नये जनतांत्रिक शासन तंत्र से लोगों में नयी आशाओं का संचार हुआ ।

आजादी के बाद विभाजन की घटनाओं ने युवापीढ़ी को अन्दर से तोडा और झकझोर दिया । पुरानी और नई-दोनों पीढ़ियों के मन में जमें हुए विश्वास उखड़ गये । विभाजन ने मानवतावादी मूल्यों [1] को नष्ट कर दिया । सारा देश मोहभंग की स्थिति में जकड़ गया । द्वितीय विश्व युद्ध के बाद ही देश आर्थिक दृष्टि से अत्यन्त खोखला हो गया था ।

26 जनवरी, 1950 को देश में भारतीय संविधान लागू किया गया और भारत प्रभुतासम्पन्न जनतांत्रिक गणराज्य बना ।

स्वतंत्रता के पश्चात् भारतवर्ष में आर्थिक जागृति की लहर आयी और साथ-साथ समाजवादी विचारों का प्रसार हुआ । रूस में हुई त्वरित आर्थिक प्रगति से प्रभावित हुआ । उसे अपना आदर्श मानकर अर्थ व्यवस्था को सुदृढ़ और सुव्यवस्थित करने के लिए देश ने कदम उठाये । पंचवर्षीय योजनाओं का सुनियोजित कार्यक्रम तैयार किया । इन के परिणामस्वरूप भारत में कुछ हद तक कृषि एवं उद्योगों का विकास हुआ । योजनाओं को संपन्न करने के लिए भारत ने विदेशों से ऋण भी लिया । देश की जनता ने सुख-समृद्धि के जो सपने देखे थे, वे धूमिल पड़ने लगे । देश की योजनाएँ कागजी सिद्ध होती गई । जमींदारी उन्मूलन तथा भूमि सुधार कानूनों से किसानों में भी चेतना आयी तथा वे अपने अधिकारों के प्रति सजग हो गये ।

1\. जिस आदमी ने इस रक्तपात को झेला और भोगा था, उसके भीतर सदियों में बने और करोडो जिन्दगियों द्वारा बनाये गये विश्वासों का ध्वंस हुआ था । इसलिए देशों की सीमाओं को पारकरनेवाले शरणार्थियों से भी ज्यादा शरणार्थी वे थे, जिनके मानवीय मूल्यों की हत्या हो गई थी -- -- कमलेश्वर - नई कहानी की भूमिका - 1978 - पृ॰ 59॰

सदियों से अभावग्रस्त देश के विभिन्न वर्गों में छीना-झपटी, लूट-खसोट का वातावरण उत्पन्न हो गया । सम्बन्धों में शिथिलता आयी, अपनत्व का भाव समाप्त होता गया । भाई-चारा एक खोखला नारा मात्र रह गया । स्वार्थ के रिश्ते बढ़ते गये - सब रिश्तों के मूल में स्वार्थ निहित रहा । धन सर्वोपरि होने लगा । जो सम्पन्न थे, वे अपने साधनों, शक्ति एवं प्रभाव के कारण और भी अधिक सम्पन्न और समृद्ध होते गये । जो गरीब और सुविधा रहित थे, वे और भी अधिक विपन्न होते गए । सामान्य और मध्यवर्ग का व्यक्ति देश में बढ़ती हुई महंगाई और असुविधाजनित परिस्थितियों के बीच पिसने लगा ।

स्वतंत्रता संग्राम के समय में जेल गये कुछ अवसरवादी लोग भारत के भाग्यविधाता और निर्णायक बनने लगे और जेल में बिताये गये कष्टमय समय का पूरा-पूरा मूल्य वसूल करने में लीन हो गये । इस प्रकार पुराने देशभक्त अपनी स्वार्थ की सिद्धि में डूब गये । देश के नेता ही देश के भक्षक और शोषक बन गये । राजनीति ... भ्रष्टाचार का ही पर्याय बन चुकी थी । देश के कोने-कोने में भाई-भतीजावाद का प्रचलन हो गया, विशेष रूप से राजनीति में ।[1] बाप के बाद बेटा या बेटी, पति के बाद पत्नी, भाई के बाद बहिन राजनीतिक चुनावों में उतरने लगे । पद का वितरण भी सगे-सम्बन्धियों में ही होता गया । जातिवाद का तो राजनीतिक क्षेत्र में बोल-बाला हो गया । अफसरशाही बढ़ने के साथ भ्रष्टाचार और भी बढ़ा । अफसरशाही ने देश के आर्थिक व सामाजिक ढांचे को और भी अधिक कमजोर कर दिया । नैतिकता का स्थान, कालाबाजारी, रिश्वत और घूसखोरी ने ले लिया ।[2] अब देश में सफलता की कुंजी रिश्वत मानी जाने लगी ।

---

1. राजनीति में भाई-भतीजावाद और मित्रवाद से लेकर पड़ोसवाद और प्रांतवाद और सहेलीवाद तक की प्रक्रिया सर्वतोमुखी विकास के साथ विकसित हुई -- विधायकों और मंत्रियों के पद वर्पोती बन गये -- डॉ. देवेश ठाकुर : हिन्दी कहानी का विकास - 1977 - पृ. 92.

2. डॉ. रघुवीरसिंह - आधुनिक हिन्दी कहानी : समाज शास्त्रीय दृष्टि - 1977 - पृ. 20.

पूँजीपति, देश का शोषण करने में लगे है — जिससे गरीब जनता कृषक, मजदूर पिस रहे हैं। मध्यवर्ग अपने मिथ्याभिमान और मिथ्याडम्बर से दबा हुआ अपना जीवन कष्टों में काट रहा है। साथ-साथ प्रान्तीयतावाद जाति-वाद और साम्प्रदायिकता का डेरा देश के एक कोने से दूसरे कोने तक फैला हुआ है। जातिवैषम्य गाँवों में भी फैला।

देश में शिक्षित बेरोजगारों की संख्या बढ़ती गयी है। पहुँचवाले स्रोत हो तो (source) कम योग्यता के युवक अच्छे पदों पर नियुक्त होते। प्रतिभावान पहुँच के अभाव में दर-दर की ठोकरें खाता रहता। वे बेरोजगारी के कारण भग्नाशा, कुण्ठाग्रस्त, घुटन, पीडा आदि से युक्त होते जा रहे हैं।[1] उस समय का व्यक्ति आर्थिक दबाव और यन्त्रणाओं से गुजर रहा है। तत्कालीन समाज में पायेजानेवाला सन्त्रास बोध, कुण्ठा, भविष्य-हीनता और असुरक्षा से उत्पन्न हुआ है।"[2] चारों ओर फैली हुई अराजकता, अनुशासनहीनता, दायित्वहीनता, अकर्मण्यता, कार्याक्षमता तथा थोथे नारों ने देश को अत्यंत विकृत एवं घृणित बना दिया है। जनता से जो प्रतिनिधि चुनकर भेजा जाता है, वह आत्मसेवा में लग जाता है। अखबार, रेडियो, टेलीविजन आदि इन्हीं नेताओं के गुण गाते हैं।

---

1. फलस्वरूप नई पीढ़ी में कुण्ठा, वर्जना, घुटन, पीडा, निराशा तथा एक विचित्र-सी आशंका का जन्म होना स्वाभाविक ही नहीं, विषम परिस्थितियों की अनिवार्यता थी। --- डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय : आधुनिक कहानी का पारपार्श्व - पृ. 104.
2. शिवशंकर पाण्डेय : स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी कहानी - कथ्य और शिल्प - 1978 - पृ. 132.

औद्योगिक विकास ने शहरी जीवन और पूँजीवाद को विकसित किया है। औद्योगीकरण के कारण नगरों और महानगरों की संख्या बढ़ रही है। गाँव के अधिकांश कृषक मजदूर होने लगे। औद्योगिक विकास ने ग्रामीण व्यवस्था को छिन्न-भिन्न कर दिया है। गाँवों में बड़े कृषकों द्वारा शोषित खेतिहर मजदूर अब आजीविका की तलाश में गाँव छोड़कर शहरों में बसने लगे हैं। इस अस्थिति ने संयुक्त परिवार को विघटित कर दिया है।

2. " नयी कहानी " का नामकरण :-

साहित्यिक विधा का नामकरण प्रवृत्तिमूलक होता है। प्रवृत्तियाँ अपनी पूर्ववर्ती परंपरा के रूप में अवतरित होती हैं या उसकी प्रतिक्रिया के रूप में निखरती हैं। " प्रवृत्तियों का नयापन " समकालीन या तत्कालीन स्थितियों में अलग दिखायी देना स्वाभाविक है।

डॉ. देवराज की दृष्टि में " नवीनता से मतलब है ऐसे तत्वों पर गौरव जो किसी क्षेत्र में मानवता के मूल्यांकन व दृष्टि को ज्यादा बदल देनेवाले सिद्ध होते हैं। नवीनता मौलिकता का एक तत्व है। "[1]

नित्यानंद तिवारी के अनुसार " नवीनता आज की दृष्टि और सन्दर्भ की है। "[2]

कमलेश्वर और रमेशबक्षी के अनुसार नयापन दृष्टि सापेक्षता में है। "[3]

---

1. कल्पना - सितम्बर - 1962
2. हिन्दी कहानी की दिशा - नित्यानन्द तिवारी { नयी कहानी : सन्दर्भ प्रकृति } पृ. 114.
3. नयी कहानी की भूमिका - कमलेश्वर - पृ. 59.

विजयेन्द्र स्नातक " बाह्य आवश्यकता और अन्तः प्रेरणा की सर्जनात्मकता में ।"[1] नये पन को देखते है तो मार्कण्डेय " जीवन पहलू की वर्णनात्मकता में ।"[2] सुरेशसिन्हा के अनुसार " मानसिक, बौद्धिक और भावनात्मक स्तरीयता में"[3] यह नयापन है ।

कमलेश्वर कहते हैं-- " सृजन की प्राथमिक अनिवार्य मान्यता है " नवीनता " और " नयी कहानी " अपनी समग्रता में ईमानदार सर्जनात्मक लेखन है । इसका 'नयी' शब्द मूलतः स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद साहित्य के बदले तेवर, नवीन भाव-भंगिमा का अर्थ देनेवाला है । यह नवीन मूल्यों की चेतना से सम्पन्न वाणी का द्योतक, आधुनिकता के उन्मेष से अलग अत्याधुनिकता का अर्थ संवाहक, वह भी अत्याधुनिकता से व्यंजित परम्परा के बचे हुए अधिकांश का अस्वीकारक तथा नवीन दृष्टि, नवीन परिवेश और नवीन निरूपण का प्रखर स्वर समाहारक है ।"[4]

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद के महत्व का उल्लेख करना ही नयी कहानी का एक अर्थ है । यह नयी कहानी जीवन शक्ति, जिजीविषा, प्रगति और परिवर्तनशीलता से युक्त है । नयी कहानी में " व्यक्ति चेतना " से, व्यक्ति और परिवेश की कहानी मात्र बनकर रह गई है । कहानी में इस नवीनता ने परिस्थितियों और परिवेशगत जटिलताओं को नवीनता प्रदान की ।

---

1. चिन्तन के क्षण - विजयेन्द्र स्नातक - पृ. 61.
2. हँसा जाइ अकेला [भूमिका] - मार्कण्डेय - पृ. 14.
3. नयी कहानी की भूमिका - कमलेश्वर - पृ. 66.
4. - वही -

" नयी कहानी " के नामकरण का श्रेय डॉ॰नामवरसिंह को है। उन्होंने " आज की हिन्दी कहानी " शीर्षक लेख मे पूरे बल के साथ इस नाम का समर्थन किया। " मेरे मन में यह सवाल उठता है कि नयी कविता की तरह " नयी कहानी " नाम भी कोई चीज है क्या ? "[1] " नयी कहानी " नाम से कोई आन्दोलन अभी तक नहीं चला है। इससे क्या समझा जाये ? यह कि कहानी में कुछ नयापन आया ही नहीं कि कहानी में जो नयापन आया है, वह कविता की अपेक्षा बहुत कम है ?"[2]

वे कभी " सांकेतिकता को[3] या कभी सूक्ष्म वातावरण को[4] या संगीतात्मकता को[5] या कथाविन्यास को[6] या वास्तव के विविध आयामों को[7] या नवीन दृष्टि को[8] " नयी कहानी " का आधार मानते हुए मूल्यांकन करते रहे हैं। वे निर्मल वर्मा की " परिंदे " कहानी को नयी कहानी की पहली कहानी मानते हैं।

नयी कहानी की रूढ़ परिभाषा देना कठिन मानते हुए मोहन राकेश कहते हैं — " जिन्दगी की आंतरिक और बाह्य परिस्थितियों के चित्रण के लिए यह माध्यम अधिक अनुकूल है — अनुकूल, किन्तु आसान नहीं।"[9] मोहन राकेश की दृष्टि में परंपरा से मुक्त नयी कहानी के रूप पर बल देने में ही नवीनता है।

1· कहानी - नयी कहानी - डॉ॰नामवर सिंह - पृ॰ 19·
2· - वही -
3· - वही - पृ॰ 42·
4· - वही -
5· - वही - पृ॰ 43·
6· - वही - पृ॰ 44·
7· - वही - पृ॰ 58·
8· - वही -
9· बकलम खुद - मोहन राकेश - पृ॰ 105·

कमलेश्वर अपनी दृष्टि को स्पष्ट करते हुए कहते हैं -- " यथार्थ को खोजनेवाली कहानी नयी है ।" और " नयी कहानी " अनुभव के धरातल पर नयी होती है ।"[1]

नयी कहानी को परिभाषित करते हुए " व्यक्तिगत सामाजिकता " के सूत्र को पकड़कर राजेन्द्र यादव कहते हैं -- " आज का कहानीकार मानता है कि युग के सारे विराट को गतिशील मूल्यों के संस्कारों और संक्रमण को कहानी के माध्यम से हम व्यक्ति या व्यक्ति-समूह की चेतना-धारा में कभी-कभी चेतना के अनेक स्तरों पर एक साथ पकड़ने की कोशिश करते हैं। काल के प्रवाह में व्यक्ति की सामाजिकता का बोध और स्थिति ही आज की कहानी की विषय वस्तु है ।"[2]

इससे स्पष्ट होता है कि नयी कहानी व्यक्ति को उसके सामाजिक परिवेश, मानसिक अंतर्द्वंद्वों तथा व्यावहारिक जीवन की आवश्यकताओं के साथ समग्र रूप में चित्रित करती है ।

डॉ॰सुरेश सिन्हा के शब्दों में " नयी कहानी सामयिक सीमाओं के अन्तर्गत अपने यथार्थ, युग, समय, परिवेश और व्यक्ति को देखने-परखने एवं मूल्यांकन करने की प्रक्रिया है जो यथार्थ को उचित संदर्भों में सप्राणता के साथ अभिव्यक्ति देने का प्रयत्न करती है ।" डॉ॰रामदरश मिश्र ने नयी कहानी को " सामूहिक रूप से अनुभूति के स्तर पर बदले हुए सामाजिक जीवन की पहचान की

1· नयी कहानी की भूमिका - कमलेश्वर - पृ· 73·

2· कहानी : स्वरूप और संवेदना

कहानी कहकर सम्बोधित किया है । उनके अनुसार इस पहचान में अनुभूति तो है ही, प्रखर बौद्धिक दृष्टि भी है । नयी कहानी जिये हुए जीवन सत्य पर अधिक बल देती है ।"[1]

तेलुगु के सुप्रसिद्ध कहानीकार कल्प कुमार एक जगह कहते हैं —
" कहानियाँ " जीवन से ही उत्पन्न होती हैं । अस्त-व्यस्त, तितर-बितर घने जंगल को साफ § अलग § करके, जीवन सत्यों को क्लोजप में § नजदीक में § दिखाकर, जीवन के बारे में पाठकों में समझौता लाने की कोशिश करनी चाहिए । पाठकों में चेतना लाना है । तब कहानी समकालीन जीवन से मिलकर चलेगी ।"

श्री मधुरांतक राजाराम एक जगह कहते हैं — " आग से झोपड़ियाँ जला सकते हैं और स्वाद खाना-पकाना भी बना सकते हैं । समाज की भलाई के लिए उत्पन्न साहित्य को अनावश्यक, अर्थ और अल्प प्रयोजन के लिए उपयोग करना अर्थरहित बाते है । साहित्य से सच्छापन को बढ़ा सकते हैं, सामाजिक व्यवस्था की कमियों को स्पष्टतः दिखा सकते हैं और समाज को स्वस्थता पूर्ण, प्रशांतपूर्ण आन्दोलन की ओर ले जा सकते हैं । ऐसे विश्वास से ही कहानियाँ लिख रहा हूँ ।"

नयी कहानी के नाम तथा स्वरूप को लेकर हिन्दी कहानी क्षेत्र में अनेक वाद-विवाद उभरे है § 1955 - 65 के बीच § । नयी कहानी पर अनेक आरोप लगाये गये ।

---

1. आज का हिन्दी साहित्य : संवेदना और दृष्टि - पृ. 154.

मधुकर गंगाधर कहते हैं -- " नयी कहानी जब से चली, यानि सन् 1950 और 1960 के दरम्यान तो कहानी की बड़ी चर्चा थी । बड़ी उमंग से लोग इसकी चर्चा करते थे । समारोह होते थे, गोष्ठियाँ होती थी और जीवंत साहित्य रचा जा रहा था ।"[1]

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट होता है कि नयी कहानी का विकास 1950-60 के बीच बहुत तेज रहा है ।

जीवन मूल्यों की स्थापना, जीवन्तता तथा परिवर्तित दृष्टिबोध को ही नयी कहानी की संज्ञा से अभिहित किया गया है । इस में यथार्थ का नवोन्मेष, संवेदना के नवीन मानदण्ड, प्रेम चित्रण की नवीन प्रक्रिया तथा आत्मजागृति आदि तत्व है, जो पुरानी कहानी में नहीं है । ये तत्व नयी कहानी को नया आधार देने में समर्थ सिद्ध हुए हैं ।

3. कहानी परंपरा और नयी कहानी :-

आजादी के बाद (हिन्दी की) नयी कहानी जीवन के दो पक्षों को समेटकर आगे बढ़ी थी । कहानीकारों की एक ऐसी नयी पीढ़ी उभरी जिसने कहानी-लेखन के क्षेत्र में अनेक नए और मौलिक क्रान्तिकारी परिवर्तन लाये । इनकी कहानियाँ अपनी पूर्ववर्ती कहानियों से अधिक सशक्त, अधिक विकसित, व्यापक और उन्नत रूप में थीं । आजादी ने जिन नवीन स्थितियों और समस्याओं को जन्म दिया था, इस नयी पीढ़ी के कहानीकारों की कहानियों में

---

1. सारिका - 16-31 जुलाई, 1984 - पृ. 16.

उसी को अभिव्यक्ति मिली थी । हिन्दी के ये नए कहानीकार हिन्दी की पूर्ववर्ती कहानियों और कहानीकला को ही एक नया विकास और आयाम दे रहे थे । इस तरह ये पूर्ववर्ती परम्पराओं से घनिष्ट रूप में संबंधित रहे । इसीलिए इस काल में सामाजिक यथार्थवादी और मनोविश्लेषण प्रधान व्यक्ति-वादी हिन्दी कहानी के दोनो प्रधान पूर्ववर्ती रूपों का ही बहुमुखी विकास होता दिखायी देता है । व्यक्ति चेतना और समाज चेतना के दो वर्गों में विभाजित हिन्दी कहानी इस काल में विभिन्न देशी-विदेशी प्रभावों को ग्रहण करती हुई आगे बढ़ी । आधुनिक नयी कहानी का मूल रूप यही रहा । आजादी के बाद हमें विदेशी दासता से मुक्ति मिल गयी थी, थोडा-सा क्षणिक उल्लास भी जीवन में आया था । परन्तु सामाजिक और आर्थिक विषमता यथावत् बनी रही थी । शासन-पद्धति, शिक्षा नीति, आर्थिक शोषण, भ्रष्टाचार, दुराचार आदि जो भी हैं वे सब पहले की तुलना में अधिक भ्रष्ट और समाज के लिए घातक हो उठे थे । शासक उसके कर्मचारी और चाटुकार मजे उडाते थे और सामान्य जन उनके मजे के लिए साधन जुटाने को विवश था । इस नयी स्थिति में हिन्दी कहानी को गहरे रूप से प्रभावित किया था । असह्य सामाजिक और वैयक्तिक घुटन तथा विवशता को हिन्दी की इस नयी कहानी ने अभिव्यक्ति देना आरम्भ कर दिया था । लगभग तेलुगु प्रान्त की भी यही स्थिति रही ।

हिन्दी और तेलुगु के अधिकांश नये कहानीकार मध्यवर्ग या निम्नवर्ग से ही आये थे । वे समाज में, अपनी स्थिति को मजबूत करने में स्वयं को असफल और असमर्थ अनुभव करते थे । उनकी स्थिति उखडे हुए लोगों जैसी थी । इसीलिए उनकी सारी विवशता, क्षोभ और आक्रोश इस काल की नयी कहानियों में अभिव्यक्त हुआ ।

इस प्रकार नयी कहानी ने मध्यवर्ग को पहलीबार तमाम खूबियों और खामियों के साथ प्रस्तुत किया है । इसके पीछे रचनात्मक ईमानदारी की माँग मानी जा सकती है, क्योंकि अधिकतर कहानीकार मध्यवर्ग के ही थे । संपादक वंशीधर शुक्ल कहते हैं -- " यह सही है कि प्रेमचन्द से लेकर प्रगतिशील लेखकों की पहली पीढ़ी ने मध्यवर्गीय समस्याओं की ओर गम्भीर पाठक वर्ग का ध्यान खींचा था, लेकिन वहाँ मध्यवर्गीय पात्रों को प्राय: न तो यथेष्ट सहानुभूति मिलती थी और न ही उनकी भावप्रक्रिया को निकटता से समझने की कोशिश दिखलाई पड़ती है । इसके विपरीत मार्कण्डेय, शेखर जोशी, भीष्म साहनी और राजेन्द्र यादव जैसे नयी कहानी के लेखकों ने मध्यवर्गीय समाज की विशिष्ट सत्ता को स्वीकार करके उसकी अपेक्षाकृत अधिक विचार शीलता, भाव प्रवणता और कोमलता की पहचान विकसित की ।"[1]

नयी कहानी का दूसरा पक्ष वह था, जो भ्रष्ट संस्कारों, प्रगतिशील जीवन मूल्यों सामाजिक भ्रष्टाचार और शोषण का विरोध करता हुआ नए जीवन मूल्यों पर आधारित विकास के नए सोपानों की ओर बढ़ रहा था । इस पक्ष में मानव की अटूट जिजीविषा में एक दृढ़ अडिग आस्था और स्वस्थ भावी निर्माण के आशा भरे स्वर मुखरित हो रहे थे । हिन्दी की नई कहानी जीवन के इन्हीं दोनों पक्षों को समेटकर आगे बढ़ी थी ।

इस युग में व्यावसायिक प्रतिद्वन्द्विता ने एक ओर तो श्रेष्ठ, कलात्मक कहानियाँ लिखने को प्रोत्साहन दिया और साथ ही गुटबन्दी को भी प्रश्रय मिला । इस स्थिति ने हिन्दी कहानी की प्रगति को विकसित भी किया और

---

1. सम्पादक - वंशीधर शुक्ल " हिन्दी आलोचना और आज की कहानी " (आनन्द प्रकाशन) पृ. 58.

उसे हानि भी पहुँचायी । इस युग में कहानी कहानीकार के आर्थिक अस्तित्व की रक्षा का साधन बन गयी थी । इसीलिए अपना प्रचार के लिए नए कहानीकारों को व्यापारियों की भाँति विभिन्न प्रकार के मोर्गों का सहारा लेना पड़ा था । यह प्रवृत्ति सन् 1950 के बाद से उभरी थी और आज तक यथावत् है ।

नयी कहानी इन्हीं शुभ-अशुभ प्रवृत्तियों, नए-नए शिल्प विधानों, विषयों आदि को अपनाती हुई, अपनी परिधि में सम्पूर्ण समाज को समेटे आगे बढ़ती रही है । इसमें नए नए आन्दोलन उभरते और मिटते रहे हैं । इन आन्दोलनों ने हिन्दी कहानी को समृद्ध बनाया है । परन्तु प्रचार-प्रसार उन्हीं प्रयोगों का होता है, जिन्हें समाज स्वीकार कर लेता है । पाठक भी अपनी रुचि के अनुसार ही नए प्रयोगों को बढ़ावा देते हैं । जिन्हें वे व्यर्थ समझते हैं, उन्हें प्रोत्साहन नहीं मिलता ।

डॉ॰पाण्डेय शशि भूषण "शीतांशु" ने "नयी कहानी के विविध प्रयोग " नामक अपने शोध प्रबन्ध में नयी कहानी के कलात्मक पक्ष पर सविस्तार प्रकाश डाला है । उनके अनुसार नयी कहानी के भाषिक प्रयोग में -- " एक ओर अमरकान्त का ठेठ गद्य है, दूसरी ओर मन्नू भण्डारी का व्याकरण सम्मत विशेषहीन गद्य, तीसरी ओर कमलेश्वर का भावुक संवेदनशील गद्य है, चौथी ओर राजेन्द्र यादव का प्रयोग - बहुत कलात्मक गद्य है, पाँचवी ओर निर्मल वर्मा का लम्बे लम्बे विशेषणों से भरा गद्य है, छठी ओर शिवप्रसाद सिंह का सटीक शब्दपूर्ण, बिम्बोपमान मूलक अर्थ प्रधान गद्य, सातवी ओर नरेश मेहता का अभिनव भाषिक-प्रयोगपूर्ण गद्य है, आठवी ओर रमेशबक्षी की शैली की विच्छित्ति से

भरा गद्य, नवीं और रेणु का सूक्ष्म ध्वन्यात्मक अभिव्यक्तिपरक आंचलिक गद्य है, तो दसवी और मोहन राकेश का गतिशील समर्थ गद्य ।"[1]

उपर्युक्त कथन से नये कहानीकारों के विभिन्न प्रयोग सामने आते हैं।

4. नयी कहानी में भारतीय जीवन चित्रण : शहर और गांव :-

नयी कहानी ने भारतीय जीवन के विविध आयामों को स्पष्ट किया । हिन्दी में यह कहानी दो धाराओं में विभक्त है — एक नगर जीवन के सत्यों का चित्रण करनेवाली और दूसरी ग्रामीण जीवन या कस्बों के जीवन के यथार्थ को चित्रित करनेवाली । इन्हें " ग्राम कथा " और " शहरी कथा " भी कहा गया है । " ग्राम कथा और शहरी कथा " का विभाजन जिन कथाकारों ने किया, आज वे ही शोर भी कर रहे हैं कि ग्राम कथा और शहर कथा का विभाजन गलत है । .... पर यह विभाजन सही है कि उन्होंने " ग्राम कथा " को अप्रतिष्ठित करने के प्रयत्न में इस शब्द को बहुत प्रचलित कर दिया है ।"[2] कमलेश्वर का कहना है कि — " यह अच्छा ही हुआ कि गांव, कस्बा और शहर की कहानियों का विभाजन मिट गया । शुरू-शुरू में प्रेमचन्द को गांव का कथाकार कहकर ग्रामांचल की कहानियों को ही " नयी " के अन्तर्गत लिया

---

1. डॉ. पाण्डेय शशि भूषण शीतांशु " नयी कहानी के विविध प्रयोग " पृ. - 199.
2. शिवप्रसाद सिंह : आज की हिन्दी कहानी : प्रगति और परिमिति [लेख] नयी कहानी : सन्दर्भ और प्रकृति- सं. डॉ. देवीशंकर अवस्थी 1966 पृ. - 139.

गया, जबकि यह बहुत स्पष्ट था कि हमारे नये कथाकारों की ग्रामांचली नई कहानियाँ भी बहुत कुछ पुन: प्रस्तुतीकरण से पीड़ित थी । रेणु की कहानियों ने इस क्षेत्र में सर्वत्र अछूती भाव भूमियों को उद्घाटित किया ।"[1]

तेलुगु कहानी साहित्य में गाँव और शहर का विभाजन नहीं मिलता । लेकिन कल्याकुमार, कोड्वटिगंटि कुटुंबराव, पालगुम्मि पद्मराजु, रावूरि भरद्वाजा, मधुरांतक राजाराम, आदि कहानीकारों की कहानियों में गाँव और शहर का अत्यंत महत्वपूर्ण चित्रण है । तेलुगु कहानीकारों का मूललक्ष्य समकालीन सामाजिक समस्याओं का चित्रण चित्रण रहा है । न कि गाँव का चित्रण या शहर का । तेलुगु में ग्रामांचल और शहरांचल का विभाजन नहीं मिलता । लेकिन हिन्दी कहानी का क्षेत्र पूरी तरह से उल्टी स्थिति सामने आता है । प्रसिद्ध कहानीकार कमलेश्वर कहते है -- " स्वातंत्र्योत्तरकाल में "रेणु" ग्रामांचल पर लिखी जाने-वाली कहानियों को एक नई भंगिमा देनेवाले समर्थ कहानीकार है । रेणु ने ग्रामीण कहानीकारों को एक नवीन दिशा दी, नई दृष्टि दी और नई कलात्मक अभिव्यक्ति प्रदान की ।" नामवरसिंह कहते है --

"जो कहानीकार इतने जागरूक चिन्तन तथा पैनी सामाजिक दृष्टिवाले नहीं है, उन्होंने अछूते जीवन क्षेत्रों का सहारा लेकर पाठकों को अपनी ओर खींचने की कोशिश की है । अपने अपने अंचल या जनपद के लोक जीवन को ले आने की प्रवृत्ति उसी का परिणाम है ।"[2]

1· नयी कहानी की भूमिका - 1978 - कमलेश्वर - पृ· 24-25·

2· नामवर सिंह - कहानी - नई कहानी - 1973 - पृ· 201·

आजादी के बाद गाँवों में धीरे-धीरे कई परिवर्तन हुए । स्वातंत्र्योत्तर कहानीकारों ने गाँवों में घटित परिवर्तनों को सूक्ष्म दृष्टि से परखा और अपनी कहानियों में चित्रित किया । नये कहानीकारों ने विभिन्न अंचलों के जन-जीवन को, उनके स्वाभाविक दृश्यों को, उन्हीं की प्रचलित भाषा और शैली के माध्यम से प्रस्तुत किया । इस प्रकार की प्रवृत्ति आंचलिकता के नाम से प्रसिद्ध हुई । ग्राम कथा ज्यादा व्यापक शब्द है तो आंचलिकता एक प्रवृत्ति मात्र है । शिव प्रसाद सिंह की दृष्टि में --
" आंचलिक वे ही कहानियाँ कही जा सकती हैं, जो किसी जनपद के जीवन, रहन-सहन, भाषा-मुहावरे, रीतियों-अंधविश्वासों, पर्व-उत्सव, लोक जीवन, गीत-नृत्य आदि को चित्रित करना ही अपना मुख्य उद्देश्य माने ।"[1]

पूर्णिया के अंचल से सम्बन्धित फणीश्वरनाथ रेणु की कहानियाँ, पूर्वांचल से सम्बन्धित, शिव प्रसाद सिंह, मार्कण्डेय तथा राजेन्द्र अवस्थी की कहानियाँ, अल्मोड़े के जन-जीवन से सम्बन्धित शैलेश मटियानी की कहानियाँ उल्लेखनीय हैं।

नये ग्राम कथाकारों ने स्वातन्त्र्योत्तर ग्राम्य चेतना को आत्मसात् करके उसे नये भाषाशिल्प में प्रस्तुत किया । इन कहानीकारों की दृष्टि पूर्णतया यथार्थवादी रही । गाँव के छोटे कृषक, मजदूर, सामन्ती व्यवस्था और राजनैतिक कुचक्र से उत्पीड़ित है । सरकारी तंत्र गाँव के निर्धनों के लिए एक अभिशाप के रूप में विद्यमान है । आर्थिक संकट और मन्दी ने आम ग्रामीणजन की कमर तोड़कर रख दी है ।

---

1. शिवप्रसाद सिंह : आज की हिन्दी कहानी [लेख] प्रगति और परिमिति [लेख] " नई कहानी : सन्दर्भ और प्रकृति : सं. डॉ. देवीशंकर अवस्थी - 1966 - पृ. 143 - 144.

शहरों में परिवर्तन की गति अतितीव्र है, गाँवों में इस प्रक्रिया का प्रभाव मन्दगति से चल रहता है। शहरी पक्ष में व्यक्ति की टूटन, कुण्ठा और पराजय के चित्र अधिक मिलते हैं।[1]

शहर की आधुनिक सभ्यता और यान्त्रिकी ने मानव की जीवन गति को पूर्ण रूप से बदल दिया है। आजकल आदमी केवल धन की ओर ही दौड़ रहा है। धनार्जन ही उसका मूल लक्ष्य बन गया है। महानगरों की भीड़ ने मानव जीवन को खोखला बना दिया है। महाराज कृष्णजैन का कथन है -- " मानव बस्तियों का नगरीकरण(अर्बनाइजेशन) आर्थिक प्रतियोगिता, सत्ता का संकेन्द्रण, मानकीकरण (स्टैण्डर्डाइजेशन) तीव्रगामी संचार और परिवहन प्रणालियाँ, मनोरंजन के यान्त्रिक साधन, नये विध्वंसक अस्त्र, यांत्रिकी के ये कुछ तत्व हैं, जो जीवन को भयानक रूप से अस्त-व्यस्त करके उसकी जड़ों को खोखला करते जा रहे हैं। यान्त्रिकी ने इस निविड़ बन में सतत वेगमय जीवन की अवकाशहीनता, निरर्थकता, अजनबीपन, सन्त्रास, घुटन, मृत्युबोध और अनेक कुण्ठाएँ तथा विकृतियों को जन्म दिया है।"[2]

यांत्रिकी और औद्योगीकरण का सबसे अधिक प्रभाव मानवीय संबंधों के रूपों पर ही पड़ रहा है और ये सम्बन्ध एक भयंकर तनाव के बोध से गुजर रहे हैं और महानगरों में आर्थिक आधार और सामर्थ्य, सम्बन्धों के परिवर्तन में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। आधुनिक हिन्दी कहानी में इस प्रकार की स्थिति को खुलकर अभिव्यक्ति मिली है।

---

1. अज्ञेय : आधुनिक हिन्दी साहित्य - 1976 - पृ. 113.
2. महाराज कृष्णजैन : आधुनिकता की चुनौती और मूल्यागत संक्रमण की स्थितियाँ [लेख] - हिन्दी कहानी : दो दशक की यात्रा। सं. डॉ. रामदरश मिश्र तथा नरेन्द्र मोहन - 1970 - पृ. 54.

शहरों में जीवन का मुख्य आधार यंत्र है, गाँवों में जीवन का मुख्य आधार कृषि है । गाँवों का जीवन प्रकृति पर अधिक आश्रित रहता है । शहरी जीवन का प्रकृति से उतना प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं है । शहरों के पात्रों का मुख्य संबंध मूलतः आफिस, धन्धे या घर से होता है, जबकि गाँव के व्यक्तियों का सम्बन्ध चाहे-अनचाहे अपने पूरे गाँव, प्रकृति और गाँव के रीति रिवाजों तथा जीवन मान्यताओं से होता है ।

शहरों में आधुनिकता का प्रवेश रूढ़ियों और अन्धविश्वासों को तोड़कर हुआ है और गाँवों में इसकी गति मंद है । शहरों के पात्र आत्म केन्द्रित हैं, गाँव के पात्र आत्मीयता से युक्त हैं ।

हिन्दी कहानी में आधुनिकता के स्वस्थ और अस्वस्थ रूप देखने को मिलते हैं । आधुनिकता का स्वस्थ रूप सड़ी-गली मान्यताओं, रूढ़ियों और अस्वस्थ तत्वों का विरोध करता है । आधुनिकता का निर्वाह केवल विचारों से न होकर आचरण से होता है । आधुनिकता का स्वस्थ रूप डॉ॰ रामदरशमिश्र की कहानी " एक औरत एक जिन्दगी " की भवानी में, रांगेय राघव की " गदल " की गदल में, राजेन्द्र अवस्थी की कहानी " मैली धरती के उजले हाथ " के " संतराम " तथा शैलेश मटियानी की " लीक " कहानी के " कुण्डलनाथ " में मिलता है ।

आधुनिकता का अस्वस्थ रूप पश्चिम के प्रभाव से उत्पन्न न होकर गाँव की परिस्थितियों से उत्पन्न है । अकेलापन, टूटन § 'तीसरी कसम' (रेणु) 'घर'- (रामदरशमिश्र) गुलकी बन्नो (धर्मवीर भारती), आर पार की माला, नन्हों (शिवप्रसाद सिंह) स्वर्ग का विश्वास-मधुकर सिंह §, अजनबीपन, संत्रास § दरार-वेदराही, 'मां' सन्नाथ और 'बजता हुआ रेडियो'- रामदरश मिश्र § अनास्था

॥ काला धुआं - हिमांशुजोशी ॥ आदि के चित्र पारिवारिक विघटन, प्रेम, आर्थिक दबाव, सामाजिक जटिलताओं, विसंगतियों व भ्रष्ट व्यवस्था से उत्पन्न हैं ।

ग्रामजीवन से संबंधित अत्यंत प्रचलित कहानियाँ हैं -- तीसरी कसम, रस प्रिया ॥रेणु ॥ जिन्दगी और जोंक ॥ अमरकांत ॥, राजानिरबंसिया, नीली-झील ॥ कमलेश्वर ॥, चीफ की दावत, ॥ भीष्म साहनी ॥, नन्हों ॥ शिव प्रसाद सिंह ॥, " हंसा जाइ अकेला ॥ मार्कण्डेय ॥ आदि हैं।

शहर मूलक कहानियाँ हैं -- पारदर्शक ॥ महीपसिंह ॥, एक ठहरा हुआ चाकू, परमात्मा का कुत्ता ॥ मोहन राकेश ॥, खोई हुई दिशायें ॥ कमलेश्वर ॥, चीफ की दावत ॥ भीष्म साहनी ॥, एक और जिन्दगी, फौलाद का आकाश ॥ मोहन राकेश ॥, टूटना ॥ राजेन्द्र यादव ॥ वापसी ॥ उषा प्रियंवदा ॥ आदि हैं ।

गाँव और शहर से संबंधित बहु प्रचलित तेलुगु कहानियाँ हैं -- कूलिमनीषि ॥ कुली मनुष्य ॥, कथ्य कालुव ॥ खेत और नहर ॥, पशुपुल कोट्टाम ॥ कल्याण कुमार ॥ पोगलेनिनिप्पु ॥ बिना धुएँ की आग ॥, नन्नुगुरिंचि कथ रायवू ॥ मेरे बारे में कहानी लिखो न ? ॥ ॥ बुच्चिबाबु ॥, ममकाराम ॥ममता॥ पातपगलु-कोत्तवगलु ॥ पुरानी दुश्मनी और नया प्रेम ॥ ॥ गोपीचन्द॥, कुंकुडाकु ॥रीठा का पत्र ॥, बल्लूकस्वप्नम ॥ भल्लूक स्वप्न॥ वायुलीनम ॥वाइलिन॥, पागीटसोमयाजुलु ॥, कोत्त जीवितम ॥ नया जीवन ॥, पट्नावासम ॥शहर वास॥, ॥कोडवटिगंटि कुटुंबराव॥, पडव प्रयाणम ॥ नाव की यात्रा ॥, कूलिजनम ॥ कुली लोग ॥ ॥ पालगुम्मि पद्मराजु ॥, डाक्टर्स डैल्मा ॥ रावूरिभरद्वाज ॥ आदि अनेक कहानियाँ हैं।

5. अस्तित्ववाद का प्रभाव :-

1951-60 के कहानीकारों पर अस्तित्ववाद का प्रभाव देख सकते हैं और कहानियों में भी अस्तित्ववाद के लक्षण या तत्व मिलते हैं —

" अस्तित्ववाद उन्नीसवीं शती के उत्तरार्द्ध और वर्तमान शती के पूर्वार्द्ध में विकसित एक व्यक्तिवादी पाश्चात्य दार्शनिक अवधारणा है ।"[1] इस अवधारणा के अनुसार मनुष्य का वैयक्तिक अस्तित्व ही समस्त जागतिक व्यापार का केन्द्र है । सार्त्र को अस्तित्ववाद का प्रवर्तक माना गया है ।

मृत्यु की आशंका से उत्पन्न भय, त्रास, निराशा तथा पीडा अस्तित्ववादी दर्शन के मुख्य तत्व हैं।

जर्मन विद्वान रिन्टेलन के अनुसार अस्तित्ववाद दर्शन के तीन प्रमुख सूत्र हैं — " पहला सत्ता और तर्क के विरोधाभास को ही इसका परिणाम मानकर इस आधार पर अन्य वस्तुओं को नकारना, दूसरा तनाव, दबाव, भय और त्रास, तीसरा ईश्वरीय धारणाओं की अस्वीकृति से आध्यात्मिक व्यक्तित्व का ह्रास ।"[2]

---

1. भारतीय साहित्य कोश - पृ. 74.
2. हिन्दी उपन्यास आधुनिक विचार धाराएँ - डॉ. सुमित्रा त्यागी पृ. - 139.

नयी कहानी के क्षेत्र में इस दिशा में प्रमुख हस्ताक्षर कहानीकार - कृष्ण बलदेव वैद, रामकुमार, मोहन राकेश, निर्मल वर्मा, दूधनाथ सिंह, ज्ञानरंजन, राजेन्द्र यादव आदि हैं। तेलुगु में इस धारा के कहानीकार -- कोडवटिगंटि कुटुंबराव, चागंटि सोमयाजुलु, पालगुम्मि पद्मराजु, पुराणम सुब्रह्मण्य शर्मा, रावूरि भरद्वाज आदि हैं।

अस्तित्ववादियों ने क्षण को अधिक महत्व दिया है। इस संदर्भ में अज्ञेय ने लिखा है -- "क्षण के इस आग्रह का एक पक्ष यूरोप के साहित्यिक अस्तित्ववाद में पाया जाता है। मृत्यु के साथ उसके लगाव के मूल में एक बात यह है कि मृत्यु साक्षात्कार के क्षण में ही जीवन की चरम अथवा तीव्रतम अनुभूति होती है - जीवन का चरम आग्रह उसी क्षण प्रकट होता है।"[1]

इससे मिलते जुलते वाक्य तेलुगु के प्रमुख कहानीकार बुच्चिबाबु के कथन में प्राप्त होते हैं -- "क्षणिक अनुभव को पूरे जीवन के अनुभव से बाँधकर इन दोनों के भेदभाव का विभाजन किये बिना जैसा है वैसा प्रदर्शन करने की कोशिश ही अस्तित्ववाद है।"

अमरकान्त की कहानी "जिन्दगी और जोंक" में अस्तित्ववाद के अनेक तत्व मिलते हैं। कहानी में एक जगह -- "उसके मुख पर मौत की भीषण छाया नाच रही थी और वह जिन्दगी से जोंक की तरह चिपटा था। लेकिन जोंक वह था या जिन्दगी ? वह जिन्दगी का खून चूस रहा था या जिन्दगी उसका।"[2]

---

1. आत्मनेपद - अज्ञेय - 1960 - पृ. 169.
2. जिन्दगी और जोंक (हिन्दी की प्रगतिशील कहानियाँ) डॉ. धनंजय वर्मा - पृ.

मोहन राकेश की कहानी " जख्म " के एक और उदाहरण इस प्रकार है -- " जब तक नौकरी लगी रहती और पीने को काफी शराब मिल जाती, तब तक वह कहता " नहीं मैं तुम लोगों की तरह नहीं जी सकता -- मैं अपने वक्त का हिस्सा नहीं, उसका निगेहबान हूँ । मैं जीता नहीं, देखता हूँ क्योंकि जीना अपने आपमें बहुत घटिया चीज है । पशु-पक्षी भी जीते हैं । पर जब कभी लम्बी बेकारी के दौरे से गुजरना पड़ता और कई कई दिन शराब मुझे को नहीं मिलता तो वह भूल भुलैया में खोये आदमी की तरह कहता -- " मुझे समझ में आ रहा है कि मैं बिल्कुल कट गया हूँ ... हर चीज से बहुत दूर हो गया हूँ । "[1]

कृष्णासोबती की " यारों के यार " भी अस्तित्ववादी परंपरा के अन्तर्गत आती है । इसमें कार्यालय के क्लर्कों की मन: स्थिति और दिनचर्या को यथार्थ रूप में उजागर है । इसमें बार-बार प्रयोग होनेवाले " साला " " बहनचोद " चूतिया " ससुरा " " हरामखोर ", " लाल बेगिया ", " टुच्चा " आदि शब्दों का प्रयोग है । ऐसी कहानियों की मूल प्रेरणा अस्तित्व चिंतन से ही है ।

इनके अलावा परिंदे ﴾ निर्मल वर्मा ﴿, दिल्ली में एक और मौत ﴾ कमलेश्वर ﴿, चीफ की दावत ﴾ भीष्म साहनी ﴿ आदि इसी श्रेणी की हैं ।

इस प्रकार के तेलुगु कहानीकारों के वक्तव्यों के निम्न लिखित उदाहरण, समकालीन समानान्तर प्रवृत्ति को स्पष्ट करते हैं ---

---

1. मेरी प्रिय कहानियाँ ﴾ संग्रह ﴿ जख्म ﴾ कहानी ﴿ - मोहन राकेश पृ. - 158.

कोडवटिगंटि कुटुंबराव की कहानी " क्रोत्त जीवितम ﴾ नया जीवन ﴿ में एक पात्र के संबंध में कहानीकार का कथन इस संदर्भ में द्रष्टव्य है —

" विठल सोचता था " यह खाना, यह जीवन, यह काम सब के सब बेकार है। उसे जीवन ही अजीब-सा लग रहा था। यहाँ की स्थिति घरवालों को बताये तो यकीन नहीं करते। उसको लगा - यह जीवन ही व्यर्थ है। ऋण चुकाने के बाद यह नौकरी छोड देगा। यहाँ का जीवन घरवालों की जानकारी में नहीं है।"[1]

चांगंटिसोमयाजुलु की कहानी " एम्पु " ﴾ चयन ﴿ में अस्तित्व बनाने के उद्देश्य से एक भिखारी साथी भिखारियों से इस प्रकार कहता है - " मुझसे पूछने पर यही कहूँगा कि सभी भिखारियों को खोज-खोजकर अन्धों से ही शादी करनी चाहिए।"[2]

इनके अलावा गालीवाना ﴾ तूफान ﴿, ﴾ पालगुम्मिपद्मराजु ﴿, नीलि ﴾पुराणम सुब्रह्मण्य शर्मा ﴿, बिल्लमोल्लाडु ﴾ कल्प कुमार ﴿ आदि कहानियाँ हैं।

6• प्रवृत्तियाँ : ﴾ हिन्दी-तेलुगु ﴿

" नयी कहानी " की वैचारिक प्रवृत्तियों पर विचार करने से पता चलता है कि उस पर अस्तित्ववाद तथा मार्क्सवाद का प्रभाव रहा है। नयी कहानी के संदर्भ में आधुनिकता का प्रश्न भी उठाया गया। नयी कहानी

1• क्रोत्तजीवितम - कथावीथि ﴾ क•सं﴿ - श्री दुर्गानन्द - पृ• 75•

ने " आधुनिकता के परिप्रेक्ष्य में मूल्यगत संक्रमण को यथार्थता के साथ अभि - व्यक्ति दी ।"[1]

तेलुगु के प्रसिद्ध कहानीकार त्रिपुरा कहते हैं -- " कहानियों की कुछ घटनायें अवास्तविक, कल्पित दिखायी देते हैं। पूरी कहानियाँ भावावेशों से जुड़े हुए विचार, कुछ कहानियों में विचारों को सीमा से आगे बढ़कर उनको (विचारों को) मदद करनेवाली घटनायें अवास्तविक लगने की संभावना है । इससे हम ऐसा नहीं कह सकते कि कहानियों में यथार्थता लुप्त हो गयी और कहा जाता है कि सच्चाइयाँ, मूल्यों में बदल रहे हैं। कहानी का क्षेत्र बहुत छोटा है फिर भी जीवन की विविधता को स्पष्ट करती है । ..... विचार और अनुभूति ही नये कहानीकारों में प्रधानतः नजर आ रही है ।"[2]

नयी कहानी के संदर्भ में " परिवेश से प्रतिबद्धता ", " अनुभूति की प्रामाणिकता ", " भोगा हुआ यथार्थ " जैसे अनेक मानक शब्द आलोचना के क्षेत्र में प्रचलित हुए । ये ही प्रवृत्तियों के रूप में भी स्वीकृत हुईं ।

---

1. नयी कहानी : उपलब्धि और सीमायें - डॉ. गोरधन सिंह शेखावत - पृ. 242.

2. इस संदर्भ में उल्लेखनीय है डॉ. पुष्पपाल सिंह की नयी कहानी के संदर्भ में रेखांकित प्रवृत्तियों की सूची जो इस प्रकार है -

﴾क﴿ कथ्यगत प्रवृत्तियाँ :

1• यथार्थ के प्रति नया रुख ।

2• सम्बन्धों के बदलाव का बिन्दु ।

3• दाम्पत्यगत दूरियों की ईमानदार स्वीकृति ।

4• नारी-पुरुष के प्रकृत काम-सम्बन्धों का स्पष्ट स्वीकार ।

5• " मध्यवर्गीय जीवन और व्यक्ति " कहानी के केन्द्र में ।

6• महानगरीय जीवन बोध ।

7• मूल्यों और मान्यताओं में परिवर्तन ।

8• विद्रोह-भाव

9• विदेशों से आयातित विचार-दर्शनों का प्रभाव - मार्क्सवाद, अस्तित्ववाद आदि ।

10• वैयक्तिक चेतना का प्रकाशन ।

11• वैज्ञानीकरण, औद्योगीकरण और तकनीकी उन्नति के प्रभाव ।

12• विदेशी सभ्यता और संस्कृति का प्रभाव ।

13• परिवेश के प्रति जागरूकता ।

14• प्रत्येक स्तर पर रोमानीबोध से मुक्ति ।

﴾ख﴿ शिल्पगत प्रवृत्तियाँ :

1• भाषा की समर्थ अभिव्यंजना

2• भाषा का स्वाभाविक अलंकरण

3• सशक्त बिम्ब विधान

4• प्रतीकात्मकता

5• कथानक के स्थान पर वातावरण परिवेश-चित्रण के लिए महत्व ।

नयी कहानी की प्रमुख प्रवृत्ति रही है, " भोगा हुआ यथार्थ " ﴾ यथार्थ को यथावत रूप में स्पष्ट करना ही भोगा हुआ यथार्थ है ﴿ इससे जनजीवन का चित्र जैसा है वैसा ही सामने आता है । नयी कहानी से पहले ऐसा नहीं था, उस समय के कहानीकार या रचनाकार कल्पना से ही चित्र खींचता था ।

यह यथार्थता सृजन साहित्य में सामाजिक चेतना का ही एक रूप है । निर्धन ﴾ गरीब﴿ मध्यवर्ग, मजदूर, श्रमिक, शोषित, निम्नवर्ग, हरिजन आदि जिन परिस्थितियों में समानता चाहने लगे तब से ही इस प्रकार की यथार्थता का साहित्य में अवतरण होने लगा । कमलेश्वर कहते हैं --

---

6. पूर्व-दीप्ति पद्धति का प्रयोग
7. समानान्तर एवं दुहरे कथानक
8. पात्रों के नाम और वर्ग का लोप ﴾ व्यक्तिवाचक नामों के स्थान पर सर्वनामों का प्रयोग ﴿
9. निष्कर्षहीन कहानियाँ ﴾ नीति-कथाओं जैसे निष्कर्ष नहीं ﴿
10. कहानी में मध्य की अन्य विधाओं की अन्तर्भुक्ति ।
11. कहानी में लघुता या दीर्घता का निषेध ।
12. शैली के अन्य अनेक नूतन प्रयोग । ﴾ लोक कथाओं, किस्सा तोता-मैना, सिंहासन बत्तीसी, पौराणिक कथा - शैली आदि के अनेक तत्त्वों का ग्रहण ﴿

﴾ डॉ.पुष्पपाल सिंह " समकालीन हिन्दी कहानी - भाषा ﴿ तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन अंक ﴿ पृ. 80.﴿

" नयी कहानी आग्रहों की कहानी नहीं है, प्रवृत्तियों की हो सकती है और उसका मूल स्रोत है -- जीवन का यथार्थबोध । "[1]

इस प्रकार यथार्थ की प्रामाणिक अभिव्यक्ति नयी कहानी की मूल प्रतिबद्धता है । प्रेमचन्द और प्रेमचन्दोत्तर युग की कहानियों में यथार्थ, वर्तमान यथार्थ की तुलना में बहुत अन्तर है । वातावरण को सामान्य ढंग से प्रस्तुत कर देना, पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग करना और जीवन में व्यापक रूप से प्रचलित समस्याओं को सामने लाना ही यथार्थवादी कहानी के लिए पर्याप्त समझा जाता था । लेकिन नयी कहानी में, इसके विपरीत, वातावरण की चिरपरिचित अभिव्यक्ति की अपेक्षा, अन्तरंग भावों को प्रामाणिक रूप में प्रकट करने पर बल दिया गया ।

नयी कहानी के लेखक या कहानीकार, सिर्फ कहानी रचता नहीं, प्रत्युत अपने अनुभव को कहानी के रूप में बदल देता है । वह कोई कृत्रिमता प्रस्तुत नही करता । वह अपने अनुभव (भोगा हुआ यथार्थ) को कहानी का मूल आधार बनाता है । इसीलिए वह कहानी अधिक नयी या प्रामाणिक लगती है । नयी कहानी का रचनाकार या कहानीकार आज की जिन्दगी के यथार्थ का भोक्ता है । कहानीकार, अपनी कहानियों में अपने अनुभव को ही पूरी ईमानदारी से प्रस्तुत करता है । यही ईमानदारी अनुभव की प्रामाणिकता है ।

---

1. कमलेश्वर " मांस का दरिया " (भूमिका) पृ. 7.

नयी कहानी, उसे ही समझा गया है - जिसमें अनुभूति का नयापन हो "[1] भोगा हुआ यथार्थ हो और हो ईमानदार अनुभव की प्रामाणिकता ।"[2]

अमरकान्त की " जिन्दगी और जोंक " के संदर्भ में हम इन प्रवृत्तियों को पा सकते हैं । इस कहानी में अमरकान्त न कोई आदर्श प्रस्तुत करते हैं और न कोई विचार -- " साधारण से भिखमंगे रजुआ के जीवन की असाधारण प्यास का जिस मर्मस्पर्शी करुणा संवेदना से चित्रण हुआ है वह जीवन का एक ऐसा टुकड़ा पेश करता है जिसमें अर्थ आरोपित नहीं, जो स्वयं ही अर्थ गर्भ है । रजुआ की पीड़ा, केवल जीने की पीड़ा नहीं है, आज की सामान्य जिन्दगी के समाजीकरण की पीड़ा है मानवीय अस्तित्व और व्यक्ति सत्ता के समाजीकरण की पीड़ा है ।"[3] इस कहानी में " भोगा हुआ यथार्थ " ही नहीं बल्कि कहानीकार की ईमानदारी अनुभव की प्रामाणिकता भी है ।

तेलुगु कहानीकारों में चागंटि सोमयाजुलु की कहानी " एम्पु " (चयन) में जिन्दगी और जोंक की यथार्थ जीवन के लिए एक आदर्श सामने आता है --

इस कहानी में शीरै का पिता, उसके लिए एक अन्धे भिखारी को लाता है और उसे समझाते हुए कहता है -- " लंगड़े से भी अन्धे को देखते ही लोगों में दया उत्पन्न होगी । वह तुम पर अधिक आश्रित होकर, तुम्हारी बात मानेगा । तुम चाहे कहीं भी जाओ, मन पसन्द व्यक्ति से कुछ भी करो,

---

1. डॉ. सुरेशचन्द्रगुप्त " शोध और समीक्षा " - पृ. 134.
2. डॉ. रामदरश मिश्र " आज की हिन्दी कहानी " सं. श्री सुरेन्द्र नयी कहानी : दशा - दिशा - सम्भावना - पृ. 345.
3.

वह देख नही पायेगा । कोढ़ी पिता की देखभाल,प्रेम से जिस प्रकार कर रही हो, उसी प्रकार अन्धे पति का भी तुम आदर करोगी तो तीनों की जीविका बेखटके चलती रहेगी ।"[1]

नयी कहानी में व्यक्ति की स्थिति और मानसिकता का चित्रण, समसामयिक संघर्षशील सामाजिक सन्दर्भों के साथ जोडकर संवेदनशीलता और प्रामाणिकता के साथ किया गया है । मोहनराकेश की कहानी " मलबे का मालिक " में एक औरत रोती हुई अपनी बच्ची को बाहों में लेकर कहती है - " चुपकर खसम-खाने, रोएगा तो वह मुसलमान तुझे पकडकर ले जाएगा । कह रही हूँ " चुपकर " ।"[2]

लेकिन तेलुगु कहानी " एन्दुकु पारेस्तानु नान्ना (मै कैसे खोऊँगा लाल) में उल्टी स्थिति दिखायी देती है । इसमें बच्चा पिताजी से डरता नही है बल्कि उत्तर भी देता है जैसे --

" तब से मैंने जो पैसे चुस्ट चुस्ट लाने के लिए दिये थे वे कहाँ हैं ? वह (बच्चा) उत्तर देता है, " मैं कैसे खोऊँगा पिताजी ? " [3]

जीवन में जहाँ तक दृष्टि जाती थी, वह सब कुछ नयी कहानी का ही विषय है ।

---

1. चासो कथलु - " एम्पु " पृ. 118 - 119.
2. मेरी प्रिय कहानियाँ - मोहन राकेश - पृ. 140.
3. एंदुकु पारेस्तानु नान्ना - पृ. 102

नयी कहानी में " भोगा हुआ यथार्थ " " अनुभव की प्रामा - णिकता ", " परिवेश से प्रतिबद्धता " जैसे पदों द्वारा कहानीकार की भूमिका को परिभाषित करने का प्रयास किया गया । डॉ॰ निर्मला जैन का कहना है -- "इस कहानीकार ने जितना संत्रास, भोगे हुए यथार्थ के नाम पर भोगा है, उतना शायद सचमुच यथार्थ के अनुभव से नहीं ।"[1] " आधुनिक भाव-बोध " और " संवेदना " शब्दों को इन कहानीकारों ने इतना अधिक घोटा है कि वे अपने वास्तविक अर्थ को ही खो बैठे हैं । आधुनिकता के नाम पर जितनी कुत्सित संभावनाएँ हो सकती थीं, इन कहानीकारों ने की । यथार्थ के नाम पर सेक्स उभर आया । परिणाम स्पष्ट था वह (कहानी) अपने समय के महत्वपूर्ण सवालों से कट गयी और इसकी एकमात्र दिलचस्पी प्रेम त्रिकोण में बची ।"[2]

समय पाकर यही व्यक्तिवादिता नयी कहानी की मौत का कारण बनी । नयी कहानी ने जिन रूढ़ियों और स्थापित मान्यताओं से विद्रोह किया था, वह स्वयं ही वैसी ही रूढ़ियों और मान्यताओं में फँस गयी । परिणामस्वरूप बकौल भैरवप्रसाद गुप्त के अनुसार " 1962 में नयी कहानी आन्दोलन " बिखर गया ।"[3]

उल्लेखनीय बात तो यह है कि नैतिक वर्जनाओं को नकारने का प्रारम्भ जहाँ नयी कहानी की शक्ति बनकर उभरा था, वहीं बाद में कुछ कहानियाँ विद्रोह के नाम पर शुद्ध " सेक्सी " हो गयी । ऐसी ही कहानियों ने बाद में अकहानी को जन्म दिया ।

---

1. डॉ॰ निर्मला जैन " समकालीन कहानी " यथार्थ का छल और छल का यथार्थ, संचेतना - अंक 11, 12, 13, पृ॰ 150)
2. कहानी की वर्णमाला - सं॰ राजेन्द्र अवस्थी - पृ॰ 49॰
3. सारिका (16 - 29 फरवरी) 1984 - पृ॰ 20॰

प्रगतिशील साहित्य :-

हिन्दी साहित्य क्षेत्र में "प्रगतिशील लेखक संघ" की स्थापना सन् 1936 में हुई। उसका ही रूप तेलुगु में अभ्युदय लेखक संघ है। इसकी स्थापना (अरसम) सन् 1943 में हुई। उसका प्रथम महा अधिवेशन तापि धर्माराव जी के नेतृत्व में फरवरी सन् 1943 में तेनाली में संपन्न हुआ। अभ्युदय लेखक संघ ने अपनी योजना को इस प्रकार प्रकट की --

1. भाववादी साहित्य के विरुद्ध उठी आन्दोलन है और कल्पना जगत से उतरकर आने की सूचना देती है।
2. पुराने संप्रदाय पोषकों और संप्रदायों के विरुद्ध उठा आन्दोलन है।

अभ्युदय लेखक संघ ने अपने निम्न लक्ष्यों को भी घोषित किया है --

1. हमारे देश को साम्राज्यवादियों के शोषण और विदेशी प्रभाव से मुक्ति दिलाने के लिए, हमलों से आत्मरक्षण करने के लिए, राष्ट्रीय एकता की आवश्यकता को स्पष्ट करनेवाली कहानियाँ, नाटक, गीत आदि लिखना प्रथम लक्ष्य है।
2. दूसरे देशों के अभ्युदय साहित्य को खास करके अभी-अभी उभरी सोवियत चीन के सारस्वत को अनूदित कर प्रचुरित करना।
3. विविध भारतीय भाषाओं की प्रमुख रचनाओं को अंग्रेजी में अनूदित करके प्रचुरित करना।

4· अभ्युदय सारस्वत संकलनों को विविध भाषाओं की पत्रिकाओं में प्रचुरित करना ।

अपने लक्ष्यों को देशभर में फैलाने के लिए और जनता तक पहुँचाने के लिए अनेक प्रान्तों में बड़े-बड़े समारोहों का निर्वाह भी किया, साहित्य को एक आन्दोलन के रूप में परिवर्तित किया । इस आन्दोलन के समर्थक कहानीकार हैं -- " कोड्यटिगंटि कुटुंबराव, चागंटि सोमयाजुलु, राचकोंड विश्वनाथ शास्त्री, कालीपट्नम रामाराव, रावूरि भरद्वाजा आदि हैं"।

अभ्युदय रचनाकारों के मूल लक्ष्य पर युग प्रवर्तक श्रीरंगम श्रीनिवास राव ‖ श्री श्री ‖ का कथन समझना आवश्यक है -- " धन-संपत्ति, विज्ञान आदि जो भी है, वे सिर्फ कुछ ही व्यक्तियों के हाथों में हैं, उस सब को पूरी जनता तक पहुँचाना और सामाजिक जीवन को सुखमय करना और शुभ र करना जमीन या पृथ्वी को स्वर्ग बनाना अभ्युदय साहित्य का मूल लक्ष्य है । और इस दृष्टिकोण से लोगों को आगे ले जानेवाली रचनायें करके समाज को आगे ले जाना ही है विप्लव पंथ और अभ्युदयरीति " ।[1]

अभ्युदय रचना की कसौटी क्या है ? इस पर श्री श्री ने पंचम अधिवेशन में ‖ 1955 ‖ कहा -- " सामाजिक प्रयोजन या प्रगति ही अभ्युदय रचनाकारों का मूल लक्ष्य है । हमें किस ओर ले जाना है और कहाँ तक पहुँचाना है । यही रचना की कसौटी है । सबको खाने के लिए खाना, रहने के लिए मकान और करने के लिए काम इंतजाम करना ही हमारी इच्छा है । परस्पर विरुद्ध भावनाओं के संघर्ष में ही जीवन आगे बढ़ता है । वही साहित्य में भी प्रतिबिंबित होता है । संघर्ष का चित्रण करते हुए, प्रगति की ओर ले जानेवाला

1· अभ्युदय संपुष्ट - । संचिका - ।

साहित्य का सृजन ही अभ्युदय रचनाकारों का लक्ष्य है । एक, दूसरे को लूटने की व्यवस्था को भगाकर सब को सुखी जीवन देने में ही मान्यता देखने वाले रचनाकार ही सामाजिक परिवर्तन को चाहते हैं — मानव को पीछे खींचने की शक्तियाँ भी हैं । उनको पहचानकर दूर करना चाहिए । आधुनिक विज्ञान को सामान्य या आमआदमी तक पहुँचाने की कोशिश करनी चाहिए ।"

अभ्युदय लेखकों के कुछ आदर्श भी हैं, — " अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण से मानव की प्रगति चाहना, आर्थिक असमानता को हटाकर साम्यवादी समाज की स्थापना, पूंजीपति व्यवस्था को सर्वनाश करना, फासिस्टों के खिलाफ लडना, किसान-मजदूर जैसे लोगों को उत्तम जीवन के लिए देश-विदेशों में साम्यवादी समाज की स्थापना, कभी-कभी मार्क्सवादी न होने पर भी शोषितों की भलाई चाहते हुए रचनायें करना, युद्ध रहित विश्व - शान्ती, देश का पारिश्रमिकीकरण, उत्पादक सादनों को समाज को सौंपना, वर्ण-वर्ग रहित व्यवस्था को चाहना, जाति-पाँति को हटाकर सुन्दर भविष्य की स्थापना, जिन देशों में साम्यवादी व्यवस्था है, उनकी भलाई चाहते हुए आपत्ति में मदद करना, इन आशयों की सफलता के लिए प्रगतिशील साहित्य का सृजन करना, प्राचीन साहित्य को समकालीन वातावरण के अनुसार समझना, उसमें जो भी प्रगतिशील भावनायें होगी उन्हें वर्तमान से तुलना करना, प्राचीन लोक रीतियों को कला रूपों को अभ्युदय भावनाओं के विज्ञापन के लिए उपयोग करना, गद्यसाहित्य को तेजी से फैलाना और व्यक्ति चेतना को सामाजिक चेतना में परिवर्तित करना ।

अन्य दिशायें :-

1955 तक भारत से रूस, चीन और पूरब-यूरप देशों की मित्रता का प्रभाव भारतीय साहित्य पर पडा । साहित्य में उदारवादी भावनाओं को स्थान मिला । डॉ॰सी॰ नारायण रेड्डी ‖ सिनारे ‖ और तिलक जैसे रचनाकारों ने, शासक वर्ग का समर्थन किया । इसका प्रभाव तेलुगु कहानियों पर भी है । 1956 से शहरी मध्यवर्ग और उसकी समस्याओं को लेकर कहानियाँ आने लगी ।

राजनैतिक क्षेत्र में कम्युनिष्टपार्टी भी अपनी चेतना खोने लगी । आन्ध्र प्रदेश में 1955 को चुनावों में कम्युनिष्टपार्टी के हारने से उसके निर्माण में दरारे पडी । साहित्य में ‖ मार्क्सवादी ‖ अभ्युदय दृष्टिकोण पर आलोचनाएँ होने लगी । समाज पर ‖ मार्क्सवादियों ‖ अभ्युदयवादियों का प्रभाव घटने लगा । गुरजाडा को " अकवि " के रूप में देखने में और " कन्याशुल्कम " के खण्डन में सफल हो गये । दूसरी ओर 1955 में अभ्युदय लेखक संघ, अपना पंचम अधिवेशन चलाने पर भी मजबूत नहीं हो सका । इसीलिए साहित्य में और राजनीति में एक स्तब्ध साहित्यिक वातावरण फैला रहा । फलत: साहित्य वास्तविकता से भिन्न समस्याओं को स्पष्ट करने लगी । मध्यवर्ग को केन्द्रीय बिन्दु बनाकर, प्रेम, थकावट, झुंझुलाहटें, हास्य रचनायें आदि से परिवार और प्रणय के चारों ओर घूमने लगीं । मध्यवर्ग की कमजोरी ही हास्य रचनाओं के लिए भूमिका बन गई और एक ओर मध्यवर्ग के पास तक न रहनेवाली इच्छाओं से हास्य रचनाओं का उद्भव हुआ । थोडी सी मात्रा में व्यंग्य भी है । उसी प्रकार मध्यवर्ग की कमजोरी, असहायता कहानी का कथ्य बन गयी । इस नेपथ्य में मधुरांतक राजाराम और कालीपट्नम रामारावजी के कथन द्रष्टव्य हैं । मधुरांतक राजाराम कहते हैं -- " कहानी " समय काटने के लिए उत्पन्न नहीं हुई । कुछ न कुछ संदेश देने के लिए आयी है ।

सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, पारिवारिक और मानसिक समस्याओं में फँसकर मध्यवर्ग का मानव, किस प्रकार पिस रहा है । उसका ही चित्रण अनेक नयी कहानियों में है ।"[1]

मध्यवर्ग के अस्थिर मन पर प्रहार करते हुए कालीपट्नम रामाराव कहते हैं -- "मध्यवर्ग के लोगों में स्थिरता दिखायी नहीं देता ।" आन्दोलन मचानेवाले क्रांतिकारों की ओर तब तक रहते हैं जब तक समय नहीं आता । वक्त आने पर आर्थिक समस्या के कारण कुत्तबृन्दों के समान पूँजीपतियों की ओर झुक जाते हैं ।"[2]

समकालीन कहानी लेखिकाओं की कहानियाँ भी प्रणय के चारों ओर के अँधेरे पन को चित्रित करने में लगीं । इसी समय मध्यवर्ग की कर्म - चारिणियों की समस्याओं को भी कहानियों में स्थान मिलने लगा ।

1950 के बाद के दशक में साहित्य में मध्यवर्ग केन्द्रबिन्दु बन गया । राजनीतिक चेतना और आन्दोलन न पनपने पर भी मध्यवर्ग का मानव जीने के लिए लड़ने लगा । अपना अधिकार, अपनी सुरक्षा, अपना भविष्य आदि सब के सब कमजोर दिखायी देने लगे । समाजपर और अपने पर विश्वास खोने का समय था -- "भगवान भी कुछ नहीं कर सकेगा ।" ऐसी भावना भी प्रबल ने लगी । कमजोरी और कायरता ही तब की मानसिक स्थिति बनी रही । कहानी साहित्य में मध्यवर्ग के मानव को "औसत आदमी" "गली का आदमी" सडक पर जानेवाला आदमी कहने लगा । उसने जीवन पर अधिकार खोकर, बदले में कल्पना जगत में डूबकर भविष्य को और वर्तमान को खोजना शुरू किया । 1956-60 के बीच एक अजीब-सा संघर्ष दिखाई पड़ता है । जीवन मूल्य बदलने की सूचनायें रचनाओं में दिखायी देने लगी ।

1956-60 में राजनीतिक स्तब्दता के कारण आन्दोलन बनकर साहित्य का विकास नहीं हुआ । फलत: वरिष्ट रचनाकारों ने बहुत कम कहानियों की रचना की । राचकोंड विश्वनाथ शास्त्री और कालीपट्नम रामाराव की कहानियाँ अगले दशक में उभरे आन्दोलनों के लिए अच्छी भूमिका निभायी । साथ-साथ साहित्यिक मूल्यों को, जीवन मूल्यों को नाश करनेवाली व्यापारी साहित्य भी विशिष्ट स्थान धारण कर गयी है । खुशी की बात है कि इस प्रकार के साहित्य को साहित्य क्षेत्र में सम्मान नहीं मिला ।

1955 तक पलायनवादी साहित्य को प्रमुख स्थान मिलने लगा । सब के सब रचनाकार एक तरह से लिखे तो " अरसम " (अभ्युदय रचयितल संगम्) को ही प्रमुख माननेवाले " आरुद्रा " जैसे रचनाकार ने भी " आनकट्ट की हत्या " " अहिंसारौड ", " डिटेक्टिव " जैसी रचनायें की । अभ्युदय लेखक संघ, डिटेक्टिव या पलायनवादी साहित्य का सामना करने की कोशिश नहीं की । लेकिन कोडवटिगंटि कुटुंबराव जैसे महान् कहानीकार, " डिटेक्टिव के यस ", टी.वी.शंकरम " नामों से व्यंग्य रचनायें लिखकर पलायनवादी साहित्यक प्रवृत्ति को मौत के घाट पर उतारा ।

1959 में पुराणम सुब्रह्मण्यशर्मा जी ने " रेक्क वालिंदि " (सिगनल दिया गया), (विशालान्ध्र " रविवार की संचिका) नामक कहानी लिखी । " तेलुगु साहित्य में सृजनशीलता किस प्रकार लुप्त होने लगी ? इसका स्पष्ट चित्रण इस कहानी में है ।

इस दिशा से उजाले की तरफ ले जाने की ख्याति राचकोंड विश्वनाथ शास्त्री जी की है । उनकी " आरु सारा कथलु " ने कहानी साहित्य में हलचल मचा दी और आगे के आन्दोलनों के लिए नींव बनी ।

1955 के बाद के साहित्य में भी " पूंजी " का आगमन हुआ। हमारा साहित्य मासप्रोडक्शन स्तर तक पहुंच चुका है। अनेक छापखाने आने लगे और दिन प्रति-दिन, हफ्ते-हफ्ते और महीने-महीने काल्पनिक साहित्य को प्रचुरित करने लगे। इस प्रकार 1955 के बाद " साहित्य " वाणिज्य की वस्तु बन गयी।

पहले भी व्यापारी (वाणिज्य) साहित्य था। लेकिन, " पाठकों की साहित्यक पिपासा, रचनाकारों की जिज्ञासा, नये अंगों की खोज आदि के लिए स्थान नहीं था। 1955 के बाद वाणिज्य से जुडकर जनता का प्रेम पाने लगा।

राजनैतिक आन्दोलन न चलने की व से राजनैतिक कहानियाँ ज्यादा नहीं आयी। राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियाँ भी लिखी गयी। साथ-साथ पारिवारिक जीवन के विकास को लेकर अनेक कहानियाँ आयीं।

इस नेपथ्य में तेलुगु के अभ्युदय कहानीकार हैं -- कोडवटिगंटि कुटुंबराव, चागंटि सोमयाजुलु, बलिवाड कांताराव, राचकोंड विश्वनाथ शास्त्री और कालीपट्नम रामाराव आदि। हिन्दी के कहानीकार हैं -- भीष्म साहनी, मोहन राकेश, अमर कान्त, ज्ञानरंजन, कमलेश्वर और राजेन्द्र यादव आदि हैं।

तेलुगु की कुछ उल्लेखनीय अभ्युदय कहानियाँ हैं - नया जीवन (कोडवटिगंटि कुटुंबराव) चंपु (चयन), (चागंटि सोमयाजुलु) मानव और जानवर (मीनीकन्नपुगुलु (बलिवाड कांताराव), सारा वधुलु (राचकोंड विश्वनाथ शास्त्री), यज्ञम् (कालीपट्नम रामाराव)। उसी प्रकार हिन्दी कहानियाँ हैं -- " चीफ की दावत (भीष्म साहनी), मलबे का मालिक (मोहन राकेश), जिन्दगी और जोंक (अमरकान्त) पिता (ज्ञानरंजन), जहाँ लक्ष्मी कैद है (राजेन्द्र यादव) आदि।

7. उपलब्धियाँ (हिन्दी-तेलुगु) :-

नयी कहानी को मूल शक्ति उसके जीवन से सीधे साक्षात्कार में थी । इसका कारण है कि नयी कहानी का लेखक जीवन के यथार्थ का भोक्ता था । मोहन राकेश ने कहा था -- "जीवन व लेखन के संबंध में एक आंतरिक दृष्टि उसी व्यक्ति में विकसित हो सकती है जो कि जीवन से संवेदना के स्तर पर और अपने लेखन से समर्पण के स्तर पर जुडा हो ।"[1]

परिवेश के प्रति ईमानदार जागरूकता परिवेश की प्रामाणिक अभिव्यक्ति नयी कहानी की उपलब्धि है । आजादी के पश्चात् राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से होनेवाले परिवर्तनों को नयी कहानी ने अच्छी तरह देखा और परखा है ।

नयी कहानी अपने समय की सारी विसंगतियों को निस्संग भाव से व्यक्त करती है । हमारे जीवन का शायद ही कोई पक्ष है जो नई कहानी से जुडा न हो । "व्यक्तिगत एवं अनुभूत सत्य की समस्त प्रामाणिकता की रक्षा करते हुए भी समय के बडे सत्य और परिवेश की बड़ी प्रामाणिकताओं को ध्वनित कर सकना कहानी की सबसे बडी विशेषता मानी जा सकती है ।"[2]

नयी कहानी ने कहानी के अपने परंपरागत ढाँचे को तोडकर नया रूप पाया । अपने नये रूप में कथ्य के स्तर पर जीवन की सच्चाई को स्वीकारा है ।

---

1. बकलम खुद - मोहन राकेश - पृ. 110.
2. कहानी : स्वरूप एवं संवेदना - राजेन्द्र यादव - पृ. 54.

इसी अवधि की तेलुगु कहानी की उपलब्धियाँ इस प्रकार हैं --

1• इतिहास के अंधेरे में छिपे दीन-हीन, दु:खियों के जीवन को इसने बाहर लाया ।

2• जानपद सौन्दर्य (आंचलिक सौन्दर्य), ग्रामीण अंचल का जीवन, जमींदारों का शोषण, शोषित और मजदूर वर्ग के दु:ख दर्दों को अत्यंत सहजता में चित्रित किया ।

3• जीवन से संबंधित गीत-विधियों नारी को एक सबल समर्थ शक्ति के रूप में प्रस्तुत किया ।

4• मानव मन का विश्लेषण मनोविज्ञान की भूमिका में अवतरित किया ।

5• " मध्यवर्ग " की समस्याओं को विभिन्न कोणों में चित्रित किया गया ।

8• हिन्दी और तेलुगु की नई कहानियाँ :-

" अनुभूति की प्रामाणिकता ", " परिवेश से प्रतिबद्धता ", " भोगा हुआ यथार्थ ", " अभ्युदय भावना (प्रगतिशील साहित्य) आदि प्रवृत्तियों से जुडी हुई कहानियाँ तो हिन्दी और तेलुगु क्षेत्रों में 1951 से 60 के बीच अनेक मिलती हैं । इसीलिए चर्चित कहानियाँ चुनकर उनका संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रस्तुत किया गया है वे हैं --

(अ) हिन्दी की नयी कहानियाँ :-

1. निर्मल वर्मा : परिन्दे
2. कमलेश्वर : दिल्ली में एक और मौत
3. राजेन्द्र यादव : जहाँ लक्ष्मी कैद है।
4. मोहन राकेश : मलबे का मालिक
5. अमरकान्त : जिन्दगी और जोंक
6. फणीश्वरनाथ रेणु : तीसरी कसम
7. भीष्म साहनी : चीफ की दावत
8. ज्ञानरंजन : पिता
9. उषा प्रियंवदा : वापसी
10. मन्नू भण्डारी : यही सच है

(आ) तेलुगु की नयी कहानियाँ :

1. चागंटि सोमयाजुलु : एंपु (चयन)
2. गोपीचन्द : पात्तपगलु–कोत्तवगलु (नये प्रेम)
3. बुच्चिबाबु : नन्नुगुरिंचि कथ व्रायवु
   (मेरे बारे में लिखोगे न ?)
4. कोडवटिगंटि कुटुंबराव : नया जीवन
5. कल्याणकुमार : बिल्ललमोलवाडु
6. पालगुम्मि पद्मराजु : गालीवाना (तूफान)
7. पुराणम सुब्रह्मण्य शर्मा : नीलि (नीला)
8. रावूरि भरद्वाजा : डाक्टर्स डैल्मा
9. मुनिपल्लेराजु : (वेश्या) भोगम मनिषि
10. हितश्री : मच्चल संचमु

9. प्रवृत्तियाँ : तुलनात्मक अनुशीलन {1951-60} :-

विचाराधीन समय की हिन्दी और तेलुगु कहानियों में प्राय: समान प्रवृत्तियाँ दृष्टिगोचर होती है। इनमें उल्लेखनीय है -- " परिवेश से प्रतिबद्धता ", " अनुभूति की प्रामाणिकता ", " भोगा हुआ यथार्थ "। साथ-साथ दोनों कहानी क्षेत्रों में " मध्यवर्ग " को प्रमुख स्थान दिया गया है। इसका मूल कारण है कि दोनों भाषाओं के कहानीकार मध्यवर्ग से ही आये हैं। इस अवधि को {1951-60} कहानियों में " मध्यवर्ग " को लेकर विभिन्न कोणों से चित्रित किया गया है। विशेषत: हिन्दी कहानियों में समाज और समकालीन समस्याओं का यथार्थ चित्रण ही देख सकते हैं। समस्या का समाधान हिन्दी की नयी कहानियों में दिखायी नहीं देता। लेकिन तेलुगु के अनेक कहानीकारों की कहानियों में सिर्फ यथार्थ ही नहीं, साथ-साथ आदर्श भी स्पष्टत: दिखायी देता है। इस नेपथ्य में दोनों भाषाओं की कहानियों में कुछ साम्य और वैषम्य सामने आते हैं --

(अ) निर्मल वर्मा -- " परिंदे " :-

{अ} निर्मल वर्मा की कहानियों में बहुचर्चित कहानी है " परिंदे "। यह कहानी नयी कहानी धारा की कहानियों में प्रथम कहानी है।

" परिंदे " शब्द एक ओर मृत्यु संबंधी बहुचर्चित मुहावरे प्राण-परिवेश से जुड़ा हुआ है तो दूसरी ओर हर परेशानी का सामना करते हुए हर स्थिति में जीने की कामना रखते हुए, जीते चले जानेवाले उन व्यक्तियों के प्रतीक के रूप में प्रयुक्त हुआ है जो पहाड़ों से मैदानों की ओर आनेजानेवाली

चिड़ियों की तरह सुख-दु:ख और दु:ख-सुख की डोर में बँधे जोते हुए चले जाते हुए दिखायी देते हैं ।

इस कहानी में कस्बे से उठकर महानगर में कदम रखनेवाले व्यक्ति की त्रासदी है । जो इस पूरे परिवेश में अपने को " मिसफिट " महसूस करता है । कमलेश्वर कहते हैं " यहाँ एक नयी ही जिन्दगी थी, एक ऐसी जिन्दगी जिसके किनारे खड़े होकर देखने से बहाव का पता नहीं चलता था .... एक अजीब-सा परायापन और बेगानापन है यहाँ ... "[1] यही इस कहानी में चित्रित है । कोई मरे या जिये, किसी को कोई मतलब नहीं । सब स्वार्थी हैं और अपनी ही आपा-धापी से लगाव है ।

यह कहानी, हर व्यक्ति की जिन्दगी से जुड़े हुए दो अहम ख्यालों को लेकर चलती है -- जीवन और मृत्यु । कहानी का प्रमुख पात्र मि॰ह्यूबर्ट के कथन से यह पुष्ट होता है -- " पियानो का गिरता हुआ हर " नोज " एक छोटी-सी मौत है मानो घने छायादार वृक्षों की काँपती छायाओं में कोई पगडंडी गुम हो गयी हो । एक छोटी-सी मौत जो आनेवाले सुरों को अपनी बची-खुची गूँजों की साँसें समर्पित कर जाती है ... जो मर जाती है, किन्तु मिट नहीं पाती मिटती नहीं इसलिए मरकर भी जीवित है, दूसरे सुरों में लय हो जाती है ।"[2]

इस कहानी में लतिका, मि॰ह्यूबर्ट और मुकर्जी प्रमुख और मूल पात्र हैं । इन तीनों में एक तरह का अकेलापन छाया हुआ है । लतिका केप्टन गिरीश की याद में व्यथित है । जो भूतपूर्व प्रेमिक है । लतिका जानती है कि वह मर चुका है और लौटकर आयेगा नहीं । उसकी यादों में हमेशा गिरीश का चेहरा आता है ।

1· खोयी हुई दिशायें - कमलेश्वर - पृ· 10·

2· निर्मल वर्मा - परिंदे " - पृ· 134·

लतिका चाहे तो फिर शादी कर सकती है लेकिन उसने स्वीकार नहीं किया । वह, गिरीश का स्थान किसी को देना नहीं चाहती । गिरीश की यादों में अकेला ही जीना चाहती है ।

लतिका में अतीत को न भूलने एवं वर्तमान को न अपनाने का द्वंद्व बहुत ही तेज और तीव्र है । लेखक या कहानीकार ने उसके द्वंद्व को दबाया नहीं क्योंकि हर व्यक्ति अपनी अपनी जिन्दगी का सन्तुलन अपनी तरह से खोजता है । यही परिंदे का संकेत है और समयबोध भी है ।

लतिका की तरह इस कहानी का एक पात्र है डॉ॰ मुकर्जी । उसकी पत्नी के देहांत के बाद वर्मा से आकर अकेला जीवन व्यतीत करते हुए दिखायी देता है और एक पात्र मि॰ ह्यूबर्ट, अपने फेफड़ों की बीमारी की वजह से मृत्यु-भय से पीड़ित है । ये तीनों एक ही स्थान पर इकट्ठे रहते हुए भी सभी का अपना-अपना अलग संसार है ।

इस प्रकार " परिंदे " कहानी व्यक्तिगत अनाम संबंधों के बीच अपने अस्तित्व की खोज व तलाश की कहानी है । निर्मलवर्मा की और कुछ प्रमुख कहानियाँ है - लन्दन की एक रात, जलती झाड़ी, डेढ़ इंच ऊपर, दहलीज, अंधेरे में आदि । " लन्दन की एक रात " में महानगरीय जीवन का संत्रास, बेरोजगारी, रंगभेद, घुटन, अकेलापन, तनाव से उत्पन्न संत्रास आदि दिखायी देते हैं तो " जलती झाड़ी " में अस्तित्व रक्षा की पीड़ा, पीढ़ी के साथ बदलने का संदेश है । " डेढ़ इंच ऊपर " में द्वितीय महायुद्ध के पश्चात् उत्पन्न परिवेश के कारण अकेलेपन का एहसास का चित्रण है । " दहलीज " में संस्कार, संकोच के कारण समयबोध का अस्वीकार का चित्रण है । " अंधेरे में " परिस्थिति के साथ समझौता, जो मनुष्य की नियति है उसका चित्रण है ।

हितश्री - मच्चलशंकम् :

हितश्री की कहानियों में चर्चित कहानी है " मच्चलशंकम " । इस कहानी के मुख्य पात्र हैं वल्लभराव, विधवा स्त्री, छे साल का उसका बेटा । इन तीनों से जुडी हुई कहानी है । लेकिन " मच्चल शंकम " { धब्बों का शंक } का स्थान भी कहानी में अत्यंत महत्वपूर्ण है । इन तीनों को कुछ समय तक जुडाने में उसका महत्वपूर्ण स्थान है ।

इस कहानी में वल्लभ राव एक सागर तट के पास आता है । बच्चों की तरह सागर के लहरों से खेलता रहता है । तब उसको एक " मच्चल शंकम् " मिलती है तो उसे हाथ में लेकर उसकी सुन्दरता से तन्मय होता है । उसी वक्त छे साल का बालक उसके नजदीक आकर उस शंकम को देखने लगता है । तब वल्लभ राव सोचता है कि वह बालक पूछेगा कि या नहीं । लेकिन वह बालक नहीं पूछता तो वल्लभ राव ही पूछता है कि तुम्हारा नाम क्या है । और शंकम को भी देना चाहता है । वह बच्चा भी उससे कुछ बोलने के लिए कोशिश करता है लेकिन कुछ नही बोल पाता । मीठी मीठी बातों से पूछने पर भी वह बालक कुछ भी नहीं बोलता । तब उसकी माँ कहती है -- " नहीं बोल पायेगा ।"

वेदना से भरा हुआ, वह स्वर, वल्लभ राव के हृदय में उसी वक्त तक मृदु मधुर संगीत को सुनायी देनेवाले तंत्रियों को काट देता है । उसको और पहली बार बिना आँख मारे देखने लगता है । निराशा, निस्पृह, अचेतन से वह सिर झुकाकर ऐसी ही खडी रहती है । उसके मन में उत्पन्न तूफान की जानकारी बहुत जल्दी ही मिल जाती है । वह दया से उसको देखने लगता है । फौरन उसको और एक विषय भी स्पष्ट होता है । " वह विधवा है " । उसके दिल में धक धक हुआ । उसको और एक बात भी पता चलता है — उसकी साडी जो सफेद रंग में थी, उसमें टांके भी स्पष्टत: दिखायी देते हैं । अब उसे क्या बचा है ...... " ।

कुछ समय के बाद वह चली जाती है । तब वल्लभ राव के मन में अनेक विचार उत्पन्न होते है । वह तरह-तरह से सोचने लगता है । उसको याद आया कि उस स्त्री ने उससे कहा " कोई देखे तो अच्छा नहीं होगा ।" बार-बार वही बातें याद आने लगा । इसके अलावा शक भी वहीं छोड कर चली गयी । उसने सोचा था कि शायद वह फिर इधर आयेगी । उसका विचार सच ही निकला । वह आयी । पहले वल्लभ राव को समझ में नहीं आया । धीरे-धीरे समझ में आने लगा । वह इस प्रकार वल्लभ राव से कहने लगी —

उसको कुछ न कुछ मदद करने तक, आपके मन में शांती उत्पन्न नहीं होगी । लेकिन क्या कर सकते हैं ? वह आपके बस की बात नही है । परेशान होने के सिवा और एक रास्ता है ही नहीं । अशांती पाने वाला मन उससे बचने के लिए छोटी सी रास्ता मिले तो भी उपयोग करने के लिए कोशिश करती है ।

कहानी के अंत में वल्लभ राव और उस विधवा स्त्री के मन में अनजाने में ही प्रेम की लहरें उत्पन्न होती हैं। लेकिन व्यक्त करने में दोनों असमर्थ हैं। इस प्रकार " मच्छल शंकम " के माध्यम से कहानी को चलाया गया।

निर्मलवर्मा " परिंदे " और " हितश्री " मच्छलशंकम :-

इन दोनों कहानियों में अकेलापन और प्रतीक्षा का चित्र खींचा गया है। " परिंदे " में प्रमुख पात्र लतिका, मि. ह्यूबर्ट और मुकर्जी में प्रतीक्षा और अकेलापन का चित्र है। इनमें पुरुष विधुर हैं और स्त्री विधवा है। पुरानी यादों में या गतस्मृतियों में ही अपनी जिन्दगी गुजारना चाहते हैं। " मच्छल शंकम " में भी स्त्री पात्र विधवा है। सागर तट के पास वल्लभराव से परिचय सिर्फ परिचय-सा ही रह जाता है। दोनों में अकेलापन का चित्र है। इसी प्रकार परिंदे में भी तीनों प्रमुख पात्र, एक दूसरे को चाहते हुए भी, मिलकर आगे की जिन्दगी चलाने में तय्यार नहीं होते। " परिंदे " और " मच्छल शंकम " के पात्र अकेलापन और प्रतीक्षा में ही अपनी जिन्दगी काटना चाहते हैं। इन दोनों कहानियों में एक अन्तर तो स्पष्टतः दिखायी देता है -- वह आर्थिक स्थिति को लेकर है। हितश्री के पात्र गरीब वर्ग का प्रतीक हैं। लेकिन परिंदे के पात्र मध्यवर्ग के हैं। कहानी में अकेलापन, प्रतीक्षा का गहरापन तेलुगु से भी हिन्दी कहानी " परिंदे " में ज्यादा है। लेकिन " मच्छलशंकम " में छे साल के बच्चे के प्रति जो गूंगा है, जो दया की भावना वल्लभ राव में उत्पन्न होती है और कहानी में " मच्छलशंकम " का स्थान कितना ऊँचा है। ये सब हिन्दी कहानी "परिंदे" में नहीं हैं। ऐसे ही वातावरण भी दोनों कहानियों में अलग-अलग है। मच्छल शंकम का वातावरण सिर्फ सागर तट है तो परिंदे का वातावरण नगरीय वातावरण से मिलता जुलता है। दोनों कहानियों को चित्रित करने में दोनों कहानीकार संपूर्णतः सफल दिखायी देते हैं।

[आ] राजेन्द्र यादव - जहाँ लक्ष्मी कैद है :-

" नयी कहानी " के प्रवर्तकों में राजेन्द्र यादव एक है । जहाँ लक्ष्मी कैद है " उनकी बहुचर्चित कहानी है । एक बेचैनी, छटपटाहट और आंतरिक पीडा से लिखी गयी इस कहानी में प्रगतिशील अन्दाज भी उभरकर आता है । लक्ष्मी नामक युवती अपने पिता की स्वार्थपरता, अन्ध विश्वास आदि की शिकार होती है । उसका धनी बाप उसके जन्म के बाद से और भी धनी होता गया । अब वह लक्ष्मी का विवाह नही करना चाहता क्योंकि उसे भय है कि लक्ष्मी के जाने से उसका धन भी चला जाएगा । गोविन्द नामक पात्र लाला [लक्ष्मी का पिता] के मकान के एक हिस्से में बतौर किरायेदार रहता है । उसे लाला, उसकी बेटी और उसका घर सभी रहस्यप्रतीत होते है । लाला के जीवन के बारे में चौकीदार से गोविन्द द्वारा पूछे गये सवालों से यह पता चलता है कि उसमें जानने की उत्सुकता अधिक है जो एक सामान्य व्यक्ति की मान - सिकता होती है । समाज में जो केवल दौलत से मतलब रखते है उनके सामने तो उनकी प्रशंसा की जाती है पर पीठ पीछे लोग उन्हें बहुत ही नीची दृष्टि से देखते हैं । यही विचार लाला रूपाराम के प्रति चौकीदार के भी हैं। लाला का चरित्र उस समय की बढ़ती हुई स्वार्थपरता और वैयक्तिकता से भरा है । परम्परागत रूढ़िबद्धता और अन्धविश्वासों से जकड़ा हुआ लाला रूपराम जब पोती गौरी की शादी होने के बाद व्यापार में घाटा देखता है तो अपनी बेटी लक्ष्मी की कभी शादी न करने का दृढ़ निश्चय कर लेता है । लक्ष्मी के विवाह की बात भी न सोचकर उसे घर में अपने पहरे में रखता है और उस पर किसी की भी नजर नहीं पड़ने देता । ऐसी सामाजिक कुरीतियों से व्यक्तिगत विद्रोह करने का प्रयास लक्ष्मी द्वारा किया गया है । मगर वह सफल नहीं हो पाती और घर में ही उसे मजबूर होकर रहना पड़ता है । कहानीकार ने चौकीदार से कहलाया है कि --

"बूढ़ा हो गया है, साँस का रोग हो रहा है, सारा बदन काँपता है, लेकिन एक पैसे का भी फायदा देखेगा तो दस मील धूप में हाँफता हुआ पैदल जाएगा। क्या मजाल जो सवारी करले।"[1]

लाला से अपने दौर के दौरान लक्ष्मी तीखे स्वर में कहती है -- "तूने मुझे अपने लिए रखा है, मुझे खा। मुझे चबा, मुझे भोग ..."[2]

लक्ष्मी इस माहौल से भागने का निष्फल प्रयास करती है। गोविन्द में निर्णय लेने अथवा किसी निष्कर्ष पर पहुँचने की क्षमता का अभाव है, जो उसकी अविकसित मानसिकता को स्पष्ट करता है और साथ ही मध्यवर्गीय कायरता को भी।

घर में नारी गृहलक्ष्मी कहलाती है। मगर इसके बावजूद उसे स्वतंत्र व्यक्तित्व विकसित करने का अवसर नहीं दिया जाता है। हमारे समाज में नारी की अवस्था, पूँजीवादी लोभ और स्वार्थ आदि का सशक्त भाषा के माध्यम से हुआ है। जैसे --

"मरकर जीकर नौकर की तरह जमा किया ..... खुद खा सकता, न देख सकता, कोई छू भी न सकता .... जैसे धन के ऊपर बैठा हुआ साँप।"[3]

राजेन्द्र यादव की अन्य प्रसिद्ध कहानी संग्रह हैं -- देवताओं की मूर्तियाँ, खेल-खिलौने, अभिमन्यु की आत्म हत्या, छोटे-छोटे ताजमहल, किनारे से किनारे तक, "टूटना", मेरी प्रिय कहानियाँ आदि।

---

1. जहाँ लक्ष्मी कैद है (क॰सं॰) - राजेन्द्र यादव - पृ॰ 221.
2. - वही - पृ॰ 227.
3. - वही - पृ॰ 223.

पाल्गुम्मिपद्मराजु - " एड्लुस्सुन्न मुहूर्तम " :-

पाल्गुम्मिपद्मराजु की कहानियों में उल्लेखनीय कहानी है " एडुरु - ग्रुस्सुन्न मुहूर्तम " । इस कहानी में स्त्री की विभिन्न मनःस्थितियों का चित्रण है । वह स्त्री है " शांता " । जो हमेशा ऐसा सोचती है कि अपने लिए कुछ होनेवाला है । वह विचार सीधी-साधी बात को लेकर नहीं । अपने लिए कुछ करिश्मा होने वाला है । उसकी शादी तो एक साधारण आदमी से होती है । उस आदमी का ही छोटा भाई है " वेंकट " । वह एक अलग किस्म का युवक है ।

शांता की शादी के बाद कुछ दिन अपने पति के साथ संयुक्त परिवार में ही रहना पड़ता है बाद में वह अपने पति के साथ अलग रहती है । एक बार वेंकट अपने भाई को देखने के लिए आते तो शांता के मनमेंअनेक भावनायें उठने लगते है दोनों के बीच बातचीत भी होता है । वेंकटम, स्त्रियों के प्रति अपनी मन में जो भी भावनायें है उन सब को सुनाता है । स्त्रियां, अपने साथ जो भी करने के लिए कोशिश की । वह सब बोलने लगता है । साथ-साथ शांता के मन में उसके प्रति जो भी भावनायें उठने लगी उनको भी स्पष्ट कर देता है उन दोनों के बीच इस प्रकार वार्तालाप होने लगता है --

शांता कहती है -- " मुझे लग रहा है मेरे घमंड को आघात लग गयी है । वेंकटम कहता है -- " तुम्हें लगा कि आते ही तुम्हारी खूबसूरती को देखकर झुक जाऊंगा । तुमने मुझे व्यभिचारी समझा और साथ रही हो व्यभिचारी लोग ऐसा ही करते है, ऐसा न होने से .... " [1]

---

1. तेलुगु कथा - डॉ राम लिंगम - पृ. 14.

इस कहानी में " स्त्री " विवाहित होने के बाद भी परपुरुषों के प्रति जो सुन्दर है, कामवासना रखने लगती है । अपने पति के छोटे भाई से भी मौकापन का फायदा उठाना चाहती है लेकिन वह बहुत कुशल और स्त्रियों की मनोस्थिति को पहचानने में बहुत चतुर होने के कारण शांता के वश में नही आता । इसके अलावा स्त्रियों के प्रति अपना दृष्टिकोण को भी स्पष्ट करता है ।

दोनो पात्रों से आधुनिकता का ही विभिन्न रूपों को स्पष्ट करने में कहानीकार पूर्णत: सफल रहे हैं ।

राजेन्द्र यादव " जहाँ लक्ष्मी कैद है " और पालगुम्मि पद्मराजु " एदुस्युस्तुन्न मुहुर्तम :-

राजेन्द्र यादव और पालगुम्मिपद्मराजु की इन दोनों कहानियों में नारी मन का ही महत्वपूर्ण चित्र खींचा गया है । इनमें साम्य से भी ज्यादा वैषम्य ही है । राजेन्द्र यादव की कहानी में " लाला " एक पिता है जो अंध विश्वासों में जकड़कर अपनी बेटी लक्ष्मी की शादी किसी से भी नही करना चाहता । उसको पिंजरे की तोते के समान पालता है । बाहर भी जाने नही देता । एक तरह से उस पर युवकों को देखने का निषेध है । लेकिन लक्ष्मी में यौनेच्छा दिन ब दिन बढ़ती रहती है । किसी न किसी युवक से शादी करने की तमन्ना उत्पन्न होती है । एक हद तक सफल होने पर भी अंत में " असफल हो जाती है । लेकिन तेलुगु की कहानी एदुस्युस्तुन्न मुहुर्तम में शादी होने के बाद भी वह सोचने लगती है कि " बहुत कुछ होनेवाला है ।" इसके अलावा अपने देवर से यौन संबंध रखना चाहती है । लेकिन देवर की होशियारी के कारण असफल हो जाती है । राजेन्द्र यादव की कहानी में " लक्ष्मी " को यौन संबंध का मौका ही नही मिलता लेकिन तेलुगु कहानी में शादी हुआ होकर भी यौनतृप्ती के लिए व्याकुल स्त्री का चित्र है । इन कहानियों में दोनों नारी

पात्र एक तरह से जो चाहनेवाले मर्दों को पाने में असफल है । सिर्फ अन्तर तो यह है कि " जहाँ लक्ष्मी कैद है " में लाला को वजह से लक्ष्मी अपनी प्रेमी को नहीं पाती । " एदुस्सुस्तुन्न मुहुर्तम् " में देवर की होशियारी के कारण भाभी असफल हो जाती है उसको पाने में । इन दोनों कहानियों में वियोग का ही एक महत्त्वपूर्ण चित्र सामने लाया गया है । इनमें एक और अन्तर है -- " लक्ष्मी " बाहरी दुनिया से अपरिचित है । उसी प्रकार अन्य पुरुषों से भी । लेकिन तेलुगु कहानी में " भाभी " पात्र बाहरी दुनिया से परिचित है और संयुक्त परिवार में कुछ दिन रह चुकी है ।

__{ङ} भीष्म साहनी - " चीफ की दावत "__ :-

भीष्म साहनी, नये कहानीकार ही नहीं बल्कि प्रगतिशील कहानीकार भी है । उनकी कहानियों का आधार प्रमुखतः मध्यवर्ग ही है । उन्होंने मध्यवर्ग की कुंठा, पीडा घुटन असत्य मान्यतायें और बुद्धिजीवी की अवसरवादिता, स्वार्थपरता आदि को बडे प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त किया है । उनकी कहानियों में भारतीय समाज की प्रबलता और दुर्बलताओं का अच्छा खासा विश्लेषण है । उस वर्ग की एक बडी कमजोरी है -- " दिखावे की प्रवृत्ति । " इस जीवन तथ्य को कहानीकार, हलके व्यंग्य से उद्घाटित करते हैं, जो ऐसी कृत्रिम मान्यताओं के खण्डन के लिए सशक्त माध्यम है ।

" चीफ की दावत " का शामनाथ एक कार्यालय का अफसर है । वह अपने चीफ अफसर की दावत घर में देता है । अपने विदेशी चीफ की नजरों में आने के लिए जहाँ एक ओर वह घर की सजावट कर रहा है वही बहुत-सी, देशी, पुरानी चीजों को जिनमें उसकी माँ भी है, वह चीफ की नजरों से छिपाकर रखना चाहता है । चीफ से प्रमोशन और प्रशंसा प्राप्त करने के लिए घर में रहनेवाली वस्तुओं का स्थानांतरण पति-पत्नी मिलकर कर रहे हैं ।

जब इसको यह याद आया कि माँ का क्या होगा । माँ को वह किसी निर्जीव वस्तु के समान देखता है । समय गुजरने के साथ शामनाथ की हैरानी बढ़ती जा रही है । आखिर पाँच बजते बजते तैयारी मुकम्मल होने लगी । कुर्सियाँ, मेज, टिपाइयाँ, नेपकिन, फूल सब बरामदे में पहुँच गये । ड्रिक्स का इंतजाम बैठक में कर दिया गया । अब घर का फालतू सामान अलमारियों के पीछे और पलंगों के नीचे छिपाये जाने लगा । तभी शामनाथ के सामने सहसा एक अड़चन खड़ी हो गयी - माँ का क्या होगा ।"[1]

यह एक ऐसा विभिन्न वस्तुबोध है जो जिसे शामनाथ भुला नहीं पाते । माँ के लिए सम्मान के विपरीत यह प्रसंग एक असंगत स्थिति को चित्रित करता है । इससे यह पता चलता है कि नायक शामनाथ भौतिक लाभ के लिए किस हद तक नीच और क्रूर बन सकता है । अन्य फालतू सामानों की तरह वह माँ को भी वह रूप में छिपाके रखने के लिए सोचता रहता है । कभी पड़ोस में भेज देना चाहता है इस तरह मध्यवर्गीय व्यक्ति समाज में अपने आपको उच्च-वर्ग के लोगों से जोड़ने की लालसा से सम्बन्धों तक का ख्याल नहीं करता, जब शामनाथ के चीफ उसकी माँ के द्वारा बनाई गयी फुलकारी को देखकर उसकी प्रशंसा करता है और एक बनवाकर अपने देश ले जाने की इच्छा प्रकट करता है । तब शामनाथ इसी बहाने पदोन्नति का अनुचित लाभ उठाने के लिए माँ के प्रति अपना झूठा अनुराग व्यक्त करता है । प्रमोशन के लिए माँ को सीढ़ी बनाने में उसे शर्म आती । इस प्रकार कहानी में मध्यवर्ग की दिखावे की प्रवृत्ति और अवसरवादिता को प्रखर रूप में देख सकते हैं । यहाँ समकालीन स्थिति में सामाजिक संबंधों में विघटन, वैयक्तिक लोभ, स्वार्थपरता की प्रवृत्ति आदि को यथार्थ के धरातल पर बहुत ही मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया गया है ।

---

1. चीफ की दावत - भीष्म साहनी " हिन्दी की प्रगतिशील कहानियाँ पृ. - 138.

भीष्म साहनी की कहानियों में नवीन यथार्थ का उदय हुआ है, जो आदर्श सम्प्रेषित है । इनके यथार्थ चित्रण की यह विशेषता रही है कि ये सामाजिकता के प्रति तटस्थ होते हुए भी वैयक्तिकता के प्रति निर्मम नहीं हो पाये । ये एक प्रगतिशील कहानीकार होते हुए भी आक्रोशयुक्त राजनीति के चंगुल में नहीं फँसे है । यथार्थ अनुप्राणित इनकी कहानियाँ है -- पैरों के निशान, इन्द्रजाल, पटरियाँ, भाग्यरेखा आदि ।

कोडवटिगंटि कुटुंबराव :

नया जीवन (आन्ध्र ज्योति, अगस्त 1950)

इस कहानी में भी मध्यवर्ग का चित्र खींचा गया है । कहानी का मूल पात्र है " विठ्ठल " । वह, अपना जीवन चलाने के लिए और परिवार की समस्याओं को दूर करने के लिए नौकरी की तलाश में गाँव को और पारिवारिक सदस्यों को छोडकर शहर आता है । सौभाग्य वश उसे फौरन नौकरी मिल जाती है । लेकिन परिवेश और खान की फिक्रों से जम नही पाता । फिर भी अपने को काबू में रखकर, समझौता करके, वही काम करने लगता है और परिवार का ऋण चुकाने के लिए पैसे भी भेजता रहता है । अपनी सुख-सुविधा छोडकर, परिवार की भलाई चाहते हुए, नौकरी करता है । वह सोचता है कि धीरे-धीरे पैसे जमा करते हुए, कुछ न कुछ ऋण चुक जायेगा । वह गाँव जाकर पारिवारिक सदस्यों को देखने की इच्छा को भी दबा लेता है । उसी प्रकार अनावश्यक खर्च को रोककर पैसे भेजता रहता है ।

लेकिन गाँव से तार आये तो विठ्ठल को माँ को देखने की इच्छा उठती है और गाँव जाता है । घरवाले पैसों की बात नहीं उठाते तो वह खुद ही उसकी माँ से पूछे तो वह बताती है —

क्या मैंने कहीं " फेंका ? तुम पहले पहल जब पैसे भेजा था तब मोनू का परिवार यही था । उसकी बेटी के हाथ नंगे रहे तो दो रुपयाँ डालकर हाथों के लिए चूड़ियाँ बनाकर दिया और बड़ी बेटी हो बहुत प्यार है ऐसी निन्दा से बचने के लिए गौरी की बेटी को भी बनवा दिया । बेटियों को ही दे रही है जैसी निन्दा से बचाने के लिए पूरे घरवालों को छोटी मोटी चीजें खरीदकर दी । रुपयाँ मेरे नाम पर भी भेजा था न । इसीलिए अपना बड़प्पन दिखाने के लिए ये सब मैंने किया । तू ने तो नहीं लिखा कि ऋण चुकाओं ।" [1]

विठल की मेहनत का फल नहीं मिला । अपने को चाहने वाले कोई है ही नहीं । ऐसा लगा कि लुटेरे कहीं नहीं है सिर्फ घर में ही हैं। वह एक सच्चे श्रमिक के रूप में शहर गया और काम में मग्न हो गया । कभी भी पैसा घर नहीं भेजा ।

मध्यवर्ग में हैसियत से बढ़कर, अपना बड़प्पन दिखाने के लिए किस प्रकार आगे बढ़ते है उसका ही नग्न चित्र इस " नया जीवन " में है।

<u>अन्तरात्मा (आन्ध्र ज्योति मास पत्रिका, जनवरी, 1953)</u> :-

इस कहानी में धन का असर मध्यवर्ग पर किस प्रकार पड़ता है ? और किस प्रकार मध्यवर्ग से खेलता है । उसका चित्र खींचा गया है । मध्यवर्ग का मानव धन के लालच में किस प्रकार बदल रहा है और अपने मन को कहाँ से कहाँ तक ले जा रहा है । उसका ही चित्रण किया गया है " अन्तरात्मा " में । यह सुदर्शन नामक एक व्यक्ति के जीवन का चित्र है ।

---

1. कथावोली - पृ. 78.

सुदर्शन के पिता आधुनिक भावों से भरा हुआ व्यक्ति था । उसके संतान और पत्नी भी उन्हीं भावों से चलते थे । एक बेटी की शादी बिना दहेज से ही कर देता है । लेकिन सुदर्शन के देहांत से प्राप्त धन, उसकी पत्नी में बहुत परिवर्तन उत्पन्न करता है ।

अपनी मन मर्जी से, हैसियत से बढ़कर अनावश्यक खर्चा करती रहती है । फलतः उसकी बड़ी बेटी तो पति से नौकरी बंद करा देती है और वे दोनों माँ जी के घर को आकर रहने लगते हैं । शुरू में माँ - बेटी के बीच जमता था लेकिन धीरे-धीरे उन दोनों में झगड़ा उत्पन्न होने लगता है । उसका मूल कारण " धन " ही है । " धन " को ही महत्व देने वालों में सुदर्शन की पत्नी, बड़ी बेटी और उसका पति है तो धन को महत्व न देनेवालों में सुदर्शन का आखिरी बेटा, आखिरी बेटी, दूसरा बेटा आते हैं । हर दिन उनके घर में होनेवाली लड़ाई मध्यवर्ग का ही आइना है -- " मैं घर पहुँचते ही, मेरे घर वाले सब के सब तय्यार हो रहे थे एक खुशी की बात सुनाने के लिए, एक दूसरे को रुकावट डालते हुए बताने लगे । सुने तो लगा क्या जीजाजी की नौकरी छूटना खुशी की बात है ? माँ, भाभी सबके सब क्यों खुश होने लगे मुझे समझ में नहीं आया । सिर्फ यही नहीं । जीजाजी का ही नहीं । घर में कोई घायल हो गये तो पूरे सदस्य हँसने के लिए तय्यार हो जाते हैं ।" यही है मेरी घर की कहानी ।"[1]

यह एक घर की कहानी नहीं है, पूरे मध्यवर्ग के जीवन की कहानी है, घर-घर की कहानी है ।

---

1. कुटुम्बराव साहित्य (दूसरा भाग) - पृ. 314.

व्यर्थ जीवन :-

आजकल जो व्यक्ति सीधा जायेगा, सत्य, धर्म, न्याय आदि के आचरण से चलेगा उसे कौनसी परेशानियाँ सामना करना पडता है उस का ही चित्र " मार्कण्डेयुलु " की जीवन से खींचा गया है । " व्यर्थ जीवन " में ।

इस कहानी में मार्कण्डेयुलु सत्य, धर्म, न्याय आदि से चिपक कर चलने की वजह से बचपन में स्कूल में अध्यापकों से झगडा करता है और शादी होने के बाद साला वर्ग से भी संघर्ष करता है । वह, अपना परिवार संभाल नही पाता । पत्नी, मायिके चली जाती है , लेकिन मार्कण्डेयुलु नही जाता और अपने साले से कहता है -- " तुम्हारी बहिन को खाने के लिए खाना, पहनने के लिए कपडा न दिया होगा लेकिन आदमी के लिए आवश्यक " अधि - कार " तो नही छीना ।" मेरे साथ नही रह सकी तो, तुम अपना घर ले जा सकते हो ।"

इस कहानी में सही रास्ते पर चलनेवालों को उत्पन्न समस्याओं का नग्न चित्र है ।

मुनिपल्ले राजु " भोगममिनीष " (वेश्या) :-

मुनिपल्लेराजु की कहानियों में बहु चर्चित कहानीयाँ है । भोगाम-मिनीष " (वेश्या) और 'चेप्पुल दानम' (जूतों का दान) ।

वर्ण के तौर पर वेश्या होने पर भी वेश्या को पेशा न अपनानेवाली यशोदा को एक बार आपत्ति से बचाना पडता है " करण्म को " । फलत: उस यशोधा को अपने ही घर में रखना पडता है । पहले पत्नी और बच्चों को यशोधा से जमता नही तो समाज के बारे में बोलने की जरूरत ही नही है । मरणावस्था में अपना पूरा जायदाद, उसे देने के लिए तय्यार होने पर भी वह ठुकराती है । ऐसा करने में उसका अच्छापन सामने आता है । अकेली युवती को समाज जीने देगी ? इसीलिए करण्म्, उस युवती को अपने ही घर में रख लेता है । अंतिम अवस्था में करण्म, अपने पुत्र को जो भी हुआ था, वह सब पत्र में लिखकर देता है और उसको देखने का काम पुत्र पर छोड देता है । वास्तविकता या सत्य जानकर पुत्र, अपने मन में उस स्त्री के प्रति जो भी गलत धारणायें थी, उनसे मुक्त होकर, उस स्त्री से कहता है — " माँ कृष्ण को देवकी ने जन्म दिया । लेकिन यशोधा ने देखभाल किया । मेरी गायों का दूध तुम्हीं को दूँगा .... "

इस प्रकार मध्यवर्ग की मन: स्थितियों का स्पष्ट चित्रण सामने आता है ।

जूतों का दान :-

इस कहानी में वेंकट्रामय्या नामक पात्र, पारिवारिक समस्याओं की वजह से अपने लिए जूते खरीदने की बात को हमेशा टालता रहता है । अपने बच्चों की आवश्यकताओं की पूर्ती के लिए, अपने लिए अतिआवश्यक चीज जूतों को खरीदने की बात टालते हुए, उनकी इच्छाओं को पूरा करने के लिए कोशिश करता रहता है । इसके अलावा मध्यवर्ग में ऐसी समस्या भी है कि त्योहार में ऐसी समस्या भी है कि त्योहार में आये हुए बच्चों को, हैसियत से बढ़कर नये कपडे रखना और कुछ न कुछ इनाम देना आदि ऐसे ही सांप्रदायिक नियम

अनेक है । इसीलिए जो भी वेतन के पैसे आते है, परिवार केलिए या मेहमान बनकर आये हुए बच्चों के लिए खर्च करता है । अपने पैरों के लिए अति आवश्यक जूतों को खरीदना भूल जाता है । जूते नहीं तो क्या होगा ? ऐसे ही हमेशा सोचता रहता है । अंत में वेंकट्रामय्या के प्राण चले जाने का मूल कारण " जूते " न पहनने से ही होता है ।

अंत में कहानीकार एक ऐसा चमत्कार दिखाता है । जिन जूतों की वजह से वेंकट्रामय्या का मौत होता है, ऐसे ही अनेक जूतों को उसके पुत्र दान देते है । कहानीकार का मूल उद्देश्य यह है कि आचार-व्यवहार प्राणों को बचानेवाले नहीं है । पहले अपने बारे में सोचना होगा बाद में अन्य समस्याओं के बारे में । लेकिन मध्यवर्ग को चाहिए झूठी शान, ठाठ-बाट, आडंबर आदि । वे अपने हैसियत से ऊपर ही देखते रहते हैं । फलत: अनेक समस्याओं को सामना करना पडता है ।

<u>भीष्म साहनी " चीफ की दावत " - मुनिपल्ले राजु " वेश्या " कोडवटिगंटि कुटुंबराव " नया जीवन ", " अन्तरात्मा " :-</u>

इन कहानियों में " माँ " का एक विभिन्न चित्र खींचा गया है । फिर भी दोनों कहानियों में थोडा-सा अन्तर है -- तेलुगु कहानी " वेश्या " में " माँ " का पात्र निजी जीवन में " माँ " नहीं है बल्की वर्ण के तौर पर वेश्या है, प्रवृत्ति के तौर पर नहीं । यशोधा जो वेश्या जाती का है, आपत्ती में करुणा को उसे बचाना पडता और अपने ही घर में रख लेना पडता । लेकिन " चीफ की दावत " में शामनाथ की माँ, अपनी ही माँ है, सौतेली माँ नही है । " माँ " --" सौतेली माँ " दोनों का ही चित्र " चीफ की दावत " और {वेश्या} भोगममिनीच में देख सकते हैं । शामनाथ, अपने अफसर आने

को खबर से गबरा जाता है और सोचता है माँ को क्या करना होगा ? इस बुढी को खाँसे तो अच्छा नही होगा । आनेवाले अफसर इसको देखकर अप्रसन्न हो जायेगा, ऊब जायेगा । इस प्रकार सोचने लगता है । लेकिन " वेश्या " में अपनी " माँ " न होने पर भी यशोधा को स्वीकार कर लेते है और कहते हैं -- महान् कृष्ण को भी माँ से भी सौतेली माँ ही बहुत प्यार है । उसी प्रकार हमारे लिए तुम भी हो । चीफ को दावत में अपनी माँ कहो न कहीं छिपाने को कोशिश चलता है । चीफ पूछने पर ही माँ को दिखाता है । लेकिन उसी माँ को वजह से अति प्रसन्न होकर, शामनाथ को प्रमोषन दे देता है । " वेश्या " कहानी में कारण " यशोधाने " अपना पूरा जायदाद देना चाहता है तो भी वह टुकरा देती है । आर्थिक स्थिति के तौर पर दोनों कहानियों में भिन्न-भिन्न विचार स्पष्ट होते हैं। आर्थिक विकास के लिए माने पदोन्नति के लिए " माँ " को छिपाना चाहता है श्यामनाथ लेकिन उसी माँ से पदोन्नती हो जाती है । " वेश्या " होकर आनेवाले संपत्ति को छोडना तेलुगु कहानी वेश्या की विशेषता है वह भी इज्जत से ही जीना चाहती है ।

" नया जीवन " कोडवटिगंटि कुटुंबराव की कहानी " अन्तरात्मा " में मध्यवर्ग के अनेक अंश दिखायी देते है । इसमें मुनिपल्लेराजु की " माँ " (वेश्या) और " चीफ की दावत " की " माँ " का पूरी तरह विभिन्न माँ का रूप दिखायी देता है । ये चारों की तुलना आर्थिक स्थिति को लेकर है मुनिपल्ले राजु की कहानी " वेश्या " में " माँ " करण मिलनेवाली संपत्ती को टुकरा देती है । चीफ की दावत की माँ " में अपने बेटे की भलाई के लिए उसकी बात मानती है । अंत में उसको प्रमोषन आने में अकल्पित रूप में महत्वपूर्ण पात्र निभाती है । लेकिन कोडवटिगंटि कुटुंबराव की कहानी " अन्तरात्मा " की " माँ " जो है वह पैसे मिलने से ही पूरी तरह से बदल जाती है । तब असली

मध्यवर्ग का मुकौटा सामने आता है और ऐसियत से भी बढ़कर खर्चा करती है । बड़ी बेटी और दामाद तो अपना घर छोड़कर " माँ " के पास ही रहने लगते हैं । कुटुंबराव जी की " नयी जीवन " में भी रुपयों का असर मध्यवर्ग पर किस प्रकार पड़ता है उसका महत्वपूर्ण चित्र है " विठल " शहर जाकर नौकरी पाकर, ऋण चुकाने के लिए जो रुपया भेजता था । उन रुपयों का " इज्जत " के नाम पर, अपना बड़प्पन दिखाने के लिए पारिवारिक सदस्यों का खर्च कर देती है : पूछने पर विठल से गुस्से कहती है " तुम कमा रहे हो न धीरे-धीरे ऋण चुक जायेगा । अपने पुत्र की कमाई के वह रुपयों को ही प्यार करती दिखायी देती है न की कमानेवाले को ।

§ ई § ज्ञानरंजन : " पिता " :-

व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन की गतिविधियों से अत्यंत परिचित होकर और आजकल की पारिवारिक स्थितियों को और समसामयिक स्थितियों को पूर्णतः ग्रहण करके, उन पर तीखा व्यंग्य करनेवाले नयी और समसामयिक कहानीकारों में अतिप्रमुख है " ज्ञानरंजन " । उनके अनुसार " कहानी न तो विंडो ड्रेसिंग है और न राजदूतों द्वारा विदेश में सम्मान बनाने वाला झूठा वक्तव्य, इसलिए कहानी में स्वस्थ जिन्दगी का ही चित्रण आज की परिस्थितियों में असंभव है, चूंकि जिन्दगी वैसी नहीं रही है । फिलहाल असंख्य व्यंग्यों में हमारा जीवन है । नया कहानीकार अपनी निराशा से उभर आकर इसे स्वीकार करता है । .... हमें पराजय की समस्त भ्रष्ट मुखाकृतियों को पहचानना होगा, जो बीमार हैं और जिन पर छद्म का गहरा मेकअप है ।"[1]

---

1. " नयी कहानियाँ " दिसम्बर 1964 - उद्धृत - सत्यप्रकाश मिश्र § संपा. § कहानीकार ज्ञानरंजन - पृ. 84.

ज्ञानरंजन के कथा संसार के केन्द्र में मध्यवर्गीय मानसिकता का शिकार होनेवाला आदमी मिलता है । उस आदमी को, " मैं " " वह " अथवा " उस " पात्र के माध्यम से कहानीकार मध्यवर्ग की तमाम बौनी हैसियतों, वर्गीय अंतर्विरोधों और विडम्बनाओं का परदाफाश करता है । इसीलिए मध्यवर्गीय जिन्दगी का कोई भी पहलू कहानीकार से छिपकर नहीं मिलता । उनका कथन है -- " साहित्य दर्द की आवृत्ति और पुनरावृत्ति है, अत: उसमें एक आत्मिक सुख है और जीवन के प्रति अपने दाय के निर्वाह का सुख है ।"[1]

पिता : -

ज्ञानरंजन की कहानियों में सबसे प्रसिद्ध कहानी है " पिता " । इसमें मध्यवर्ग में पुराने और नये पीढ़ियों के बीच में उत्पन्न मूल्यों की टकराहट का चित्रण है ।

पिता के मूल्य न सिर्फ पुराने में , बल्कि उन्हें उनका मान है, उन मूल्यों के प्रति उनमें प्रबल आस्था और गर्वभाव भी हैं । ज्ञानरंजन में छोटे भाई के माध्यम से जो कॉमेण्ट किये हैं, दोनों पीढ़ियों के अंतर की दृष्टि से महत्वपूर्ण है ।

" जब कैप्टन भाई को पिता ने पास बुक थमा दी तो कप्तान भाई को हैरत हुई और हल्की खुशी भी कि एकाएक काफी रुपये मिल गये, लेकिन इस बात से उसे दु:ख और पराजय का भान भी हुआ, दो वर्ष तक बहन के लिए उसने जो थोड़ा-बहुत किया, वह एक पल में घटकर नगण्य हो गया । फिर भी छोटा भाई अनुभव कर रहा था, कप्तान भाई ज्यादा सोचते नहीं, थान की तरह चुटकी में धरती छोड

---

1. रघुवरदयाल वार्ष्णेय " हिन्दी कहानी बदलते प्रतिमान " दिल्ली पाण्डुलिपि प्रकाशन, 1975 पृ. 192.

देते हैं ।"[1] रख ऐसे बेटों के मुकाबले में अपनी धरती न छोड़नेवाला पिता निश्चय ही इक्कीस पड़ेगा ।

ज्ञानरंजन का " पिता " अपने बच्चों को उनकी राह चलने से नही रोकते, पर पुत्र " भूखे के सामने खाते समय होनेवाली व्यथा की स्थिति में रहते हैं ।: पिता की असंतृप्ति उन्हें टीसती है । पुत्रों के जीवन में वाश-बेसिन, शॉवर, बिस्किट, महँगे कल अनिवार्य सुविधा बनकर जुड़ चुके हैं , पिता का जीवन-मूल्य इन्हें निजी जीवन में घुसने देने के विरुद्ध निर्मम हुआ है । पिता की चिन्ता के कारण, पुत्र को नींद नहीं आती, उसी प्रकार पिता को भी । एक दूसरे को परिवर्तित करने की कोशिश यहाँ दिखायी नही देती ।

ज्ञानरंजन, पीढ़ियों के बीच ऐसी आपसी " समझ " की ओर संकेत करते हैं, जो " पिता " कहानी को सामान्य पीढ़ियों को टकराहटवाली कहानियों से ऊँचा उठा देती है । " पीढ़ियों के संघर्ष में से विकसित होती ऐसी आपसी समझ की कहानी " हिन्दी " कथा साहित्य में दूसरा नही मिलेगी ।"[2]

उषाप्रियंवदा " वापसी " :-

" उषाप्रियंवदा " की बहुत चर्चित कहानी है " वापसी " । इसमें आधुनिक परिस्थितियों में पीढ़ी के फर्क, अकेलेपन एवं अजनबीपन की समस्या को लेकर उभारा गया है ।

1· सपना नही - ज्ञानरंजन - पृ· 200·

2· मानवीय स्थितियों की तलाश की कविता से - पृ· 143 - 144·
डॉ· सुवास कुमार " साम्य " पत्रिका - 1988 सितम्बर

लेखिका इसमें यथार्थ के अधिक निकट पहुँच चुकी है । यह, एक रिटयर्ड व्यक्ति गजाधर बाबू की कहानी है । वे अपने परिवार के पालन-पोषण के लिए अपनी पत्नी और बच्चों से दूर रहकर नौकरी करते थे । अपने पूरे सेवा काल में उन्होंने अनुभव किया कि अकेलापन दुखदायी है । परिवार के सदस्यों के बीच आनन्द मय जीवन गुजारने की आकांक्षा से वे घर पहुँचते हैं । मगर अपने ही घर में उन्हें समझनेवाला, उनकी भावनाओं की कद्र करनेवाला कोई नहीं है । यहाँ उन्हें अजीब घुटन भरे माहौल में रहना पडता है । उसकी खाट पहले ड्राइंग रूम में फिर स्टोर रूम में डाली जाती है । बेटा बहू बेटी - यहाँ तक कि पत्नी के पास जिन्दगी में भी गजाधर बाबू के लिए कोई विशेष स्थान नहीं । अतः बुढापे में भी वे फिर से एक नौकरी ढूँढ लेते हैं । वे अपना घर छोडकर नौकरी पर चले जाते हैं ।

जब घर और बाहर दोनों जगह अकेलापन हो तो गजाधर बाबू बाहर के अकेलेपन का चुनाव करना उचित समझते हैं क्योंकि भरे-पूरे घर का अकेलापन बर-दाश्त नहीं हो पाता । मध्यवर्गीय पारिवारिक सम्बन्धों में टूटन इस कहानी में उभरकर आयी है । गजाधर बाबू के घर छोड देने पर " बहू शाम को सिनेमा जाने का प्रोग्राम बनाती है ।"[1] बदलते हुए सामाजिक-पारिवारिक मूल्यों के उपर यह एक तीखी टिप्पणी है ।

डॉ॰नामवर सिंह गजाधर बाबू का अकेलापन मानसिक स्तर का मानता है ।"[2]

एक तरह से यह कहानी वैयक्तिक दर्द की कहानी होते हुए भी सामाजिक दर्द की भी है, जिसका देश मध्यवर्गीय नगरीय समाज झेल रहा है ।

1· नामवरसिंह - " कहानी नयी कहानी " पृ· 201·

2· वापसी [जिन्दगी और गुलाब के फूल] उषाप्रियंवदा - पृ· 142·

पातपगलु - कोत्तवगलु (गोपीचन्द) :-

गोपीचन्द की कहानियों में उल्लेखनीय कहानी है " पातपगलु - कोत्तवगलु " । यह एक तरह से विफल प्रेम कहानी है । फिर भी कहानी के अंत में एक प्रकार का आदर्श सामने आता है । कहानी का शुरुआत तो जिद और हठ से शुरु होता है । कहानी में बाप और बेटी के बीच और भाई-बहन के बीच ही यह जिद-हठ शुरु होता है । पति-पत्नी अपनी होशियारी से यह जिद और हठ को दूर कर देते है । पिता-पुत्री और भाई-बहन के बीच फिर से अच्छे संबंध चलने लगता है । पिताजी, अपनी बेटी को दामाद और अन्य सदस्यों को बुलाकर अपनी भूतपूर्व प्रेम कहानी सुनाता है --

पहले वह, अहल्या से शादी करना चाहता था लेकिन उनके पिताजी तय्यार नहीं थे । अहल्या " से शादी करने के लिए अहल्या के पिताजी भी नहीं मानते और छोडकर चले जाते हैं । बाद में उन दोनों की शादी अन्यों से हो जाती है । लेकिन अहल्या का पति बिमारी में फँस जाता है । मरते समय अहल्या को उसके हाथों में सौंपकर मर जाता है । तब से अहल्या का देख भाल करता रहता है । अनजाने में ही, अविवाहित दाम्पत्य जीवन चलता है फलत: उन दोनों को एक बेटा भी पैदा होता है । वह अपनी बेटी से कहता है --- " देखों बेटी । मैंने गलती की । मेरी गलती का फल अहल्या और उसका बेटा भोग रहे हैं । यह मुझे बिलकुल अच्छा नहीं लग रहा हैं । मुझे अपने ही बेटे को समाज के सामने " अपना बेटा " कहने के लिए क्यों डरना है ? इसीलिए उनको ले आया । यहाँ रहने के लिए कहने पर भी वह तय्यार नहीं थी । उसने अलग रहने की इच्छा प्रकट की ।

· स्वातंत्र्योत्तर तेलुगु कहानी - मेरवा वेंकटेश्वर राव - पृ· 34·

कहानी में विधवा और विदुर, जो भूतपूर्व प्रेमी थे। उन दोनों को मिलाना ही नहीं, उन दोनों की शादी करवाने की कोशिश, कहानी की मूल विशेषता है। इसके अलावा कहानी के अन्य पात्र भी अपनी ओर से संपूर्ण सहयोग देने में सफल रहे हैं। अपने ही घर में उन दोनों को रखने के लिए तय्यार हो जाते है और उस विधवा के बेटे को भाई कहकर पुकारने के लिए तय्यार हो जाती है। इसके अलावा उस भाई को पूरा दौलत दिलवाने की कोशिश भी करती है।

यह सब एक तरह से कहानीकार का ही चमत्कार है। आजकल दौलत के लिए भाई-भाई और रक्तसंबंधियों के बीच में ही संघर्ष हो रहा है। ऐसी हालत में सौतेली माँ को स्वीकार करना ही नहीं, उसके बेटे को दौलत दिलवाने की कोशिश, कहानीकार का ही आदर्श चित्र है।

ज्ञानरंजन "पिता" -- गोपीचन्द "पातपगलु - कोत्तगलु" :-

दोनों कहानियों में "पिता" को लेकर ही विभिन्न चित्र खींचा गया है। ज्ञानरंजन की "पिता" कहानी में "पिता" पुराने मूल्यों से जकड कर है तो गोपीचन्द की कहानी "पातपगलु कोत्तगलु के "पिता" नये मूल्यों से ग्रस्त है। "पिता" कहानी में उनके बेटे पिता को सुख सुविधा के लिए बहुत कुछ करना चाहते है। लेकिन उनसे मिलकर चलने के लिए "पिता" नही होता बल्कि अपने ही प्राचीन मूल्यों को पकडकर चलता है। गोपीचन्द "पातपगलु-कोत्तगलु" में पिता और बेटी के बीच में समता नहीं। दोनों अपनी-अपनी जीते रहते हैं। लेकिन दामाद के उपाय से बाप-बेटी मिल जाते है। पिता, अपनी गलती को बेटी को एक पत्र के जरिये बेजता है। उसमें पिता की भूतपूर्व प्रेमकथा है। अब पिता, उसी से है। वह पत्र पढ़ते ही बेटी में बहुत परिवर्तन आता है वह अहल्या को सौतेली माँ के रूप में स्वीकार करने के लिए तय्यार हो जाती है। साथ-साथ उनके बेटे को भाई मानकर पूरा जायदाद दे देती है जिसे पिता, बेटी को ही देना चाहता था। इस प्रकार तेलुगु कहानी में एक प्रकार आदर्श सामने आता है। हिन्दी की "पिता" में पूरी तरह से "पीछे पडा

हुआ " प्राचीन अंध विश्वासों से, पुराने मूल्यों से चिपका हुआ " पिता " सामने आता है । हिन्दी के " पिता " पुराने मूल्यों का प्रतीक है तो तेलुगु के " पिता " (पातपगलु कोत्तवगलु के) आधुनिकता से भरा हुआ है । ज्ञानरंजन और गोपीचन्द दोनों कहानीकार की कहानियों का मूल बिन्दु तो मध्यवर्ग ही है । इन दोनों कहानियों को मिलाकर देखने से प्राचीनता और आधुनिकता में जो विकास और अन्तर है वह सामने आता है । " विधवा " को शादी करना तेलुगु कहानी " पातपगलु-कोत्तवगलु " का आदर्श है ।

उषाप्रियंवदा की कहानी " वापसी " में और एक नया " पिता " सामने आता है । इस कहानी का पिता ज्ञानरंजन को " पिता " और गोपीचन्द की पातपगलु कोत्तवगलु के "पिता" से पूरी तरह से अलग है । क्योंकि पूरे पारिवारिक सदस्य पत्नी से लेकर, संतान तक पूरे " पिता" को ठुकराते हुए दिखायी देते है । रिटायर्ड होने के बाद आराम की जिन्दगी जीने की तमन्ना पूरी नही होती साथ-साथ फिर नौकरी ढूंढने के चक्कर में फंस जाता है । परिवार को छोड देता है । " पिता " परिवार को छोडने से पूरे पारिवारिक सदस्य पूरी तरह से संतुष्ट हो जाते है । " ठुकराने " की बात जो है वह ज्ञानरंजन के " पिता " में बेटों से होता ही नहीं गोपीचन्द की पातपगलु-कोत्तवगलु " में आंशिक तौर पर ठुकरा देते है अंत में पिता को स्वीकार कर लेते है । लेकिन उषाप्रियंवदा की कहानी " वापसी " में " पिता " को पूरी तरह से ठुकरा देते हैं ।

(3) फणीश्वरनाथ रेणु :-

" तीसरी कसम उर्फ मारे गये गुलफाम " नये कहानीकारों में सुप्रसिद्ध आंचलिक कहानीकार है " फणीश्वरनाथ रेणु " ग्राम्य जीवन में परिवर्तित मूल्यों को किस प्रकार स्वीकार या अस्वीकार किया जाता है, उसकी अभिव्यक्ति इनकी कहानियों में मिलती है । ग्रामीण लोगों के रूप-रंग, हाव-भाव, आचार-विचार आदि का वास्तविक चित्रण इनकी कहानियों में हैं । इन्हें ग्रामीण चेतना का कहानीकार भी कहा जा सकता है ।

" ठुमरी " इनका प्रथम कहानी संग्रह है जिसमें उनकी श्रेष्ठ कहानियाँ संकलित है । " तीसरी कसम उर्फ मारे गये गुलफाम " एक लम्बी कहानी है । नयी कहानी की अन्तर्वस्तु में एक प्रकार का संगीत है । संगीतात्मकता यथातत्व को बाहर से अन्दर तक जुडी हुई रहती है । इस संदर्भ में नामवरसिंह का कथन है " इसमें कहानी की-सी अन्विति और एकता नहीं है और इसकी योजना औप - न्यासिक है ।"[1] सम्पूर्ण कहानी में हीरामान का अकेलापन परिव्याप्त है । गाँवों में आधुनिकीकरण का संकेत यहाँ " नानकपुर के हाट में आजकल चाय भी बिकने लगी ।"[2] जैसी पंक्तियों में मिलता है । रेणु ने पात्रों की संवेदना को सृजनात्मक स्तर पर अंकित किया है ।

आंचलिक जीवन की बारीकियों को उभारने के कारण प्रेम की सूक्ष्मातिसूक्ष्म अनुभूतियों का वर्णन सहजता एवं स्वाभाविकता के साथ किया गया है । इस दृष्टि से " तीसरी कसम उर्फ मारे गये गुलफाम " कहानी उल्लेखनीय है । हीरामान एक भोला-भाला गाडीवान् है । वह भाडे पर गाडी चलाता है और इस पेशे में उसने कई बार ठोकरें खायी है । वह, इसी क्रम में दो कसमें खा चुका है - तस्कारी का माल नहीं ढोएगा और बाँस को लदनी नहीं करेगा । इस बार वह नौटंकी कम्पनी की नर्तकी को मेले में पहुँचाने जा रहा है । विधुर हीरामान और नर्तकी हीराबाई के बीच प्रेम का अंकुर अनजाने में ही हो जाता है । क्रमश: दोनों के हृदय में सौन्दर्यात्मक प्रेम पलने लगता है -- " शरीर में, मन में आँखों में [3] ..... रागानुराग की भावनायें गीतों में प्रस्फुटित होने लगती है ।"[4] जिज्ञासा का भाव बढ़ जाता है, एक कौतूहल बना रहता है । रूप के प्रति आकर्षण कसमसाने लगता है ।" इस बार वह

---

1. नयी कहानी संदर्भ और प्रकृति - डॉ. नामवरसिंह - पृ. 194.
2. तीसरी कसम " हिन्दी की प्रगतिशील कहानियाँ " (क.सं.) पृ.76 धनंजय वर्मा
3. तीसरी कसम (कहानी), ठुमरी (क.स.) पृ. 132.
4. - वही - पृ. 138.

जवानी सवारी औरत है या चम्पा का फूल । जब से गाडी में बैठी है, गाडी मह-मह महक रही है ।"[1]

हीरामन और हीराबाई, दोनों एक दूसरे के करीब आते आते भी अपनी जुदाई की नियति समझते हैं । अन्तत: हीराबाई को स्टेशन में विदा करके हीरामन तीसरी कसम करता है कि कभी नौटंकी की औरत की सवारी नहीं लेगा ।

रेणु के प्रसिद्ध कहानी संग्रह हैं ---- अगिनखोर, आदिमरात्रि की महक, श्रावणी, दोपहरी की धूप, अच्छे आदमी आदि हैं ।

पालगुम्मिपद्मराजु "गालिवाना" ﴾तूफान﴿ :-

"गालिवाना ﴾तूफान﴿, आपकी प्रसिद्ध अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता में पुरस्कृत कहानी है, जो एक परिवर्तित प्रवृत्ति का अनुवा भी कही जा सकती है । इसमें आस्तिक महासमाज के निमंत्रण पर "राव" साहब साम्यवाद पर भाषण देने के लिए जाना चाहता है । लेकिन वातावरण ठीक न होने के कारण रेल देर से आती है । दूसरी श्रेणी के डिब्बे में चढ़ते समय घर के सुख, अपना नियमबद्ध जीवन आदि याद आते हैं।

सफर में तूफान शुरू हो जाती है । उस वक्त एक भिखारिन आकर भीख माँगने लगती है । रावसाहब के पास आती तो, वे उसे अप्रसन्नता से, जुगुप्सा से और एक अछूता जानवर की तरह देखते हैं।

1· तीसरी कसम ﴾ कहानी ﴿ --- ठुमरी ﴾क·सं·﴿ पृ· 131 --- फणीश्वरनाथ रेणु

राव साहब को जहाँ उतरना है वहाँ अँधेरा ही अँधेरा है । भिखारिन, समान उतारने के लिए तय्यार हो जाती है । पहले मना करने पर भी बाद में उसकी ही सहायता से रेल उतरकर विश्रामगृह पहुँचते हैं ।

रावसाहब, गाँव जाने के लिए स्टेशन मास्टर से और मजदूरों से पूछे तो वे कहते हैं इस वक्त नहीं हो पायेगा कहकर चले जाते हैं । उस तूफानी रात में राव साहब को अकेले ही वहाँ रहना पडता है और राउसाहब चिंतित होने लगता है ।

लेकिन भिखारिन उनके साथ रह जाती है । भूख लगी तो राव साहब दो बिस्कट खाकर उसको भी खाने के लिए देते हैं ।

इन दोनों के बीच वार्तालाप शुरू हो जाती है । भिखारिन की कमाई पर, जीवन पर अनेक प्रश्नों को लेकर वार्तालाप चलता है ।

भिखारिन की तरफ एक और ही नजर से देखने लगे तो वह कहती हैं आप ऐसा क्यों घूर घूर कर देख रहे हैं ? राउसाहब बोलते हैं " मैं " तुम्हारी तरफ नही देख रहा हूँ ।

उसी वक्त बिजली की खडक होती है । डर से राउसाहब एक ही लपक में भिखारिन से चिपक जाते हैं । जब होश में आता है तो लज्जित हो जाते हैं । वह भिखारिन, उनको एक कोने में बिठाकर, उनके पास बैठकर डर लगे तो, उसे गले लगाकर बैठने के लिए कहती है । राउसाहब को और कोई रास्ता न मिलने के कारण ऐसा ही करना पडता है । डर से दोनों आलिंगन में ऐसे ही सो जाते हैं ।

सुबह होते ही राउसाहब जब जागकर देखता है तो भिखारिन नहीं है। जेब छूकर देखे तो पर्स भी नहीं है। फौरन, वह उसे चोरी को रंडी कहता है। लेकिन उनको, वह भिखारिन ऐसी स्त्री नहीं लगती। कमरे के कोने-कोने में खोजते है तो वही मिलती। फिर बाहर आकर देखते है तो पता चलता है कि वह टिकट बेचने के कमरे में समान के नीचे दबकर मर चुकी है। हाथ में पर्स भी है। राउसाहब, छोटे बच्चे के समान रोने लगते है। उसकी माते को चूम लेते है।

हृदय को पिघलानेवाली वर्णनों से भरी यह कहानी, मानव जीवन के अंगों को कोमल चुकानेवाली जैसी चलती है।

इस कहानी में मानवमन पर बाह्य परिस्थितियों का प्रभाव को कथ्य के रूप में लिया गया है। रेल में सफर करनेवाले राउसाहब, पहले अपने को बहुत उच्च समझता है और उस भिखारिन को देखना भी पसन्द नहीं करते। लेकिन जब तूफानीरात में फँसकर एक ही जगह उस भिखारिन के साथ रहना पडता है तब डर के मारे वह, उससे बच्चे के समान छिपककर रह जाते है। उस वक्त उसे अपना ऊँचापन, नीतिनियम कुछ भी याद नहीं आते। सिर्फ अपने आप को बचाना ही उसका मूल लक्ष्य बन जाता है। डर से जुडी हुई " अकेलापन " ही मूल कारण है।

पालगुम्मि पद्मराजु को अन्य कहानियों में एदुरु चूस्तुन्न मुहूर्तम् (प्रतीक्षित मुहूर्त), पडव प्रयाणम् (नौका यात्रा), कूलियों की कहानियाँ आदि चर्चित है।

" पडवप्रयाणम् " में गोदावरी में होनेवाली नौकायात्रा से गाँव का चित्रण मिलता है। इसमें " रंगी " एक विशिष्ट पात्र है। उसका पति चोर, पियक्कड, व्यभिचारी, क्रोधी भले ही हो तथा अपने को कितना ही सताये या अत्याचार करे, फिर भी वह जब रंगी के पास आता है, तो बहुत प्यार दिखाता है। इस बात को याद रखकर " रंगी " उसके लिए सभी यातनायें सहने के लिए तैयार हो जाती है।

" एकस्त्रस्त्रुन्न मुहुर्तम ", " टेलीफोन " आदि कहानियों में " स्त्री " के विभिन्न रूपों का चित्रण कथ्य के अन्तरगत लिया गया है । इन कहानियों में नगरजीवन से जुडी हुई स्त्रियों का चित्रण है ।

फणीश्वरनाथ रेणु " तीसरी कसम " - पालगुम्मिपद्मराजु " तूफान " :-

फणीश्वरनाथ रेणु की कहानी " तीसरी कसम " उर्फ मारे गये गुलफाम " और पालगुम्मिपद्मराजु की कहानी मालीवाना (तूफान) में " सफर " वह चाहें जैसा भी हो उसमें उत्पन्न परिस्थितियों से मानव का मन किस प्रकार प्रभावित होती है उसका नग्न चित्रण इन कहानियों में मिलता है । तेलुगु कहानी " तूफान " में " रेल " का सफर है तो हिन्दी कहानी " तीसरी कसम " में एक मामूली गाडी है । तीसरी कसम के मुख्य पात्र है " हीरामान और हीराभाई " तूफान के मुख्य पात्र है राउसाहब और भिखारिन है । दोनों कहानियों में प्रेम पलने की बात जो है वह आकस्मिक लगती है । दोनो कहानियों में समकालीन वातावरण का चित्रण अत्यन्त महत्वपूर्ण ढंग से हुआ । दोनों कहानीकार अपने-अपने अंचलों की पूरी जानकारी होने के कारण, अंचल को चित्रित करने में अत्यंत सफल रहे । दोनों कहानीकार अंचल की समस्याओं को अपनी कहानियों से जनता तक पहुँचाने की कोशिश की ।

" तीसरी कसम " में हीरामान और हीराभाई दोनों में " सफर " में ही प्यार जागता है । सफर का अंत ही एक तरह से उन दोनों के प्यार का हो अंत हो जाता है । लेकिन तूफान में सफर में " राउसाहब " को भिखारिन से परिचय होता है । राउसाहब, उस भिखारिन को एक जानवर के समान देखता है और उससे बातचीत करना भी नहीं चाहता और उसे देखना भी । पूरे सफर में सिर्फ एकाद बार ही दोनों में बातचीत होता है । लेकिन हिन्दी कहानी " तीसरी कसम " में ऐसा नहीं है गाडीवाला " हीरामान " गाडी में बैठी हुई हीराभाई को प्यार से ही देखता है और पूरे सफर में बातचीत भी करता रहता है । राउसाहब और भिखारिन एक स्टेशन में ही उतरते हैं । उतरते वक्त राउसाहब के समान उतारने में मदद करती है वह " भिखा-रिन " वह समय ऐसा था कि पूरा वातावरण अंधेरा से छाया हुआ है तो दूसरी ओर

जबरदस्त तूफान है । स्टेशन से गाँव जाने के लिए गाडी नहीं है और रास्ता भी दिखायी नही देता । तो राउसाहब वही स्टेशन में ही रहता है । भिखारिन भी गाँव को उस बारिस में, तूफान में नही जा पाती । वह स्टेशन में ही रह लेती है । राउसाहब और भिखारिन दोनों एक ही कमरे में पूरा रात रह जाते हैं । तूफानी वातावरण से डरकर राउसाहब उस भिखारिन को चिपक जाता है । तब वह प्रेम से उसे पास में बिठाती है और अपने को गले लगने के लिए कहती है । सुबह होते ही वह भिखारिन एक अन्य जगह मरा हुआ दिखायी देती है " राउसाहब " को । " तीसरी कसम " तूफानी वातावरण तो दिखायी नही देता । प्यार का प्रथम भाग दिखायी देता है तो {तूफान} " गालीवाना " में अंतिम भाग । सफर करनेवालों के बीच में जो प्यार होता है उसका ही एक अजीब दोनों कहानीकार अपने अपने तरीके से खींचा है । तेलुगु कहानी " तूफान " को तो अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिताओंमें पहली बार तेलुगु कहानी को द्वितीय पुरस्कार मिला है ।

{ऊ} अमरकान्त - " जिन्दगी और जोंक " :-

नये कहानीकारों में एक प्रमुख हस्ताक्षर है " अमरकान्त " । व्यक्ति की विविध मनोवृत्तियों को उभारने में इनकी कहानियाँ बहुत प्रसिद्ध है । सामाजिक चेतना के मुखौटे से झाँकनेवाली वैयक्तिक चेतना इनकी कहानियों की विशेषता है । इसके मुख्य तत्व हैं जिजीविषा और यथार्थ सम्प्रेषण । वही " जिन्दगी और जोंक " में मिलता है । यह, एक ऐसे आदमी की कहानी है जो जीवन के कष्टों से जूझने में असमर्थ होकर जिन्दगी से छुटकारा पाना चाहता है, मगर जिन्दगी उसे नही छोडती ।

कहानी में मुख्यपात्र गोपाल उर्फ रजुआ की दयनीय जिन्दगी का बडा ही करूणामय चित्रण है । एक भिखमंगे की यह गाथा जिन्दगी और मौत के लुके छिपे खेल की व्यंग्यात्मक दास्तान है । गोपालराम, पहले रजुआ, बाद में लाला, फिर रजुआ भगत बनता है । गाँव के लोग उसका क्रूर मजाक उडाते हैं, कभी-कभी वह लोगों से मार भी खाता है । निम्न जाति की औरतों से वह असभ्य बरताव करता है, एक पगली युवति से संबंध.......स्थापित करने की कोशिश भी करता है । रजुआ की जिन्दगी

पशु की जिन्दगी है और उससे भी दयनीय है । वह सामाजिक शोषण और अत्याचार झेलता रहता है । उसके प्रति गांव वालों का कहना है कि -- " नीच और नीम्बू को दबाने से ही रस निकलता है ।"[1] रजुआ भयंकर बीमारी से मिटकर भी अंत में बच निकलता है जो कि एक आश्चर्य है । कहानी धीमी गति से आगे बढ़ती है । रजुआ मुहल्ले भर का बिना पैसे का नौकर रहता है । सभी उससे मुफ्त में काम कराते हैं । अपना काम हो जाने के बाद उसे बासी खाना आदि दे देते हैं । उसके प्रति गाली गलौज, चीत्कारपूर्ण और मारपीट वाला बरताव कहानी के अन्त तक जारी रहता है । जब रजुआ को हैजा, खुजली आदि बीमारियों से मरने की नौबत आ जाती है तो उसे खण्डहर में अकेला छोड़ दिया जाता है । खण्डहर में उसके सर पर कौए बैठते है, फिर भी वह मरता नहीं " जिन्दा " रह जाता है ।

विडम्बना यह है कि लोगों से बुरी तरह से पीड़ित और प्रताड़ित होकर भी वह विरोध नही करता । इससे उसका शोषण बढ़ता है, कम नहीं होता उसे मौत ही शोषण से मुक्ति दिला सकती थी, मगर उसे मौत भी नहीं आती । वह इस तरह जीवित रहता है जैसे शरीर के साथ जोंक चिपट के रहता है । अन्त में कहानीकार कुछ इस प्रकार के वाक्य प्रस्तुत करते हैं -- " उसके मुख पर मौत की भीषण छाया नाच रही थी और वह जिन्दगी से जोंक की तरह चिपटा था । लेकिन जोंक वह था या जिन्दगी ? वह जिन्दगी का खून चूस रहा था या जिन्दगी उसका ? मैं तय नहीं कर पाया ।"[2]

अमरकान्त निम्न मध्यवर्गीय जिन्दगी की समस्याओं को अपनी कहानियों में बड़ी संवेदनशीलता से उपस्थित करते रहे हैं । " डिप्टी कलेक्टरी और " दोपहर का भोजन " उनकी अन्य बहुचर्चित कहानियाँ हैं ।

1• जिन्दगी और जोंक [हिन्दी की प्रगतिशील कहानियाँ - अमरकान्त पृ• 49•] धनंजयवर्मा ।

2• - वही - पृ• 16

पांगोट्सोमयाजुलु " एम्पु " :-

पागोंट्सोमयाजुलु को कहानियाँ उल्लेखनोय कहानो है " एम्पु " [चयन] । चुनना ।

इस कहानी में भिखारियों के अर्थतन्त्र का स्पष्ट और सुन्दर चित्रण है । उनके अर्थतन्त्र का रहस्य यह है कि यदि तोन मुट्ठो भर खाना मिल जाये तो, वे बिना मरे जो सकते हैं । कोढो भिखारो बूढे की बेटो रीर्र एक लंगडे भिखारो के प्रति आकर्षित होतो है और उससे शादो करना चाहतो है । लेकिन रीर्र का पिता, उस रिश्ते को नकार कर, रीर्र के लिए अन्धे भिखारो से शादो करने का सुझाव देता है और इस प्रकार समझाता है कि लंगडे से भी अन्धे को देखते हो लोगों में दया उत्पन्न होगो । वह तुम्हारे ऊपर अधिक आश्रित होकर तुम्हारो बात मानेगा । तुम चाहे कहीं भी जाओ, मन पसन्द व्यक्ति से कुछ भी करो, वह देख नहीं पायेगा । तब तोनों को जिन्दगो बेखटके चलती रहेगो । वह अन्य भिखारिनों से कहता है -- " मुझसे पूछने पर यहो कहूँगा कि सभी भिखारिनों को खोज-खोजकर अन्धों से ही शादो करनो चाहिए ।"[1] यहो आर्थिक नियम " एम्पु " कहानो में स्पष्ट रूप में व्यक्त किया गया है । इस " आर्थिक नियम " के आगे अन्य नोति-नियम गौण हो जाना उनके लिए स्वाभाविक है ।

" एन्दुकु पारेस्तानु नान्ना " [मैं कैसे खोऊँगा पिताजी] में चुरूट पोना न छोड सकने के कारण अच्छो तरह पढ़नेवाले लडके को आगे पढने से रोकने पर उस लड़के की मनोवेदना को जानकर पिता विचलित हो जाता है । अपना निर्णय बदलकर पिता लडके से पूछता है -- " [illegible] से मैंने जो पैसे चुरूट-चुरूट लाने के लिए दिये थे वे कहाँ हैं ? वह उत्तर देता है " मैं कैसे खोऊँगा पिताजी ?[2] इसी आधार पर इस कहानी का नामकरण भी हुआ है ।

---

1. एम्पु " - पृ. 119.
2. एंदुकु पारेस्तानु नान्ना - पृ. 102.

" कुक्कुटेश्वरम " कहानी में चावलों ने कालेबाजार की समस्या को उठाया गया है। इस कहानी में एक बूढ़ी औरत पाँच कुँची चावल का बोरा साथ लिए, बिना टिकट के सफर करती हुई पकड़ी जाती है। वह टी॰टी॰ से पूछती है कि " मुझे पकड़ने से तुम्हें क्या लाभ होगा।" टी॰टी॰ उत्तर देता है कि सरकारी नौकर होने के नाते ऐसे लोगों को पकड़ना उसका धर्म है। लेकिन बुढ़िया के पास से वह कुछ नहीं ले पाता। बुढ़िया रेल अधिकारियों को लाख मनाती है, हुज्जते करती है। कहती है कि वे चावल अपने लड़के की मेहनत के पैसों से खरीदे गये चावल हैं जिस पर उसके छः बच्चों की जिन्दगी निर्भर है। इन दानों के बिना वे मर जायेंगे। लेकिन रेल अधिकारी उसे नहीं छोड़ते। इस पर वह चिल्लाकर कहती है - " चलो मूर्ख लोगो। मैं ही कालेबाजार में चावल बेचकर महल बनवा रही हूँ। मुझे फाँसी से कम की सजा मत दो। मेरे धुएँ से कुक्कुटेश्वर भगवान को धूप चढ़ाओ।"[1]

इसमें कहानीकार ने आजकल समाज में व्याप्त काले बाजार की समस्या पर बुढ़िया के माध्यम से तीखा व्यंग्य कसा है।

" एलूरेल्लालि " :-

इस कहानी में यह बताया गया है कि नैतिक तथा आर्थिक विषमतायें भिन्न-भिन्न है। पुरुषोत्तम 18 साल का कालेज का विद्यार्थी है उस समय उसका सम्बन्ध साठ साल के एक आडटर को 36 वर्ष की द्वितीय पत्नी माणिक्यम्मा से हो जाता है। कामातुर माणिक्यम् उसके साथ अवैध सम्बन्ध स्थापित कर एक लड़के को भी जन्म देती है। पति की मृत्यु के नौ साल के पश्चात् एक बार वह पुरुषोत्तम से रेल गाड़ी में मिलती है तब वह उससे कहती है कि " तुम्हारे वर प्रसाद के कारण ही पति एवं पिता की सम्पत्ति मेरे हाथ लग गयी है। अन्यथा विधवा बनाकर मेरे देवर मुझे किसी कोने में बिठाते।" पुरुषोत्तम अपने लड़के को देखकर प्रसन्न होता। एलूर में

1· कुक्कुटेश्वरम - पृ॰ 40·
2· - वही - पृ॰ 46·

रहनेवाली माणिक्यम्मा से अगले रविवार को ज़रूर आने का वादा करता है । इस प्रकार यह कहानी आर्थिक समस्याओं के अनुकूल बदलते नैतिक मूल्यों का समर्थन करती है ।[1]

आर्थिक असमानता ही मानव संबंधों का फैसला करनेवाली है । जो आर्थिक संपन्न है वे शोषक बन जाते है जो आर्थिक विपन्न है वे अपने अपने संबंधो को, मूल्यों को भी खोने के लिए या छोडने के लिए तय्यार हो जाते हैं । इसके लिए " बडापाटु " कहानी देखना है । पहाडों को तोडकर जीवन चलानेवाला मजदूर रामिलगाडु एक दुर्घटना में मर जाता है । वह भी ठेकेदार की लापरवाही की वजह से उसकी पत्नी पार्वती अकेली हो जाती है । तब मेस्त्री सत्यम , कनकम्मा मुआवजा पूछते है । रामिलगाडु की माँ पुत्र पर प्रेम के बदले, मेस्त्री के पास जो पैसे है उनको पाने की लालच से आती है । अपना भाग पूछती है । बहू के लिए घर में स्थान पूछे तो संसार में न्याय ही नहीं है । तो वह अपने बातों से टाल देती है । तब पार्वती से सत्यम कहता है रुपया खोने से नही आते, लेकिन पति को खोने से दूसरा पति आता है ।

इस कहानी से पता चलता है कि आर्थिक रिश्ते ही आदमियों के बीच के रिश्तों का मूल कारण है । " वायुलीनम " लेडीकल्याकरम " एकस्तु " " बब्बीदली " " उहा उर्वशी ", " कुकुडाकु ", " कोडगेइडा ", " बोड्डु मल्लेलु ", " भल्लूक स्वप्नम " " कर्म ", नर्मीसिद्धान्त ", " मो कुबीड ", " अब्बब्बा ", आदि लोकप्रिय कहानियाँ चासी की ही हैं ।

---

1. चासो कथलु — पृ. 141.

अमरकान्त " जिन्दगी और जोंक " - चागंटि सोमयाजुलु " एंपु " और " तूफान " :-

अमरकान्त की कहानी " जिन्दगी और जोंक और चागंटिसोमयाजुलु की कहानी " एंपु " में और पालगुम्मि पद्मराजु की कहानी { तूफान } गालीवाना में भीख माँगनेवाले भिक्षुओं का नग्न चित्रण विभिन्न कोणों में हैं। अमरकान्त की कहानी " जिन्दगी और जोंक " में रजुवा का जो चित्र खींचा गया है वह संपूर्णतः समाज का यथार्थ स्थिति है। साथ-साथ व्यक्तियों का मनः स्थिति भी ऐसी है। रजुवा से अपना-अपना काम पूरा कर लेने के लिए आगे बढ़ते हैं लेकिन उसका देखभाल करने के लिए और बीमारी में उसको मदद करने के लिए सामने नही आते। रजुआ अंत तक उसी गली को छिपककर रहता है। उनसे गालियाँ खाने पर भी, मार-पीट होने पर भी गली को नही छोडता। पशु से भी दयनीय जिन्दगी है रजुआ का। ऐसा यथार्थ चित्र खींचने में कहानीकार पूर्णतः सफल होते हैं। लेकिन कहीं भी आदर्श का चित्रण दिखायी नही देता। अगर है तो भी बहुत कम मात्रा में। लेकिन चागंटि सोमयाजुलु की " एम्पु " और पालगुम्मि पद्मराजु की कहानी " गालीवाना " { तूफान } में भिखारिनों का चित्र है। इस कहानियों में यथार्थ के साथ-साथ आदर्श भी सामने आता है। " एम्पु " में भिखारियों में एकता और एक निर्णय पर पहुँचने में उनका सोच-विचार और आदर्श दिखायी देता है तो "तूफान" में राउसाहब को बचाने के लिए, अपने गले लगाने के लिए कहती है और उसके भय को दूर कर देती है। जिन्दगी और जोंक में समकालीन सामाजिक स्थिति के साथ-साथ मध्यवर्ग से जुडे हुए लोगों का चित्र भी खींचा गया है। व्यंग्य यथार्थ का चित्र इस कहानी में मिलता है। एम्पु में भिक्षुवर्ग अपना भविष्य को खयाल में रखकर चलाते है लेकिन जिन्दगी और जोंक में रजुआ के लिए भविष्य नामक कोई चीज ही नही। " तूफान " में राउसाहब को बचाने में सफल भिखारिन में मानवता की लहरें बहती हैं। इस प्रकार इन तीनों कहानियों में भिखारियों का ही विभिन्न रूप सामने आते हैं।

युद्ध के परिणामों को देशप्रेम स्पष्ट करनेवाली कहानियाँ है " मलबे का मालिक "(मोहन राकेश), दिल्ली में एक और मौत (कमलेश्वर) और शिवकांता (पुराणम सुब्रह्मण्य शर्मा)। इन तीनों कहानियों में देश भक्तों का देश प्रेम एक ओर चित्रित किया गया तो दूसरी ओर युद्ध के दुष्परिणामों का भी महत्वपूर्ण चित्र खींचा गया है। देश के विभाजन से हिन्दू मुसलमानों में जो भी अत्याचार होते रहते हैं उनका नग्न चित्र स्पष्ट है। कमलेश्वर की कहानी " दिल्ली में एक और मौत " में भारत-पाकिस्तान युद्ध होने के बाद सामाजिक स्थिति किस प्रकार रहा उसका नग्न चित्र है। " शिवकांता " में देशभक्त देश के लिए अपने-अपने सुहागरातों को भी छोडने की स्थिति उनके सच्चे देशप्रेम को स्पष्ट करता है।

(अ) मोहन राकेश – मलबे का मालिक :-

नये कहानीकारों की विशिष्टत्रयी में मोहन राकेश एक है। अपनी बहुमुखी प्रतिभा से लिखी गयी मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, वैयक्तिक, यथार्थोन्मुखी, व्यंग्यात्मक कहानियों ने कहानी-साहित्य के श्रीवृद्धि की है। उनकी कहानियों में बहु चर्चित कहानी है -- " मलबे का मालिक "। इसकी एक विशेषता यह है कि मलबा जो बाहरी वस्तु है वह इस कहानी में अंतरंग प्रतीक बन गया है। देश विभाजन से विघटित परिवारों की त्रासदी को दिखानेवाली यह कहानी, मूल्यों के टूटन, मूल्यों के निर्माण और ध्वंस के बीच की कहानी है। कुछ इमारतें तो नयी बन गयी किन्तु पुराने मकानों के मलबे का ढेर अभी भी जगह-जगह पर दिखाई देते है। यह मलबा ही चुपचाप टूटते हुए मूल्यों की सारी कहानी सुना देता है। इन टूटे हुए मूल्यों के मलबे पर रक्खा पहलवान जैसे लोगों के स्वार्थ सिद्ध होते हैं लेकिन यह मलबा न तो उसका है न गनी मियाँ का ही, जो अब मात्र इतिहास बन बैठे हैं। इसलिए घायल, अपंग अतीत को काटकर हटा देना ही उचित है जैसे मलबे का किया जाता है। कोई सुनना चाहे तो " मलबे का मालिक " में आदर्श का क्षीण-स्वर सुनायी दे सकता है। लेकिन सच तो यह है कि इसमें यथार्थ का तीखा स्वर ही प्रधान है। सामाजिक जीवन के यथार्थबोधवाली यह कहानी आदमी की मानसिकता

की पडताल करती है । नई इमारतों के बीच मलबे के ढेर को अतीत के दाग के रूप में प्रस्तुत किया गया है । विभाजन के समय जो सामाजिक मानसिकता थी उसे कहानी में व्यक्त किया गया है । कहानी में सामाजिक यथार्थ की खोज, उसके मूल्यों का निरूपण और संक्रमणशील दृष्टि मिलती है । रक्खा जैसे स्वार्थी लोगों के द्वारा निचले तबके के लोगों पर होनेवाले अमानुषिक जुल्म उस समय के सामाजिक शोषण की स्थिति को बताते है । ऐसो स्वार्थी तत्व ही समाज के लोगों को धार्मिक-साम्प्रदायिक टुकडों में बाँटकर हिन्दू-मुसलमान कहकर उनमें एक दूसरे के प्रति घृणा पैदा करते हैं ।

मलबे का मालिक कहानी आडम्बर, कृत्रिमता और भावुकता से अलग हटकर है । इसमें आत्मीयता प्रधान, संवेदनाभरित कथानक की योजना की गयी है । प्राय: मोहनराकेश की कहानियों में ऐसे अकेले पड गये या अकेला बनाये गये व्यक्ति का चित्रण होता है ।

मोहन राकेश के प्रसिद्ध कहानी संग्रह हैं -- " इंसान का खण्डहर ", " नये बादल ", " जानवर और जानकर ", " एक और जिन्दगी ", " फौलाद का आकाश ", " वारिस " आदि ।

<u>पुराणम सुब्रह्मण्य शर्मा</u> :-

<u>नीलि</u> :-

न्यूयार्क हेराल्ड ट्रिब्यूनल से आयोजित द्वितीय विश्व कहानी प्रतियोगिता में तेलुगु की कहानियों में " नीलि " को प्रथम पुरस्कार मिला ।

" नोलि " नामक एक अपाहिज लडकी एक होटल में सफाई करना, धोना आदि काम करती है । रचनाकार पहले नोलि को घृणा, अप्रसन्नता, जुगुप्सा आदि भावनाओं तले देखता है । उस लडकी को देखना भी नहीं चाहता । नोलि का मामा, अपने पागल बेटे को शादी करना चाहता है ।

नीली, बीमार पडा हुआ रचनाकार को सेवा करके उसकी दया और प्रेम पाती है । रचनाकार नोलि को ऐसी आशा उत्पन्न करता है कि उसका पैर को आपरेशन करने से ठीक हो जाता है । तब वह सब की तरह ठीक तरह से चल सकती है और दौड भी सकती है । नोलि की जीवन में और विचारों में आशा की लहरें उठती है । रचनाकार उसको आपरेशन का प्रबंध भी करता है । आपरेशन टेबुल पर वह अभागिन लडकी रचनाकार से पूछती है ठीक होने के बाद मुझसे कौन शादी करेगा ? तब रचनाकार उसको जीने की आशा उत्पन्न करने के लिए कहता है मैं तुमसे शादी करूँगा । वह बहुत खुश होती है । बाद में रचनाकार उसे बिना बताये, भाग्य पर छोडकर चला जाता है ।

इस कहानी में कहानीकार का मूल लक्ष्य यह है कि जीवन में मुसीबतों से संघर्ष करना हर एक का कर्तव्य है । इस कहानी में हृदय को स्पंदित करनेवाली अनेक घटनायें है, जिनसे हर एक के मन में करुणा और सहानुभूति की भावनायें उत्पन्न हो जाती हैं । लेकिन मन पर अंकुश लगने से जो चाहता है वह कर नहीं पाता । चाहे परेशानी या मुसीबत जितना भी खतरनाक क्यों न हो उससे संघर्ष करना हर आदमी का कर्तव्य है । यही रचनाकार का मूल दृष्टिकोण है । पंक्तियों के दिलों में यह दृष्टिकोण चुभ जाती है । इनकी कहानियों में प्रगतिशील भावना से लिखी गयी कहानियाँ भी है साथ-साथ विचार उत्पन्न करनेवाली, सामाजिक मूल्यों पर हमला करनेवाली कहानियाँ भी है । " राजनीति ", " उप्पुवस्तालु " (नमक की थैलियाँ), आदि हैं । कहानियाँ नये विचारों को उत्पन्न करनेवाली हैं ।

इनकी अन्य कहानियों में नक्सलेट आन्दोलन पर लिखी गयी " शिक्षकांता " और एक अन्य कहानी " कोती " [बन्दर] अत्यन्त महत्वपूर्ण है ।

राबूरिभरद्वाजा - डाक्टर्स डैल्मा :-

श्री राबूरि भरद्वाजा की कहानियों में उल्लेखनीय कहानी है " डाक्टर्स डैल्मा " । कहानी का शुरुआत तारिख 4·5·56 से जुडी हुई खत से होता है । उसमें मूर्ती नामक एक डाक्टर अपने दोस्त को खत लिखने लगता है । उसमें अपना बचपन, स्कूल का जीवन आदि अनेक घटनाओं को याद दिलाता है । कहानी के अंत में एक प्रश्नचिह्न लगाकर, उसका उत्तर लिखने की इच्छा प्रकट करता है । वह प्रश्नचिह्न इस प्रकार उठता है --

डाक्टर मूर्ती, एक गरीब परिवार को जानता है । उस परिवार में पति-पत्नी के सेवा चार बच्चे है जिनका उम्र दस वर्ष से कम ही है । बडों से लेकर बच्चों तक काम में ही लगे रहते हैं । खास करके बच्चे थैलियों को लेकर अनावश्यक फेंके गये कागजों को सडकों में घूमते हुए इकट्टा करते है । उसको बेचकर जो पैसे आते हैं उनसे अपना जीविका चलाते हैं । उस परिवार को देखने से डाक्टर के मन में दया और सहानुभूति जैसी भावनायें उत्पन्न होने लगती हैं ।

एक बार अचानक कागजों की राशि को आग लग जाती है साथ-साथ बगल की झोपडियों को भी । गरीब परिवार के पूरे सदस्य घरवाली को छोडकर बाकी सब जलकर मर जाते है । घरवाली को भी आँख, हाथ, पैर आदि अंग जल जाते हैं । उसका इलाज डाक्टर मूर्ती को करना पडता है । तब वह इस प्रकार सोचने लगता है ---

" डाक्टर के हैसियत में मुझे भी अपनी जिम्मेदारियाँ हैं -- जब तक रोगी में प्राण रहेगा तब तक उसको बचाने के लिए कोशिश करना चाहिए । उसके लिए अपनी तरफ से पूरी तरह कोशिश करना चाहिए । ऐसा करने के लिए ही मैंने वादा भी किया था । वह चाहे महाराज हो, अमीर हो और गरीब हो उनको बीमारी से बचाना ही मेरा कर्तव्य है ।"

ऐसा सोचते हुए भी उस स्त्री को बचाने के लिए हिचकिचाता है । वह, चाहे तो बचा भी सकता है और मार भी सकता है । एक डाक्टर के हैसियत से उस औरत को बचाना चाहिए । लेकिन एक मानव के रूप में सोचे तो उसे ऐसा लगता है कि अगर यह स्त्री बची तो भी अपनी जिन्दगी कैसा चलायेगी । कैसा कमायेगी ? खायेगी ? उसमें सिर्फ प्राण के सिवा है ही क्या ? देखने के लिए आँख नहीं है, करने के लिए हाथ नहीं है, चलने के लिए पाँव नहीं है । उसे मारना ही अच्छा है । जीकर दिन ब दिन मरने से भी एक दम उसे मर जाना ही अच्छा है ।

अपने मित्र रामकृष्ण से अपनी डैलमा स्पष्ट करते हुए पूछता है मैं क्या करूँ । उस स्त्री को बचाऊँ ? या मार डालूँ ?

"(मोहनराकेश)"
" मलबे का मालिक " डाक्टर्सडैल्मा " { रावूरिभारद्वाज }

"(अमरकान्त)"
" जिन्दगो और जोंक " " नोलो " { पुराणम सुब्रह्मण्य शर्मा } :-

नयी कहानियों में बहु चर्चित कहानी " मलबे का मालिक " में भारत-पाकिस्तान विभाजन के बाद हिन्दू-मुसलिम के बीच संबंध किस प्रकार रहा । उसका यथार्थ चित्र अत्यंत महत्वपूर्ण ढंग से खींचा गया है । कहानी में कहीं भी और किसी में भी " मानवता " की भावना दिखायी नहीं देता । अगर है तो भी डर से वे आगे बढ़ नहीं पाते । एक भयभीत वातावरण का चित्रण है । हिन्दू, अपने बच्चों को डराने के लिए कहते हैं " मुसलमान आ रहा है ।" उसी प्रकार मुसलमान भी । ऐसी स्थिति में एक दूसरे को बचाने की मानवता कहाँ से आयेगी । लेकिन तेलुगु कहानियों में खास करके रावूरि भारद्वाज की कहानी " डाक्टर्स डैल्मा " और पुराणम सुब्रह्मण्य शर्मा की कहानी " नोलो " में डाक्टर और रचनाकारों में संपूर्ण मानवता के लक्षण सामने आते हैं । " नोलो " को तो जीवित रखने के लिए रचनाकार बोलता है " मैं तुमसे शादी करूँगा " और आपरेशन भी करवाता है । नोलो ठीक हो जाने के बाद बिना बताये, वहाँ से चला जाता है । उसी प्रकार " डाक्टर्स डैल्मा " में डाक्टर " होकर भी एक साधारण आदमी की तरह उस स्त्री की भविष्य के बारे में विभिन्न कोणों में सोचता है । उस वक्त उस डाक्टर के विचारों में मानवता के संपूर्ण तत्व विद्यमान है । अमरकांत की " जिन्दगी और जोंक " में भी कहानीकार एक पात्र बनकर बीच-बीच में आते रहते है और " रजुआ " को आपत्ती से बचाने के लिए पूरी तरह से कोशिश करता रहता है । उस मुहल्ले के पूरे लोग रजुआ को एक जानवर के समान देखते रहे तो कहानीकार उसे एक इन्सान के रूप में देखता ही नहीं, उसे पूरी तरह से मदद करने की कोशिश करता है । लेकिन एक समय ऐसा आता है कि घरवालों से सहयोग नहीं मिलता । बहुत तड़पता है कहानीकार उस रजुआ को बचाने के लिए । इस प्रकार कहानीकार या रचनाकार का जो पात्र है उसमें मानवता के पूरे तत्व विद्यमान है ।

४ए४ कमलेश्वर -- " दिल्ली में एक और मौत " :-

नयी कहानी के स्रष्टाओं में कमलेश्वर एक है । उनकी चर्चित कहानियों में एक है " दिल्ली में एक और मौत " । मध्यवर्गीय कस्बाई जीवन की तकलीफों तथा संवेदनाओं को लेकर लिखी गयी अनेक कहानियों में यह कहानी बहुत महत्वपूर्ण है । इस में निम्न मध्यवर्ग और मध्यवर्ग के अपने अन्तर्विरोधों और तनावों को संवेदना के स्तर पर उभारा गया है । यह कहानी, भारत और पाकिस्तान के बीच हुई घमासान लडाई के परिणामों को अत्यंत सहज ढंग से स्पष्ट करती है । उस समय के प्रधान मन्त्री लाल बहादुर शास्त्री के धीरोदात्त कदम के कारण भारत पाकिस्तान को परास्त करने में सफल हुआ परन्तु इस विजय को कीमत अधिक मात्रा में चुकानी पडी । दिल्ली में एक और मेजर के वीरगति को प्राप्त करने पर जनता के द्वारा प्रकट संवेदना को कहानीकार ने मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया । युद्ध के परिणामों पर जनता की उत्सुकता, उस युद्ध को रोजना हाल जानने के लिए लोगों को आवेग से अखबार के पन्ने पलटते हुए देखना आदि मानसिक उद्वेग को स्पष्ट करते हैं । संवादों में सूक्ष्म मन: स्थितियों को व्यक्त करने की शक्ति है । " आज पता चलता है कि नेहरू जी ने कितना बड़ा काम किया है ..... इस संकट के वक्त हम अपने उद्योग धन्धों पर टिक सके हैं । फौजी सामान के लिए भी हमें फौरन दूसरों की तरफ देखने की जरूरत नही पडी । कृष्ण मेनन ने अपने जमाने से काफी कुछ तैयारियाँ शुरू कर दी थी .... फौजी जवानों की बहादुरी और उन्हीं की तैयारियों में हमारा साथ दिया है ।"[1]

---

1. दिल्ली में एक और मौत ४ मांस का दरिया ४
   कमलेश्वर - पृ. 120.

बेकारी वाले का नौकर डबल रोटियों को डिब्बे में रखकर अपने सेठ से कहता है कि -- " इर्विन अस्पताल का बंडल नहीं है ।"[1] यह कथन परोक्ष रूप से इसका संकेत देता है कि उस अस्पताल में घायल फौजी जवानों का इलाज किया जा रहा है ।

हालाँकि कहानीकार ने नेहरू और कृष्णमेनन का गुणगान ही किया है फिर भी सरकार के प्रति जनता के रुख की व्यंजना जहाँ-तहाँ हो ही जाती है । जैसे प्यार, कमाल कर दिया अपने जवानों ने .... कभी सोचा ही नहीं था कि अपनी सरकार यह कदम उठा लेगी । फौज ने अपना सिक्का जमा दिया ।"[2]

यह कहानी देश भक्ति से प्रेरित है । इस कहानी में अंतर्भूत भाव स्पष्ट करते हैं कि मातृ-भूमि की रक्षा के लिए बलिदानों की आवश्यकता होती है । युद्ध के मूल प्रश्नों या शान्ति की समस्या को नहीं उठाकर यह कहानी युद्ध काल में देश के जनमानस का चित्र प्रस्तुत करती है । कमलेश्वर ने इस कहानी के द्वारा शहरी जीवन में व्यक्ति की दिखावे की प्रवृत्ति, सामाजिक मान्यताओं के प्रति अनास्था और मात्र सहानुभूति के लिए ही शवयात्रा में भाग लेनेवाली मनःस्थिति की ओर सूक्ष्म संकेत किया है । इस शवयात्रा में भाग लेते हुए कुछ पात्र आपस में अन्य विषयों से सम्बन्धित बातें करते हैं । इसी बहाने कार्यालय से छुट्टी प्राप्त करने की एक अलग किस्म की कोशिश को प्रभावशाली ढंग से व्यक्त किया गया है ।

कमलेश्वर के प्रसिद्ध कहानी संग्रह है -- " राजा निरबंसिया ", " कस्बे का आदमी ", " खोई हुई दिशाएँ ", " माँस का दरिया ", " बयान " तथा अन्य कहानियाँ " आदि है । अपनी कहानियों में उन्होंने मनुष्य का मनुष्य

---

1. दिल्ली में एक और मौत § माँस का दरिया § पृ. 118. कमलेश्वर

2. - वही -

के प्रति बुरा व्यवहार, निर्धनता का नग्न रूप, स्त्री-पुरुष के संबंध, बेकारी का अभिशाप, वेश्यावृत्ति, सामाजिक असंतोष और विद्रोह की भावना तथा पारिवारिक जीवन के विभिन्न रूपों को और विविध विषयों को अपने वैयक्तिक अनुभवों और जीवन दृष्टि के आधार पर प्रस्तुत किया है ।

मन्नू भण्डारी - " यही सच है " :-

नारीपरक वैयक्तिक चेतना जगाने में मन्नु भण्डारी की कहानियाँ अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं । इन का दृष्टिकोण मनोवैज्ञानिक है तो सिद्धान्त व्यक्तिवादी है । नारी-स्वेच्छा-स्वातन्त्र्य एवं नारी को समान अधिकार दिलाने की प्रवृत्ति इनकी अनेक कहानियों में है । इनके पाँच कहानी संग्रह प्रकाशित हुए है -- " तीन निगाहों की एक तस्वीर ", " मैं हार गई ", " एक पुरुष एक नारी ", " यही सच है " तथा " एक प्लेट सैलाब " आदि है ।

लेखिका ने नारी मनोविज्ञान को अच्छी तरह समझा है । इसीलिए उनकी कहानियाँ मुख्यतः भारतीय नारी की नियति को विभिन्न सन्दर्भों में देखती हैं । साथ-साथ नारी मन की दुर्बलताओं, असफलताओं, कुण्ठाओं एवं भग्नाशाओं का अच्छा चित्रण भी है । मन्नू भण्डारी की प्रसिद्द कहानी है ---- यही सच है ।

इस कहानी में त्रिकोण प्रेम का चित्र है । इसमें प्रेमी दूर-दूर रहना, कुर्बानी देना आदि नही हैं । यह कहानी, एक तरह से एक अविवाहित युवती के प्यार भरे मधुर संबंधों की स्पष्ट स्वीकृति है । इसमें दीपा पहले पहल निशीत को चाहती थी । किसी कारण वश वह प्रेम संबंध असफल होने से दूसरे युवक संजय को चाहने लगती है । लेकिन नौकरी के सिलसिले में दीपा को बंबई जाना पड़ता है । बंबई में निशीथ भेंट होने पर पुरानी यादें जाग आती है । उसको ऐसा लगता है कि पहला प्यार ही सच्चा होता है ।

बम्बई से लौटते समय जब निशीथ ने " दीपा " को विदा देते हुए हाथ को स्पर्श करके छोड दिया तो उसे लगता है --- " लगाव की जिस अभिव्यक्ति की वह प्रतीक्षा कर रही थी, वह एक तरह से हो ही गयी : " ..... मैं सब समझ गयी, निशीथ, सब समझ गयी । जो कुछ तुम इन चार दिनों में नहीं कह पाये, वह तुम्हारे इस क्षणिक स्पर्श ने कह दिया । विश्वास करो, यदि तुम मेरे हो, तो मैं भी तुम्हारी हूँ केवल तुम्हारी, एकमात्र तुम्हारी हूँ केवल तुम्हारी, एकमात्र तुम्हारी ।"[1] लेकिन कोरी भावना जीवन का यथार्थ नहीं हो सकती । इसलिए वापस आने पर संजय के सामने आते ही, वह उसे अपनी बाँहों में घेर लेती है और महसूस करती है कि यही सच है -- " तभी मैं अपने भाल पर संजय के अधरों का स्पर्श महसूस करती हूँ और मुझे लगता है, यह स्पर्श, यह सुख, यह क्षण ही सत्य है, वह सब झूठ था, मिथ्या था, भ्रम था .... ।"[2]

इसमें दीपा की द्वन्द्वशीलता भारतीय नारी के मूल्य संक्रमण का परिचायक है । इस कहानी की, दीपा को केवल संजय या निशीथ नहीं चाहिए । शायद दीपा चाहती है " संजय और निशीथ " दोनों को एक साथ, और एक ही पुरुष में ।

कलुणकुमार " बिल्लमोलत्राडु " :-

कलुणकुमार की कहानियों में बहुत चर्चित कहानी है " बिल्लमोलत्राडु " (कमर में बाँधा जानेवाला चपरास) ।

इस कहानी में ग्रामीण जीवन का यथार्थ चित्र खींचा गया है । रामिरेड्डी नामक एक मदान्ध जमीन्दार अपने पास नौकरी करनेवाला सुब्बडु की पत्नी के सौन्दर्य से आकर्षित होकर, उस पर बलात्कार करना चाहता है । एक बार विफल होने से

---

1. प्रतिनिधि कहानियाँ - पृ. 92.
2. - वही -

किसी न किसी प्रकार उसे पाना चाहता है । लेकिन शीलवती स्त्री होने के कारण सुब्बुलु की पत्नी रामिरेड्डी को ठुकराकर, अपने गाँव चली जाती है और सुब्बुलु भी नौकरी छोडकर जाना चाहता है तब सुब्बुलु और रामिरेड्डी के बीच इस प्रकार वार्तालाप चलता है --

रामिरेड्डी पूछता है --- नौकरी छोडना चाहते हो ? कारण क्या है ?

सुब्बुलु कहता है -- मेरी पत्नी को यहाँ रहना पसन्द नही है ।

रामिरेड्डी --- क्यों ? कुछ कष्टापन है क्या ?

सुब्बुलु --- उसको इस गाँव में रहना ही पसन्द नहीं है ।

रामिरेड्डी -- उसे अच्छा नहीं लगा तो तुझे क्या हुआ ?

सुब्बुलु --- मुझे भी अच्छा नही लग रहा है ।

रामिरेड्डी -- " स्त्री " जैसा बोलगी वैसा करोगे तुम ?

सुब्बुलु --- हम धानाद है ।

रामिरेड्डी -- तुम्हें हिम्मत नहीं है

सुब्बुलु --- नही है । इसीलिए जा रहा हूँ ।

रामिरेड्डी - जाना चाहे तो मिलटरी में शामिल हो जाओ, वहाँ खाने के लिए खाना और वेतन भी मिलेगा । तुम्हें जो चाहिए, वह मिल जायेगा ।"[1]

रामिरेड्डी किसी न किसी प्रकार सुब्बुलु की पत्नी को पाना चाहता है इसीलिए वह, सुब्बुलु को चोरी के इलजाम में पुलीस को पकडवाकर कैद करवाने में सफल हो जाता है । लेकिन रामिरेड्डी की माँ बहुत अच्छी है । वह सुब्बुलु को अपना छोटा बेटा मान लेती है । सुब्बुलु को झूठे इलजाम से बचाने के लिए पूरी तरह कोशिश करती है और सफल हो जाती है । अंत में वह सुब्बुलु से कहने लगती है-

---

1. बिल्लल मोलत्राडु - पृ. 58 - 59.

"तुम्हीं मेरे पुत्र हो । यही मेरी पुत्र वधू है । रेड्डी के गाँव में कदम तक नहीं रखूँगा । तुम्हारे पास रहकर लोगों की सेवा करती हूँ ।"

रामिरेड्डी को झूठा इल्जाम लगाने के जुर्म में सजा सुनायी जाती है ।

करुणकुमार की अन्य प्रसिद्ध कहानियाँ हैं -- कोत्त चेप्पुलु (नये जूते), कूलिमनिषि (मजदूर), पशुवुल कोट्टम (जानवरों की झोंपड़ी) आदि हैं ।

बुच्चिबाबु - नन्नुगुरिंचि कथ्रायवु (मेरे बारे में कहानी नहीं लिखोगे) :-

बुच्चिबाबु की कहानियों में उल्लेखनीय कहानी है " नन्नुगुरिंचि कथ्रायवु ।"

इस कहानी में प्रमुख और मूल पात्र है " कुमुदम " जिसे कहानीकार बचपन से ही जानता है । दोनों में एक दूसरे के प्रति जो प्रेम भावना है वह अंत तक गुप्त ही रहता है । दोनों अपने प्रेम को व्यक्त करने में असमर्थ दिखायी देते हैं । हमेशा समाज के प्रति ही उनका वार्तालाप होता चलता है । हमसे समाज को क्या मिल रहा है । हम समाज को क्या दे सकते है । ऐसे विषयों पर ही चर्चा होता रहता है । सामाजिक नीति-नियम के अनुसार आदर्श गृहिणी बन जाती है । लेकिन कहानीकार तो बेकारी समस्या से कुंठा ग्रस्त होकर तडपता रहता है । दोनों के बीच सालों के बाद ही मुलाकात होता रहता है । फिर भी उन दोनों में एक दूसरे के प्रति जो आकर्षण और प्रेम है, वे अनजाने में ही सामने आती हैं । कहानीकार, कुमुदम से हमेशा पूछता है कि यह परिवर्तित जिन्दगी कैसी है ? हमेशा, कुमुदम अपनी जिन्दगी के प्रति असंतोष की भावना स्पष्ट करती रहती है । वह हमेशा कहानीकार से कहती रहती है --- " मेरे बारे में कहानी लिखो न एक बार कहानीकार सोचता है -- " कभी न कभी, कहीं न कहीं पैदा होना, किसी न किसी से शादी कर लेना, अनजाने में ही बच्चों को जन्म देना, कहीं न कहीं, कभी न कभी मर जाना । बहुत लोगों से होनेवाला काम यही है । इसके बारे में क्या लिखूँ ? .... समाज

---

1. बिल्ललमोलत्राडु - पृ. 78.
   (राजा प्रिंटर्स, 2 - ताता मुत्तियप्पनवीधि, मद्रास - 1)

को इनकार करके, प्राचीन संप्रदायों के प्रति आन्दोलन करके, दूसरों के समझ में न आनेवाले नये मूल्यों को सामने लानेवाला मानव ही सच्चा आदमी है .....
कुमुदम में ऐसे आन्दोलन के लहरें एक भी नहीं है ।"[1]

एक बार कुमुदम, कहानीकार से पूछती है । तुम कहाँ हो ? क्या कर रहे हो ? कैसे हो ? उत्तर में कहानीकार कहने लगता है --- "हमारे देश में शिक्षित युवक को क्या कर रहे हो ? ऐसा प्रश्न पूछने से ज्यादा अपराध और कोई नही है । पूछनेवाले तो हमारी भलाई चाहनेवाले ही होंगे । लेकिन उसको जवाब देने के लिए बेकारी से तड़पने वाला युवक किस प्रकार दु:खी हो जाता है, वह पूछनेवालों की जानकारी में नही होगा । कुछ नही कर रहा हूँ । ऐसा बोलना मुझे अच्छा नही लगा । इसीलिए कह दिया -- "कहानियाँ लिख रहा हूँ ।"[2]

एक बार कुमुदम, कहानीकार से कहने लगती है -- "अगर, मैं तुम्हारे जगह में रही तो क्या करती हूँ ? तुम जानते हो ? ऐसा प्रश्न चिह्न लगाते हुए उत्तर भी देने लगती है - नदी के तट पर झोपड़ी बनाती हूँ । उसमें बैठकर मुफ्त में शिक्षा को सिखाने की ढंढोरा करवाती हूँ । पहले खेत के रखवाले कम से कम दस तो आयेंगे ही । शाम में उनको पढ़ाना शुरू करती हूँ । चारों ओर के किसान मजदूरों पढ़ने के लिए आते समय, रिक्त हाथों से तो नही आते, अपने साथ नमक, इमली, दूध आदि लाकर मेरी जीविका में मदद कर लेते हैं । वे सब मेरे ही शिष्य होंगे । उनके सुख-दु:ख में भाग लेती हूँ । उनके झगड़ों का परिष्कार भी करती हूँ । मैं मानती हूँ तब मेरा जीवन व्यर्थ नही होगा ।"[2]

इस तरह उन दोनों के बीच में समाज को लेकर और समाज में उनका अपना कर्तव्य को लेकर अनेक बार वार्तालाप होते रहते है । उनके विचारों से स्पष्ट होता है कि सामान्य आदमी या मानव के समान, वे जीना नही चाहते । समाज को

---

1. तेलुगु कथा - पृ. 79.
2. - वही - पृ. 85.

कुछ देना चाहते है । लेकिन उनको मौका ही नही मिलता । लेकिन आजकल के युवक और युवतियों को क्या करना है ? उस के लिए अनेक उत्तर है ।

कहानी के अंत में स्पष्ट होता है कि दोनों में एक दूसरे के प्रति बहुत ही प्यार था । साथ-साथ एक प्रकार का आकर्षण भी । लेकिन वे दोनों सामाजिक नीतिनियमों के जाल में फँसे हुए है । साथ-साथ दोनों अपने आप को काबू में रखने में सफल होते है । लेकिन अंत में जब कुमुदम मौत से लडने लगती है तब उन दोनों का गुप्त प्रेम सामने आती है । लेकिन तब तक वह मर चुकी है ।

कमलेश्वर की कहानी " दिल्ली में एक और मौत " युद्द से उत्पन्न विभिन्न परिणामों को स्पष्ट करती है । भारत और पाकिस्तान युद्द को लेकर कहानी की रचना करने में कहानीकार पूर्णत: सफल रहे है । मन्नू भण्डारी की कहानी " यही सच है " में प्रेम का ही एक विभिन्न चित्र खींचा गया है । इस कहानी में नयी मानसिकता का चित्रण मिलता है । तेलुगु में कल्याकुमार की कहानी " बिल्लल मोलत्राडु " में शोषण का ही एक विभिन्न चित्र खींचा गया है । इस कहानी में सच्चापन को सामने लाने में विवाहव्यवस्था रुकावट नही बनती । बुच्चि-बाबू की कहानी " मन्नु गॉरिंच कथ्राय्यु " [मेरे बारे में कहानी नही लिखो] में भी प्रेम का ही एक विभिन्न चित्र देख सकते हैं। इस कहानी में प्रेम करने वालों को " शादी " रुकावट नही बनती । शायद इसीलिए है नायक का पात्र कुमुदम को शादी होकर बच्चे होने के बाद भी प्यार करने लगता है । यह प्यार सिर्फ एक ओर से नहीं, दोनों ओर से होता है ।

उपर्युक्त कहानियाँ एक तरह से एक दूसरे से अतुलनीय है । किन्तु अपने आप में एक प्रकार से प्रवृत्ति के सूचक हैं ।

10. निष्कर्ष :-

हिन्दी और तेलुगु कहानियों में " परिवेश से प्रतिबद्धता ", " अनुभूति की प्रामाणिकता ", " भोगा हुआ यथार्थ ", " अभ्युदय साहित्य ", " व्यापारी साहित्य " आदि प्रवृत्तियों से जुड़ी हुई कहानियों की तुलना की गयी है। इससे स्पष्ट होता है कि संपूर्ण यथार्थ का चित्र खींचने में हिन्दी के नये कहानीकार पूर्णत: सफलीकृत हुए। लेकिन समस्या के लिए समाधान प्रस्तुत करने में सफल नहीं हो पाये। तेलुगु की नयी कहानियों में यथार्थ का चित्र तो खींचा गया है लेकिन हिन्दी कहानियों का गहरापन दिखायी नहीं देता। तेलुगु की नयी कहानियों में आदर्श कहीं न कहीं कुछ न कुछ, ज्यादा या कम मात्रा में रहता है। हिन्दी में आदर्श का चित्र बहुत कम कहानियों में मिलता है।

नयी कहानीकारों की नयी कहानियों में खास करके परिंदे (निर्मल वर्मा) " जहाँ लक्ष्मी कैद है " (राजेन्द्र यादव), " चीफ की दावत (भीष्म साहनी), " पिता " (ज्ञानरंजन) " तीसरी कसम (रेणु) आदि कहानियों में वैयक्तिक समस्याओं का यथार्थ चित्र खींचा गया है। वैयक्तिक इच्छाओं पर दबाव भी सामने आती है। लेकिन तेलुगु की कहानियों में प्रमुखत: मध्यतरगंम (हितमी) " एदुरु - चूस्तुन्न मुहूर्तम् " (पालगुम्मि पद्मराजु), " नया जीवन " (कोडवटिगंटि कुटुंब राव) " वेश्या " (मुनिपल्ले राजु) में और आगे आदर्श को भी प्रतिष्ठित करने की कोशिश तेलुगु कहानीकारों ने की है। इन्हीं कहानियों में मध्यवर्ग का ही एक खोखला रूप सामने आता है। जिन्दगी और जोंक (अमरकान्त), मलबे का मालिक (मोहन राकेश) कहानियों में व्यक्ति पीड़ा का चित्रण करते हुए उसके अस्तित्व पर प्रश्नचिह्न लगाया गया है। लेकिन एंपु (चयन), (चागंटिसोम - (नौलि (पुराणम सुब्रह्मण्य शर्मा) में तुफान (पालगुम्मि) में अस्तित्व की रक्षा किया गया है। साथ-साथ इन कहानियों में मानवतावादी तत्व भी सामने आते हैं। हिन्दी कहानियों से भी बढ़कर तेलुगु कहानियों में मानवता की भावना उभर आती है। कुल मिलाकर 1951 से 1960 तक कहानियों में " मध्यवर्ग " ही कहानी का मूल कथ्य रहा है। उनकी समस्याओं को ही नयी कहानियों में प्रस्तुत किया गया है।

तृतीय अध्याय

कहानी के नये कथ्य नये प्रयोग (1961 - 70)

3. कहानी के नये कथ्य और नये प्रयोग [1961 - 70]

1. पूर्व भूमिका [हिन्दी और तेलुगु]
2. [अ] अकहानी : नामकरण एवं परिभाषायें
   [आ] कहानी परंपरा और अकहानी की प्रवृत्तियाँ
   [इ] सचेतन कहानी : "उद्भव तथा नामकरण
   [ई] सहज कहानी
3. [अ] दिगंबर साहित्य
   [आ] तत्व परिशीलन
   [इ] अतिनव्य साहित्य
   [ई] अतियथार्थवादी साहित्य
   [उ] मानवतावाद
4. हिन्दी और तेलुगु कहानियों की प्रवृत्तियाँ : एक तुलना
   1. [क] गिरिराज किशोर "पेपरवेट" - कालीपट्नमरामाराव "यज्ञ"
      [ख] तुलना
   2. [क] काशीनाथ सिंह "सुधीर घोषाल" - नग्नमुनि "पंट तेगुलु"
      [ख] तुलना
   3. [क] सुवासकुमार "स्थानपूर्ति" - नग्नमुनि "सिमेंटु संतति" रावीशास्त्री "न्यायम"
      [ख] तुलना

4. (क) कृष्णबलदेव वैद " त्रिकोण " -- तिलक "परिवर्तना"
(ख) तुलना

5. (क) दूधनाथ सिंह " रीछ " - प्रभाकर मंदारा
सारे जहाँ से अच्छा "
(ख) तुलना

6. (क) गंगाप्रसाद विमल " शीर्षकहीन" --
शारदा अशोकवर्धन " प्रतिष्ठा "
(ख) तुलना

7. (क) महेन्द्र भल्ला " एक पति के नोट्स " | वाकाटिपांडुरंगाराव
रवीन्द्रकालिया " नौ साल छोटी पत्नी | " तप्पुकु काल्लु - रावालि "
(ख) तुलना

8. (क) महीपसिंह " कील " | नग्नमुनि " विलोमकथलु
माहेश्वर " पेशाब " | बलिवाड कांताराव "मिनीक्ष-पथुलु"
| मुल्लपुडि वेंकटरमणा " छायायें "

5. साम्य और वैषम्य

6. निष्कर्ष

3. कहानी के नये कथ्य और नये प्रयोग ‖ 1961 – 70 ‖

1. पूर्व भूमिका ‖ हिन्दी और तेलुगु ‖ :-

1960 तक आते आते भारतीय जनजीवन अनेक विसंगतियों और विडंबनाओं का शिकार हो गया । सोचा गया था " आजादी मिलने से जो प्राप्त करने की कामना की गयी थीं । वह नहीं हो पायी ।" बदले में अनेक समस्याओं का सामना करना पडा । मोहभंग की स्थिति में ऐसा लगने लगा कि समाज में सभी प्रांतीय और राष्ट्रीय मूल्य समाप्त हो चुके हैं । निराशापूर्ण भविष्य के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है । राजनीतिक उथल-पुथल, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार और मूल्यहीनता ने स्वतंत्रता के पश्चात् होश संभालनेवाली पीढ़ी को आमंत्रित किया । पतनोन्मुख घटनाओं ने देश की चेतना को धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और शैक्षणिक स्तरों को झकझोर दिया । व्यक्ति तो आशान्वित था लेकिन उससे भी अधिक निराशा थी, अनपेक्षित स्थितियों के कारण व्यक्ति में अविश्वास और आश्चर्य की स्थिति उत्पन्न हुई, फलस्वरूप व्यक्ति का अंतर ही टूट गया । दूसरी ओर समाज पश्चिम से कर्मठता तो नहीं सीख सका । लेकिन उनके जीवन के विलासी पक्ष को अपना लिया । फलत:

सम्पन्न और बौद्धिक वर्ग के लिए " कॉल-गर्ल्स " का नया सिलसिला शुरू हो गया । आर्थिक समस्या से पीड़ित गरीब पिता और पुत्र, अपनी बेटी और बहिनों से वेश्या वृत्ति कराने को विवश हो गये । भौतिक साधनों को भोगने की इच्छा ने नारी की नैतिकता को नये ढंग से परिभाषित किया गया है । बढ़ती हुई शिक्षा ने, नारी वर्ग में " पति परमेश्वर " की कल्पना शिथिल कर दी है । घर से बाहर आने की अपनी आजादी के उत्साह पर नारी वर्ग नियन्त्रण नहीं रख सका है । बड़े नगरों से लेकर गाँवों तक अलग-अलग हिस्सों में फ्लैट या घर खरीदकर उनमें अपनी रखैल रखते हैं। बड़े-बड़े शहरों में तो ब्लू फिल्मों के बीच सामूहिक संभोग के खेल खेले जाते हैं। ये सब सेक्स के सन्दर्भ हैं । हमारे अनेक कहानीकारों ने इन सब स्थितियों पर प्रहार करने के बदले, इन में रस लेना आरम्भ किया । यह सब उनके लिए बहुत आकर्षक था । इसीलिए अच्छे-बुरे के बीच का अन्तर पहचाने बिना, उन्होंने यथार्थ चित्रण के नाम पर इन स्थितियों के चित्रण को अपने लेखन की सार्थकता या सफलता मानी । " अकहानी " इसी गलती और गलत दृष्टि का ही परिणाम है । इसीलिए कहानी के क्षेत्र में पूर्व पीढ़ी की आदर्शवादिता और नैतिक उपदेश सर्वमान्य मूल्य बनकर नहीं रहे । इनके स्थान पर यथार्थ जीवन की प्रस्तुति और विद्रोह की भंगिमा को स्थान मिला । कहानीकार, जीवन को अधिक निकट से देखने-समझने के लिए प्रयत्नशील हुआ । साथ-साथ, इस बदलाव की स्थिति में पतनशील और पलायनवादी प्रवृत्तियाँ भी प्रकाश में आयीं । ऐसी प्रवृत्तियों की केन्द्रबिन्दु सेक्स था । कुछ कहानीकारों ने अपनी प्रवृत्तिवश और कुछ ने अपने हितों की रक्षा के लिए जान-बूझकर स्त्री-पुरुष सम्बन्धों को लेकर इतनी स्थूल और मांसल कहानियाँ लिखी, जो पाठक को विचलित करने के लिए [बरगलाने के लिए] पर्याप्त थीं । 1960-65 तक की हिन्दी और तेलुगु की कहानियों में एक हिलडुल, अनास्था और फैशनपरस्ती का वातावरण छाया हुआ मिलता है ।

§अ§ अकहानी नामकरण एवं परिभाषाएँ :-

अकहानी का प्रेरक पश्चिम की " एण्टी स्टोरी मूवमेण्ट " है । इस मूवमेण्ट के साथ रॉब्ब ग्रिए, मैडम सारा तथा वार्थेस के नाम जुडे हुए हैं जिनके लिए " अकथा संबंधी आन्दोलन केवल फार्म या शिल्प का आन्दोलन नहीं है - वह एक निश्चित दृष्टिकोण और जीवन दर्शन का आन्दोलन है -- रॉब्ब ग्रिए के लिए इंसानी हरकतें किसी दूसरी वस्तुओं से भिन्न नहीं है । वे सिर्फ उतनी ही हैं जितनी नजर आती हैं - दूसरी तमाम वस्तुओं के साथ हरकत करती हुई यांत्रिक और ठोस । "[1]

इसी संदर्भ में डॉम मैरोस की यह बात भी ध्यान देने योग्य है जो उसने बरोज से अपनी मुलाकात का जिक्र करते हुए लिखी थी " यह पूछे जाने पर कि आप कैसे लिखते है, बरोज ने बडे इत्मीनान से कहा था कि मैं पहले लिख लेता हूँ कुछ भी और फिर उसे ब्लेड या कैंची से काट लेता हूँ और तब उसे क्रमहीन स्थिति में डिक्टेट कर देता हूँ । "[2]

पाश्चात्यों के उपर्युक्त कथन से स्पष्ट होता है कि अकहानी में असंबद्धता है तथा वह कहानी की परंपरागत अवधारणाओं को अस्वीकार करती है ।

" अकहानी " शब्द की सार्थकता पर विचार करते हुए श्याम परमार कहते हैं -- " अ " उपसर्ग निषेधात्मक होने के साथ-साथ पूर्व पीढ़ी से या नई कहानी से साठोत्तर कहानी अलग करने का काम भी करती है । यही कार्य इस उपसर्ग ने कविता के क्षेत्र में भी किया । "[3] साथ ही इस उपसर्ग में पूर्व पीढ़ियों का वह उपहास भी आकार ले रहा है जो उसने नई पीढ़ी के प्रति प्रक्षिप्त किया । "[4] वास्तव में यह उपसर्ग एक

---

1. आज की कहानी - डॉ॰ विजय मोहन सिंह, - पृ॰ 99
2. - वही - पृ॰ 100॰
3. श्याम परमार : अकविता और कला का सन्दर्भ - पृ॰ 13॰
4. श्याम परमार : श्री क्षेत्रा - समकालीन कहानी - अदृश्य और दृष्टि - पृ॰ 32॰

जीवन दृष्टि को भी प्रकट करता है जिससे जीवन की अर्थहीनता, अभिव्यक्ति की निरर्थकता, भाषा और भावों की अपूर्णता और व्यक्तित्व की विसंगति को प्रश्रय मिला ।"[1]

इस आन्दोलन की मूल्यहीनता या मूल्यनिरपेक्षता को दृष्टि में रखकर डॉ. रामदरश मिश्र ने सर्वथा सही लिखा है कि "अकहानी का "अ" वस्तु और मूल्य के स्तर पर निषेध का द्योतक है .... अकहानी, विसंगतिबोध, संत्रास, अकेलेपन, टूटन, मृत्युबोध को आज के जीवन का यथार्थ मानकर स्थापित करना चाहती है । वह सामाजिक जीवन की संश्लिष्ट प्रथा मानवीय और सामाजिक मूल्यवादिता के प्रति उदासीन ही नहीं, विरोधी भी है ।"[2]

डॉ. गंगाप्रसाद विमल अकहानी को व्याख्यायित करते हुए कहते हैं —
"अकहानी कथा के स्वीकृत आधारों का निषेध तथा किसी भी तरह के मूल्य स्थापना का अस्वीकार है ।"[3] इससे स्पष्ट होता है कि इस आन्दोलन ने कहानी के परम्परित कथानक के शिल्प या साँचे और जीवन बोध से संबंध न रखनेवाले मूल्यों को भी अस्वीकार किया है ।

अकहानी का प्रारंभ डॉ. नामवरसिंह सातवें दशक के प्रारंभ से मानते है और कहते हैं — "यह आकस्मिक नहीं है कि हिन्दी कहानी में 1959-60 के आसपास कहानीकारों की जो पीढ़ी उभरकर सामने आयीं है, वह अपनी शुरुआत का नाता निर्मलवर्मा की एक शुरुआत से जोड़ना पसन्द करती है । राकेश-यादव-कमलेश्वर द्वारा विज्ञापित नयी कहानी के विरुद्ध इस पीढ़ी के मन में कितना अधिक विद्रोह है, यही इसीसे स्पष्ट है कि उन्होंने कहानी मात्र को अस्वीकार करके हिन्दी में अकहानी की आवाज उठा दी ।"[4]

---

1. डॉ. सूर्य प्रसाद दीक्षित - हिन्दी कहानी - दो दशक की यात्रा सं. रामदरश मिश्र नरेन्द्र मोहन - पृ. 204.
2; हिन्दी कहानी : एक अंतरंग पहचान - पृ. 101 - 102.
3. नामवर सिंह - कहानी - नयी कहानी - पृ. 237.

इस कथन से स्पष्ट है कि अकहानी जो है वह नयी कहानी के विरुद्ध उठा हुआ आन्दोलन है। इसका ﴾अकहानी का﴿ स्पष्ट विरोध नयी कहानी के कथ्य और शिल्प से है।

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी : कहानी समीक्षा : मूल्यांकन-पुनर्मूल्यांकन विशेषांक में विश्वेश्वर ﴾मंच﴿ कहते हैं — "साठोत्तर या अकहानी की आवाज पुरानी पड़ती जा रही पीढ़ी के "भोगे हुए यथार्थ" "अनुभव की प्रामाणिकता "प्रतिबद्धता" जैसे खोखले नारों के खिलाफ एक सख्त कार्यवाही थी। इस आवाज ने "नयी कहानी" के झंडाबरदारों को उनके पुराने पड़ जाने का ठीक-ठीक "अहसास" कराया और उन्हें बिलकुल उसी तरह बौखला दिया, जैसे अपने जमाने में उन्होंने जैनेन्द्र-अज्ञेय आदि को बौखलाया था।"[1]

इस आवाज को बुलंद करनेवालों में गंगाप्रसाद विमल, रवीन्द्रकालिया, दूधनाथ सिंह, विश्वेश्वर, सतीश जमाली आदि उल्लेखनीय है। यथार्थता बोध या विसंगति का ज्ञान अकहानी के केन्द्र में जान पड़ता है। इन कहानीकारों को जीवन में कोई संगति या जीने के पीछे कोई उद्देश्य नहीं नजर आता। क्या किया जाए? क्या सोचा जाए? कहाँ जाया जाए? आदि चिन्तायें कहानीकार को मथती रहती हैं।

साठोत्तरी कहानीकारों ने नये कहानीकारों की भाँति कहानी की एक धारा को "अकहानी" के नाम से स्थापित किया है। अकहानीकारों का दावा है कि उन्होंने कहानी के घिसे-पीटे रूप को अस्वीकृत कर "अकहानी के रूप में एक नई रचनात्मक चेतना प्रदान की, जो पूर्ववर्ती रचनाओं से कई अर्थों में भिन्नता दर्शाती है। अकहानी की परम्परागत प्रतीतिया धारणागत प्रतीति से पृथक एक अयाचित कथा धारा है, जो कहानी के सभी वर्गीकरणों, कहानी के मूल्यांकन आधारों और कहानी की पूर्व समीक्षाओं को अस्वीकार करती है।"[2]

1· विश्वेश्वर मंच ﴾वार्षिक﴿ 1972 स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी : कहानी समीक्षा मूल्यांकन - पुनर्मूल्यांकन विशेषांक - पृ· 167 - 168

2· समकालीन कहानी : दिशा और दृष्टि - सं·धर्मवीर ﴾लेख﴿ "जीवन दृष्टि का परिप्रेक्ष्य" लेखक गंगा प्रसाद विमल - 1960 - पृ· 166·

" अकहानी किसी भी तरह के मूल्यों की रक्षा करती हुई या आग्रह रखती हुई नहीं चलती है। उसके लिए पुराने मूल्यों का टूटना भी कोई महत्त्वपूर्ण बात नहीं है।"[1]

अकहानी कहीं से भी अकस्मात् आरम्भ हो सकती है और कहीं पर भी समाप्त हो सकती है। कथात्मकता से यह विश्वास नहीं रखती है। अकहानी में कथा को गढ़ा नहीं जाता अपितु अकहानी में दैनिक जीवन की घटनाओं और संवेदनाओं को अभिव्यक्त किया जाता है। अकहानी शिल्पहीन कहानी है। यह रूपहीनता की विधा विहीन विधा है।"[2]

डॉ॰गोरधन सिंह शेखावत के शब्दों में -- " पश्चिम में सम्भव है कि मानव नियति इस स्थिति तक पहुँच गई हो कि जीवन मूल्यों से ऊबकर लोगों ने इस विसंगति बोध को जीवन में भोगा भी हो लेकिन भारतीय परिवेश में इस विसंगति को जीवन का पर्याय नहीं माना गया है लेकिन जीवन के कई क्षेत्रों में ऐसी स्थिति अवश्य है।"[3] इस आन्दोलन की वजह से " कुछ लेखक चर्चा के द्वारा प्रकाश में आये, किन्तु किसी भी रचनाकार का स्थाई महत्त्व चर्चाओं द्वारा नहीं होता है, फलस्वरूप इस आन्दोलन में भी वे ही लेखक बचे जिनकी रचनाओं में युगीन बोध का व्यापक विश्लेषण हुआ था।"[4] अनेक कहानियों में पुरानी मूल्य व्यवस्था के प्रति नफरत और गुस्से का भाव की अभिव्यक्त है। इस नेपथ्य में तेलुगु के सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्रीरंगम श्रीनिवास राव का कथन देखनेलायक है वह इस प्रकार है --

" इन (कहानीकारों) से नया आन्दोलन शुरू होकर वह जनता के आन्दोलन का अग्रगामी बन सकता है।"[5]

---

1. समकालीन कहानी : दिशा और दृष्टि - सं॰धनंजय (लेख) " जीवन दृष्टि का परिप्रेक्ष्य " लेखक गंगा प्रसाद विमल - 1960 - पृ॰ 167.
2. डॉ॰सूर्य प्रसाद दीक्षित : नई कहानी, अकहानी और सचेतन कहानी (लेख) -- हिन्दी कहानी - दो दशक की यात्रा - डॉ॰रामदरश मिश्र व नरेन्द्र मोहन 1970 - पृ॰ 204.
3. डॉ॰गोरधन सिंह शेखावत " समकालीन कहानी का रचना विधान - पृ॰89-90
4. राजेन्द्र यादव - माया, नवम्बर, पृ॰ 64.
5. आन्ध्र प्रभा - मार्च - 28, 1969.

श्री टी॰ आंजनीयुलु का कहना है -- " वे साहित्यकार द्वंद्वात्मक भौतिकवाद से भी अच्छी व्यवस्था चाह रहे हैं ।" [1]

आरूद्रा कहते हैं -- " ये रचनाकार वाल्मीकि की तरह नहीं कुपिमंपित जग्गाकवि की तरह गालियाँ दे रहे हैं । इसीलिए कथ्य का स्थान घटकर " वासना " का स्थान बढ़ रहा है ।" [2]

उपर्युक्त परिभाषाओं और कथनों से स्पष्ट होता है कि अकहानी, पारिवारिक, सामाजिक, नैतिक और साहित्यक मूल्यों के विघटनात्मक स्वरूप की अभिव्यक्ति है । अकहानीकारों ने यौन संदर्भों में रस लेकर सेक्स या संभोग को ज्यादा महत्व देकर अनेक कहानियों की रचना की ।

(आ) कहानी परंपरा और अकहानी की प्रवृत्तियाँ :-

स्वतन्त्रता के बाद के वर्षों में मध्यवर्गीय व्यक्ति " स्व " कुंठित और अभाव ग्रस्त रहा है । इसीलिए नयी कहानी नये यथार्थ को नये ढंग से खोजनेवाली कहानी रही है । यथार्थ के नाम पर सेक्स उभर आया । फलतः नयी कहानी, अपने समय के महत्वपूर्ण सवालों से कट गयी । हिन्दी कहानीकारों की एक लम्बी पंक्ति पाश्चात्यों के प्रभाव से " सेक्स ओरियेन्टेड " होकर सामने आयी । ऐसे कहानीकारों की कहानियों को " अकहानी " के अन्तर्गत देख सकते हैं । उन्हीं से चलाया गया आन्दोलन है " अकहानी " । यह आन्दोलन, कुछ कहानीकारों द्वारा अपनी स्थापना के लिए किया गया है । कहानीकारों ने अपने आप को साहित्यिक क्षेत्र में प्रतिष्ठित करने के लिए कहानी परंपरा को तोड़ा ही नहीं बल्कि एक नये रास्ते में ले जाने की कोशिश की ।

1.

2. आन्ध्र प्रभा 16-9-1969 (साप्ताहिक) समीक्षा - पृ॰ 71.

अकहानी आदमी के व्यक्तित्व की खोज करना चाहती है किन्तु इस खोज में कहानीकारों की दृष्टि वस्तुनिष्ठ है। "अकहानी की पूरी यात्रा ऐसी है जिसमें गलदश्रु, भावुकता, संवेदना और विचारोत्तेजना[1] के लिए स्थान नहीं है।" वहाँ कहानीकार के पास बची-भरी तटस्थता, निरपेक्षता और जड़-विषाद और सत्वहीनता[2] है। अकहानी भावुकता का विरोध करती है तथा रोमानियत से बचती है क्योंकि भटकी हुई, मीठी, मोहक, खोयी-खोयी अनुभूतियाँ कहानी में रोमानियत ही पैदा करती हैं;[3] जिन से अकहानी जानबूझकर बचती है। अकहानीकार जो है वह जिन्दगी को जैसा देखता है, वैसा कहानी में अभिव्यक्त करता है।

अकहानी की मूल विशेषता यह है कि वह कहानी में घटना प्रधानता के स्थान पर सूक्ष्म मनःस्थितियों के चित्रण पर बल दिया तथा जीवन में आयी नयी मानसिकता को पकड़कर, मानव-संबंधों में आयी दरार के यथार्थ को स्पष्ट किया। अकहानी ने सभी प्रकार के मूल्यों को अस्वीकार किया और शिल्प के स्तर पर नये प्रतीकों, नये बिंबों तथा नये संकेतों को अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया।

अकहानीकार ने किन से प्रभावित होकर ऐसी कहानियाँ लिखी थी। इस पर ध्यान दे तो स्पष्ट हो जाता है कि विदेशी लेखकों - काफ्का, सार्त्र, ज्यों जेने, कालिन विल्सन, कामू आदि से। ये यौन संबंध या सेक्स को अपेक्षाकृत मूल्यवान समझते हैं तथा उनकी दृष्टि में "मैं" एक यौन जीवन है और प्रेम एक ऋणात्मक मनोवृत्ति है। सतीश जमाली ने इनकी इस प्रवृत्ति पर आरोप लगाते हुए लिखा था कि इन अकहानीकारों का शिल्प भी वही है। "..... गंगाप्रसाद विमल, रवीन्द्रकालिया और ममताकालिया के लिए केवल काफ्का और आभू रजाई को पढ़ा जाये और निर्मल

---

1. हिन्दी कहानी : दो दशक की यात्रा - डॉ. रामदरश मिश्र, नरेन्द्र मोहन - पृ. 205.
2. - वही -
3. आज की कहानी : विजयमोहन सिंह - पृ. 101.

वर्मा तथा श्रीकांत वर्मा के लिए कामू और काफ्का को, ज्ञानरंजन के लिए सार्त्र को और दूधनाथ सिंह के लिए कालिन विल्सन तथा ज्यांजेने को।"[1]

इस नेपथ्य में तेलुगु की कहानी प्रयाणम् {सफर} अब्बूरि छायादेवी की कहानी की पंक्तियाँ देखनेलायक है -- "चावल नहीं खाये तो मर जाते है। ऐसा सोचकर क्या अन्य चीजों को नहीं खाते ? जो भी नया और ताजा लगेगा। उसे खाने की इच्छा उत्पन्न होगी। इसीलिए अन्य चीजों को भी खायेंगे और चावल को भी।"[2]

इस कथन से स्पष्ट होता है "चावल" पत्नी का प्रतीक है तो "अन्य चीज" अन्य स्त्रियों का प्रतीक है। "खाने" का प्रतीक है "शारीरिक संबंध रखना।

साधारणतः "अकहानी" में कथा नहीं होती। अगर होती भी तो उसका कोई महत्व नहीं होता। मानवीय भावना की क्षीणता, घृणा, प्रेम की विडम्बना, परिवार का विघटन, विकृत काम रूप, अकेलापन, भय, विनाश का आतंक आदि भावनाओं के विभिन्न रूप अकहानी के कथ्य के धरातल पर अभिव्यक्त किया गया है। जिन्दगी के मूल्य इतनी तेजी से बदल रहे हैं कि झूठ और सच, सार्थक और निरर्थक के बीच रेखा खींचना असंभव हो गया है। व्यक्ति बाहर से जैसा लगता है वैसा अन्दर से नहीं होता और बिल्कुल उल्टा होता है। इन नकाबों मुखौटों के पीछे छिपे आदमी की खोज अकहानीकारों से की गयी है। इस प्रकार एक हद तक आदमी की वास्तविक पहचान ही अकहानी की भावभूमि रही है।

अकहानी का लक्ष्य टूटते सामाजिक मूल्यों के प्रति आसक्ति में नहीं, बल्कि इन्हें और भी निर्ममता के साथ तोड-फोडकर फेंकने में मुखर होता है। इस अकहानी में मानवतावादी, व्यक्तिवादी या समाजवादी दृष्टि को केन्द्र न बनाकर, व्यक्ति के जीवन की मूल्यहीनता के सत्य की सीधी अभिव्यक्ति हुई है।

---

1. कल्पना - अगस्त - 1968 - पृ. 41.
2. अब्बूरि छायादेवी कथलु {प्रयाणम् - पृ. 86} उषा पब्लिकेषन्स, हैदराबाद

" अस्तित्व-त्रास और अतिरंजित मृत्युभय के चित्रण का मुख्य कारण इन पर पड़ा अस्तित्ववादी प्रभाव है । अकहानी में चित्रित जीवन बोध अत्याधुनिक जीवन दृष्टि है । सार्त्र ने जिस प्रकार जीवन मुक्ति या स्वतंन्त्र्याकांक्षा को साहित्य सर्जन का समूल उद्दिष्ट घोषित किया है, अकहानी भी आत्मपीडन, संत्रास और पुंसत्वहीन नियति में " केन्द्रीभूत होकर बृहत्तर सत्यों का साक्षात्कार करना चाह रही है ।"[1]

" पुराने मूल्यों के अस्वीकार और नये मूल्यों की अनुपस्थिति में मूल्यशून्यता की जो स्थिति आ जाती है, उसकी अभिव्यक्ति की शुरुआत " अकहानी " से ही होती है । ईश्वर, धर्म, परम्परा को न केवल नकारा गया । अपितु श्रम, त्याग, सत्य और परोपकार आदि धार्मिक लक्षणों की भी उपेक्षा अकहानियों में की गयी । प्रेम के संदर्भ में अकहानी में यौन संबंधों को अत्यधिक महत्व दिया गया है । इसका मुख्य कारण उनका अस्तित्ववादी दृष्टिकोण से प्रभावित होना है । प्रेम और यौन संबंधों में सार्त्र ने यौन संबंध या सेक्स को अपेक्षाकृत मूल्यवान समझा है, लगता है, प्रेम के सिलसिले में अकहानी सार्त्र आदि के अस्तित्ववादी विचारों से प्रभावित है ।"[2]

प्रेम के अर्थ में दैहिक संबंधों को चित्रित करती हुई कई कहानियाँ अकहानी-आन्दोलन के तहत लिखी गयी है, इनमें से अत्यधिक अतिरंजित तन्मयतापूर्वक यौन संबंधों का विस्तारपूर्वक वर्णन करती हुई कुछ कहानियों में लेखकीय नैतिक दृष्टि की अवहेलना हुई है । अकहानी को इसी अनैतिक दृष्टि के कारण अपने अंतिम समय में यह आलोचना की शिकार हुई, सभी मूल्यों को नकारकर यौन संदर्भों में रस लेने में ही अकहानी क्षीण गयी ।[3]

अकहानीकार, स्वयं भोक्ता बनकर कथ्य प्रस्तुत करता है, उसका कथ्य नायक का न होकर स्वयं कहानीकार का होता है । उसमें पात्रों के नाम-गाँव का परिचय न होकर मात्र प्रतीक संकेत दिया जाता है ।

---

1. हिन्दी कहानी : दो दशक की यात्रा - सूर्यप्रसाद दीक्षित - पृ. 205.
2. हिन्दी कहानी : एक अन्तर्यात्रा - वेदप्रकाश अमिताभ - पृ. 52.
3. हिन्दी कहानी का अन्तर्यात्रा - पृ. 54.

अकहानी ने सामाजिक संघर्षों से सम्बन्धित तथ्यों की पूर्णत: उपेक्षा की है । मध्यवर्गीय स्त्री-पुरुषों के यौन प्रसंगों और सन्दर्भों के चित्रण में अश्लीलता और घिनौनेपन की बू आती है । अधिकांश कहानीकार सस्ती लोकप्रियता के मोह में पड़कर अश्लील चित्रण का सहारा लेकर पाठकों में चर्चा का विषय बनने लगे हैं । यदि कोई भी कहानीकार ने, अपनी कहानी में एकाद बी भत्स गालियों का और अश्लील शब्दों का प्रयोग कर दिये तो वह भी व्यापक चर्चा का विषय बन जाता है । लोग कहानी पर ध्यान न देकर उन शब्दों की ही अधिक चर्चा करने में रस लेते हैं । इस के लिए एक उदाहरण इस प्रकार है -- कृष्णासोबती की एक कहानी प्रकाशित हुई थी " यारों का यार " । इसकी चर्चा व्यापक रही क्योंकि कहानी में लेखिका ने कुछ गालियों का प्रयोग किया था । चर्चा तो सिर्फ उन गालियों की ही रही, कहानी की नहीं, जबकि यह कहानी इतनी सशक्त और कलापूर्ण है कि पढ़ते समय उन गालियों की ओर ध्यान तक नहीं जाता । लेकिन अधिकांश पाठकों ने चर्चा उन गालियों की ही की, कहानी की संवेदना के सम्बन्ध में लगभग मौन रहे ।

इसी प्रकार कृष्णबलदेव वैद की " त्रिकोण ", " दूसरे बिस्तर " आदि कहानियों का कथ्य स्त्री-पुरुष के आदिम सम्बन्धों की ही अभिव्यक्ति है । निर्मल वर्मा की " परिन्दे " भी सेक्स से उपस्थित सांस्कृतिक विघटन की ही कहानी है । महेन्द्र भल्ला " एक पति के नोट्स ", रवीन्द्र कालिया " नौ साल छोटी पत्नी ", दूधनाथ सिंह " रीछ ", माहेश्वर " पेशाब " आदि कहानियों में स्त्री-पुरुष सम्बन्धों को सेक्स की भूमिका पर ही अभिव्यक्ति मिली है ।

इस नेपथ्य में तेलुगु की कहानियाँ हैं -- " रावकोंड विश्वनाथ शास्त्री " व्यायाम " ‡ सारा कथलु से एक कहानी ‡ नग्नमुनि " सिमेंटुसंतति " " पंदेंमुल्लु ", प्रभाकर मंदारा " सारे जहा से अच्छा ", शारदा अशोक वर्धन " पशु " वाकाटि पांडुरंगाराव " तप्पुकु काल्लु रावालि " अब्बूरि छायादेवी " प्रयाणम " आदि है ।

" सेक्स " व्यक्ति जीवन की ही एक बड़ी सशक्त प्रवृत्ति है। " सेक्स " सम्बन्धी जो भी दृष्टि अकहानीकारों से अपनायी गयी है, उसे स्वस्थ नहीं कह सकते। लेकिन यह प्रवृत्ति कहानी के क्षेत्र में, एक मोड़लाने में सफल रही है।

" अकहानी " में पुरानी पीढ़ी के लिए घृणा या तिरस्कार का कारण या तो मनोवैज्ञानिक स्तर पर घटित होता है या आर्थिक स्तर पर। " रोध " [दूधनाथ सिंह] " त्रिकोण " [कृष्णबलदेव वैद] " नौ साल छोटी पत्नी " [रवीन्द्र कालिया] आदि कहानियों में एक ओर दाम्पत्य जीवन में सतीत्व, पातिव्रत्य, एकपत्नीव्रत, यौन शुचिता जैसी अवधारणायें टूटते हुए दिखायी देते है तो दूसरी ओर विवाह संस्था की प्रासंगिकता पर अविश्वास प्रकट किया गया है। साथ-साथ विवाह संस्था की आवश्यकता पर प्रश्नचिह्न लगाया गया है।

अकहानीकारों की अनेक कहानियों में उच्छृंखल श्रृंगार का चित्रण और यौन स्वेच्छा आदि अनेक तत्व विवाह संस्था के विरुद्ध ही साबित होते है। अकहानीकार, " सेक्स " को विवाह के बंधन में बांधना नहीं चाहता। उनके अनुसार " स्त्री-पुरुष " एक होने के लिए " विवाह संस्था " की आवश्यकता नहीं है। " विवाह संस्था " को लेकर अनेक कहानीकार कहने लगे हैं —

राजेन्द्र यादव

" व्यक्ति में इतना साहस होना चाहिए कि अगर वह किसी से काम-सम्बन्ध रखे तो मन में " गिल्टी " न महसूस करे।"

कमलेश्वर

" मौजूदा स्थितियों में काम-सम्बन्धों की पवित्रता का उद्घोष करना मुझे गलत और व्यर्थ लगता है।"

मोहन राकेश

" दाम्पत्य संघर्ष बड़े जटिल होते हैं। पति-पत्नी जो दिन में लड़ चुके होते हैं, रात तक शान्ति-समझौता कर लेते हैं और अगले दिन वह समझौता फिर टूट जाता है।"

निर्मलवर्मा

" वर्जित सेक्स-सम्बन्ध विशेष परिस्थितियों में उचित माने जा सकते हैं।"

कृष्णबलदेव वैद

" विवाह फिलहाल आवश्यक है तब तक के लिए जब तक कोई और इससे बेहतर संस्था स्थान नहीं ले लेती है।"

महीपसिंह

" अब मान्यताएँ बदल रही हैं। अतः स्त्री-पुरुष सम्बन्धों में भी परिवर्तन हो रहा है।"

रमेशबक्षी

" फिलहाल भारत में नारी-पुरुष सहवास का कोई अन्य रूप विवाह जितना सुलभ या प्रचलित नहीं है।"

सुदर्शन चोपड़ा

" विवाह, व्यक्ति के लिए सर्वथा अनावश्यक है। विवाहेतर सेक्स-सम्बन्धों के बढ़ जाने से ही विवाह नाम की संस्था समाप्त हो सकेगी।"

रमेश उपाध्याय

" विवाह को मैं कानूनी वेश्यावृत्ति मानता हूँ ।"

कुछ महिला कहानीकारों के विचार --

कृष्णासोबती

" व्यक्ति की दृष्टि से विवाह एक अनावश्यक बन्धन है । इससे व्यक्तित्व का विकास अवरुद्ध हो जाता है । विवाह पूर्व और विवाहोत्तर सेक्स सम्बन्धों को उचित-अनुचित की बजाए स्वाभाविक कहना ज्यादा सही है ।"

मन्नु भण्डारी

" किसी भी प्रकार के सेक्स सम्बन्ध के बारे में सैद्धान्तिक रूप से अनुचित कुछ भी नहीं है ।"

मृदुला गर्ग

" किसी की निजी समस्या (सेक्स संबंधों की) को उचित-अनुचित की कसौटी पर परखना ही मैं गलत समझती हूँ ।

निरूपमा सेवती

" विवाह को व्यक्ति और समाज के लिए आवश्यक संस्था मानती हूँ । लेकिन फिर भी निजी स्वतन्त्रता से बढ़कर नहीं । यदि व्यक्तित्व की स्वतन्त्रता का हनन होता हो तो इस संस्था को मिटा देने में भी कोई दोष नहीं ।"

उपर्युक्त मन्तव्यों से स्पष्ट होता है कि विवाहसंस्था की आवश्यकता ही नहीं है। अगर विवाहसंस्था को होना है तो . ., सेक्स संबंधों में रुकावट नहीं डालना चाहिए। फलत: एक स्त्री अनेक पुरुषों से विवाह से पहले या बाद में भी सेक्स संबंध रख सकती है और ऐसे ही पुरुष।

" विवाहसंस्था " को छोड़नेवाली भावनाओं को फैलाने का मूल श्रेय पाश्चात्यों को है। कुछ हद तक बदली हुई आधुनिक सामाजिक परिस्थितियाँ भी कारण हो सकती है। इस नेपथ्य में कुछ उदाहरण इस प्रकार है --

शैलेश मटियानी की " प्रवृत्ति " कहानी में विवाहिता दीपा अपने विवाहित प्रेमी को अत्यन्त बेलाग लहजे में समझती है। " प्रेम " पति नाम के सज्जन से किया ही नहीं जा सकता है। उसी के शब्दों में "शादी के बाद प्रेम की भावना शायद ज्यादा गहराई से और साफ-साफ पहचानी जा सकती है। शादी से पहले तो यह बात स्पष्ट होती ही नहीं कि लोग वास्तव में प्रेम कर रहे हैं, या कि अपने आपको एक सामाजिक निर्णय के लिए तैयार कर रहे हैं।"[1]

दूधनाथ सिंह की कहानी " शिनाख्त " के " मैं " और " वह " का सम्बन्ध विशुद्ध देह भोग के स्तर पर कायम है। इस कहानी की पत्नी के लिए " पति " केवल हल्के जुकाम की तरह अपना अहसास बनाये रखनेवाला जीव है। वह खूँटी पर टँगी अपने स्लीपिंग गाउन पर पति के उल्टे टँगी बुशशर्ट को देखकर अपने प्रेमी से कहती है -- " यह सच है। हमारे कपड़े ही अब एक दूसरे का आलिंगन करते हैं।"[2]

गंगाप्रसाद विमल की कहानी " सिद्धार्थ का लौटना " में कहानीकार एक निहायत दुःखी आदमी " सिद्धार्थ " के पलायन को एक व्यापक सन्दर्भ देता हुआ लिखता है --

---

1. सारिका - अगस्त, 1965 - पृ. 88
2. विग्रह - फरवरी, 1967 - पृ. 71.

"अभी न जाने कितने ऐसे लोग होंगे, जो कई-कई सालों से अपनी बीवियों के व्यवहार से तंग आकर भागने की सोचते होंगे। हम लोगों के दोस्तों में चार-पाँच ऐसे लोग जरूर हैं, जिन्हें घर से भाग जाना चाहिए था।"[1]

इसी तर्ज में तस्वीर का दूसरा रूप भी देखा जा सकता है कि अभी न जाने कितनी ऐसी पत्नियाँ होंगी जो पतियों के व्यवहार से तंगआकर भागने की सोचती होंगी लेकिन संस्कारों की पकड़ और मजबूरी का अहसास ही शायद उन्हें रोकते होंगे।

दाम्पत्य सम्बन्धों के इर्द-गिर्द बुनी गयी कहानियों से यह स्पष्ट होता है कि संयुक्त परिवार विघटित होने के बाद जिस स्वतन्त्र परिवार का निर्माण हुआ था, वह भी टूट रहा है। आर्थिक विवशता, जटिल मनःस्थिति, रुचियों की भिन्नता, अनमेल सम्बन्ध, रागात्मक लगाव की समाप्ति आदि का मिला-जुला दबाव दाम्पत्य जीवन को खोखला कर रहा है। आज के कहानीकार को उस खोखलेपन का पूरा-पूरा अहसास है। वह दाम्पत्य सम्बन्धों की टूटन को अपनी कहानियों में बेहद तटस्थता और ईमानदारी से सामने लाया है। वह एक ऐसी जिन्दगी से पहचान कराने की कोशिश कर रहा है, जिसके दो किनारे दूर और दूर होते जा रहे हैं और उन्हें जोड़नेवाला जल सूखता जा रहा है।

तेलुगु की कहानियों में दाम्पत्य संबंध को स्वीकार किया गया है। वैवाहिक जीवन की पवित्रता तेलुगु कहानियों में देख सकते हैं। अशोकवर्धन (पत्नी) प्रभाकर मंदारा (सारे जहाँ से अच्छा), तिलक (परिवर्तना), शैलावीर्जु (रंगुटद्दाल) आदि कहानियाँ हैं।

---

1. सारिका, फरवरी - 1972 - पृ. 72.

हिन्दी और तेलुगु की कहानियों में [रीछ, दूधनाथ सिंह, नौ साल छोटी पत्नी - रवीन्द्रकालिया, त्रिकोण - कृष्णबलदेव वैद, परसु - शारदाश्रीनिवासन्, तप्पुकु कालुरावालि - वाकाटि पांडुरंगाराव, प्रायाणम अब्बूरि छायादेवी] एक ऐसा पुरुष या स्त्री प्रतीक बनकर आते है - जो एक दूसरे को खरीदकर या पाकर भोगने की वस्तु समझने लगे हैं। उनको " दाम्पत्य जीवन " या विवाह व्यवस्था के प्रति बहुत क्रोध है। अपनी यौनेच्छा या शारीरिक इच्छा को पूरा करना ही उनका मूल लक्ष्य रहा है। वे पूर्णतः आजादी से जीना चाहते हैं। अपने लिए पुरानी परंपरा, मूल्य और आचार-व्यवहार जो भी रुकावट डालना चाहते है उन सबको छोड देने के लिए भी तय्यार हो जाते हैं। कहानी में जो भी पुरुष या स्त्री का चित्र है वह मन से और तन से भी संपूर्ण आजादी से जीना चाहते हुए सामने आते हैं। ये कहानियाँ पूर्णतः पाश्चात्य प्रभाव से लिखी गयी हैं।

§इ§ सचेतन कहानी : उद्भव तथा नामकरण :-

सचेतन कहानी का प्रारंभ नवम्बर 1964 में प्रकाशित " आधार " के सचेतन कहानी विशेषांक के प्रकाशन से माना जाता है । इसके संपादक " महीपसिंह " । ये सिर्फ संपादक ही नहीं रहे बल्कि सचेतन कहानी के §प्रवर्तक§ सूत्रदार भी हैं। इस सचेतन कहानी आंदोलन को प्रारंभ करने का कारण स्पष्ट करते हुए महीपसिंह ने कहा - " नयी कहानी के अंदर जो अंतर्विरोध थे, उन्हें स्पष्ट करने के लिए और जीवन के प्रति जो सचेतन दृष्टि हम चाहते थे, जिसमें हम यह अनुभव करते थे कि जीवन को मात्र प्रदत्त वस्तु के स्तर पर नहीं जीना चाहिए बल्कि सक्रियता से भोगना और जीना-आज के मनुष्य की नियति है, उसे अपनी रचनाओं के माध्यम से हम रेखांकित करना चाहते थे। हमारे इस आग्रह को सचेतन कहानी का आधार माना गया और लोगों ने इसे उसी रूप में अपनाया ।"[1] अपनी बात को और स्पष्ट करते हुए कहा -- " सचेतन कहानी की बात ने हिन्दी में कहानी संबंधी चर्चा को व्यक्तिपरकता से मुक्त कर उसे पुन: वैचारिक धरातल पर प्रतिष्ठित करने का प्रयास किया ।"[2]

सचेतन कहानी : साहित्य के नया परिप्रेक्ष्य की चर्चा में राजीव सक्सेना ने सचेतन कहानी के स्वरूप को बहुत स्पष्ट किया । उनके अनुसार "सचेतन" शब्द से यथार्थ के प्रति, परिवेश के प्रति और जीवन के प्रति अपना एक विशेष दृष्टि का बोध होता है -- मनुष्य की चेतना का, सक्रियता का । दूसरे शब्दों में सचेतन कहानीकार मनुष्य को सर्वांग और सम्पूर्ण रूप से देखना चाहते हैं । राजीव सक्सेना कहते हैं -- " सचेतन कहानीकार देखता है कि आज के संक्रमणकाल में जब मूल्य विघटित होते जा रहे हैं, मनुष्य निष्क्रिय नहीं है । वह सक्रियतापूर्वक इस स्थिति से संघर्ष कर रहा है, जी रहा है और नये मूल्यों का सृजन कर रहा है । ये मूल्य आज व्यापक न भी हो किन्तु बीज रूप में जन्म ले चुके हैं । वे §कहानीकार§ आश्वस्त है कि संघर्ष

1· इतवारी पत्रिका - 5-8-1964 पृ· 11

2· आधार § सचेतन कहानी विशेषांक § नवम्बर 1964 - पृ· 12·

कैसा भी हो, मनुष्य मानवीय मूल्यों की रचना करके सम्मान जीवित रहने की प्रक्रिया नहीं छोड़ सकता । सचेतन कहानीकार आउट-साइडर से इन-साइडर होने के द्वन्द्वों को, अलगाव की स्थिति से लगाव की स्थिति की प्रक्रिया और उसके अन्तर्विरोध को, उसकी पीड़ा और विजय के सुख को समझने, परखने और चित्रित करने का प्रयत्न कर रहे हैं । मर्यादाओं के टूटने और पुराने मूल्यों के विघटित होने की पीड़ा को भोगने का रोमांटिक सुख पिछले दशक के लेखन में काफी व्यक्त हुआ है । सचेतन कहानीकार इस दृष्टिकोण के विरोधी है ।"[1]

डॉ॰इन्द्रनाथ मदान के विचारानुसार - " स्वातंत्र्योत्तर काल के विभिन्न कहानी आन्दोलन में सचेतन कहानी सक्रिय भावबोध की कहानी है । यह जिन्दगी की स्वीकृति की कहानी है ।"[2]

डॉ॰धनंजय के अनुसार -- " समाज और व्यक्ति के उपरी सम्बन्धों पर जितनी सूक्ष्मता से उसकी दृष्टि जाती है उतनी ही व्यक्ति के आन्तरिक संबंधों पर भी । व्यक्ति वहाँ रहता है और आवेगों - संवेगों के साथ व्यवस्थित भावभूमि में रहता है, किन्तु उसकी कार्यशीलता मात्र अपने व्यक्तिगत स्वार्थ की संकुचित पृष्ठभूमि में नहीं होती । भय और कुंठा उस पर आरोपित न होकर अपनी सहज गति में आवश्यक जीवन तत्व बन कर आते हैं ।"[3]

डॉ॰ नूरजहाँ जी के अनुसार -- " सचेतनता एक दृष्टि है जिसमें जीवन को जिया और सही रूप से पहचाना जाता है । सचेतन कहानी पलायनवादिता पर प्रहार कर संघर्ष को स्वीकार करती है । सचेतन कहानी मनुष्य को समग्र और सम्पूर्ण रूप से

1॰ कथा-क्रम (स्वाधीनता के बाद की कहानियाँ) डॉ॰देवेश ठाकुर - पृ॰ 16

2॰ हिन्दी कहानी - एक नयी दृष्टि - पृ॰ 46॰

3॰ डॉ॰ धनंजय, सचेतना (त्रैमासिक) अंक 4 (दिसम्बर, 67)

" भोग की प्रक्रिया नयी कहानी और सचेतन दृष्टि -- पृ॰ 62॰

देखना चाहती है । नयी कहानी वैचारिक दृष्टि से उदार है तथा सचेतन कहानी अनुदार ।"[1]

उपर्युक्त कथनों से सचेतन कहानी आन्दोलन का शुरुआत और एक स्पष्ट चित्र या स्वरूप सामने आता है ।

इस नेपथ्य में तेलुगु के सुप्रसिद्ध आलोचक सुदर्शन का कथन इस प्रकार है -- " चाहे वह कोई भी हो । पहले उसे अपनी बात पर विश्वास होना चाहिए । बाद में अपने काम-काज के जरिए उस विश्वास का निरूपण करना चाहिए । वही आन्दोलन के लिए नींव बन जायेगी ।"

कोलकलूरि इनाक कहते हैं -- " यथार्थता को एक कहानी में तथ्य, पात्र और भाषा के स्तर पर देख सकते हैं । तथ्य या विषय में यथार्थता है तो वह कहानी सजीव प्राणी है और पात्रानुकूल वास्तविकता रहे तो वह कहानी मजबूत अंगों का प्राणी है । भाषा में वास्तविकता है तो कहानी का रक्त खूब बहता है ।"[2]

सचेतन कहानीकारों ने इस आन्दोलन को नयी कहानी का विरोध करने के लिए खड़ा करने पर भी, उनकी चिंता शोर-गुल करके अपनी अलग पहचान बनाने की ओर अपनी स्थापना में थी । इसीलिए " अपनी पृथक सत्ता को स्पष्ट उजागर करने के लिए तथा संगठित होकर " सचेतन कहानी के नाम से एक आन्दोलन आरम्भ कर दिया । यह देखा जा सकता है कि इस आन्दोलन के पीछे एक दृष्टि थी, एक नया आधार था किन्तु उसका प्रारम्भ एक आन्दोलन के रूप में हुआ । इसीलिए अवसर का लाभ उठाकर बहुत-सी असंतुष्ट आत्मायें जुलूस में आ मिलीं । लेकिन यह स्पष्ट कहा जा सकता है कि इसकी शुरुआत भले ही अनेक असंतुष्ट आत्माओं के संगम से जुलूस बन

---

1. डॉ॰ नूरजहाँ " हिन्दी कहानी में यथार्थवाद " 1976 - पृ॰ 282।

2. आधुनिकान्ध्र साहित्य में सामाजिक चेतना -- आर॰आर॰ सुदर्शनम " सौम्या " उगादि सचिका - पृ॰ 128॰

गयी हो, किन्तु इस जुलूस में ऐसे लोग थे जो सचेतन कथा आन्दोलन की रचनात्मक और वैचारिक विशिष्टता और सार्थकता का अनुभव कर रहे थे और एक-एक कर जुलूस के छंट जाने पर भी इसे निष्ठा के साथ अपनाते रहे ।"[1]

(ई) सचेतन कहानी की प्रवृत्तियाँ :-

सचेतन कहानी ने यथार्थ के नाम पर एक ही किस्म की बातें कहने के स्थान पर विविध जीवन-संदर्भों और सम्बन्धों को उद्घाटित किया है । ऐसा करते समय सचेतन कहानीकारों ने एक जीवंत मानवलोक की रचना की है, जिसके प्रत्येक पात्र अपनी परिस्थिति का विवश दास-मात्र नहीं है । वह सब कुछ को भोगता हुआ भी उससे छूटने की तड़प अनुभव करता है । कील की मोना, लिपस्टिक के खन्ना, " लौ पर रखी हथेली की बेला " दरार के ध्यानसिंह आदि पात्रों में इस प्रकार के मानवीय प्रतिक्रियाएँ दिखायी पड़ती हैं ।

महीपसिंह कहते हैं " सचेतन एक दृष्टि है । वह दृष्टि, जिसमें जीवन जिया भी जाता है और जाना भी जाता है ।"[2] जीवन को भोगना मनुष्य की अपरिहार्य नियति है, वह इस जीवन को कैसे जिये ? -- दृष्टि की सचेतनता शायद इसका उत्तर है ।"[3]

इन कथनों से स्पष्ट होता है कि सचेतन कहानी जीवन को जीने और जानने की प्रक्रिया पर बल देती है । जीवन को जोड़कर चलती है । सचेतन कहानी के केन्द्र में "मानवजीवन" है । " सचेतनता " एक दृष्टि है जिसमें जीवन को जीया और जाना जाता है । " सचेतनता का अर्थ यही है कि लेखक व्यक्ति और उसके परिवेश की समस्त

---

1. हिन्दी कहानी : अंतरंग पहचान - डॉ. रामदरश मिश्र - पृ. 104 - 105
2. आधार - नवम्बर - 1964 - पृ. 12.
3. - वही -

विसंगति, तनाव और जटिलता को पहचानता हुआ, भोगता हुआ उसे चित्रित करते समय एक अर्थ देना चाहता है। निरर्थक ढंग से या निजी रुचि अरुचि से प्रेरित होकर जो रचनाकार यथार्थ के बीभत्स और अश्लील अंशों को उपस्थित कर देते हैं वे अपनी रचना को सार्थकता नहीं प्रदान कर पाते, इसीलिए वे अपने को या अपने सृजन को औरों से जोड नहीं पाते।"[1]

सचेतन कहानीकार अपने परिवेश में जो कुछ भी घटित होता है, उसके वे मात्र दर्शक या पीडित और मजबूर भोक्ता ही नहीं है, वे उसके सक्रिय सहभागी है। वे जीवन को ढोते नहीं, जीते हैं ... । सचेतन लेखक अपने सामाजिक परिवेश में सहज और सम्बद्ध होकर जीते हैं। चारों ओर व्याप्त विघटन और मूल्यहीनता को वे अजूबा नहीं मानते हैं कि उसमें बौराकर " हाय, यह क्या हो गया है ? " की मुद्रा बनाये या " सब कुछ विघटित होकर अब कुछ भी नहीं बचा है, कहकर बस अपने " मैं " में सिमट जाएँ। परिवर्तित परिवेश को स्वीकारना और जीना ही सचमुच सक्रिय होकर जीना है।"[2]

सचेतन कहानी की एक विशेषता है " सहजता "। सहजता आती है अपने परिवेश के जीवन्त बुनियादी यथार्थ की सही पहचान से। जो यथार्थ है वही सहज है। इस सहजता की प्राप्ति सतह पर की घटनाओं के संकलन से नहीं होती, वरन् बदलते हुए युग और परिवेश के दबाओं से बनते बिगडते मानव सम्बन्धों मूल्यों और चेतनाओं के संक्रान्त रूप की सही पहचान से होती है। यह पहचान अनायास प्राप्त हो जाती है ऐसी बात नहीं, उसकी तलाश भी करनी होती है। इस तलाश के लिए लेखक का परिवेशजन्य अनुभव और मानवीय विवेक दृष्टि दोनों ही आवश्यक होते है। इसीलिए एक ही माहौल में पलनेवाले एक अनुभव और दृष्टिवाले ‖ या दृष्टिहीन लोग ‖ जब मनुष्य को नितांत निर्वीर्य असहाय के रूप में या पशु के रूप में प्रस्तुत करते हैं या कुछ सोसायटी गर्ल्स के स्थूल क्रिया-कलापों और घटनाओं को अंकित करते हैं तब दूसरे लोग सामाजिक अनुभव और सामाजिक विवेक दृष्टि को लेकर परिवर्तित युग के अधिक बुनियादी सत्यों

---

1. डॉ. रामदरश मिश्र - हिन्दी कहानी : अंतरंग पहचान - पृ. 108.
2. डॉ. महीपसिंह - संचेतना, दिसम्बर 1981 - पृ. 92.

की तलाश करते है । सामाजिक विघटन, जुगुप्सा, विसंगति, यौन विकृतियों आदि को तीखी पहचान के बावजूद उनके भीतर से अधिक मानवीय मर्म को उद्घाटित करते हैं। सचेतन कहानी की सहजता इसी अर्थ में लक्षित होती है ।" इस आन्दोलन ने कृत्रिमता से लिखी जानेवाली कहानियों को यथार्थ की सही पहचान की दिशा में ले जाने के लिए कोशिश की ।

सचेतन कहानियों के पात्र जो हैं वे जीवन्त है । समकालीन समस्याओं से संघर्ष करते हुए, सारे सुख-दु:ख, विसंगतियों, विद्रूपताओं और शोषण के संसार में अपने पौरुष एवं सामर्थ्य से चलता है । वे पात्र कभी भी तटस्थ नहीं रहते । वे अपनी प्रतिक्रिया हमेशा व्यक्त करते हैं और यही प्रतिक्रिया और आत्मसंघर्ष ही उनकी जीवन्तता का संकेत है । "उन्होंने [सचेतन कहानीकारों ने] अकेलेपन, आत्मनिर्वासन, अजनबीपन आदि को मूल्य के रूप में नहीं प्रस्तुत किया । मूल्याभिव्यक्ति की दृष्टि से बहुत "बोल्ड" न होते हुए भी उनका महत्व इसलिए माना जायेगा कि ये समाज निरपेक्ष मूल्यों को प्रोत्साहन देनेवाली कहानियों के विरोध में लिखी गयी ।"[1]

इस प्रकार अपने समय की हिन्दी कहानी को कहानीकारों ने एक स्वस्थ दिशा की ओर ले जाने की कोशिश की ।

---

1. डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ - हिन्दी कहानी - एक अंतर्यात्रा - पृ. 60.

§ उ § सहज कहानी :-

जब तक " नयी कहानियाँ " मासिक पत्रिका के संपादक के रूप में भैरवप्रसाद गुप्त, कमलेश्वर तथा भीष्मसाहनी रहे तब तक यह पत्रिका नयी कहानी आन्दोलन की विशेषता का सशक्त मंच बनी रही । लेकिन 1968 में " नयी कहानियाँ " पत्रिका का स्वामित्व श्री अमृतराय से खरीद लिया गया और वे अपने संपादन में इसे इलाहाबाद से प्रकाशित करने लगे । " नयी कहानी आन्दोलन " के बारे में अमृतराय इस प्रकार कह रहे हैं —

" नयी कहानी का आन्दोलन जो अपने तमाम शोर के बावजूद इस तरह देखते देखते बिखर गया, उसकी एक वजह जहाँ यह थी कि उसने एक नयी दुकानदारी और एक नयी गुटबंदी का रूप ले लिया, वहाँ एक बड़ी वजह यह भी थी कि उसने अपने नयेपन को हवा में फैलनेवाली आकाशबेल समझा जिसका अपने समाज की जिन्दगी से और अपने पहले के कथा साहित्य से कोई लगाव नहीं है ।"[1]

सहज कहानी का प्रवर्तक श्री अमृतराय की दृष्टि में कहानी सुनते एवं पढ़ने में अत्यधिक आनन्द आता है और उनका विचार है — " आदमी ने जब से होश संभाला तब से वह किस्सा-कहानी कहता-सुनता आ रहा है । तरह तरह की कहानियाँ । मतलब की कहानियाँ, बेमतलब की कहानियाँ[2] और उन्होंने यह भी कहा है —

" अब भी कहानियाँ असल में दो ही तरह की होती है — मतलबवाली यानी वह कहानियाँ जो कहानी का मजा देने के साथ-साथ कुछ सीख भी देती है ताकि हमारे मन की गंदगी कुछ कम हो जायें और हम ज्यादा अच्छे आदमी बन सकें और दूसरी बेमतलब कहानी जिसका एक ही मतलब है और वह भी कोई छोटा मतलब नहीं है, कहानी सुनाकर मनोरंजन करना ।"[3]

---

1. अमृतराय : चित्रफलक विचारणीय - पृ॰ 6.
2. सहचिंतन - अमृतराय - पृ॰ 115.
3. - वही -

इस पत्रिका (नयी कहानियाँ) के संपादकीय " सहज कहानी " शीर्षक के अंतर्गत वे लिखने लगे । इससे कहानीकारों को और साहित्यकारों को ऐसा लगा कि वे सहज कहानी नाम से एक नये आन्दोलन का सूत्रपात करने जा रहे हैं । उन्होंने अपने संपादकीय में घोषणा की कि -- " नयी कहानी के आन्दोलन की उपलब्धियों का लेखा-जोखा इतिहास अपने समय से निश्चित करेगा, लेकिन इतना तो साफ है कि नयी कहानी की खोज में सहज कहानी खो गयी ।"[1]

सहजकहानी का स्वरूप विश्लेषण करते हुए कह रहे हैं -- " वास्तव में सहज-कहानी से मेरा अभिप्राय किसी खास लेखन शैली-प्राचीन एवं अर्वाचीन दोनों ही प्रकार की कहानियों से नहीं है और उनका कहना है कि सहज कहानी से हमारा अभिप्राय उस मूल कथारस से है जो कहानी की अपनी खास चीज है ।"[2]

आधुनिक भावबोध की संज्ञा में श्री अमृतराय कहते हैं -- " सहज कहानी से हमारा अभिप्राय इनमें से किसी एक से या दो से या दस से नहीं बल्कि इन सबसे और इनसे अलग और भी बहुत से है क्योंकि सहज कहानी से हमारा अभिप्राय उस मूल कथारस से है, जो कहानी की अपनी खास चीज है, और जो बहुत सी " नयी कही जानेवाली कहानियों में एक सिरे से नहीं मिलता ।"[3] और अमृतराय यह भी कहते हैं --

" जिस कहानी में सहज कथारस नहीं है वह किसी दिन लोकप्रिय नहीं हो सकती और न साहित्य में स्थायी प्रतिष्ठा ही पा सकती है, क्योंकि आदमी हर चीज से विद्रोह कर सकता है, हर चीज को छोड सकता है, अपने आंतरिक स्वभाव को नहीं ।"[4]

अतः कहानी सम्बन्धी सभी प्रयोग इस सहज कथारस को ध्यान में रखकर ही सार्थक हो सकते हैं ।

---

1. अमृतराय - संपादकीय - नयी कहानियाँ - मार्च, 1968 - पृ. 5.
2. अमृतराय - आधुनिक भावबोध की संज्ञा - 1968 पत्रिका के संपादन में -पृ.91-92
3. अमृतराय - आधुनिक भावबोध की संज्ञा - पृ. 91-92-93.
4. - वही -

अमृतराय सहज कहानी को परिभाषित करना कठिन मानते हैं और कहते हैं - " सहज वह है जिसमें आडंबर नहीं है, बनावट नहीं है, ओढ़ी हुई पद्धति {मैनेरिज्म} या मुद्राकोष नहीं है, आईने के सामने खड़े होकर आत्मरति के भाव से अपने अंग-प्रत्यंग को अलग-अलग कोणों से निहारते रहने का प्रबल मोह नहीं है।"[1]

अमृतराय ने अपने संपादकीयों में सहज कहानी के विषय में जो कुछ लिखा, उसका निष्कर्ष है कि --

1. सहज कहानी के कथाकार की कथा दृष्टि में मूल रस होता है। बिना कथारस के सफल कहानी की रचना संभव नहीं है।

2. सहज कहानी के लेखक का " विषय " ही उसकी रचना का सहज होता है। लेखक के लिए सहज योग की तरह सहज स्थिति भी आवश्यक है तथा रचना की प्रेरणा उसे सहज स्थिति से ही मिलती है। इस सहज स्थिति में, स्वानुभूति और परानुभूति में कोई विरोध नहीं होता। पिंड में ब्रह्मांड को देखना भी यही चीज है। यही सहज स्थिति है पर इस सहज को पाना सरल नहीं है।[2] इसे पाने के लिए अमृतराय परंपरा-संबध्द सहज-भूमि-सहज संवेदना की भूमि आवश्यक मानते हैं।

3. सरसता ही सहज कहानी का एक मात्र गुण नहीं, प्रत्युत उसे " अच्छा ", " प्राणवान " और " सशक्त " होना भी आवश्यक है। उनकी दृष्टि में सहज कहानी वह है जो " हंसा सके, रुला सके।"[3] यह हृदयग्राहिता की सहज कसौटी है तथा सहज कहानी अनुकरणमूलक नयेपन की समर्थिका है।

---

1. नयी कहानी के विविध प्रयोग - पांडेय शशि भूषण " शीतांशु " पृ. 38
2. अमृतराय - संपादकीय - नयी कहानियाँ -- अप्रैल, 1968 - पृ. 6.
3. - वही - मई, 1968 - पृ. 5.

" सहज कहानी " व्यवस्था और परिवेश के प्रति विरोध और क्षोभ की कहानी है । " सेक्स " के दुरुपयोग और इसकी असामान्य स्थितियों के चित्रण का सहज कहानी विरोध करती है । पश्चिमी आधुनिकता के विष को बगैर कान-पूँछ हिलाये पी लेने की प्रवृत्ति का सहज कहानी समर्थन नहीं करती । पतनशील समाज के पतनशील मूल्य उसे स्वीकार्य नहीं है ।

सहज कहानी का आन्दोलन इस पत्रिका के संपादकीयों तथा अमृतराय तक ही सीमित रहा । सुधा अरोडा जैसे एका कहानीकार ही इसे अपना समर्थन दिया ।

सहज कहानी की चर्चा ने स्वाभाविक ही कहानी पढ़नेवाले पाठकों और कहानी-कारों का ध्यान आकृष्ट किया और उन्होंने अमृतराय को कुछ पत्र भी भेजे जिनमें कुछ जिज्ञासायें और शंकायें भी थी तथा उनके आवश्यक अंशों को प्रकाशित करके, उनका समुचित समाधान भी अमृतराय ने प्रस्तुत किया है ।

अमृतराय के शब्दों से स्पष्ट होता है कि सहजकहानी आन्दोलन का मूल लक्ष्य अच्छी कहानियों को प्रस्तुत करना ही है ।

(अ) दिगंबर साहित्य :-

तेलुगु साहित्य में " दिगंबर साहित्य " 1965 से 1968 तक लगातार तीन साल तक, तीन संग्रहों से चलाया गया। " आन्दोलन " है। इसकी हिन्दी की " अकहानी " के संदर्भ में तुलना कर सकते हैं। " विद्रोह " प्रकट करनेवाले दिगंबर कवियों की पंक्तियाँ इस प्रकार है ---

" हे पंडित, रिकार्ड की तरह मुँह मत खोलो ।
नवसृष्टि को दूर मत करो
भावकवियों का नपुंसक हावभावों को चुनौती ।
अभ्युदय कवि अफीम खाकर सो गये हो ।
नयागरा जलपात में न कूद सकनेवाला
ओ भाई। गुडबाई।
आप सब को सलाम, आलेकुम
वचन नहीं, कविता कुछ भी नहीं ।

अपनी मन मर्जी से प्राचीन काव्य प्रबंधों को ही फिर लिखनेवाले पंडित कवियों को, नवसृष्टि के प्रति प्रेम दिखानेवाले नवसाहित्यिक सृजकों को, विशिष्ट घटनाओं को स्थान देनेवाली भावकवितायुग को, उसका मूल कवियों को, नवसमाज का निर्माण को ही साँस की तरह लेनेवाले मार्क्सवादियों को, गद्य को एक प्रमुख साधन माननेवाले वचन कवियों को आदि सब को मिलाकर अपनी गालियों से आशीर्वाद देनेवाले दिगंबर कवियों ने पूरे साहित्यिक मार्गों को व्यर्थ मानकर, कहकर साहित्यिक स्तब्दता को विच्छेद करने के लिए कोशिशें कीं। यह आन्दोलन, आदमी की नीचता और स्वार्थ को उसकी बराबर भाषा में ही व्यक्त किया। मानवीय मूल्यों को प्रतिष्ठित करना और रक्षा करना दिगंबर कवियों का लक्ष्य रहा। उनकी रचनाओं में आन्तरिक तौर पर दिखायी देनेवाली, है " मानवता " ।

दिगंबर रचनाकारों का [कवियों का] आगमन एक अस्तव्यस्त, तितर-बितर सामाजिक वातावरण में हुआ । 1962 में चीन के आक्रमण से समाज में प्रकट... या अप्रकट रूप में अति आवश्यक परिस्थिति बढ़ने लगी । बेकारी समस्या बढ़ने लगी । राष्ट्रीयनेता नेहरू का स्वर्गवास, पाकिस्तान की ओर से युद्द की स्थिति आदि सब ने जनता में " भय " को उत्पन्न किया । समाज में एक तरह से अराजकता फैलने लगी । ऐसी स्थिति में -- केशवराव, यादव रेड्डी, कम्मिसेटि्ट वेंकटेश्वरराव, वीरराघवाचारि, बद्देम बास्कर रेड्डी, मनमोहन सहाय जैसे असली नामों से रहनेवाले कवि, गुप्तता से नग्नमुनि, निखिलेश्वर, महास्वप्ना, ज्वालामुखि, चेरबंडराजु, भैरवय्या नामों को रखकर अपनी अपनी रचनाओं से साहित्य के क्षेत्र में एक आन्दोलन मचाने में लगे ।

1965 में दिगंबर कवि अपने प्रथम संग्रह की प्रस्तावना में अपने लक्ष्यों को इस प्रकार स्पष्ट किया -- " यश, धन लोहे के जूतों के नीचे गिरकर दबकर अंतिम साँस से मरनेवाला आपका असली रूप कभी, किसी न किसी दिन देख ले ? आप जो जीवन जी रहे है वह आपका नहीं है । यह घूँघट नहीं तो क्या होगा ? आजादी से असली जीवन जीने की कोशिश करने से क्या होगा ? ..... तुम नहीं हो । तुम्हारा अधिकार नहीं है । तुम्हारी हैसियत नहीं है । तुम्हारी धोती के कोने में जरी नहीं है । चौबीस घंटे मेकप करनेवाली तुम्हारी घूँघट नहीं है । तुम्हारी पत्नी, बच्चे, तुम्हारे चारों ओर के लोग, तुम्हारी अंतिम क्षणों में तुम्हें धोखा देते है ।" किसी पर भी यकीन मत रखो । तुम्हारे अन्दर, तुम्हारे घूँट के अन्दर, इस छल के कोने में रहनेवाला तुम्हारी असली रूप, तुम्हारा अपनापन पर यकीन रखो । ये चार मिनिट सुख से जीओ । तब तुम जान लोगों कि इस घूँघट ने तुम्हें कितना व्यर्थ बना दिया । एक बात याद रखो । इतने लोगों के बीच, तुम अपने आपको फाडकर इतने घूँघटों के बीच, साँस न लेने देनेवाली इस जिन्दगी की लड़ाई के बीच तुम हमेशा अकेले हो । जीवन और मौत के बीच लडनेवाले सैनिक हो ।"

संसार में दिखायी देनेवाली बुराई को पूरी तरह गालियाँ देकर उसे गाने की और उसमें परिवर्तन लाने की कोशिश ही इन रचनाकारों की कोशिश है । इसीको भी कहते हैं ।

इसलिए उनकी कोशिश अपना वैयक्तिक दृष्टि कोण का है । गुरजाडा से अभ्युदय रचनाकारों तक आयी हुई सामाजिक चेतना इन दिगंबर रचनाकारों का लक्ष्य नहीं रही है । लेकिन द्वितीय संग्रह के प्रकाशन में उनकी दृष्टि समाज की ओर मुडने लगी । तीसरा संग्रह जो 1968 में प्रकाशित किया गया उसमें धीरे-धीरे मार्क्सवाद की ओर झुकने की सूचनायें दिखायी देने लगीं ।

1965 अक्तूबर 31 को धर्मयुग पत्रिका में दिगंबर रचनाकार अपने लक्ष्यों की जानकारी देते हुए एक लेख को प्रकाशित करने से, यह लोगों की दृष्टि में आयी । आन्दोलन तेज होने पर " चन्द्र , इस्माइल " आदि युवक दिगंबर (कवियों) रचनाकारों के प्रभाव में आ गये । साहित्य अकादमी का अधिवेशन जब सारस्वत परिषद्, हैदराबाद में हुआ तब से दिगंबर रचनाकार, बडों के आचार-व्यवहार की समीक्षा करते हुए विज्ञापन पत्र छपाकर खुद बाँट लिये । इस आन्दोलन के कार्यक्रम को चरमदशा कह सकते हैं । दिगंबर कवियों के बारे में विश्वनाथ सत्यनारायण जी कहते हैं —

" ये कौन हैं मुझे नहीं मालूम "

साथ-साथ इन दिगंबर कवियों को गालियाँ देनेवाले कवियों की तालिका में जोड दिये । लेकिन ऐसे आलोचकों से भी आगे बढ़कर अग्रसर हो गये । ज्योति, आन्ध्र ज्योति, भारती जैसी पत्रिका. उनके आन्दोलन को संपूर्ण सहयोग दिया[1] । जयश्री पत्रिकाने इन को आरती दी । इनको साम्यवादी दृष्टिकोण को देखकर " ज्वाला " अपने में मिलाने की कोशिश की ।[2]

---

1. 1965 दीपावली कृष्णा पत्रिका- इन्टर्व्यू
2. 1969, मार्च 28 अंक

इस नेपथ्य में हिन्दी में प्रमुख अकहानीकार गंगाप्रसाद विमल कहते हैं -- " अकहानी [दिगंबर कहानी या विलोम कहानी], कहानी की धारणागत प्रतीक से अलग एक अस्थापित कथाधारा है जो कहानी के सभी वर्गीकरणों, मूल्यांकन के आधारों और पूर्व समीक्षाओं को अस्वीकार करती हैं। "[1]

अमृतराय इस प्रकार कहते है -- " अपनी ओर से हम इतना ही कहना चाहते हैं कि हम कोई नया आन्दोलन नहीं छेड़ना चाहते। आन्दोलन को यों ही कुछ कमी नहीं है, एक बाढ़ सी आयी हुई है - असल चीज एक ही है, अच्छी कहानियाँ लिखी जायें। "[2]

श्री श्री ने इनको देखकर आनंदित होकर कहा -- " इनसे नया आन्दोलन शुरू होकर वह जनता के आन्दोलन के लिए अग्रसर हो सकती है। "[3]

ऐसा कहना दिगंबर कवियों को " तुर्रा " जा [कलंगी] लगा। यह पहचान आंदोलन की प्रगति के लिए स्पष्ट चिह्न है। ज्योति. के संपादक कहते है -- " तेलुगु [कवितत्व] साहित्य में भी " क्रान्ति " आनेवाली है उसके लिए महाकवि श्री श्री के बाद के सूत्रधार है दिगंबर कवि। "[4]

---

1. समकालीन कहानी : विश्व और दृष्टि - सं. धनंजय [लेख]
   " जीवन दृष्टि का परिप्रेक्ष्य " लेखक गंगाप्रसाद विमल - 1960 - पृ. 166
2. अमृतराय - आधुनिक भावबोध की संज्ञा - पृ. 98.
3. आन्ध्र प्रभा 1969, मार्च 28
4. दो 1965 दीपावली

(आ) तत्व परिशीलन :-

दिगंबर कवियों पर अतियथार्थवाद, डाडाइज्म, अराजकवाद, बीटल्स और यांग्रिएंगमन के आन्दोलन का प्रभाव रहा । इससे ऐसा नहीं मानना चाहिए कि " ये दिगंबर कवि, आन्दोलनकारों से मिल गये । " मार्क्सवादी " वर्ग कलह तत्व को मेरुदंड के रूप में लेकर, आन्दोलन बनाकर आगे बढे । इसीलिए टी·आँजनेयुलु कहते है -- " इनमें सीमा नहीं है लेकिन सच्चापन है । आजकल के व्यवस्था को कचरा को जड से निकालकर नित्य नूतन महान् व्यवस्था का आगमन चाह रहे हैं । "[1] इस प्रकार दिगंबर कवि घोषणा भी कर दिये ।

ज्वालामुखी की कथन से स्पष्ट होता है -- मन का अकेलापन, अस्तित्व जैसे अमूर्त भावों को लेकर सार्त्रे के अस्तित्ववाद को प्रमुख स्थान दिये थे । दिगंबर रचनाकार कहते हैं -- " सच में अस्तित्व है भौतिक आनंद के साथ-साथ मन को भी हमेशा सचेतन रखकर, सबके साथ रहकर जीवन बिताना है -- सचेतन आत्मा, तृप्ति. के साथ जीवन चलाना ही सच में अस्तित्व है । "[2]

ज्वालामुखी की कथन से स्पष्ट होता है कि मन का अकेलापन, अस्तित्व जैसे अमूर्त भावों को लेकर सार्त्रे को अस्तित्ववाद को प्रमुख स्थान दिये थे । दिगंबर रचनाकार कहते हैं -- " सच में अस्तित्व है। भौतिक आनंद के साथ साथ मन को भी हमेशा सचेतन रखकर, सब के साथ रहकर जीवन बिताना है ··· सचेतन आत्मा तृप्ति: के साथ जीवन चलाना ही अस्तित्व है ।"

1· दिक्कु 30, संपुटि 2 में " हम क्या चाहते हैं ? "

2· आन्ध्र प्रभा - दैनिक (13·11·95) साहिती गवाक्ष से

3· आन्ध्र प्रभा - साहिती गवाक्ष (13·11·95)

उनके कथनों से यह भी स्पष्ट होता है कि पेट को भूख मिटाने के लिए खाना, बच्चों को पैदा करना और कुछ न कुछ या किसी न किसी काम करते रहना ऐसा जीवन पशु की जिन्दगी से भी हीन है । अपने लिए जीने की जिन्दगी जिन्दगी नहीं है ।

आन्ध्रवासी दिन ब दिन कायर या नपुंसक होने के ये कारण बताये गये हैं —

1. भाषण देनेवाले चालाक नेता वर्ग का होना ।
2. विधवा युवतियों को चाहनेवाले बाबा वर्ग का होना ।
3. चमड़े का व्यापार करनेवाले, सिनेमा हीरो कहलानेवाले तरू के हिजड़ों का होना ।
4. इतने कचरे को देश में डालनेवाले पत्रिकायें और संपादक वर्ग का होना ।
5. राजनीतिक के चालाक वर्ग और सिनो हिजड़ों के आँखों की इशारों से साहित्य अनाथ को देनेवाली इनाम के लिए पत्रिकाओं में उल्टियां करनेवाले रचनाकार का होना ।

दिगंबर कहानीकारों (कवियों) की अश्लीलता का चित्र कुछ इस प्रकार है —

1. मेरे शुक्र भर रेडियों धार्मिक क्या है ।
2. सुब्बलक्ष्मी की लज्जा गगन (आकाश) को, मेरी पेट की हुँडी के बीच दिन काटता नहीं ।
3. तृष्णा हुँड की तरह बढ़ गयी ।
4. पेट में ही पूजा द्रव्य गिरा लिया ।
5. तुम्हारे दिमाग को कीड़ा खा गया – तुम्हारे अंग सड़ गये – तुम्हारा मन दिशा खज़ाना बन गया ।

---

1. हम क्या चाहते हैं (संग्रह)

अन्य आन्दोलनों की तरह यह आन्दोलन भी 1970 के बाद कालगर्भ में मिल गया । चेरबंडराजु, एक क्रान्तिकारी रचनाकार के रूप में जीवन बिताकर कम उम्र में ही चल बसे । उनकी रचनाओं में " क्रांति " के नेपथ्य में विश्वमानवता का दृष्टिकोण है । कौम्मसेट्टि वेंकटेश्वर राव तो साईबाबा का भक्त बन गये । अन्य साहित्यकार या दिगंबर कवि मार्क्सवाद से प्रभावित होकर " विरसम " माने क्रांतिकारी लेखक संघ के सदस्य बन गये ।

दिगंबर साहित्यकारों के या कवियों में नग्नमुनि एक ऐसा रचनाकार है -- जिन्होंने कविता ही नहीं बल्कि कहानियों की रचना भी की है । वे, कुछ हद तक कहानी क्षेत्र में हलचल मचाने में सफल रहीं । उन कहानियों को " विलोमकथलु " नाम से देख सकते हैं । दिगंबर साहित्यकारों की विशेषतायें कुछ इस प्रकार हैं --

1. गालियों के अन्तर्गत स्त्रियाँ, अंगाग निर्माण और विकलांगों को अमानवीय धरातल पर स्पष्ट करना ।

2. इनका दृष्टिकोण " समकालीन जीवन " से होने पर भी इनमें मार्क्सवाद और अस्तित्ववाद के अनेक लक्षण होना ।

3. मौलिकता को प्रमुख स्थान देकर अनुवादों को और पाश्चात्य प्रभाव को बिना कारण बताये अस्वीकार करते रहना ।

(इ) अतिनव्य साहित्य :-

अतिनव्य साहित्यक दृष्टिकोणों को आर्थिक और शाब्दिक तौर पर ण करने से निम्न तत्व सामने आते हैं --

1. मानव के वैयक्तिक जीवन को विशेष स्थान देकर उसी को भगवान समझना उसे सिर्फ राजनैतिक भौतिक जीव के (प्राणि) रूप में ही नहीं लेकर, फ्राइड, एंगआइलर, पाब्लाव आदि के प्रभाव से मानसिक प्राणि के रूप में लेना है ।

2. सामाजिक जीवन आर्थिक विकास को प्रमुख स्थान देना, विकसित साम आर्थिक शास्त्र और शास्त्रवेत्ता ही इसके लिए मूल कारण

3. जानवरों का शास्त्र, वृक्ष शास्त्र, भौतिक-रसायनिक शास्त्र के खोज मानव जीवन की तुलना करके देखना ।

4. आदमी को देशकाल के अतीत चित्रण करना । इसके लिए ऐनीस्टन आदि का प्रभावमानना ।

5. अस्तित्ववाद को प्रदानत: स्वीकार करना । (सार्त्र इसके लिए मूल कारण है ।)

§ई§ अतियथार्थवादी साहित्य :-

मानव, सामाजिक नीतिनियमों को, आचार व्यवहारों को ख्याल में रखकर अपनी मन की भावनाओं को दबाकर कुछ ही भावनाओं को प्रकट कर रहे हैं। फ्रायड कहते हैं कि ऐसी दबी हुई भावनायें जो भी हैं, वे कल्पना जगत से साक्षात्कार हो रही है।

डिलास थामस, ग्यास्काइन, आड्रेब्रिटन, पाल एडवर्ड आदि अंग्रेजी लेखक इसे एक आन्दोलन के रूप में बदलनेवाले स्रष्टा रहे। समकालीन युद्द के हिंसा, बीभत्स, रक्तपात देखने पर उनके मन में अपूर्व परिणाम हुए। उस कल्पना जगत से उतरकर, पिघलकर वह अतियथार्थवादी आन्दोलन हो गया। विश्व युद्द के बाद तेलुगु में भी यह आन्दोलन फैल गया। कल्पना, काम §वासना§, जुगुप्सा अव्यवस्था उनके लिए पुस्तक बन गये।

इस आन्दोलन को एक छोटा-सा आन्दोलन के रूप में मानने के लिए भी एक प्रमुख कारण है कि यह किसी एक का नेतृत्व में चलायी गयी आन्दोलन नहीं है। सिद्दांत भी संयुक्त है, लक्ष्य भी दिखायी देनेवाला नहीं है, सफर जो है वह कल्पना जगत के लिए है। इसीलिए इसे आन्दोलन कह सकते हैं? या नहीं? यह भी प्रश्न बन गया।

अतियथार्थवादियों में आत्मविश्वास से भी आन्दोलन ज्यादा है। इसी लिए इसे एक प्रयोग के रूप में या विद्रोह के रूप में मानना सहज ही है।

" कल को नाश करके आज से कल §भविष्य§ के लिए देखना इनका तत्व है। कल का मार्ग प्राचीन या अभ्युदय चाहे वह जो भी हो उनके लिए अनावश्यक है। इस प्रकार हिंसात्मक, विनाशात्मक दृष्टिकोण को इस आन्दोलन का लक्ष्य मानने में विचित्र क्या है। ये भी ज्ञानी है अन्तर्राष्ट्रीय तौर पर प्रेरित और प्रभावित है " §फ्रायड, ईलयट, ऐनीस्टन, कीम्मिंग्स आदि§

ड़ु मानवतावाद :-

अत्याधुनिक तौर पर मार्क्स से भी आगे बढ़कर चली है * " मानवतावाद " । प्राचीनकाल में मानव देवताओं की सहायता से अतिलोक कार्य भी करते थे, जो खुद नहीं कर सकेगा, वह भगवान करेगा ऐसा विश्वास था । लेकिन पाश्चात्य प्रभाव से ईश्वर पर, ...पाप सिद्धांत पर विश्वास क्षीण होने लगा और मानवता पर आकर्षित होने लगे । " आश्चर्यजनक या चकित करनेवाले विषय अनेक है लेकिन कोई भी मानवशिशु से भी अपूर्व, धारण नहीं है ।"[1] जैसे ग्रीकों का भाव आधुनिक तौर पर तय्यार होकर अतिनव्य कविता दृष्टिकोणों में प्रतिबिंबित होने लगी । " भगवान या देवता है या नहीं,बता नहीं सकता लेकिन उनके विषय में हमारा अज्ञान को अनेक हेतु ऍ उद्देश्य ऍ हैं । विषय दुर्बोध है, जीवन संक्षिप्त है ।"[2]

इसलिए इस जीवन को स्वेच्छा, शांति से भरकर, बाकी जीवन के बारे में सोचने की बात छोडना ही मानवतावाद के लिए आधार है।ब्लइज पास्कल, कीर्कीगार्ड, फ्रैडरिक नीत्से, कारल जेस्पर से शुरु होकर यह अस्तित्ववाद धीरे-धीरे मानवतावाद को खुद ही आधार बनकर खड़ा रहा । अन्तर्राष्ट्रीयतौर पर अतिनव्य रचयिताओं में मानसिक बदलाव लाने के लिए यह विचारधाराने महत्त्वपूर्ण सहयोग दिया । इसीलिए मार्टिन हिडिगर से सार्त्र तक के अस्तित्ववादी, अतिनव्यों के लिए पूज्यनीय रहे ।

<u>मार्क्सवाद का वैकल्प</u> :-

अतिनव्य साहित्यिक आन्दोलन पर प्रभाव दिखाने वाल मानवतावाद का दूसरा मुख एम॰एन॰राय द्वारा जो अन्तर्राष्ट्रीय मार्क्सतत्व की विफलता को सूचित करते हुए समझाया (साबित) गया है,। वह मानवतावाद है। अभ्युदय आन्दोलन विफल होने का मूल कारण सैध्दांतिक पराजय ही है। इसीलिए श्री श्री अरुद्रा जैसे अभ्युदय कवि, बाद में आदिवास्तविक हो गये। करुणा की दृष्टि से ही है मानवतावाद ही है। मानव का प्रयत्न सफल होने की तरह, मानव शक्ति को बढाने की तरह, हेतुवाद के लिए खडा होकर, पारलौकिकता को अस्वीकार करके विश्व कार्य मानव प्रमेय (मदद) से होने की तरह स्वतंत्र विचार को, अनुभूति को, कार्यकरण को प्रेरणा करनेवाली तात्त्विक दृष्टिकोण है।"[1]

इस प्रकार मानवतावादी आन्दोलन फैला। " यह मानव के सिर पर मकुट रखना चाहता है। यह आन्दोलन कहता है - पूरे मानवों में साम्य होना है।"[2]

इससे मानव की वैयक्तिक जीवन पर ज्ञानियों की चाह बढने लगी। यह एक स्वतंत्र तत्व है और स्वतंत्र आन्दोलन है।

---

1. अभ्युदय युगानंतरम - के॰वी॰रमणा रेड्डी (लेख) " साम्य " उगादी - संचिका - पृ॰ 159॰
2. पातिका संवत्सराल तेलुगु कवित्वम् -- वेल्चुलपल्ली तेलुगु व्यासलु (लेख) पृ॰ -- 79॰

4. हिन्दी और तेलुगु कहानियों की प्रवृत्तियाँ : एक तुलना :-

सातवें दशक की हिन्दी कहानियों में प्रमुखतः स्पष्ट होनेवाली प्रवृत्तियाँ हैं - अकहानी, सचेतन कहानी और सहज कहानी। तेलुगु कहानी क्षेत्र में ऐसा विभाजन तो नहीं है। लेकिन ऐसी प्रवृत्तियों से जुडी हुई कहानियाँ बहुत हैं जैसे नग्नमुनि की विलोम कथलु। एक तरह से हिन्दी की अकहानियों को नग्नमुनि की विलोम कथलु (विलोम कहानियाँ) से तुलना किया जा सकता है। तेलुगु में भी दिगंबर साहित्य, अतिनव्य साहित्य अतियथार्थवादी साहित्य, मानवतावाद आदि प्रवृत्तियाँ हैं। लेकिन हिन्दी की तरह अकहानी और सचेतन कहानी जैसी गुटबन्दी नहीं है। जिस प्रकार हिन्दी की सहज कहानी का स्वरूप स्पष्ट है उसी प्रकार तेलुगु में भी दिगंबर साहित्य, अति यथार्थवाद, अतिनव्यसाहित्य और मानवतावाद का स्पष्ट चित्रण है। लेकिन तेलुगु कहानियों में इन प्रवृत्तियों का चित्रण है। दोनों कहानी क्षेत्रों में " मन " को प्रमुख स्थान दिया गया है। मानवतावाद के अनेक लक्षण दोनों कहानियों में पाते है।

कहानीकार ने बदलते हुए स्त्री-पुरुष संबंधों को गहराई से अध्ययन करके, टूटते हुए सम्बन्धों और परिवारों के पीछे कार्यकर रही मनः स्थितियों और कारणों को पहचाना है। पिछले मूल्यों के विघटन और नये मूल्यों की स्थापना के प्रयास में अनेक विसंगतियों का आकलन किया है। नारी में उत्पन्न परिवर्तन से समाज में उत्पन्न अनेक समस्याओं को सामने लाया है। साथ ही कहानीकार ने वर्तमान व्यवस्था में व्यक्ति के ऊपर बढ़ते हुए दबावों को भी महसूस किया है। सामाजिक वैषम्य और व्यक्ति-व्यक्ति के बीच नये प्रकार का स्तर भेद, राजनीतिक आदर्शहीनता और अवसरवाद तथा मन्त्री से लेकर चपरासी तक फैले हुए भ्रष्टाचार पर भी उसकी दृष्टि गयी है। संक्षेप में यह कह सकते हैं कि आज के हिन्दी और तेलुगु के कहानीकार ने " वस्तु " के क्षेत्र में अपने अनुभवों को अधिक से अधिक व्यापक बनाने की दिशा में सफल प्रयत्न किए हैं। उसके (कहानी कार के) अधिकांश अनुभव अन्ततः " आर्थिक वैषम्य " से प्रभावित प्रतीत होते हैं। हिन्दी और तेलुगु कहानियों में प्रवृत्तियों की तुलना इस प्रकार है —

(1) गिरिराज किशोर — " पेपरवेट " :-

गिरिराज किशोर सातवें दशक के ऐसे हस्ताक्षर हैं जिन्होंने " पुरानों " से भी संबंध बना रखा है और अपने समकालीनों से अलगाव करनेवाला एक स्पष्ट बिन्दु भी रख छोड़ा है। सूक्ष्म दृष्टि, निरीक्षण क्षमता और अभिव्यक्ति के अपने प्रसंगों के लिए वे प्रसिध्द है। उनकी कहानियों को दो वर्गों में बाँट सकते है — व्यक्ति निष्ठ प्रेम सन्दर्भो को तथा राजनीतिक परिवेश और युगबोध की कहानियाँ। कुछ कहानियाँ कार्यालयों से संबंधित है तो कुछ प्रेम व्यवहार में आये मूल्यों के विघटन की है। यह विघटन एक भ्रष्ट राजनीतिक जीवन के कारण भी है।

" भ्रष्ट राजनीतिक परिवेश के विद्रूप को इनकी कहानियाँ इतनी कड़वाहट से अभिव्यक्त करती हैं कि वे तंत्र की निर्ममता और बेरहम नेताओं पर सीधे चोट करती है। " चेहरा " " पेपरवेट " और " नया चश्मा " दोनों में दिखायी देता है। सत्ताधारी अपनी पार्टी के सदस्य के द्वारा विरोध के नारे लगाने से उसे पद का तो हफा देकर चुप किया करते है। गिरिराज किशोर की कहानियाँ समसामयिक राजनीतिक गतिविधियों और असंगतियों को पाठक तक पहुँचाने में सफल होने से ही पर्याप्त चर्चित हुई।

इस कहानी में समकालीन राजनीतिक, भ्रष्टाचार, स्वार्थपरता आदि का वर्णन है। मृणालबाबू महसूस करते है कि सिध्दान्तवादिता और ईमानदारी आदर्श के रूप में ग्राह्य की जा सकती है, लेकिन व्यावहारिक स्तर पर आचारण में उन्हें बनाये रखना कठिन है। मृणालबाबू और शिवनाथ ऐसे जीवंत पात्र है जो समसामयिक भ्रष्ट तथा घृणित राजनीतिक जीवन में विसंगतियों का असहाय रूप पाते है। हमारे नेता वोट के लिए गरीब लोगों के द्वारा सहानुभूति प्राप्त करने का प्रयास तो करते है लेकिन उनकी तकलीफों, मुसीबतों और समस्याओं से दूर रह जाते हैं।

सत्ता में जाने पर कोई विधायक सत्य का पक्ष लेकर सच्ची बात करने का दुस्साहस करे भी तो उसे कुर्सी या " पद " द्वारा खरीद लिया जाता है या अकेला कर दिया जाता है। पेपरवेट कहानी में मृणालबाबू औद्योगिक बस्ती के मामले में विधान सभा में समाधान देने के लिए मुख्य मंत्री से आग्रह करते है। यह एक ऐसा विषय बन गया कि उसके कारण ही एक मन्त्री को अपने पद से इस्तीफा देना पडा। मृणालबाबू की जोरो से की गयी माँग के कारण ही उसको त्याग-पत्र देना पडा। मन्त्री अपने भ्रष्टाचार का सारा दोष पी.ए. पर मढ देता है। भ्रष्ट राजनीति का कुरूप चेहरा " पेपरवेट " और " नया चश्मा " दोनो में दिखाई देता है। सत्ताधारी अपनी पार्टी के सहायक के द्वारा विरोध के नारे लगाने से उसे पद का तो लफा देकर चुप किया करते है। गिरिराज किशोर की कहानियाँ समसामयिक राजनीतिक गतिविधियों में सफल होने से ही पर्याप्त चर्चित हुई।

यज्ञम -- कालीपट्नम रामाराव :-

श्री कालीपट्नम रामाराव की ही नही बल्की तेलुगु कहानी साहित्य में भी अति प्रसिद्ध कहानी है " यज्ञम "। जितनी ख्याति हिन्दी में प्रेमचन्द जी की " कफन " को मिली थी। उतनी ख्याति तेलुगु में " यज्ञम " को देना अनुचित नही होगा। श्री कालीपट्नमरामाराव जी की यह " यज्ञम " कहानी 1964 में ही प्रकाशित हुआ था। इस कहानी को 1967 में उत्पन्न श्रीकाकुलम में गिरिजनों के आन्दोलन के लिए बीज मानते थे। श्री काली पट्नम रामारावजी का भविष्यत् दर्शन भी यही है। इस कहानी के बारे में जितनी आलोचनायें गोष्ठियाँ हुई थी उतनी अन्य किसी भी तेलुगु कहानी की नही हुई। समकालीन तटीय प्रांत की स्थिति को और आगे उत्पन्न होनेवाले आन्दोलन की जानकारी देनेवाली महत्वपूर्ण कहानी है " यज्ञम "। फूटने के लिए तय्यार " ज्वाला मुखी " जैसी परिस्थिति को, पूरी तरह उठनेवाली जनता के आन्दोलनों के बारे में सूचना देनेवाली महत्वपूर्ण कहानी है " यज्ञम "। कहानी के बारे में कहानीकार के शब्दों में --

" आजादी से पहले और बाद में तटीय प्रांत में (कोस्ता में) प्रचलित लूट की प्रक्रिया को स्पष्ट करने की कोशिश इस कहानी में है। पिछले दिनों में शिक्षित वर्ग देख सकते थे कि किसान वर्ग किस प्रकार अपना जमीन, जायदाद खोकर, नौकरों की तालिका में पहुंच रहे थे। गरीब लोग परंपरागत व्यवसाय खोकर किस प्रकार और गरीब हो रहे थे। समाजवादी व्यवस्था की ओर से नेता वर्ग, किस प्रकार " लूट प्रक्रिया " से लोगों को धोखा दे रहे है? ये सब इस कहानी में स्पष्ट है।"[1]

यह " यज्ञम " कहानी गाँवों में दशकों से होनेवाले लूट का ही प्रतिबिम्ब है। तेलुगु कहानी साहित्य में यह एक मील का पत्तर है। इसलिए यह कहानी तेलुगु साहित्य वेत्ताओं में हलचल मचा दी। सिर्फ इसी कहानी पर लिखी गयी अनेक लेखों को एक संग्रह के रूप में बनाकर " कथायज्ञम " नाम से हैदराबाद बुक ट्रस्ट 1982 में ही प्रकाशित की।

यह शंका की बात नही है कि दशकों से गाँवों में होनेवाले लूट की व्यवस्था को, बदलते समय के अनुसार असामाजिक प्रथा, अपना आधिपत्य को आगे बढाने के लिए चलायी गयी चालों को बहुत कलात्मक और प्रभावोत्पादक ढंग से चित्रित किया गया । " अप्पलनायुडु " जो कहानी का एक प्रमुख पात्र है, उसमें पंचायत के सामने पेश की गयी । पाँच दशकों का, उस गाँव का इतिहास कम्युनिष्ट मानिफेस्टो से बराबर है । वह भारत देश के छः लाख गाँवों का इतिहास बनकर साहित्य में रह गयी ।

उस कहानी में अपने लाभ के लिए चावल, गेहूँ आदि फसलों से व्यापार की फसल कहलानेवाली मिर्च, तमाकू आदि फसलों की ओर मोडनेवाले साहुकारों का चाल है । जो फसल है, उसके लिए कीमत पूरे साहुकार मिलकर, अपने स्वार्थ के लिए बहुत ही कम कीमत देकर किसानों को नुकसान पहुचाते थे और अपने लिए बहुत फायदा । फलतः मेहनत का फल न मिलने के कारण गरीब किसान और भी गरीब बनता जा रहा है । बुरी आदतें न होने पर भी, दिन भर मेहनत करने पर भी अपना पेट का भूख न मिटानेवाला गरीब, अपना जमीन को बेचकर और भी गरीब बन रहे हैं और मजदूर बनकर अपने ही खेतों में काम कर रहे है । रिक्तहस्तों से आकर एक साल के अन्दर ही लक्षपति बननेवाले धनवानों का या अमीरों का चित्रण भी है । एक छोटासा दुकान खोलकर साहुकार कुछ ही दिनों में रैसमिल का मालिक बन रहा है । ऐसी घटनायें भी है । लेकिन गरीब को अपना पूरा परिवार मेहनत करने पर भी भूखा ही रहना पडता है । आधुनिक सुविधाओं की वजह से, यंत्र-साधनों की वजह से गरीब और भी पिसा जा रहा है । अगर सरकार, गरीबों को बचाने के लिए योजनायें चलाये तो बीच में धोखेबाज खा रहे है । गरीबों तक वह योजनायें पहुँचता ही नही । अगर पहुँचता है तो भी वह बहुत कम मात्रा में ।

इस कहानी में कोस्ता में लूट जो है वह तेलंगाना प्रांत की तरह दिखायी देनेवाली नही है आन्तरिक तौर पर, शहद से अलंकृत पुरी के समान चारपाई के नीचे पानी की तरह है । " यज्ञम " कहानी में श्रीरामुलु नायुडु और अप्पलनायुडु के बातचीत में स्पष्ट है --

" सच ही है । आपको अपने जीवन पर डर होना सहज ही है । लेकिन वक्त नहीं आये तो कोई भी कुछ नहीं कर सकेगा । हरिश्चन्द्र जैसा आदमी आप जैसे आदमी के पास रखवाला बन गया क्यों ? ऋण चुकाने के लिए ही है न ? अप्पलनायुडु कहता है -- " तुम्हारा चोट, जहाँ लगेगा वहाँ दिखायी नहीं देता । तुम जो भी करोगे वह चार पाई के नीचे की पानी की तरह ठंडापन से डुबाता है ।"

शोषितों का नायक आक्रोश से स्पष्ट करता है -- " बाबय्या ! अच्छाई जो है वह बदल जाना मुझे विचित्र-सा है । तुम किसको {मदद} करने के लिए आये ? यह किसका उपकार हो रहा है ? पुण्य के लिए जो भी आये उनको तुम से शुरू हुई "पाप" जैसे पाप में उतार दिया । उसके बाद अनजाने में ही सबके सब उसी में {फँस} गए रहे हैं"।

इस अन्याय को सहन न करके, परिष्कार भी न पाकर, अपने मन में जलनेवाले आग में अपने आप समिधा बनकर, वर्ग चेतना की स्फूर्ति से नत यज्ञ का धूप को पाकर सत्य को देख सका । इसीलिए खुद ही जो जान लिया, उसे श्रीरामुलु बाबु को स्पष्ट करने लगा -- " बाबु श्रीरामुलु बाबु । तुम तो पागल हो । तुम्हारे मन में एक ऐसा उद्देश्य है कि पूरा संसार तुम्हारी बातें माने और सुने । इस राज्य को, तुमको शासन करनेवाले कौन है ? तुम जानते हो ? उदर देखो वे दोनों । वे हैं - करणम और मुनसब । वे खुद न कर सकनेवाला काम, तुम जब तक करोगे तब तक ही है " तुम्हारा शासन ।" उसके बाद - वे कौन है ? तुम कौन हो ? वह विषय उन पता नहीं चलेगा ।" ।

पटवारी, पटेल, जमीन्दार आदि शोषक जब तक गाँव पर शासन चलायेगा तब तक शोषितों का जीवन ठीक नहीं होगा । पश्चिम बंगाल के मार्क्सिस्ट शासन की तरह कोशिश करके पटवारी, पटेल, जमीन्दार आदि को जब तक रद्द नहीं करेंगे तब तक गाँवों के जीवन में हरापन नहीं भरेगा । यह इतिहास का सत्य है ।

§ख§ गिरिराज किशोर " पेपरवेट " -- कालीपट्नम रामाराव " यज्ञम " :-

" पेपरवेट " और " यज्ञम " में शोषण का ही एक चित्र प्रस्तुत किया गया है। लेकिन " यज्ञम " में गांव का शोषण है तो पेपरवेट में शहर के औद्योगिक बस्ती का शोषण है। दोनों कहानियों में नेताओं का आन्तरिक §दूसरा§ रूप स्पष्ट होने पर भी " पेपरवेट " में मुख्यमंत्री को मौकापरस्ती को और सही रास्ते पर चलनेवाले मंत्री को विवशता का स्पष्ट चित्रण है। लेकिन " यज्ञम " में गाँव के मुखिया वर्ग और दलालों का धोखेबाजी को स्पष्ट किया गया है। " यज्ञम " में शोषण की स्थिति सीधा दिखायी देनेवाली है। " पेपरवेट " में " औद्योगिक बस्ती " का विषय सिर्फ मंत्रियों को परिवर्तन करने का ही विषय रह गया है। जो सही रास्ते पर चलेगा उसे किस प्रकार काबू में लाना है उसका चित्र " पेपरवेट " में है। लेकिन यह शोषण व्यवस्था को मिटाता नही बल्की और मजबूत करता है। लेकिन यज्ञम में सीतारामुडु शोषण से तंगाकर, उससे बचने की रास्ता न पाकर, अपनी जिन्दगी की तरह पुत्र की जिन्दगी को भी बरबा न होने के लिए पुत्र को बुलाकर मार डालता है और गाँववासियों के सामने कटा हुआ शिर और शरीर डालता है।

" यज्ञम " में परंपराबद्द शोषण से मुक्त होने के लिए रास्ता ही नही मिल पाता। इसीलिए इस शोषण से बचाने के लिए ही पुत्र को मार डालता है। पूरा जीवन मौत की छाया में जीने से भी एक दम मर जाना ही अच्छा है जैसा सत्य यहाँ स्पष्ट है।

" यज्ञम " जैसी कहानी हिन्दी कहानी क्षेत्र में " कफन " को छोडकर और एक नही है। लेकिन पेपरवेट कहानी जो है वह राजनीति से जुडे हुए मुख्यमंत्री और अन्य मंत्रियों का है जिसका असर आन्तरिकतौर पर गाँवों पर भी पडता है। ऐसे नेताओं के ही विश्वासपात्र गाँवों को कब्जा कर लेते है। नेताओं के इशारों पर ही अपना अधिकार चलाते है। गाँव के मुखिया वर्ग भी मुख्यमंत्री और अन्य मंत्रियों के ही मित्र बन जाते हैं। इस प्रकार पूरे अमीर मिलकर गरीबों को, शहरों को, गाँवों को बाँट कर लूटने लगते हैं।

2· [क] काशीनाथ सिंह — " सुधीर घोषाल " :-

सन् साठ के बाद के कहानीकारों में काशीनाथ सिंह का स्थान विशिष्ट है। काशीनाथ सिंह का स्थान विशिष्ट है। काशीनाथ सिंह रूसी कहानीकारों [चेखव, गोर्की आदि] से प्रभावित लगते हैं। इनकी कहानियों में बिल्कुल अपने आसपास की जिन्दगी मिलेगी। " सुधीर घोषाल " जैसी घोषित राजनैतिक प्रतिबद्धता की कहानी में भी कहानी रचना का वही आधुनिक कौशल अंदाज है, जो चेखव, टॉलस्टाय तथा गोर्की की महारत हासिल कहानियों में मिलता है। यह कह सकते हैं कि काशीनाथ सिंह की कहानियों की सफलता का एक रहस्य प्रतिक्रिया तथा प्रतिरोध के स्तर तक अपने को समकालीनता तथा समकालीन कहानीकारों के मिजाज से अपने को बचाये रखने में है।

काशीनाथ की अधिकांश कहानियाँ लगातार लड़ाई जारी रखनेवाली आदमी के अंतर्द्वन्द्व की है। उसकी यह लड़ाई खुद उसके अपने खिलाफ भी है, क्योंकि कहीं न कहीं वह खुद भी इस व्यवस्था से जुड़ा हुआ है।

" सुधीर घोषाल " कहानी ईस्ट इण्डियाकोल कम्पनी की बिहार शाखा के प्रशासक की लापता की सूचना से आरंभ होती है जो एक पत्रिका में छपती है। इसके बाद सम्पूर्ण कहानी लेखक के द्वारा कहा गया " फ्लैश बैक " ही है। समकालीन भारत में औद्योगीकरण की प्रक्रिया के कारण ग्रामीण इलाकों में जो बदलाव आया, उसको कहानीकार उस प्रशासक के मकान के आस-पास के वर्णन में बताता है। उस समय के अन्धविश्वासों और जनता की मानसिकता को कहानी के द्वारा स्पष्ट किया गया है। प्रशासक का बेटा सामन्त कहता है " सर आप वहाँ क्यों जाते हैं? पहाड़ी के पीछे नदी में भूतों का डेरा है। अकेला पाने पर वे किसी को जिन्दा नहीं छोड़ते।"[1] प्रशासक के बड़े बेटे ने कोयला मजदूरों के बीच जीवन बिताने का तय किया है। यह उसकी एक क्रान्तिकारी भावना कही जायगी, जो मार्क्सवाद से संबंध है

1· सुधीर घोषाल [आदमीनामा] काशीनाथ सिंह - पृ· 93

लेकिन उसका यह आशय अपने पिता के कारण कार्यरूप नहीं ले पाता है, क्योंकि पिता उसे इण्डियन फारेन सर्विसस की तैयारी करने के लिए कहता है। विक्रम का विचार था -- " इस देश को नेता की नहीं .... क्रान्तिकारी की जरूरत है।"

कहानी में संवादों के माध्यम से कहानीकार ने यथार्थ को स्पष्ट किया है। सूक्ष्म रूप से परिवेश वर्णन के माध्यम से लेखक ने समाज के वर्गों की बनावट प्रस्तुत की। उच्च तथा मध्य वर्ग के लोगों में दिखावे की प्रवृत्ति का भी लेखक ने कालमेन के सम्बन्धों में चित्रित किया है। लेखक के मन में बार-बार पहाड़ियों की दिशा से आनेवाली पुकार गूंजती है जो सर्वहारा वर्ग को शोषण से मुक्त होने की प्रेरणा देती है।

इस कहानी में " सुधीर घोषाल " एक ऐसा बुद्धिजीवी है जो एक सुचिंतित विचारधारा के तहत अन्याय, अत्याचार, दमन शोषण के विरुद्ध कार्यक्रम तैयार करना चाहता है। सुधीर धीरे-धीरे एक प्रकार के तिलस्म, एक अभेद-चक्रव्यूह की रचना में लग जाता है।

मार्क्स के सिद्धांत को स्वभावत: मजदूर वर्ग के लिए हक पाने में सहायक के रूप में देखा जाता है। " सुधीर घोषाल " उर्फ सुधीर जो उस प्रशासक की इमारत में सोचता है, मजदूर वर्ग का ही एक व्यक्ति है। सिंगरनी खदानों में मजदूरों के शोषण का प्रतिशोध लेने की मजदूरवर्ग के द्वारा योजना बनायी जाती है। कलकत्ता जाने के मार्ग में मार डाला गया। कहानी के कथ्य में यह बात स्पष्ट झलक रही है कि आज शोषण के प्रति विद्रोह की भावना जोर पकड़ रही है। कहानीकार ने इतिहास को साक्षी बताते हुए कहा है कि जब भी अराजकता, शोषण, अत्याचार और अन्याय समाज में चरम पर होते हैं, तब क्रान्ति अवश्यंभावी होती है, जिसके द्वारा नवीन समाज का निर्माण होता है। कहानीकार ने इंग्लैण्ड, फ्रांस और इटली में घटित क्रान्तिकारी घटनाओं को अतीत की याद दिलानेवाले घटना प्रतीत के फलस्वरूप नवजागरण की प्रक्रिया सम्पन्न हुई है। यह एक अविश्रान्त संघर्ष का परिणाम है। जिसे सर्वहारा वर्ग को ही भोगना पड़ता है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भी निम्नवर्ग एवं श्रमिकवर्ग के प्रति

का शोषण जारी रहना और साथ ही दमनकर्ता को चुनौती देकर क्रान्ति की ओर कदम बढाना आदि तथ्य कहानी में कलात्मकता के सहारे यथार्थ के स्तर पर अधिक खरा होकर उतरे हैं ।

काशीनाथ सिंह परिवेश और व्यक्ति के जटिल संबंधों को कलात्मक सामर्थ्य से प्रस्तुत करते हैं । उनमें व्यवस्था की अमानवीयता के प्रति सही आक्रोश है । यह व्यवस्था आज आदमी को आदमी का दुश्मन बना रही है और ऐसी व्यवस्था को मजबूत बनाती है जो सैकडों - हजारों का हक बटोर कर एक के पास ले जाती है । वह शिक्षा पद्धति पर भी सही टिप्पणी करते हैं जो अपने आप में एक मजाक बन गयी है ।

" पंट तेगुल्लु " ‖ फसल की बीमारी ‖ :-

नग्नमुनि की कहानियों में " पंटतेगुल्लु " एक छोटी-सी कहानी है । इस कहानी में मूल पात्र है " पैडय्या " । उसकी बेटी " बंगारी " की पाँव में " घाव " ‖फोडा‖ आने से प्राणहानि की संभावना से आपरेषन करके ठीक कर देते है । चाकू ‖छुरी‖ से काटनेवाली " घाव " पर दया दिखाये तो प्राण जाने की बात, पंतुलय्य से की गयी चेतावनी, बंगारी के पिता पैडय्या के मन में गूँथ जाती है । यहाँ आन्तरिक-तौर पर कहानीकार का सुझाव है कि समाज की पकडा हुआ कोडे को काटकर निकालना है । इसी को समर्थन करते हुए क्रान्तिकारी परिष्कार भी दिखाये थे । चुनावों में खडे हुए वैकुनायुडु, राजारेड्डि का असलीरूप की जानकारी देते हुए, अंत में ओटों को गिनने के सन्दर्भ में ‖ बालेटबाक्सी ‖ मतपेटी खोले तो उसमें वैकुनायुडु और राजा रेड्डी के कटा हुआ सिर हैं, जो चुनाओं में खडे हुए थे ।

इस कहानी का अंत सबको पसंद नही होगा । लेकिन यहाँ वास्तविकता जो है वह पैडय्या के बोलेपन का चित्रण में हैं । समस्या को, पैडय्या को समझाने में कहानीकार से सृजित की गयी घटना हैं । बंगारी का घाव की घटना । कहानी का

अंत करते समय भी कहीं भी हत्याओं के पीछे किसका हाथ है यह बात बताये बिना ही पाठकों के मन में उत्पन्न कर दिये थे। मानव मन की आन्तरिक स्थिति से संबंधित वास्तविकता यही दिखायी देती है।

कहानीकार की दृष्टि वास्तविकता का दृष्टि होने की वजह से विभिन्न रूपों में वास्तविकता दिखायी गयी। कहानियों में कहानीकार " अंत " को अपनी मन मर्जी से देने पर भी, ऐसा देने की पीछे कहानीकार का मूल लक्ष्य समझ सकते हैं। कहानियों में अवास्तविकता का चित्रण होने पर भी कहानी के अंगों की चित्रण करने में पूरी तरह सफल हुए थे।

2 (ख) काशीनाथ सिंह " सुधीर घोषाल " -- नग्नमुनि - पंटेमुल्लु :-

इन दोनों कहानियों में " यक्ष " " पेपरवेट " की तरह सिर्फ शोषण तंत्र ही चित्रण नही है बल्कि उसके लिए एक रास्ता भी दिखाने की कोशिश है । " पंटे मुल्लु " में एक ऐसा उदाहरण दिया गया है कि बंगारी को पांव में घाव आने से, आपरेषन करके निकालना जरूरी हो जाता है तो डाक्टर, आपरेषन करके निकाल देते हैं । सीधासादा आदमी पैडय्या उसे देखकर ऐसा समझता है कि पाँव में उत्पन्न घाव को आपरेषन करके निकाल दिया गया । उसी प्रकार समाज में फैला हुआ शोषण रूपी घाव को निकालना जरूरी समझता है । शायद इसीलिए कहानीकार ने कहानी का अन्त शोषण कर्ताओं के सिर काटकर चुनाव पेटियों में रखकर दिखाया है । " सुधीर घोषाल " में भी शोषण कर्ता को मजदूर वर्ग से बनायी गयी योजना में मार दिया जाता है । मजदूरों का शोषण दूर करने के लिए यह एक ही रास्ता कहानीकार से प्रस्तुत है ।

इस प्रकार दोनों काहानियों में शोषण तंत्र का अंत कहानीकारों ने अपने-अपने दृष्टिकोणों से स्पष्ट किया है ।

नेताओं को ऐसा निकालने से समस्या का समाधान नहीं मिलता । जड से काटना ही शोषण तंत्र का अंत मानना चाहिए । शोषण कर्ताओं के दिलों में परिवर्तन लाना ही एक रास्ता है । वह बहुत मुश्किल है । शायद इसीलिए कहानीकारों ने शोषणकर्त्ताओं का मौत ही सामाजिक व्यवस्था की भलाई मान ली ।

3 ‌[क] सुवास कुमार " स्थानपूर्ति " :-

सुवास कुमार की कहानियों में उल्लेखनीय कहानी है " स्थानपूर्ति " । इसने ज्ञानोदय के नयी कलम अंक [जुलाई 1966] में सैकड़ों कहानियों में चुनी जाकर प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया था । कहानीकार ने इस कहानी में वेश्या जीवन पर एक चित्र खींचा है । वेश्या खुद बनती है या बनायी जाती है । इसका स्पष्ट चित्रण सामने आता है ।

इस कहानी का मूल पात्र है " मैं " [नाम तो नही दिया गया है] वह, अपने बारे में स्पष्ट करते हुए, बहुत नजदीक में रहनेवाली एक ऐसा घर का परिचय देता है जिसमें सिर्फ स्त्रियाँ ही रहती है बहुत खूब सूरत स्त्रियाँ । " मैं " पात्र खूबसूरत स्त्रियों के प्रति उदार भाव रखता है । इसीलिए उस घर में क्या होता है कौन-कौन आते है , क्या-क्या करते ये सब देखता रहता है । धीरे-धीरे उसको पता चलता है कि वह वेश्या गृह है ।

मैं पात्र को पता चलता है कि आर्थिक समस्या की वजह से वे अपना शरीर बेचने के लिए तय्यार हो गयी । पहले उस घर में एक थी जो नौकरी करके, कमाकर घर की जिम्मेदारी लेती थी । अचानक उसकी आत्महत्या से नीली साडीवाली लडकी को घर को संभालना पडा क्योंकि बाकी सब लडकियों में वही बडी थी ।

आर्थिक समस्या का मूल कारण क्या है इस पर विचार करने से यह भी पता चलता है कि उन युवतियों का पिता, घर को छोड कर चला गया । घर की जिम्मेदारी उठाने के लिए वह तय्यार नही थी । बूढी माँ थी । अपनी जिन्दगी काटने के लिए कुछ न कुछ करना पडता । " मैं " को नीलिसाडीवाली युवती अच्छी लगती है । लेकिन उससे संबंध रखने के लिए तय्यार नहीं था । एक बार " उस नीलि साडीवाली लडकी से बातचीत भी होती है " मैं " कहने लगा -- " एक दिन जब मैं बाजार से आ रहा था, वह अपने स्कूल से लौटती हुई मिली । उसने मुझसे दस रुपयों की माँग की, बडे ही अनौपचारिक तौर पर । मैं ने उस अनौपचारिक से बरकरार रखते हुए जेब से रुपये

निकालकर उसे थमा दिये । उसने ठंडे मन से मुझे अपने घर आने का निमंत्रण दिया, जिसे मैंने अपनी टुच्ची शालीनता से अस्वीकार कर दिया । तब उसने गिडगिडाकर मुझसे प्रार्थना की कि उसके यहाँ कम-से-कम चाय अवश्य पीऊँ । मैंने कहा कि मैं चाय से घृणा करता हूँ और उन घरों में अकेले जाने से भी, जिनमें मर्द नहीं । तब वह रुआँसी आवाज में बोली " आपके ये रुपये मैं कैसे अदा कर पाऊँगी ? "[1]

इस कथन से स्पष्ट होता है कि " मैं " पात्र को भी ग्राहक होने का मौका मिला । लेकिन उसे ठुकरा दिया और उसने इस प्रकार कहा कि " वह मुझे मित्रवत् समझे किन्तु अन्य मित्रों की भाँति नहीं । "[2]

एक बार नीलिमाडी वाली लडकी की बहन मैं के पास आती है कुछ रुपयाँ लेने क्योंकि नीलिमाडीवाली लडकी बीमार थी । " मैं " के कथन से स्पष्ट होता है — " उसका भी चेहरा नीलिमा से बहुत-कुछ मिलता था, यद्यपि वह मुटापे की ओर अग्रसर थी । जवान होने पर भी उसमें किशोर-सुलभ चापल्य का अभाव न था । उसके अत्यधिक उभरे हुए वक्षों पर उसका फ्रॉक छोटा आ... था .... । "[3]

नीलिमा की शादी हो जाती थी । लेकिन आर्थिक दशा सुधारने के लिए उसकी छोटी बहन को वेश्या बनना पडता है ।

---

1. अन्यरस तथा अन्य कहानियाँ — डॉ. सुवास कुमार - पृ. 12.
2. - वही - पृ. 13.
3. - वही - पृ. 14.

(क) सिमेंट संतति -- नग्नमुनि :-

नग्नमुनि की कहानियों में चर्चित कहानी है " सिमेंट संतति " । गरीब घर में जन्मलेनेवाली बच्ची, जब युवति हो जाती है उसकी स्थिति क्या है । उसका नग्न चित्रण इस कहानी में है । साथ-साथ राजनीति क्षेत्र में नेता लोग जिस प्रकार रहते है उसका ही एक रूप इसमें प्रतिष्ठित किया गया है । इस कहानी में वर्णन को विशेष स्थान दिया है । जैसे

पूरे अंग सुन्दर फूल के रूप में बदल गयीं । उन फूलों को गड्ढा में रखकर, बकरियों से बचाने को वादा करके, कलम लगाकर और भी सुन्दर रंगारंग फूलों को खिलाने की बात कहते हुए पुस्तकों के बीच से. बाजू की गली से उडकर आया है एक युवक । उसकी बातों में नशा की दवायें है । उसकी आँखों में फूल के बाण है जो हमेशा सही दिशा पर ही चलाते हैं । उसकी साँसों में सुख से बाँध नेवाली लतायें हैं ।

कहानीकार उपर्युक्त पंक्तियों में एक नवयुवति का वर्णन (शारीरिक) करता है । साथ-साथ बगल की गली से आया हुआ युवक, उस युवती को पटाने की स्थिति का वर्णन भी है । युवक, उस युवति को किस प्रकार पटा रहा है उसका चित्रण भी है ।

वह युवक अपना काम पूरा होने के बाद, कालेज शुरू होने से ही चला गया । वह युवति उसकी इंतजार में दिन काट रही है । लेकिन बाद में वेश्या बन गयी । उसके पास आनेवाले पुरुषों का वर्णन कहानीकार निम्नतः कर रहे हैं -- वे सब अनेक जानवरों को साथ लाते थे । वे मानव भाषा में ही बहुत चिल्लाते थे और काटते थे । पिता, पुत्र, भाई-भाई, मामा, दामाद, आदि अनेकानेक जानवर आते थे । एक तोंद से छछूंदर का गंद लगाते थो दूसरा ठेकेदार का गंद लगाता है । एक कुछ समय देह को या शरीर को छू करके कायर की तरह रिक्शा में भाग जाता है और एक रात भर खंगारकर, थूकर तडके होते ही मामूली चेहरा लगाकर मासूम की तरह चला जाता है । पूरे शरीरों की भाषा तो एक ही है । कोई भी दिल का आवाज नहीं सुनता ।

वह युवती, इतना होने पर भी उस युवक के लिए ,जो पहले पहले अपना यौवन लूटा उसकी इंतजार करते ही लगी । वह सोचने लगी वह युवक जरूर आयेगा, माफी माँगेगा और अपना लेगा । बच्चे होंगे । आदर्श गृहिणि बन जाउँगी । गलियों में घूमती हुई हर चेहरा देखने लगी कि वह युवक मिल जाये ।

एक दिन बहुत रात हो गया । वह तो पार्क में ही दो दिन से भूखी रह गयी । वर्षा आने की वजह से पार्क के कोने में रहनेवाली पेड में घुस गयी । वहाँ आराम करने लगी । उसको अचानक ऐसा लगा कि कोई उसके बाजू में है । घबराकर, एकदम उठकर देखें तो बादल चमकने की रोशनी में उसे देखकर उस हालत में भी उसे हँसी आयी । क्योंकि उसको बाजू में पडा हुआ है शिला । एक राजनीतिक नेता की शिला है जो एक जमाने में उस प्रांत का ही बहु प्रचलित थे । जब वह सोने लगी तब उसे स्वप्न आया । उसमें उस युवक से संभोग के दृश्य दिखायी देने लगी । जब होश आयी तब उठना चाहे तो भी उठ नही सकी । तब उसे लगा स्वप्न में वह जिसके आलिंगन में थी थी वह इस शिला के आलिंगन में ही है ।

वह अब माँ बनने वाली है और एक गुलाब का पौधा धुकहा कटकट में बढ़ रही है । हजारों हाथों से खिल रही है ।

रायकोंड विश्वनाथ शास्त्री " न्यायम् " :-

रीविशास्त्री की कहानियों में " आरु साराकायलु ﴾ छ: शराब कहानियाँ ﴿ बहुत प्रचलित है । उनमें से एक प्रमुख कहानी है " न्यायम् " ।

शराब पीना सामाजिक दुराचार है तो शराब पीकर दूसरों पर अत्याचार करना सामाजिक अपराध है तो शराब को बनाकर व्यापार करना भी अपराध है । शराब को विभिन्न रूपों को लेकर लिखी गयी कहानियाँ है " आरु सारा कथलु " । वे इस प्रकार है --

1.	पापि	-	2-4-1961	विशालान्ध्रा ﴾ दैनिक ﴿
2.	माया	-	16.4.1961	"
3.	न्यायम	-	23.4.1961	"
4.	मोसम ﴾ धोखा ﴿	-	30.4.1961	"
5.	पुण्यम् ﴾पुण्य﴿	-	7.5.1961	"
6.	मोक्षम	-	14.5.1961	"

" न्यायम " कहानी में " व्यभिचार " को ही पेशा माननेवाली स्त्री का चित्रण है । " व्यभिचार " दुराचार है तो वेश्या को पेशा अपराध है । पुरुषों को आकर्षित करके, शारीरिक सुख देना वेश्याओं को गलती होने पर भी, सिर्फ उनको ही नही उनके शरीर को लूटनेवाले मर्दों का भी अपराध है । लेकिन समाज तो सिर्फ " स्त्री " को ही लगा देता है और वेश्या कहकर पुकारते है । इसमें धन का ही बहुत महत्व रहा है ﴾ आयात-निर्यात में ﴿ लेकिन ये रुपयाँ शरीर बेचनेवाली उन वेश्याओं को ही नही, अन्य अनेक दलालों को भी मिल जाता है । बहुत कम रुपयाँ ही वेश्या पाती है । उसी में आकर्षक बनानेवाली सुगंद्रव्यों को भी खरीदना और साथ-साथ अपनी जिन्दगी को भी चलाना है । रोगों का निर्मूलन के लिए दवाये भी उन्हीं रुपयों से खरीदना पडता है । विलासियों को, ग्राहकों को, उनकी मर्जी के अनुसार

शारीरिक सुख देना पडता है । इस पेशे में सुख है या दु:ख है । यह सोचने का प्रश्न ही नही उठता । यह एक पेशा है । इस पेशा में सिर झुकाकर सुख-दु:खों को सहन करना है । वेश्यागृह में वे चाहे जैसा भी आयी हुई हो । तकदीरवाली बच भी सकती है ।

इस कहानी में [न्यायम् में] " वेश्या " का ही चित्रण हनहीं है बल्कि शराब का क्रय-विक्रय का चित्रण भी है । एक वेश्या को शराब पिलाकर, अनेक पुरुष एक दम, उससे शारीरिक सुख पाते हैं । होश आने के बाद पुलीस उस वेश्या को ले जाते है तो अदालत में वह चिल्लाते हुए इस प्रकार कहने लगती है --

" एक ही रात में वे सब अत्याचार करके, मेरा खून पीकर, मेरे प्राणों को लेने लगे तो बचानेवाले कोई भी नही रहे ।"

रावि्शास्त्री जी ने इन कहानियों में शराब के साथ-साथ समाज में अति प्रचलित अनेक समस्याओं को जोडकर रचना की ।

3. (ख) सुवास कुमार " स्थानपूर्ति " - नग्नमुनि " सिमेंटु संतति "

राविशास्त्री (सारा कथलु) " न्यायम् " :-

सुवास कुमार की कहानी " स्थानपूर्ति " में " नीलिमा जैसी युवतियाँ वेश्या को पेशा अपनाने के पीछे क्या कारण है । उनको बहुत अच्छी तरह से स्पष्ट किया गया है । मूल कारण है आर्थिक समस्या " । जिन्दगी चलाने के लिए पैसा चाहिए इसके अलावा पूरे परिवार की जिन्दगी नीलिमा पर है । इसीलिए उसे " वेश्या " को पेशा को अपनाना पडा । उसकी शादी होने के बाद उसकी छोटी बहन को " वेश्या " होना पडा । अपना पेट का भूख मिटाने के लिए और पारिवारिक सदस्यों को सहारा देने के लिए " वेश्या " को पेशा अपनाना पडता है ।

इसी प्रकार तेलुगु में नग्नमुनि की कहानी " सिमेंटु संतति " में भी युवति गरीब है । वह एक युवक से प्रेम के चक्कर में फँसती है । वह युवक, अपना काम पूरा करके उसे छोड देता है । वह सोचती है कि वह आयेगा और उसे अपनायेगा । गरीब होने की वजह, उसके पारिवारिक सदस्य शादी करने में असमर्थ होने की वजह से उसे वेश्या बनना पडता है ।

इस कहानी में " वेश्या " का जीवन किस प्रकार गुजरता है । उसका नग्न चित्रण खींचा गया है ।वेश्या के पास आनेवाले पुरुषों को रिश्तों से कोई मतलब नहीं है वह पिता भी हो सकता है और पुत्र भी । कभी-कभी एक ही बार आकर अपना काम पूरा कर लेते हैं । ऐसे ही भाई-भाई, मामा-दामाद, अमीर और गरीब आदि सब । सबका मूल लक्ष्य रहा है " शरीर " जैसी चीज को खाना माने भोगना ही है ।

" स्थानपूर्ति " और " सिमेंटु संतति " में तो " वेश्या " जीवन का एक रूप स्पष्ट है तो रावकोंड विश्वनाथ शास्त्री की कहानी " न्यायम " (सारा कथलु) में उपर्युक्त दोनों कहानियों का चरमांक सामने आता है । " न्यायम " में " वेश्या " अदालत में पूछती है क्या "स्त्री" वेश्या है तो " पुरुष " को क्या कहना है ? सला तो

सिर्फ वेश्याओं की ही होती है । पुरुष की नहीं । लेकिन " स्त्री " को "वेश्या" बनानेवाला है पुरुष । उसे क्या सजा दे रहे है ? ऐसा प्रश्न चिह्न के साथ-साथ वेश्याओं का एक संक्षिप्त जीवन परिचय " न्यारम " में पा सकते हैं ।

4 (क) कृष्णबलदेव वैद : " त्रिकोण " :-

कृष्णबलदेव वैद की कहानियों में से बहु चर्चित कहानी है " त्रिकोण " । पति-पत्नी और पति का दोस्त के बीच चलनेवाली कहानी है । " पति " तो सिर्फ ख्यालों में बातों में ही देख सकते हैं। इस कहानी में तीसरा, जो मित्र के रूप में शामिल है वह, अपने मित्र की बीवी से शारीरिक संबंध रखना चाहता है । कहानी में स्पष्ट होता है कि वह अपने दोस्त की शादी में शामिल हुआ था । प्रथम परिचय से ही वह अपने मित्र की बीवी के यादों से ही बचैन था । वह पाँच बरस तक अकेले ही तड़पता रहा । दोस्त की बीवी से अनेक बार मुलाकात होती थी और कभी-कभी आर्टों में भी जाया करते थे । और घूमते भी थे । लेकिन उसे अपना मन की बात स्पष्ट करने के लिए पाँच साल लगा । वह इस प्रकार बताने लगा --

" असलियत कुछ भी क्यों न हो हुआ यह कि पाँच बरसों से उसके लिए तड़पते चले आने का दम भर लेने के साथ ही मैंने आगे बढ़कर, बड़े आराम से, उसे परे हट जाने या चिल्ला उठने का समय देते हुए, उसके जिस्म को अपनी बाँहों में कस लिया । वह कसमसायी नहीं लेकिन वह कसाव एक तरफा था । उस कमी को नजर-अन्दाज करते हुए मैंने उसके होंठों को अपने होंठों से टटोलना-खोलना शुरू कर दिया और मेरी आँखें बन्द हो गयी .... मेरा दोस्त किसी भी क्षण बाहर से वापस आ सकता है, मुझे बहुत डर महसूस हुआ था और उसे और सख्ती से कस लिया था ।" [1]

---

1. कृष्णबलदेव वैद की कहानियाँ : आलाप (क.स.) पृ. 77, 78.

इस कथन से स्पष्ट होता है कि दोस्त को बीवी को टुकराने का मौका भी दिया गया । लेकिन वह टुकरा न सकी और यह भी स्पष्ट होता है कि वह, कुछ आगे नहीं बढ़ी । तब वह सोच रही है -- " मेरा अपना पति बहुत हँसोड है और मुझे उससे कोई खास शिकायत नहीं । सिर्फ शारीरिक तृप्ति की बात में नहीं कर रही । मेरा शरीर तृप्त है .... शरीर पर संयम मेरा था, शायद इसीलिए में उसे भरमा सकने में सफल हुई थी ।

इस कहानी में यह बात सामने आती है कि आधुनिक स्त्री में पति-परमेश्वर जैसी भावना नहीं रही । पुराने पातिव्रत्य जैसे मूल्यों और आचारों को टुकराते हुए दिखायी देती है । अन्य पुरुषों से शारीरिक संबंद रखने के लिए तैयार होती थी । लेकिन समाज को नियम, आचार-व्यवहारों से डरकर आगे बढ़ने के लिए असमर्थ थी । इसीलिए मौका मिले तो, चुपके चुपके करने के लिए तय्यार थी । यही इस कहानी में स्पष्ट होता है । पुराने आचार-व्यवहार, नीति-नियम आदि लुप्त होते हुए नजर आते हैं ।

1. कृष्णबलदेव वैद की कहानियाँ -- आलाप [क.स.] पृ. 78, 79.

4. (क) परिवर्तना - तिलक :-

तिलक की कहानियों में " परिवर्तना " एक प्रसिद्ध कहानी है । इस कहानी की मूल विशेषता है " कहानी का अंत " । कोई भी नही सोच पायेगा कि अंत में क्या होगा । मानव मन को पकड़कर मनोवैज्ञानिक धरातल पर चित्रण करने में तिलक विशेषज्ञ है । ऐसी ही एक कहानी है " परिवर्तना " ।

इस कहानी में मूल पात्र है शंकरम और राजेश्वरी । ये दोनों एक जमाने में प्रेमिक थे । आर्थिक भेदभाव के कारण इन दोनों का प्रेम फलने में असमर्थ रह जाती है । दस साल के बाद इन दोनों का मुलाकात अचानक एक सिनेमाहाल में हो जाता है । तब तक राजेश्वरी तो विवाहित है लेकिन शंकरम तो अविवाहित है और अपनी प्रेमिका राजेश्वरी की यादों में ही जीवन चला रहा है ।

राजेश्वरी की आत्मीयता, स्नेह भाव, बर्ताव को देखने से शंकरम के मन में कई विचारें उत्पन्न होते हैं । वह राजेश्वरी से कहता है -- " राजी, आज (इस रात) तुम यही रह जाओ । सिर्फ एकबार तुम मेरी हो जाओ । जीवन में और कुछ नही पूँ पूछूँगा और तुमे दिखायी नही दूँगा । सिर्फ मेरी इच्छा पूरा करो राजी । इस तृप्ती से, स्मृतियों से मर जाऊँ तो भी ठीक ही है । अरे राजी तुम ऐसा क्यों देख रही हो । यह गलत समझ रही हो । मेरे लिए, मेरे हृदय में इतना बडा रेगिस्तान को छुपाया । मेरे लिए एक बार एक बार ... "

शंकरम, किसी न किसी प्रकार राजेश्वरी को भोगना और संभोग करना चाहता है । पहले शंकरम को विविध रूपों में मनाने की चेष्टा करती है और दूसरी लडकी से शादी करने के लिए कहती है । लेकिन उसका जिद राजेश्वरी को बदलने में सफल हो जाता है । लेकिन शंकरम की बातों से स्पष्ट है -- " राजी, मैंने सोचा भी नही था कि तुम इस प्रकार अनुग्रह करोगी । तुम्हारी चिट्ठी देखने से कब रात होगी ? ऐसा सोचते हुए इंतजार कर रहा हूँ । "

लेकिन जब शंकरम, राजेश्वरी का घर जाता है तब राजेश्वरी में अपने परिवार के प्रति प्रेम भावना इतना महत्वपूर्ण है कि राजेश्वरी में कहीं भी शंकरम को पाने की चेष्टा के चिह्न नहीं मिलते। इसके अलावा वह कहती है -- मेरा बेटा है, मेरे पति हैं। इसे मेरे पतिजी ने इनाम के रूप में दिये थे। मेरे पति बहुत अच्छे हैं। मुझे बहुत चाहते हैं। जन्मदिन पर मुझे हर साल इनाम देते हैं।

इस प्रकार राजेश्वरी की हर बात में पति पर उसका कितना प्रेम है। उसका ही चित्र मिलता है। शुरू में जब शंकरम जल्दीबाजी करता है तो कहती है कि सब नौकरों को भेज दूँगी। बच्चे को सुलाकर आऊँगी। उसके बाद ही पूरा घर को दिखाती हैं और अपना परिवार संबंधी बातें कहती रहती हैं। अंत में वह शंकरम को अपना "बेडरूम" में बिठाकर नहाकर, तय्यार होकर आऊँगी कहकर कुछ देर इंतजार करने के लिए कहती है। जब राजेश्वरी तय्यार होकर आती है तो वहाँ शंकरम नहीं रहता। बाद में शंकरम की चिट्ठी मिलती है --

.... मुझ पर दया आने से तूने सम्मति दी। लेकिन मैं देखते देखते एक पवित्र देवालय को, देवालय की देवताओं अपवित्र नहीं कर सकता ... एक निर्मल झील में हलचल मचानेवाला संस्कार हीन नहीं हूँ मैं ... तुम्हारी इच्छा के अनुसार शादी करके पत्नी से तुम्हें मिलूँगा।"

इस कहानी में एक अविवाहित युवक के मन में उत्पन्न भावनाओं को महत्वपूर्ण ढंग से चित्रित करते हुए स्त्री-पुरुष पवित्र बन्धन को और विवाह व्यवस्था पर अपना अटूट विश्वास को स्पष्ट करने की कोशिश सामने आती हैं। कामुक युवक में परिवर्तन लाना ही इस कहानी का मूल विषय रहा है।

४• [ख] कृष्णबलदेव वैद " त्रिकोण " -- तिलक " परिवर्तना " :-

" त्रिकोण " और " परिवर्तना " कहानियों में " स्त्री " पति के अलावा अन्य पुरुष से अनैतिक संबंध रखने की स्थिति का चित्रण है। लेकिन हिन्दी कहानी " त्रिकोण " में पति के मित्र से शारीरिक संबंध रखने में सफल हो जाती है तेलुगु कहानी में अपने भूतपूर्व प्रेमिक से शारीरिक संबंध रखने में असफल हो जाती है। स्त्रियों के मन में खुद ही उत्पन्न इच्छा या वासना नही है। पुरुषों की प्रेरणा से ही दोनों स्त्रियों शारीरिक संबंध रखने के लिए तय्यार हो जाती है।

हिन्दी कहानीकार पाश्चात्य प्रभाव से और अत्याधुनिकता से दाम्पत्य संबंधों को समुचित स्थान देने में असफल साबित होता है। लेकिन तेलुगु कहानीकार, भारतीय मूल्यों को और दाम्पत्य जीवन को महत्वपूर्ण स्थान देते हैं इसीलिए मूल्यों को रक्षा और दाम्पत्य जीवन को सुरक्षा में तेलुगु के कहानीकार बहुत सफल रहा है।

दोनो कहानियों में " मन " का चित्रण मनोवैज्ञानिक धरातल पर किया गया है। दोनों कहानियों में " तीसरा " जो है वह पति का मित्र है। " त्रिकोण " में है तो " भूतपूर्व प्रेमिक " है " परिवर्तना " में। जितनी अश्लीलता हिन्दी कहानी " त्रिकोण " में है उतना " परिवर्तना " में नही है। त्रिकोण में स्त्री की अचेतन अवस्था में ही संभोग हो जाता है, लेकिन " परिवर्तना " में तीसरा जो है वह संभोग करने के लिए तय्यार नही होता।

5. (क) दूधनाथ सिंह — " रींछ " :-

दूधनाथ सिंह ने आधुनिक परिवर्तनों को सामाजिक, राजनैतिक तथा ऐति - हासिक परिप्रेक्ष्य से मिलाकर दिखा है । उस दौर में उन्होंने लगभग आत्मपरक कहानियाँ ही लिखी । उनकी कहानियों में स्थापित नैतिकता और मूल्यों के प्रति संदेह भाव को प्रधानता रही है । सामाजिक परिस्थितियों के यथार्थ को वे यथातथ रूप में स्वीकार करते हैं । दूधनाथ सिंह की कहानियों में वासना, मृत्युबोध, वैयक्तिक नैतिकता, अकेलेपन आदि की प्रवृत्तियाँ मिलती हैं । इन कहानियों में बौद्धिकता अधिक है । इसका कारण उनकी विषयवस्तु में निहित है । इनकी " एक सपाट चेहरेवाला आदमी, आइसबर्ग, रीछ आदि बहुचर्चित कहानियाँ हैं।

दूधनाथ की आरंभिक रचनाएँ अपने मध्यवर्गीय पारिवारिक संबंधों के विघटन की कहानियाँ है जैसे " आइसबर्ग " आदि । दूधनाथ की प्रमुख विशेषता उनकी कहा- नियों में अनुभवों की तीखी अभिव्यक्ति है । " रींछ " मनुष्य की आदिम वासना, लिप्सा संबंधी कहानी है । यहाँ अतीत से बन्धा नायकवर्तमान में पीडित है । यह अतीत के संस्कारों और परंपरा का मोह है, जिसे तोडने की बात कहानीकार गंभीरता से उठाता है । कहानीकार का कहना है कि आज के बदलते परिवेश में हमारा प्राचीन आध्यात्म दर्शन, मान्यता और संस्कृति समय-समय पर क्रूर दिखायी पडती है । अतः आज व्यक्ति यह महसूस कर रहा है कि वर्तमान के लिए अतीत को ठुकराना पड सकता है ।

सामाजिक विसंगतियों का उद्घाटन करने के लिए यौन संबंधी कहानियाँ सातवें दशक में लिखी गयीं । उनकी सहजता और स्वाभाविकता देखने लायक थी । फ्रायडीयन काम मनोविज्ञान, स्वप्न विश्लेषण आदि का प्रभाव इन पर महसूस किया जा सकता है । ...... " रींछ " व्यक्ति की और उसके अन्दर बैठे पशु की कहानी है और उसके भीतर ये दोनों अत्यन्त संघर्षरत हैं । यह भीतर का संघर्ष मनुष्य के आर्थिक, सामाजिक संघर्ष को कहीं से काटता भी है । अतः इन कहानियों की प्रासंगिकता सीमित होती है ।

" रोंछ " पति-पत्नी, स्त्री-पुरुष के बीच के संबंधों की कहानी है। कहानी में पात्रों का उल्लेख सर्वनाम के रूप में हुआ है और उनकी जटिल संवेदनाओं को व्यक्त किया गया है। नायक अपनी पत्नी के अनुमानपूर्वक अपनी चाल चलन नही रखता और पत्नी उसे शक्की नजरों से देखती है। एक पात्र " वह " कहानी में प्रवेश करता जो दोनों के दाम्पत्य सम्बन्धों में खाई बढ़ाने का हेतु बन जाता है। पर वह कौन है, क्या है? इसका पता कहानी में नहीं दिया गया। लेकिन इसकी वजह से ही पति-पत्नी के संबंधों में विघटन, टूटन की गहराई अधिक होती है। " वह " नायक के अतीत में प्रियतमा के रूप में सामने आती है, जिसने वह शारीरिक संबंध रखता है। अपने पति के किसी दूसरी और से संबंध रखने के कारण पत्नी में बसे ईर्ष्या, घृणा, क्रोध, द्वेष आदि नारी सुलभ प्रतिक्रियाएँ प्रकट करती रहती है। अपने " उस " के प्रति के आकर्षित होने की वजह पूछती है ..... " मेरे साथ .... करते हो और मन में किसी औरत को बिठाये रखते हो ... लेकिन ठीक है .... मैं तुम्हारी असलियत तुम्हारे सामने खोल रख दूँगी।"[1]

इसके बाद भी पति खामोशी को स्वीकार समझकर पत्नी उसे तलाक देने के लिए भी तैयार होती है और परम्परा से चले आ रहे नारी शोषण के विरुद्ध विद्रोह की आवाज देती है। समाज में विद्रोही भावना अधिक बढ़ रही है और नारी अपने पैरों पर खड़े होने की शक्ति प्राप्त कर रही है। मर्द के सहारे जीवन बिताने की किसी भी संभावना को काटकर वह आगे बढ़ रही है ...... " बस कीजिए ... मैं इन चिकनी, चुपडी बातों से तुम्हारा, चुंगल में नही आने की। अब अधिक धोखा नही खा सकती है।"[2] " छोड दूँगी जरूर छोड दूँगी। तुम क्या समझते हो मैं इतनी बेहया हूँ। तुम्हारे बिना मेरा काम नहीं चलेगा। ... मैं चली जाऊँगी ... "[3]

---

1. " रोंछ " -- दूधनाथ सिंह - पहला कदम - कहानी संग्रह - पृ. 149
2. [redacted] " रोंछ " पहला कदम कहानी संग्रह - पृ. 149.
3. --- वही --

इस प्रसंग से नारी को अपने को स्वतंत्र महसूस करने की स्थिति, परिस्थितियों के अनुरूप घटित बदलाव का भी संकेत मिलता है। कहानी में अधिकांशतः शरीर का अंग-अंग वर्णन तथा खुले यौन संबंधों का वर्णन किया गया है जिससे कहानी में कहानीपन से हटकर सस्ती सनसनी पैदा करने का लेखकीय प्रयत्न महसूस होता है। स्त्री-पुरुष के आपस में आकर्षण और चाह में और परस्पर एक होने को मात्र वस्तु के रूप में सोचने की भावना को भी इन प्रसंगों में बताया गया है।

"अब मुझ में क्या आकर्षण होगा .... एक ही चीज ... हमेशा वही ... वही ... लेकिन तुम लोग क्या सिर्फ नयी चीज के पीछे भागते फिरते हो जी ? स्त्री हमेशा अधिक नैतिक होती है, उसका अपना पुरुष उसे रोज ही नया लगता है।"[1]

इस कहानी में स्त्री-पुरुष और पति-पत्नी के बीच टूटते हुए सम्बन्ध, समकालीन परिस्थितियों का ही देन है। परंपरागत भारतीय दाम्पत्य संबंधी मान्यताओं को ठुकराकर पाश्चात्य सभ्यता और पूँजीवादी अर्थ व्यवस्था के प्रबल प्रभाव से नैतिक मूल्यों में दिन ब दिन तेजी से परिवर्तित बल्कि गिरावट की प्रक्रिया अधिक तेज होती जा रही है। आज का आदमी कुण्ठा, संत्रास, घृणा, वितृष्णा, ईर्ष्या आदि संवेदनाओं ग्रसित होकर जिन्दगी को अशान्तिपूर्ण वातावरण में बिता रहा है पर इस संत्रास से मुक्ति पाने के लिए संघर्षरत और प्रयत्नशील भी है। जब नायक " वह " को अपनी यादें तक में नहीं आने देता तब शक से भरी हुई पत्नी ठीक बरताव नहीं करती लेकिन फिर जब " वह " के लिए आतुरता प्रकट करने लगता है तब पत्नी की संतोषजनक प्रतिक्रिया होती है। नारी मनःस्थिति को इसी प्रकार डाँवा डोल, असंतुलित, यथार्थ के धरातल पर बड़े प्रभावोत्पादक ढंग से चित्रित किया गया। कहानी की महत्ता मात्र स्त्री-पुरुष संबंधों को सेक्स के स्तर पर रखकर, उसका खुलावर्णन करने में ही नहीं, इसकी गहन प्रतीकात्मकता ﴾जो "रीछ" की वासनात्मक पशुत्व वृत्ति से स्पष्ट है﴿ भाषा की सूक्ष्म सांकेतिकता आदि में भी है।

---

1. पहला कदम - क.सं. - पृ. 153.

5• [क] सारे जहासे अच्छा -- प्रभाकर मंदारा :-

10•6•1988 में स्वाति में प्रचुरित एक उल्लेखनीय कहानी है " सारे जहासे अच्छा ।" धर्मशालाओं के चबूतरों पर, सडकों के पेवमेंटों पर जीवन बितानेवाले दीन-हीन लोगों के बारे में, उनमें खास करके जो विवाहित है, उन लोगों के मैथुन की इच्छा को पूरा करने के लिए जो भी परेशानियाँ सामना करते हैं उनको अत्यंत सहज ढंग से, वास्तविकता से चित्रण किया गया है ।

इस कहानी में मैथुन की इच्छा को पूरा कर लेने के लिए नूतन वधु-वर [पति-पत्नी] जो भी परेशानियों को सामना करते हैं । उनका नग्न चित्रण इस कहानी में है । इस प्रकार मैथुन के विषय में लिखी गयी यह कहानी पाठकों के दिलों में ह इच्छाओं को नही जगाती है यह कहानी । असभ्य भाव, घटनायें या शब्द इस कहानी में दिखायी नही देता सब से स्वीकार्य पति-पत्नी के मैथुन की इच्छा को पूरा होने की तरीका को चित्रित किया गया है । इसीलिए इसमें दु:ख का स्थान ही नही है । लेकिन यह मैथुन की इच्छा जो है वह अन्य स्त्री से, करना चाहे तो या मोह के रूप में बदल गये तो अनेक समस्याओं को सामना करना पडता है और दु:खदायी बन जाती है । इस प्रकार अन्य स्त्रियों से रखनेवाला मैथुन महापाप माना जाता है । यह अरिषड्वर्ग जैसे माने जानेवाले वासना [काम], क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्या में प्रथम स्थान [आक्रमण] ग्रहण कर लेती है । भगवद्गीता में पूरे अर्थों का मूल कारण यह [काम] वासना है, वह पाप रूप धारण करके ज्ञान विज्ञानों को नाश कर देती है । इसीलिए शारीरिक इन्द्रियों पर [अंगों] विजय पाकर, उस वासना को भगाने का भाषण कृष्ण ने अर्जुन को दिया --

इन्द्रियाणि, मनोबुद्धि रस्याधिष्टानमच्यते
एतैर्विमोहयत्यैव ज्ञान मावृत्यदेहिनम्
तस्मात्व मिन्द्रियाण्यादे नियम्यभरतर्षभ
पाप्मानम् प्रजाहिह्येनम ज्ञान विज्ञान नाशनम •1

1• गीतामकंरन्दम : श्रीविद्या प्रकाशनंदगिरिस्वामि - श्री शुक - पृ• 372,373 ब्रह्माश्रम, कालहस्ति - 1988•

5• (ख) दूधनाथ सिंह " रीछ " -- प्रभाकर मंदारा " सारे जहा से अच्छा " :-

इन दोनों कहानियों में सेक्स और कामवासना का चित्रण है। यहाँ के पात्र तो पति-पत्नी ही है।लेकिन अपनी कामवासना को पूरा करने को चित्र जो खींचा गया है वह बिलकुल भिन्न है। " रीछ " में पति, अपनी पत्नी में ही प्रेयसी को या अन्य सुन्दर स्त्री को स्मरण करते हुए संभोग करता रहता है तो " सारे जहा से अच्छा " में पति-पत्नी दोनों संभोग के लिए इतने व्याकुल है कि उनके लिए समुचित जगह ही नहीं मिल पाता। बहुत गरीब होने के वजह से उनके लिए अलग कमरा नहीं है। अपनी काम वासना पूरा कर लेने में दोनों व्याकुल है। " समझौते " पर ही उनकी कामवासना पूरा हो जाता है। " रींछ " में पत्नी अपने पति की चेष्टाओं से तंगाकर उसे तलाक देने के लिए तय्यार हो जाती है।

" रींछ " में अश्लीलता को जो चित्र खींचा गया है वह " सारे जहा से अच्छा " में नहीं है। अगर है भी तो बहुत कम मात्र में। " रींछ " में दांपत्य जीवन का विच्छेद है तो " सारे जहा से अच्छा " में दाम्पत्य जीवन का समर्थन और शुरुआत है। " रींछ " के पात्र अमीर और मध्यवर्ग का प्रतीक है तो " सारे जहा से अच्छा " के पात्र गरीब और निम्न वर्ग का प्रतीक है।

6• (क) गंगा प्रसाद विमल "शीर्षकहीन" :-

गंगा प्रसाद विमल की कहानियों में बहुचर्चित कहानी है "शीर्षकहीन"।

इस कहानी में पिता-पुत्र के आधुनिक रूप सामने आता है। पुराने और नये मूल्यों का टकराव यहाँ नही है क्योंकि दोनों आधुनिक है और आधुनिक विचारों से उनका मन भरा हुआ है। शायद इसीलिए पुत्र की सहेलियों से आयी पिता, एक मित्र का व्यवहार करता है और समय के अनुसार वह रहता है नहीं तो पुत्र को अकेले में छोडकर बाहर जाता है। वह समझता है कि पुत्र, अपनी सहेली से खुलकर बातचीत करने के लिए, पिता का वहाँ रहना ठीक नही होगा। इसीलिए वह कमरे से बाहर आता है। सहेलियाँ भी नही जानती कि वह पिता है। वे समझती है कि पुत्र का ही एक मित्र है। पिता, अपने पुत्र की शादी करना चाहता है। वह पुत्र के कथन से स्पष्ट होता है कि ---

"वे कई दिनों से सोच रहे हैं कि अब मेरी उम्र काफी हो रही है और अब मुझे शादी कर लेनी चाहिए। उनका कहना है कि मुझे कोई ऐसी लडकी तो चुन ही लेनी चाहिए जो मुझे पसन्द हो। वे ऐसे पिता नही हैं जो व्यवस्था का अनुगमन करने जा रहे हो या अपनी पसन्द की लडकी मुझ पर थोप देना चाहते हो। वे शायद यह भी व्यक्त कर देना चाहते है कि शादी-ब्याह, लडकों का अपना मामला है और यह उन्हें सुलझा लेना चाहिए।" [1]

एक बार पिता का एक मित्र आता है। पिता, अपने मित्र को सुनाने लगे ---

---

1• कोई शुरुआत (क•स•) गंगाप्रसाद विमल - पृ• 103•

" ये बातें भूकम्प के दिनों की हैं । मैंने एक बाघर से " मी " की जान बचाई थी । तब मैं नौजवान था । जब मैं उसे अपने घर ले आया तो आप जानते हैं एक ही रात में मुझे उससे प्रेम हो गया । आप जानते हैं उसका जो पहला लडका है वह मुझसे हुआ था । मेरे घर से चले जाने के बाद, शायद दो महीने के बाद उसकी शादी हो गयी थी ।" ..... शादी के बाद वह मुझसे मिलती रही है । जीवन मजे का गुजारा है । अब व्यवसाय में भी ऐसे मौके मिल जाते है ।"[1]

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट होता है " पिता की आधुनिकता " ।

एक बार अचानक पिता को रास्ते में भूतपूर्व प्रेमिका से मुलाकात होती है तब पुत्र भी उनके साथ था । पिता, पुत्र को भगाने की कोशिश भी करता है । उन भूतपूर्व प्रेमिकों में बातचीत होने लगता है, पुत्र की उपस्थिति में ही ।

अंत में पुत्र के शब्दों से, अत्याधुनिकता सामने आती है ---

" हाँ .... हा .... आप तो हँसने लग गए । अपने पिता को एक औरत का तोहफा देना .... मेरी एक मात्र आकांक्षा है ..... "[2]

---

1. " कोई शुरूआत (क.स.) गंगा प्रसाद विमल - पृ. 106

2. - वही - पृ. 111.

6· ﴾क﴿ प्रतिष्टा ﴾ परुवु ﴿ --- शारदा अशोकवर्धन :-

काम वासना का तस्वीर बनकर उसको विविध परिणामों को चित्रित करता है शारदा अशोकवर्धन् को " प्रतिष्टा " ﴾ परुवु ﴿ ।

नवम्बर, 1987 में विपुला में प्रचुरित प्रसिध्द कहानी है " प्रतिष्टा " ﴾परुवु﴿ । इस कहानी में काम वासना के लिए बलि हुई दो युवतियों को विषाद कहानी का चित्रण है । साथ-साथ मध्यवर्ग में प्रतिष्टा के लिए और प्रतिष्टा के चक्कर में फंसकर एक युवति का आत्मघात का चित्रण और ऐसी प्रतिष्टा न सोचने वाले निम्न वर्ग में " स्त्री " किस प्रकार पुनर्जीवित होती है उसका भी चित्रण इस कहानी में है ।

नर्सिंहुलु, रामुलम्मा दोनों गरीब होने पर भी समझदारी से जीवन को चलाते हैं । एक तूफान रात के एक शाम में नर्सिंहुलु के लिए इंतजार करनेवाली रामुलम्मा पर, बहुत दिन से मौके के लिए इंतजार करनेवाला जोगुलु, अत्याचार करता है और अपनी काम वासना को पूरा कर लेता है । जब वह घर से बाहर आने लगता है तब नर्सिंहुलु देखता है और बहुत पीटता भी है । पुलीस जोगुलु को ले जाते हैं । बेहोश पत्नी को रोते हुए अपनी आँसुओं उस पाप को धोने लगे तो रामुलम्मा आँसू खोलते ही एक दम रोने लगती है और कहती है -- " रामुलम्मा पूछती है -- इस पापी को तुम अपनाते हो मामा ।

तब नरसिंहुलु कहता है -- " क्यों नही अपनाऊँ ? तुम्हारी गलती इसमें क्या है ? गलती तो उसने की, तुम्हें सजा देना क्या न्याय है ? कहते हुए रामुलम्मा को गले लगाता है और स्वीकार कर लेता है ।

रामुलम्मा काम करनेवाली एक मध्यवर्ग परिवार में राघबाबु और शिरीषा दोनों एक खूबसूरत जोडी है । एक दिन कलाम वन में शिरीषा से बनायी गयी पेंटिंगों का प्रदर्शन होता है । उस कार्यक्रम को विद्याशाखा मंत्रि से प्रारंभ किया जाता है ।

शिरोषा सब को प्रशंसा पाती है । वह कार्यक्रम बहुत सफल हो जाता है । शिरोषा का परिवार जब घर आने के लिए टैक्सी, आटो न मिलने के कारण बस चढ़ते हैं । शिरोषा अंत में रहने के कारण चार युवक (कुछ लोग) उसका मुँह बाँधकर बस न चढ़ने देते और पीछे खींचते है । बस चली जाती है । वे चारों युवक, शिरोषा को अपनी काम - वासना की शिकार बनाकर बेहोशी में छोडकर चले जाते है । बस में चढ़े हुए पति, देवर, सास ससुर आदि सब बस कुछ दूर जाने के बाद जान लेते हैं और खोजते भी है । न मिलने की वजह से पुलिस स्टेशन में रिपोर्ट देते है । पुलीस उसे टॉवबण्ड के नीचे बेहोशी में पहचानते है और अस्पताल को ले जाते हैं । जब होश आती है वह रोती हुई घर ले जाने के लिए कहती है तो उसे घर ले जाते हैं । पति को गले लगाते हुए वह एकदम रोने लगती है । लेकिन प्रतिष्टा को ही स्थान देनेवाले वह मध्यवर्ग का परिवार शिरोषा के घरवालों को खत लिखते है कि अपनी बेटी को वापस ले जाने के लिए । कल जिन लोगों ने उसे प्रशंसा की । उन लोगों का तिरस्कार की भावना न सहन करके आमघात कर लेती है ।

यह कामवासना अनेक संकटों का कारण बन जाती है । रामायण में लंका का विध्वंस का कारण बना हुआ रावण, महा भारत में कीचक आदि राजाओं की काम - वासना ही उनके पतन का मूल कारण बन गयी । उसी प्रकार क्लियोपात्र से ईजिप्ट, हेलेन से ट्राय, आदि जब कामवासना की वजह से अपना अपना साम्राज्य खो गये । एक तरह से महाभारत और रामायण में " कामवासना " से उत्पन्न प्रलय का ही सूचना दी गयी है ।

6• (ख) गंगा प्रसाद विमल " शीर्षहीन " -- शारदा अशोक वर्धन "प्रतिष्टा " :-

इन दोनों कहानियों में " पुरानी मूल्यों का या भारतीय मूल्यों का स्वीकार या अस्वीकार का चित्र है । " शीर्षहीन " के पूरे पात्र अत्याधुनिक है लेकिन " " पस्तु " (प्रतिष्ठा) के पात्र आधुनिक भी है और परंपराबद्ध थी । शारदा अशोक वर्धन ने कहानी में उच्च मध्यवर्ग और निम्नवर्ग का विभाजन किया और निम्न वर्ग के पात्र को आधुनिक बना दिया । लेकिन शीर्षहीन के पिता तो एक अलग किस्म का है । उसको पुरानी पीढी के अन्तर्घात नहीं देख सकते । एक तरह से वह पुत्र से भी आधुनिक लगते हैं । लेकिन " पस्तु " में पुरानी पीढि है परंपराबद्ध । इसीलिए वे अपनी पुत्रवधु को छोडने के लिए तय्यार है । वही घटना गरीबों में जब होती है तब पत्नी को आत्मविश्वास बढाते हुए, धीरज देते हुए उसे अपनाता है और जीने की प्रेरणा देता है ।

" शीर्षहीन " में पुत्र " पिता " को भेंट के रूप में एक सुन्दर स्त्री से शादी करना चाहता है तो " पस्तु " में पुत्रवधु को, बिना उसकी गलती से ही उसकी मौत का कारण बनते हैं । शीर्षहीन में " पिता " अपने पुत्र को पूर्ण आजादी देता है । लेकिन " पस्तु " में पुरानीपीढी माने पिता अपने पुत्र को संपूर्ण आजादी नही देता बल्की पुत्रवधु को घर से निकालने के लिए तय्यार हो जाता है । शीर्षहीन का " पिता " अत्याधुनिक है तो " पस्तु " का पिता पुरानी पीढी का प्रतीक है । उसी प्रकार पुत्र भी पुरानीपीढी का ही प्रतीक है लेकिन पस्तु में ही एक अन्य पात्र " नीरसिंहलु " आधुनिक है ।

7. (क) महेन्द्र भल्ला -- एक पति के नोट्स " :-

सातवें दशक के प्रसिद्ध कहानीकारों में महेन्द्र भल्ला कई दृष्टियों से उल्लेखनीय है। उन्होंने आधुनिकता के खोखले चेहरे उघाड़ने में जरा भी कोताही नहीं की। अपने आस-पास के परिवेश की स्थितियों को उन्होंने यथार्थ एवं सजीव वर्णन किया है। उनकी कहानियोंमें जीवन की विसंगतियों खोखलेपन एवं मौन कुंठाओं का मार्मिक ढंग से यथार्थ के बदलते सन्दर्भों के व्यापक परिप्रेक्ष्य में उद्घाटित किया गया है। वहाँ आधुनिक व्यक्ति की मानसिक संवेदनाओं पति-पत्नी के बदलते सम्बन्धों और अंतर्विरोधों का सूक्ष्म रेखांकन हुआ है। सम्प्रेषण के स्तर पर निर्वैयक्तिकता और तटस्थता का प्रयोग महेन्द्रभल्ला की अपनी विशेषता है। इन सभी विशेषताओं को उनकी अत्यन्त प्रसिद्ध कहानी " एक पति के नोट्स " प्रमाणीकृत करती है।

कहानी में नायक की पत्नी सुन्दर है। दोनों ने प्रेम विवाह किया है। मगर उसमें एक प्रकार का असंतोष है। दोनों के बीच भावात्मक अलगाव पैदा हो गया है। इस असंतोष का कारण बताना मुश्किल है। दोनों में एक दूसरे से ऊब जैसी चीज पैदा हो गयी है। दोनों में बाहरी सम्प्रेषण मात्र दिखावा है। पति को औरत के रूप में पत्नी सुन्दर ही लगती है लेकिन सुन्दर होने पर भी पत्नी का भाव होने से चिपचिपाहट महसूस करता है और सुन्दर न होने पर भी पड़ोसी लड़की चन्दा को फ्लर्ट करने की कोशिश करता है। अपने आपको कहीं ऊँचा और इज्जतदार मानकर वह पड़ोसी किशोरीलाल को " गधा " कहता है और उसकी बीबी को भी पाने की इच्छा रखता है " ऐसे आदमी के साथ सन्ध्या - जैसी स्त्री कैसे रह लेती है। अधिक दिन नहीं रहेगी।"[1] इस लालसा को अपनी पत्नी के सामने बिना हिचकिचाहट से प्रकट करने में संकोच नहीं करता और इसकी प्रतिक्रिया में सीता भी कुछ नहीं कहती। अपनी पत्नी से यौन संबंधों के समय " मार्लिन" मनरो जैसी अभिनेत्रियों को ध्यान में रखने की विवशता हो तो इसका मतलब यह है कि पति-पत्नी के संबंधों में भयंकर एक रसता आ चुकी है।

इस प्रसंग से यह स्पष्ट होता है कि प्रेम, परिवार, सेक्स, पति-पत्नी सम्बन्ध, पड़ोसी व्यवहार आदि के संदर्भ में स्थापित मान्यताओं आदर्शों के विपरीत और भिन्न नैतिकता यहाँ दिखाई पड़ती है ।

जिस प्रकार का अनुभव होना चाहिए या जिस प्रकार से जिस कोटी का अनुभव करना सिखाया गया है, उनसे हटकर महेन्द्र भल्ला की यह कहानी प्रामाणिक अनुभव पर जोर देती है ।"[1]

कहानी में कभी-कभी संवादों में पुराने आदर्शों को भी गौरवपूर्ण दिखाने का प्रयास हुआ जैसे " हम औरतें अपने को बहुत टाल लेती हैं .... हमको अगर घर मिल गया तो हम बहुत कुछ सह सकती हैं ।"[2]

नायक मैं के द्वारा कहानीकार ने आज के आधुनिक संसार में बदलते मूल्यों और प्रतिमानों को चित्रित किया है । पति को आदर्शों से चिढ़ है और वह अपने यथार्थ से ही जुड़े रहना चाहता है । लेकिन आदर्शों को नहीं मानने के कारण ही "पति" को संत्रास झेलना पड़ता है । यही उसकी ﴾आधुनिक लेखक﴿ की विडम्बना है । परम्परागत विचारों से वर्तमान अनुभूतियों को अलगाने की चेष्टा करके महेन्द्र भल्ला ने नयी कहानी के सीमान्त पर एक नया कथा स्वर ध्वनित किया । इस कहानी में नायक द्वारा विवाह के सन्दर्भ में आधुनिक दृष्टिकोण देख सकते हैं । सुन्दर दिखायी देनेवाली हर स्त्री से संबंध रखने की लालसा पुरुष की भोगवादी सामन्ती चंचल मन स्थिति को स्पष्ट करती है । विवाहित पत्नी को छोड़ने की बेईमानी भी कर सकता है लेकिन " दूसरी शादी " में देर लगेगी । तब तक यह सेक्स कहाँ मिलेगा । सीता के मन में भी विवाह नामक संस्था के प्रति आदर नहीं है । यहाँ पर पति के लिए विवाह मात्र शारीरिक तृप्ति का साधन है और पत्नी के लिए एक आश्रय पालने का ।

---

1. नयी कहानी संदर्भ और प्रकृति - डॉ॰देवीशंकर अवस्थी - पृ॰ 202॰
2. एक पति के नोट्स : महेन्द्र भल्ला - पृ॰ 24॰

नायक के माध्यम से कहानीकार दाम्पत्य की धारणा पर गहरे प्रश्न टिप्पणियों के माध्यम से उठाता है । आत्म विश्लेषण करते हुए नायक कुछ ऐसी बेलाग मगर वस्तुगत टिप्पणियाँ करता जाता है जो गृहस्थी की परम्परागत सोच को छीलकर रख देती है । कहानी का शीर्षक इस अर्थ में सफल है कि इसमें दाम्पत्य का दैनन्दिन विवरण है । " एक पति के नोट्स " का संसार वैवाहिकता का भीतरी संसार है, संभवतः इस कारण से भी व्यापक रूप से यह कहानी चर्चित बन गयी ।

7• {क} रवीन्द्रकालिया -- " नौ साल छोटी पत्नी " :-

साठोत्तर हिन्दी कहानीकारों में स्त्री-पुरुष संबंधों को लेकर कई चर्चित रचनाएँ हुई । इस प्रकार की कहानी लिखनेवालों में रवीन्द्रकालिया भी है । समकालीन युवा कहानीकारों की कहानियों के साथ उनकी कहानियाँ मानो एक नयी बहस की शुरुआत करती है । समकालीन युवा कहानीकारों में कालिया एक तीखी मानसिकता तथा तर्क लेकर कथा रचना में प्रवृत्त हुए । रवीन्द्रकालिया की कहानियाँ अधिकांशतः महानगरीय परिवेश में लिखी गयी है । उनकी आधुनिकतावादी दृष्टि के अनुसार महानगर की न कोई आत्मा होती है न कोई चरित्र ही होता है । वहाँ आदमी भीड में भी अकेला होता है । जिन्दगी का अर्थ शरीर और पैसा मात्र होते है । रवीन्द्रकालिया में परिवेश की स्थितियों को व्यापक परिप्रेक्ष्य में अनुभूतियों के माध्यम से अभिव्यक्त करने की क्षमता है । आधुनिक जीवन के मानसिक संकट, मृत्यु, सन्त्रास आदि को उन्होंने अपनी कहानियों में व्यक्त किया है ।

" नौ साल छोटी पत्नी " में ऊपरीतौर पर लगता है कि पति-पत्नी के बीच समस्या सिर्फ आयु भेद के कारण उत्पन्न समझदारी के फासले की ही है । कालिया जीवन की विसंगतियों और विडम्बनाओं के कहानीकार है । वस्तुतः दाम्पत्य की समस्याओं

का समाधान जीवन से संवेदनात्मक जुड़ाव में ही होता है। कुशल अपने से नौ साल छोटी होने के कारण अक्सर संदर्भवश अपनी पत्नी को याद दिलाते रहते है कि --

" कई बातें अभी तुम्हारी समझ में नहीं आती .... तुम अभी बच्ची हो ... "।

इस कहानी में महानगरीय जीवन परिवेश में पति-पत्नी के संबंधों के बारे में सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक चित्रण मिलता है। सुखद वर्तमान जीवन गुजारने के लिए अतीत से समझौता करते हुए चलना आज की मानवीय विडम्बना है, यह इस कहानी में व्यक्त हुई है। कुशल का अपने कालेज के दिनों में एक लड़की से प्यार था। वह पत्नी तृप्ता के साथ उसकी बुआ के लड़के (रवीन्द्र) के साथ प्रेम होने का अनुमान ट्रन्क में रखे प्रेम पत्रों से लगता है जिनके आधार पर तृप्ता पत्रिका के लिए कहानी लिखकर भेजती है। इस गुजरी हुई घटना को बार-बार याद दिलाते हुए वह उसे रुलाता है और सान्त्वना देते हुए शारीरिक सुख प्राप्त करने का प्रयास करता है। पति-पत्नी के बीच लेखक जान-बूझकर ऐसे प्रसंग को लाता है जो सम्बन्धों में ऊब, घुटन, टूटन, अकेलापन आदि की स्थितियाँ लानेवाले होते हैं।

इस प्रकार स्त्री-पुरुष, पति-पत्नी के संबंधों में विघटन, भीड़ में अकेलेपन, मानसिक घुटन, कुण्ठा आदि संवेदनाशील तत्व सातवें-आठवें दशक की कहानियों में प्रमुखता पाते हैं।

---

1. नौ साल छोटी पत्नी - कालिया - पृ. 28.

7• ‍(क) तप्पुकु काल्लुरावालि (गलती को पैर आना चाहिए) वाकाटिपांडु रंगाराव :-

वाकाटिपांडु रंगाराव की कहानियों में प्रसिद्ध कहानी है । तप्पुकु काल्लु रावालि (गलती को पैर आना चाहिए) इस कहानी में नैतिक मूल्यों का पतन और बचाने का संघर्ष प्रस्तुत किया गया है ।

इस कहानी में " मधु " नामक एक अविवाहित युवक को बीमारी की वजह से अस्पताल में रहना पडता है । तब विवाहित लेडी डाक्टर कल्याणि से उसका परिचय होता है । उम्र में वह " मधु " से भी बडी है और डाक्टर है । " मधु " एक सीधा साधा आदमी है और एक साधारण नौकरी करता है । जितना सावधान रहने पर भी मधु को झुकना पडता है और कल्याणी से लैंगिक अनौपचारिक संबंध रखना पडता है । वह अपनी शारीरिक इच्छा को मधु से पूरा कर लेती है । लेकिन मधु के लिए वह पहली बार है तो कल्याणि के लिए पुरानी पड गयी ।

कालांतर में मधु की शादी हो जाती है । लेकिन अपनी गलति को जो कल्याणि से हुआ था । वह नही भूल पाता । हमेशा अपनी गलती के लिए पछताता रहता है और दु:खी होता है । शादी के बाद और भी दु:खी हो जाता है । डाक्टर कल्याणि विदेश जाती है और वही मर जाती है । मधु के मन में वह गलती मिटती नही । दिन ब दिन बढ़ती जाती है । वह अपने जीवन को नरक बना देता है । वह (1964 - सैनिक समाचार) अपनी पत्नी से शारीरिक संबंध नहीं रख पाता । वह हमेशा चिंतित रहता है ।

7. (ख) महेन्द्रभल्ला " एक पतिका नोट्स - वाकाटिपांडुरंगाराव " तप्पुकाल्लु रावालि " - रवीन्द्र कालिया -- " नौ साल छोटी पत्नी " :-

इन कहानियों में अनैतिक शारीरिक संबंध का चित्र है । " एक पति के नोट्स " में पुरुष पात्र " खूब सूरत औरतें " नजर आयी तो उससे शारीरिक संबंध रखना चाहता है और अपनी ओर से असफल कोशिश भी करता रहता है । " तप्पुकु काल्लु रावालि " में एक " स्त्री " (कल्याणि) जो डाक्टर की पेशा में थी वह बीमारी की वजह से आया हुआ मधु नामक युवक से उसकी कमजोरी का लाभ उठाते हुए शारीरिक संबंध रखती थी । उस युवक के लिए तो वह शुरुआत थी लेकिन उसके लिए वह युवक अनेकों में एक है । वह डाक्टर, देश को छोडकर चली जाती । लेकिन मधु उसे भूल नहीं पाता और शादी होने के बाद भी अपनी गलती के बारे में पछताता रहता है । पत्नी से भी शारीरिक संबंध नहीं रख पाता । वह हमेशा अपनी गलती को स्मरण करते हुए जीवन बिताता रहता है । डाक्टर कल्याणि तो विदेश में ही मर जाती है लेकिन उसकी गलती तो नहीं मरती । मधु की जिन्दगी को नाश कर देती है । " एक पति का नोट्स " में पति का पात्र अन्य खूबसूरत युवतियों से शारीरिक संबंध रखने के लिए व्याकुल है । रवीन्द्रकालिया की " नौ साल छोटी पत्नी " में भी दाम्पत्य जीवन का ही एक चित्र है । महानगरीय परिवेश में " विवाह संबंध " और दाम्पत्य जीवन का खोखलापन को नक्शा है ।

भारतीय मूल्यों की रक्षा तेलुगु कहानियों में है तो विवाह प्रथा पर कीचड कीचड उछालते हुए मूल्यों का पतन करने की स्थिति हिन्दी कहानियों में है ।

8• (क) महीपसिंह -- " कील " :-

इस कहानी में आधुनिक पारिवारिक परिवेश में पलनेवाली एक युवती के मानसिक संघर्ष को उभारा गया है। मानसिक संघर्ष से मुक्ति पाने का एक अहसास भी है।

मोना के पिता और माता, एक योग्य युवक से शादी करना चाहते है। अपनी तरफ से बहुत कोशिश करते हैं। लेकिन मनपसन्द युवक नहीं मिला। इसका मूलकारण यह भी है कि मोना के पिता हमेशा उसकी प्रशंसा करता रहता है। जैसे --

" वह देवी है ... गॉडिस ... डेडी सभी से कहते रहते हैं .... मोना मामूली लडकी नहीं .... उसके लिए मामूली लडका नही चाहिए।

मोना का उम्र भी कम नही है। " सुरेश " नामक युवक से शादी करना चाहते थे। मोना मानसिक संघर्ष में फँसी थी। मेरे लिए योग्य और लायक पुरुष कहाँ है ? कौन लायेगा ? आदि प्रश्नों के लिए उत्तर ही नही है।

1• महीप सिंह - कील - पृ• 412•

मोना की मम्मी लिखती है -- " मोना, अब और ज्यादा रुकना ठीक नहीं । हर बात की एक उम्र होती है फिर लडकी तो एक ऐसा फूल है कि अपनी डाल पर लगे-लगे मुरझा जाता है और अगर उसे तोडकर किसी के कोट पर लगा दिया जाये तो उसकी ताजगी खत्म होने में ही नहीं आती । अब तुम्हें फैसला कर ही लेना चाहिए । मुझे तुम्हारे डैडी की बात अब तो बिल्कुल समझ में नहीं आती । यह ठीक है कि तुम लाखों में एक हो । परन्तु अब ऐसा लडका, जो तुम्हारे डैडी को भी पसन्द हो और तुम्हें भी पसन्द हो, कहाँ से ढूँढा जायेगा और आखिर यह ढूँढाई कब तक चलती रहेगी । मेरे ख्याल में सुरेश सब तरह से तुम्हारे काबिल है । वह तुम्हें चाहता भी बहुत है और तुम्हारी कितनी इज्जत करता है .... "[1]

लेकिन मोना को तो ऐसा लडका चाहिए -- "जो इसके अन्दर छिपी उन अनन्त शक्तियों को पहचान सके और उन्हें फलने-फूलने के सभी साधन जुटा सके । एक दब्बू स्वभाव का लडका यह काम नहीं कर सकता ।"[2]

ऐसे लडके के लिए कब तक इंतजार करेगी । उसकी उम्र इंतजार करेगा ? "वह शीशे के सामने आकर खडी हो जाती है । अपने आपको देखती रहती है, अपना पाँच फुट छः इन्च का कद, अपनी बडी-बडी आँखें, अपनी लम्बी सुडौल बाँहें, अपना भरा हुआ शरीर और ...... बहुत अन्दर तक बैठी हुई एक मोना ... एक बहुत जाग्रत मोना ।"[3]

अंत में सुरेश से ही शादी करने का निर्णय लेती है और पिताजी से अपना निर्णय सुनाती है ।

---

1. महीप सिंह - "कील" - पृ. 410
2. - वही - पृ. 410, 411
3. - वही - पृ. 411, 412.

8· [क] माहेश्वर " पेशाब " :-

माहेश्वर की कहानियों में उल्लेखनीय कहानी है " पेशाब " । इस कहानी में बालमनोविज्ञान का चित्र खींचा गया है लेकिन कुछ जगहों में " सेक्स " का भी चित्रण भी देख सकते हैं ।

कहानी में " राजू " नामक एक बालक अकेला सो नहीं सकता । नींद में उसे भूत दिखायी देती है । इसीलिए उसकी माँ, उस बालक सुलाकर अपने पति के पास जाकर सोती है । पिता और पुत्र, दोनों एक दूसरे को नफरत करते थे । पिता सोचता था " महत्वपूर्ण रात को, नींद को, यह राजू बेकार कर रहा है । पुत्र सोचता था " पिता की वजह से माँ हमेशा उसके पास नहीं सो रही है । इस के लिए बिना कारण से ही पिता उसे हमेशा पीटता था । हर दिन ऐसा ही होता है ।

लेकिन एक दिन, राजू को पेशाब करने के लिए उठना पड़ता है । वह खुद ही पेशाब करना चाहता है लेकिन भूत दिखायी देता है हर दिन माँ आकर उसे ले जाती थी । बाद में पिताजी भी उसे पीटता था । इसीलिए पलंग में ही कर देता है ।

एक दिन, राजू सोने का नाटक करते हुए अपने माता-पिता क्या कर रहे है ? यह देखना चाहता है । इसीलिए वह उनके पलंग के पास ही रह जाता है । राजू देखता है कि माँ पिता दोनों नंगे है और माँ के पेट पर पिता है । वह सोचता है कि स्त्री के पेटपर पुरुष सोने से बहुत अच्छा, लगेगा । इसीलिए वह उसे एक खेल समझकर, अपनी छोटी बहन से खेलना चाहता है । वह उसका बोझ न संभाल पाती और चिल्लाती है तो राजू, अपनी माँ से गालियां खाता है और पीट-मार भी ।

कुछ दिन तक राजू ठीक नहीं हो पाता । वह घर से भागना चाहता है उसकी माँ अनेक बार पूछती है फिर भी जवाब नहीं देता है । लेकिन अंत में जवाब देता है और प्रश्नचिह्न लगाता है कि पिताजी को हमेशा पेट पर सुलाती हो, मुझे तो कभी भी नहीं सुलाती । तब राजू की माँ को उसकी जिद्दी का कारण समझ में आती । वह उसे गले लगाकर, चुम्मा देकर अपने पेटपर सुलाने लगती है तो वह सो जाता है । दूसरे दिन वह खुद ही पेशाब करता है ।

8. (क) विलोमकथा - नग्नमुनि :-

नग्नमुनि की विलोम कहानियों में एक प्रमुख और प्रथम कहानी है -- " लैका मञ्जू की प्रणय कथा ।" ।

इस कहानी का मूल तथ्य " कुक्कुटेश्वरराव " नामक एक आदमी कुत्ते को पालने में मग्न है । उसको लेकर समाज की पारिवारिक स्थिति, व्यक्तियों की मन: स्थिति को व्यंग्य से चित्रित किया गया है । इस कहानी में एक आदमी को अधूरा जीवन का चित्र खींचा गया है । कहानी में एक जगह कह रहा है --

वेंकटाव, परसों एक आदमी मेज के नीचे से नोटों का बांछ दिया था न ? कल तो एक औरत से सिनेमा देखने के लिए गया था न ? लैका (कुत्ता) के लिए खाने के लिए कुछ लाया ही नहीं, तुम्हारे पास आयी तो पीटा था न ? ऐसी बातें कहीं से सुनायी दी ।"

उनकी और एक विलोम कहानी है " ग्रहणम " । इस कहानी में अंगों का क्रय-विक्रय की स्थिति को स्पष्ट किया गया है । निर्जीव मानव के अंगों को नहीं, सजीव मानव के अंगों का क्रय-विक्रय होता है । अंग बदलना तो एक साधारण चीज की तरह दिखायी देती है । अंगों को बहुत कम कीमत में ही खरीद लेते है लेकिन बेचते समय बहुत रुपयाँ लेते हैं । अंगों को निकालना और जोडने का काम भी वहीं होता है । कहानी में एक जगह कहानीकार स्पष्ट करता है --

" यह सरकार से चलानेवाला मार्केट है । इसकी विशेषता है कि यहाँ बच्चों की सैज से लेकर बड़ों के सैज तक जमनेवाले, मानव शरीर के अंगों के भाग मिलते हैं । अमीर लोग, अपने लिए आवश्यक अंगों को इस मार्केट से ही खरीद लेते हैं । यहाँ की माँग के अनुसार दूसरे प्रांतों को भी भेजा जाता है । ये मरे हुए मानवों के अंग नहीं, जीवित मानव के शरीर से निकालकर बड़े बड़े शीशों में लाल रंग के द्रवकों में रखकर, खरीदनवाले ग्राहकों के शरीरों को शास्त्रों से जुड़वा जाते हैं । मस्तिष्क गोभी की तरह है । आँख, नाक और कान विकसित फूलों की तरह शीसों में रखा गया है । वे प्लास्टिक नहीं बनाया गया । वे सब मानव के अंग ही हैं । उनको भी किसी को आवश्यकता पड़ने पर बेचनते हैं । बड़े बड़े महलों में रहनेवाले अमीर लोग, उनको ड्राइंग कमरों में रख लेते हैं । मानव के अंगों को खरीद सकनेवाली अपनी संपत्ति को, ताकत को घर को आनेवाले मेहमानों को दिखाना अपना इज्जत समझते हैं । कौंटर के पास आकर एक मानव प्रार्थना कर रहा है --

" साब पहले मेरा कान लेकर, मुझे बेज दीजिए ।"

और एक मानव कहा रहा है --

" नहीं नहीं, पहले मेरा हाथ लीजिए ।"

इस प्रकार अंगों की क्रय-विक्रय की स्थिति इस कहानी में प्रस्तुत है ।

8• §क§ बोल्वाड कांताराव "पनीष-पशुपु" § मानव और जानवर § ::-

बोल्वाड कांताराव को कहानियों में,प्रसिद्ध कहानी है " मानव और जानवर " । " मानवता और पशुता में जब भी संघर्ष होता है तब एक उमर आये तो दूसरा नीचे जाता है । उसका ही चित्र इस कहानी में प्रस्तुत किया गया है । इस कहानी को प्रमुख विशेषतायें इस प्रकार है --

1• कहानी में कथ्य का चयन बहुत आकर्षक है ।
2• कहानीकार साइभा के पात्र में सोचते समय पक्षपात दृष्टि को छोडकर तटस्थ रहकर सोचता है ।
3• कथाकथन् सीधा, संक्षिप्त और स्पष्ट है ।

इस कहानी का वातावरण " बंबई " का है । वहाँ की समकालीन परिस्थितियों और समस्याओं का नग्न चित्र खींचा गया है । वह इस प्रकार है --

इस कहानी का मूल पात्र है साइभा और पाटिल । पाटिल, गुडागिरी करके अपना जीवन जीता है । वह दफ्तर को वक्त पर नहीं आता और काम भी ठीक तरह से नही करता । बदली होने से उस दफ्तर में आना पडता है । साइभा को कुछ लोग पहले ही बता देते हैं " पाटिल " के बारे में और सावधान रहने की सुझाव भी देते हैं । साइभा सोच समझकर ही, चाहकर ही पाटिल से दोस्ती करता है । पूछने पर उसे पैसे भी देता है । उसको बदलने के लिए पूरी तरह से कोशिश करता है । एक बार पाटिल, साइभा से कहता है -- § कहानीकार पाटिल के जरिये सामाजिक स्थिति का चित्र स्पष्ट करता है §

आप नीति के बारे में मुझसे इतना बताये । इस महान शहर को देखिये - मंजिलों में रहनेवाले धनिक या अमीर वर्ग, बाजू में रहनेवाले झोंपडियों की ओर नही देखते । हर दुकान में धोखेबाजी ही नजर आती है । वहाँ चर्च गेट के पास, स्टेशन

के पास जाकर सौ का नोट पकड़कर खड़े रहिए। अपना पूरा शरीर दिखाकर, खूबसूरत युवती तुम्हें खींचकर ले जायेगी। नीति को बचाने वाले पुलीस, सरकारी अफसर, अदालत आदि सब में नीति कहाँ है ? आप ही बताइये। संसार में इतने लोग भूखा-प्यासा मर रहे हैं तो ये आडंबर, दावत, व्यापार और ये सब क्या है ? पेड़ को देखिये, वह समय के अनुसार (कालानुसार) फल देती है, मुर्गी अंडा देती है, कुत्ता, पशु ये सब अपना अपना काम कर देते हैं। लेकिन यह आदमी ? पेट के नाम पर क्या-क्या कर रहे हैं साइभा ? पेट भरने के लिए मुट्ठी भर घास काफी नहीं है ? संसार में नीतिहीन जानवर मानव ही है। जनता में नीति कहाँ है ? नीति सिर्फ किताबों में ही लिखी है साइभा।"

उपर्युक्त कथन से महानगरों के सामाजिक वातावरण सामने आता है। साइभा, पाटिल को बदलने में सफल हो जाता है लेकिन अंत में पाटिल, अपनी पत्नी के चलन से तंगाकर उसको खून कर देता है।

इस कहानी में पशुप्राय मानव को मानव बनाने में कहानीकार पूर्णतः सफल हुए। साथ-साथ महानगरों की सामाजिक स्थिति का नग्न चित्रण भी प्रस्तुत किया है।

---

1. बलिवाड कांताराव कथलु - पृ. 12.

8. {क} छायलु {छायायें} – मुल्लपूडि वेंकटरमणा :-

चैतन्यस्रवन्ति के दृष्टिकोण में लिखी गयी कहानियों में एक उल्लेखनीय कहानी है " छायलु " {छायायें}। मुल्लपूडि वेंकटरमणा हास्य कहानीकार होने पर भी चैतन्यस्रवन्ति दृष्टिकोण में लिखी गयी कहानी है " छायलु " {छायायें}।

इस कहानी का मूल पात्र है " सुब्रह्मण्यम् " जो अपने छोटे भाई के लिए खोज रहा था। उसका छोटा भाई पच्चीस रुपयाँ घर से चोरी करके भागा। उसे पकड़ने के लिए ढूँढ रहा था। कहानी में कुछ विषय तो है ही नहीं। पूरी कहानी कल्पना जगत से भरी हुई है। सुब्रह्मण्यम् में कवि जागकर श्री श्री की तरह कहने लगता है --

ये बेकारी अनाथ, अभाग्य माननेवाले भारतवासी, खाने के लिए खाना, रहने के लिए मकान, पहनने के लिए कपडा -- " ऐसा सोचते हुए सेंट्रलहाल को जाता है। वहाँ भी ढूँढने लगता है। एक पुलीसवाला जो एक गुंडा के समान है वह पूछता है कि तुम यहाँ क्या कर रहे हो और क्यों घूम रहे हो और वह सुब्रह्मण्यम् को एक रोमियों समझता है। पहले सुब्रह्मण्यम् उसे तो गुंडा ही समझता है लेकिन बाद में उसे समझता है सि.ऐ.डि. ही उस वेश में है। महीने के अंत में मुकद्दमों के लिए पुलीस ऐसे ही करते है। इसीलिए वे वेश बदलकर ऐसा घूमते है।

जब वह सेन्ट्रलहाल से बाहर आकर बस चढ़ना चाहता है तब ऐसा डरता है कि पिक्पाकेट के जुर्म में ये पुलीस मुकद्दमा लगायेगा, ऐसा सोचकर, बस को छोडकर पैदल चलने लगता है। रास्ते में एक गाडी में चिपकाई गयी पोस्टर देखता है जो बहुत सेक्सी है और मन में काम वासना फैलानेवाली है। उसे देखने से सुब्रह्मण्यम् में काम वासना की लहरें उठकर बहती हैं। वह, वहाँ अगल बगल में कोई भी न रहता देखकर, उस स्त्री के उरोजों पर माने दीवार में चिपकाई गयी पोस्टर को स्त्री की उरोजों पर हाथ रखकर सुख पाता है।

बाद में सर्किल इन्सेपेक्टर आता है तो उसे सेन्ट्रलहाल की घटना सुनाता है। वे दोनों मिलकर फिर उधर जाते हैं। सिविल ड्रेस के पुलीस को, यह सर्किल इन्सेपेक्टर गालियाँ देकर सुब्रहमण्यम से क्षमा याचना करने के लिए आज्ञा देकर छोड देता है। उसके बाद सिनेमा देखने के लिए जाता है। उस सिनेमा की नायिका के अंगों की सुन्दरता, उसके दिमाग में अनेक इच्छायें पैदा करती हैं। साथ-साथ बाहर देखी गयी रोजों की पोस्टर ये दोनों एक दूसरे से मिलकर उसको घर ले जाते हैं " रंगारंग कल्पना में उसकी इच्छाओं को पूरा करने के लिए।

इस कहानी में दो ही पात्र हैं। एक सुब्रहमण्यम है तो दूसरा सि•ऐ•डि•। प्रथम भाग में छोटे भाई को खोजने की स्थिति में सुब्रहमण्यम में कोप, डिटेक्टिव, कल्पना के गीत प्राण दिये तो, दूसरे भाग में सेंट्रल हाल में पुलीस से अपमानित होना, बदला लेने की भावना, उससे उत्पन्न विचारें प्राण प्रतिष्ठा करती हैं। सिर्फ एक ही जगह अपने मन उत्पन्न कामवासना को दबाने के लिए, प्रोस्टर में हीरोइन के उरोजों को हाथ से छूता है। सिर्फ यह बात को छोडकर बाकी सब कल्पनाओं पर आधारित है। इस प्रकार की कहानी घटनाओं पर, बातचीतों पर दृश्यों पर आधार रखे बिना पात्र के मन में उत्पन्न विचारों के अनुसार ही निर्मित होने की वजह से चैतन्यस्रवन्ति की कहानी के रूप में भी लिया जाता है।

इस प्रक्रिया को विशिष्टता पहुँचानेवाले जेम्स जाइस का " यूलीसस " भी एक नयी प्रक्रिया के रूप में ज्ञानियों से नाम तो पायी। लेकिन सामान्य पाठकों से प्यार नही पायी। इसीलिए कोई भी रचनाकार इस प्रक्रिया में कहानी लिखने का साहस नही करता। बुच्चिबाबु, सदालेद शारदा जैसे एकाद कहानीकार ही इस प्रक्रिया में शामिल है।

8. (ख) तुलना :-

कील (महीपसिंह), पेशाब (माहेश्वर) और विलोम कहानियाँ (नग्न ... छायायें (मुल्लपूडि वेंकटरमणा), मनीषि-पशु (बल्लिवाड कांताराव) अलग-अलग दृष्टिकोण से लिखी गयी हैं। हिन्दी कहानियों में अश्लील वर्णन की छायायें कहीं-कहीं हद से बढ़ कर हैं। लेकिन तेलुगु की कहानियों में सिर्फ एकाद जगहों को छोड़कर ऐसा नग्न चित्रण नहीं है। "पेशाब" में पारिवारिक वातावरण को लेकर, खास करके बाल मनोविज्ञान के धरातल पर "बच्चों" के मन में उठनेवाली भावनाओं को स्पष्ट किया गया है। एक परिवार में उत्पन्न होनेवाली यौन संबंधों की समस्याओं को लेकर कहानी की रचना हुई है। समसामयिक सामाजिक परिस्थितियों से उत्पन्न समस्याओं को लेकर बल्लिवाडकांताराव की कहानी "मनीषि और पशु" (मानव और जानवर) की रचना हुई। इसमें पशुप्राय मानव को परिवर्तन लाने की कोशिश है। महीपसिंह की कहानी "कील" और मुल्लपूडि वेंकटरमणा की कहानी "छायायें" में कथ्य की प्रमुखता नहीं है। अश्लील चित्रण को लेकर अंगों का वर्णन किया गया है। लेकिन दोनों कहानियों में अन्तर तो सिर्फ एक ही है। महीपसिंह की "कील" में जीवित "युवती" के अंगों का वर्णन है तो मुल्लपूडि वेंकटरमणा की "छायायें" में एक पोस्टर में चित्रित खूबसूरत युवती को लेकर है। साथ-साथ कहानी के वातावरण में भी अन्तर देख सकते हैं। "कील" की परिस्थितियाँ जो हैं वे सिर्फ एक ही परिवार से संबंधित है लेकिन "छायायें" की परिस्थितियों में तालमेल और मेलजोल दिखायी नहीं देता और मौलिकता भी नहीं है। ऐसा लगता है एक घटना दूसरी घटना से जुडाया गया है। इसमें कुछ कथ्य ही नहीं है लेकिन कील में अपनी बेटी की शादी योग्य युवक से करने की तमन्ना पारिवारिक सदस्यों में मिलता है। दोनों कहानियों के प्रमुख पात्र "मोना" और "सुब्रह्मण्यम" में कल्पना का चित्र खींचा गया है।

5· साम्य और वैषम्य - एक तुलना :-

इस युग की हिन्दी और तेलुगु कहानियों की कथ्य-योजना में काफी साम्य मिलते है क्योंकि उस समय पूरे देश की सामाजिक और आर्थिक स्थितियों ने इन दोनों क्षेत्रों को प्रभावित किया था। कहानियों में विघटित सामाजिक विसंगतियों के प्रति विद्रोह मिलता है और साथ ही यौनकुंठा और राजनीतिक भ्रष्टाचार का भी विश्लेषण किया गया है। कहानियों में कहानीकारों ने अति यथार्थ चित्रण किया है खास करके हिन्दी कहानीकारों ने। अनेक हिन्दी कहानियों में अंगों का वर्णन अश्लीलता और नग्नता का चित्रण है। लेकिन तेलुगु कहानियों में जनक्रान्ति का जितना आह्वान किया गया है उतना इस युग की हिन्दी कहानियों में नहीं हुआ। तेलुगु कहानीकारों का दृष्टिकोण, हिन्दी कहानीकारों की अपेक्षा अधिक मार्क्सवादी और शोषकवर्ग के विरूद्ध उठा हुआ आवाज है साथ ही यह भी स्वीकार करना होगा कि तेलुगु कहानियों का मूल लक्ष्य समाज सुधार ही है न कि हिन्दी कहानियों की तरह अश्लीलता और नग्नता का चित्रण। तेलुगु के कहानीकारों ने, राजनीति में व्याप्त भ्रष्टाचार का खुलकर विरोध किया है और आधुनिक राजनीति के प्रति जो घृणा व्यक्त की है वह हिन्दी कहानियों में उतनी नहीं मिलती।

हिन्दी और तेलुगु कहानियों में किया गया अंगों के वर्णन के पीछे कहानीकारों का दृष्टिकोण अलग-अलग रहा है। खास करके हिन्दी कहानीकार पाश्चात्य प्रभाव से और अपने आपको कहानी के क्षेत्र में जमाने के लिए अश्लीलता का सहारा लिया। लेकिन तेलुगु के कहानीकारों में " नग्नमुनि " जैसा एकाध कहानीकार को छोडकर अन्य अनेक कहानीकारों ने वर्णन की सीमा से आगे नहीं बढे। नग्नमुनि भी अपनी कहानियों में अंगों का वर्णन, व्यवस्था के प्रति अपना आक्रोश व्यक्त करने के लिए ही किया था न कि कल्पना जगत में डूबकर।

हिन्दी कहानियों में कथ्य को उतना प्रमुख स्थान नहीं है जितना तेलुगु की कहानियों में है । पूरी हिन्दी कहानियाँ दाम्पत्य जीवन का खण्डन और वैयक्तिक आजादी चाहनेवाली है । लेकिन तेलुगु की कहानियाँ वैवाहिक जीवन की रक्षा और समाज की भलाई के लिए हैं । हिन्दी कहानीकारों की तरह गुटबन्दी तेलुगु कहानीकारों में नहीं है अगर है तो भी सिर्फ दिगंबर साहित्यकारों को लेकर है । लेकिन उनकी कहानियाँ बहुत ही कम है । मानव मन को स्पष्ट करने में दोनों भाषाओं के कहानीकार सफल रहे हैं । अतियथार्थ चित्रण दोनों की कहानियों में पा सकते है । मानवतावाद के अनेक लक्षण तेलुगु की कहानियों में सामने आते हैं । लेकिन हिन्दी की कहानियों में मानवता की भावना बहुत कम मिलती है । हिन्दी कहानियों में व्यक्ति जीवन को ही प्रमुख स्थान दिया गया है । वह भी अपनी निजी जीवन को लेकर । लेकिन तेलुगु कहानियों में मूल्यों की रक्षा और समाज की सुरक्षा की कोशिश है ।

हिन्दी और तेलुगु कहानीकारों ने परम्परागत शिल्प विधान का उल्लंघन करके, उनको नया रूप प्रधान किया और अपनी मन की भावनाओं को सही रूप में अभिव्यक्त करने में सफल रहे हैं ।

6• निष्कर्ष :-

निष्कर्षत: कह सकते हैं कि सातवें दशक की कहानियों में प्रमुखत: सामने आनेवाली प्रवृत्तियाँ इस प्रकार हैं --

1• गिरिराज किशोर " पेपरवेट " और कालीपट्नम रामाराव जी " यज्ञ " में गाँव और शहर के शोषणकर्ताओं का असली रूप रेखांकित किया गया है। इसमें कहानियों के अंत से पलायनवादी प्रवृत्ति पाते है क्योंकि दोनों कहानियों में शोषण को दूर करने में असमर्थता मिलती हैं।

2• काशीनाथ सिंह " सुधीर घोषाल " -- नग्नमुनि " पंट तेगुलू " में गाँव और शहर के शोषण को दूर करने की कोशिश है। कहानियों का अन्त शोषण कर्ताओं की मौत से होता है। इन कहानियों में शोषण को नाश करने की कोशिश, मानवतावाद के अनेक लक्षण सामने आते हैं।

3• सुधासकुमार " स्थानपूर्ति " - नग्नमुनि " सिमेंटु सोलिति और रावि शास्त्री " न्यायम " कहानियों में समसामयिक जीवन में उत्पन्न आर्थिक समस्याओं का नग्न चित्रण है। इन कहानियों में मन:स्थितियों का वर्णन है। अकहानी के अनेक लक्षण पाते है।

4• कृष्णबलदेववैद " त्रिकोण " बालगंगाधर तिलक " परिवर्तना " में मनोविश्लेषण का चित्र खींचा गया हैं। दोनों कहानीकारों का दृष्टिकोण तो अलग-अलग होने पर भी मूल्यों की रक्षा करने की कोशिश है। इन कहानियों में भी अकहानी के अनेक लक्षण देख सकते हैं।

5• दूधनाथ सिंह " रीछ " प्रभाकर मंदारा " सारे जहा से अच्छा " कहानियों में अपनी-अपनी कामवासना को पूरा करने की स्थितियाँ है । दोनों कहानियाँ पूर्णत: अकहानियाँ ही हैं ।

6• गंगा प्रसाद विमल " शीर्षकहीन " शारदा अशोक वर्धन " पत्तु (प्रतिष्ठा) में मूल्यों का खण्डन और समर्थन मिलता है । " शीर्षकहीन " में आधुनिकता का चित्र खींच गया है तो " प्रतिष्ठा " में मूल्यों की रक्षा करते हुए मानवता को प्रमुख स्थान दिया गया है ।

7• महेन्द्र भल्ला " एक पति का नोट्स " और रवीन्द्र कालिया " नौ साल छोटी पत्नी ", वाकाटि पांडुरंगाराव " तप्पुकु काल्लु रावालि " कहानियों में अनैतिक संबंध रखने की स्थिति के विभिन्न रूप हैं । हिन्दी कहानीकार, " सेक्स " को प्रकृति का लक्षण मानते हैं तो तेलुगु कहानीकार " सेक्स " को अधिक महत्व देते हैं । कहानियों में मनोविश्लेषण, अंगांग वर्णन के साथ अनेक अकहानी के लक्षण हैं ।

8• महीपसिंह "कील" और मुल्लपूडि वेंकटरमणा "छायलु" (छायायें) में "कथ्य" को महत्वपूर्ण स्थान नही हैं । दोनों कहानियों में अंगांगवर्णन देख सकते हैं । कुछ आलोचक "कील" को सचेतन कहानी के रूप में लेते हैं । कहते है इसमें अंगांग-वर्णन सीमित है ।

9• माहेश्वर "पेशाब" और बलिवाड कांताराव "मनीषि-पशुवु" कहानियों में समसामयिक परिस्थितियों में चाहे वह परिवार हो या समाज हो उत्पन्न समस्याओं का चित्रण है । "पेशाब" में बाल मनोविज्ञान के लक्षण हैं तो "मनीषि-पशुवु" में मानवता के अनेक लक्षण है । पेशाब में अकहानी के लक्षण पाते हैं ।

सात्वेदशक की कहानियों में मानव की मन:स्थितियों को विभिन्न स्थितियों में स्पष्ट किया गया है । वैयक्तिक जीवन की प्रमुखता हिन्दी अकहानियों में देख सकते हैं तो तेलुगु कहानियों में समाज की सुरक्षा और मानवता के अनेक लक्षण देख सकते हैं ।

चतुर्थ अध्याय

समन्तर कहानी (1971 - 80)

चतुर्थ अध्याय

4. समांतर कहानी [1971 - 80]

1. पूर्व भूमिका
2. कहानी परंपरा : समांतर कहानी
3. स्वरूप और प्रवृत्तियाँ
4. उपलब्धियाँ
5. कहानी परंपरा और जनवादी कहानी
6. जनवादी कहानी स्वरूप और प्रवृत्तियाँ
7. तेलुगु कहानी की प्रवृत्तियाँ

   [क] आन्ध्रा प्रान्त [ख] रायलसीमा [ग] तेलंगाना

8. विश्लेषण
9. हिन्दी और तेलुगु की समांतर कहानी की प्रवृत्तियाँ : एक तुलना

   [अ] इब्राहीम शरीफ " अकाल " — रावि शास्त्री तोकुपिट्टी — तुलना

   [आ] कामतानाथ " छुट्टियाँ " — केतु विश्वनाथ रेड्डी " सहानुभूति " तुलना ।

   [इ] मधुकर सिंह " पूरा सन्नाटा " — सदानन्द शारदा " तोलकुबोंडा " — तुलना ।

   [ई] आशीष सिन्हा " आदमखोर " — अप्पलनायुडु " पाडुपोरु " - तुलना ।

   [उ] सतीश जमाली " प्रथम पुरुष " — चि.राजाराम मोहन राय " आदि लोडा वा रल्लु " — तुलना ।

   [ऊ] जितेन्द्र भाटिया " हलफनामा " रावि शास्त्री " पिपीलिकम " रमेश उपाध्याय " देवी सिंह कौन " — तुलना ।

{ऋ} कुलीप — अंतलीन – पैद्विक मौद्व कुल्वरामय्या " अख्वडि " — हुआ ।

{ए} संतोष " अपराध " — अस्त्मराव्वया " भूमि " { पनीन } हुआ ।

{ऐ} कमलेश्वर " माँस का दरिया " कमिडिमारि रामगोपाल " मनोधर्मु " - हुआ ।

पूर्व भूमिका

भारत-चीन युद्ध [1962] भारत-पाक युद्ध [1965] आदि से उत्पन्न स्थिति, सूखा, अकाल, नक्सलवादी प्रवृत्तियों की उभार, मुद्रा अवमूल्यन, मुद्रा-स्फीति, बढ़ती महँगाई, शिक्षित वर्गों में बेरोजगारी, खाद्यान्नों का संकट, आवश्यकता की विभिन्न वस्तुओं पर राशन और उनकी प्राप्ति के लिए लंबी-लंबी कतारें, देश में वामपंथी चिंतन का विकास आदि विभिन्न घटनाओं, स्थितियों और समस्याओं ने जीवन की स्थितियों को बहुत ही जटिल बना दिया। हड़ताल, जुलूस, घेराव, बन्द, तोड़-फोड़, हिंसा, दैनंदिन जीवन के अविभाज्य अंग बन गये। आन्ध्र प्रान्त की स्थिति इससे भिन्न नहीं थी। तेलंगाना में नक्सलवादी आन्दोलन, श्रीकाकुलम् में किसानों का आन्दोलन इस बीच और उल्लेखनीय है। देश भर में व्याप्त सामाजिक एवं राजनैतिक वातावरण के कारण 26 जून, 1975 में "आपातकाल [आपातस्थिति] की घोषणा हुई। इसका प्रभाव पूर्णतः सामान्य जन जीवन पर ही पड़ा।

जीवन का यथार्थ पुनः बदलने लगा । नयी कहानी और अन्य कहानी आन्दोलन जीवन की जिन यथार्थ स्थितियों को कल्पित कर रहे थे, वे इन भयावह जीवन स्थितियों से मेल नहीं खा रहे थे । हिन्दी और तेलुगु भाषाओं के कहानीकार, जीवन के जिस रूप को पा रहे थे उसी को अपनी कहानियों में चित्रण करने लगे ।

कहानी परंपरा : समान्तर कहानी :-

साठवें दशक में अकहानी, सचेतन कहानी, सहज कहानी, दिगंबर या विलोम कहानी, अतिनव्य साहित्यक आन्दोलन, मानवतावाद आदि जो भी उभरे हैं वे सब एक सीमा तक ही सफल रहे । यथार्थ जीवन को प्रतिष्ठित करती हुई अकहानी जीवन जीकर जानने की व्यर्थ कोशिश में सचेतन कहानी, सामाजिक व्यवस्था पर असीम क्रोध प्रकट करनेवाली दिगंबर या विलोम कहानी आदि सब कहानी क्षेत्र में जुगनू की तरह चमककर बुझ गयी । किन्तु सामाजिक पर्यावरण कुछ बदलने लगा । कहानीकारों में भी परिवर्तन आने लगे । रावकोंड विश्वनाथ शास्त्री की " सारा कथलु " और कालीपट्नम रामाराव की " यज्ञम " कहानियाँ, आठवें दशक में उभरनेवाले उग्रवादी आन्दोलन (तेलंगाना में), किसानों का आन्दोलन (श्रीकाकुल में) आदि के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाने में सफल रही है ।

साठवें दशक तक जो भी कहानीकार अकहानी और सचेतन कहानी को सहयोग देते रहे, वे ही उनपर कीचड उछालने लगे जैसे -- " अकहानी " पर चोट करते हुए मुद्राराक्षस ने लिखा था ---

" नब्बे फीसदी कहानियाँ शहर की पक्की सडकें, इमारतें, कमरे, सिगरेट, कभी-कभी शराब भी, कॉफी हाउस या रेस्तराँ, यूनिवर्सिटी, कॉलेज, कारों, बसों की भीड - यह इन कहानियों की छोटी-सी दुनिया है । पात्र अक्सर एक-दो

या चार-पाँच भी, नायक सिगरेट पीते हुए हर बात पर ऊबते और एक दूसरे को {या किसी लड़की को} गालियाँ देते हुए युवक। समस्याएँ विशेष नहीं, सिर्फ दुनिया से गुस्सा।"[1]

इसी प्रकार "अकहानी" और "सचेतन कहानी" पर अपना क्रोध व्यक्त करते हुए डॉ॰ रामदरश मिश्र ने लिखा था -- "उसकी {अकहानी} मूल्यनिषेधवाली दृष्टि मध्यवर्गीय जिन्दगी की यौनविकृतियों तथा अन्य विसंगतियों को उभारने में संलग्न रही। "सचेतन कहानी" ने मूल्य-निषेध का निषेध कर मूल्यों के प्रति अपना लगाव जरूर जाहिर किया, किन्तु उसकी भी दुनिया लगभग वही रही, जो "अकहानी" की है। वह भी आम आदमी की जिन्दगी के साथ नहीं जुड़ सकी, वह भी समाजवादी दृष्टि से आम आदमी के आर्थिक अभाव संघर्ष और तज्जन्य संबंधों तथा समस्याओं को नहीं पहचान सकी।"[2]

अकहानी पर टिप्पणी करते हुए कमलेश्वर ने लिखा था "सत्तर प्रतिशत कहानियों के नायक आत्म हत्या की धमकी देते दिखायी देते हैं। पर एक प्रतिशत भी निर्णय की इस स्वतंत्रता का उपभोग नहीं करते। आत्महत्या के लिए गुहारे देते हुए ये नायक कुछ भी स्वीकार करने की मुद्रा में नहीं है। इनके लिए सब रिश्ते बेमानी, सब आत्मीय घटियल, सब औरतें मदाएँ, सब संबंध निरर्थक, सब प्रश्न बेमानी, सब आकांक्षाएँ अर्थहीन और सब प्रयोजन व्यर्थ हो गये हैं।"[3]

नयी कहानी और अकहानी की तरह सचेतन कहानी की भावभूमि भी "मध्य-वर्गीय जीवन के माध्यांतर और मूल्य संक्रमण" तक सीमित रही। आम आदमी के संघर्षरत और मुक्तिकामी मूल्यों से इसका सरोकार कम रहा।"[4]

---

1. सारिका {नवम्बर, 1972} पृ॰ 7.
2. डा॰ रामदरश मिश्र "हिन्दी कहानी : अंतरंग पहचान - पृ॰ 115.
3. धर्मयुग 28/5/1967 - पृ॰ 52.
4. हिन्दी कहानी : एक अंतर्यात्रा - डॉ॰ वेदप्रकाश अमिताभ - पृ॰ 60

तेलुगु में दिगंबर कहानी या विलोम कहानी की स्थिति ऐसी नहीं रही । दिगंबर साहित्यकारों की गालियों को स्वीकार न करने पर भी उनका लक्ष्य समाज की भलाई के लिए होने के कारण कुछ हद तक सफल रही ।

दिगंबर साहित्यकारों की शैली को नकारनेवाले श्री विश्वनाथ सत्यनारायण कहते हैं -- "मुझे नहीं मालूम वे कौन है ।"[1]

श्री रंगम श्रीनिवासराव, इन लोगों को प्रेरणा देते हुए कहते हैं-- "नया आन्दोलन शुरू होकर जनता के आन्दोलन के लिए अग्रसर हो सकती है ।"[2]

विदेशी मोह में फँसकर कहानी क्षेत्र, भारतीय जन जीवन से कट जाने की वजह से अकहानी, आमआदमी को समुचित स्थान न देने के कारण और क्षेत्र की परिधि सीमित होने से "सचेतन कहानी", गालियों की शैली और प्रक्रिया हीन लक्ष्य से दिगंबर कहानी का अंत हो गया । दोनों भाषाओं के कहानीकार, अपनी समकालीन समस्याओं से तड़पनेवाले शोषित, पीड़ित "सामान्य जन" को समुचित स्थान देने लगे ।

<u>समांतर कहानी</u> :-

आठवें दशक के आरम्भ में "सामान्तर कहानी" शीर्षक से एक नया कहानी आन्दोलन आरम्भ हुआ । इसके प्रवर्तक कमलेश्वर थे, जो "नई कहानी" के युग में काफी प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके थे । उन्होंने कहा कि साहित्य में "आम आदमी" को महत्वपूर्ण स्थान मिलना चाहिए । कमलेश्वर ने प्रसिद्ध कहानी पत्रिका "सारिका" के सम्पादक के रूप में "समान्तर कहानी" का एक नया आन्दोलन उठाया । यह

---

1. दीपावली कृष्णा पत्रिका के "साक्षात्कार" में 1965

2. 1969 मार्च 28 संचिका [आन्ध्र प्रभा]

आन्दोलन काफी स्वस्थ और सम्भावनाओं से परिपूर्ण था । इस आन्दोलन ने साहित्य और जीवन मूल्यों के बोध की दूरी को कम कर इन दोनों को मिलानेका शुभ प्रयत्न किया । इस आन्दोलन के समर्थकों का कहना था कि आम आदमी निर्बलताओं का शिकार है, इसलिए मजबूर होकर गलत नैतिकता को स्वीकार कर लेता है ।

परिणाम स्वरूप " सारिका " में संपादक कमलेश्वर ने " आम आदमी को आधार बनाकर एक नया उछाल दिया, तो उभर कर आयी -- " समान्तर कहानी ।"

आम आदमी " एक स्पष्टीकरण " :-

समान्तर और समकालीन कथा साहित्य में जिस आम " आदमी " या सामान्य जन की चर्चा हुई है, वह आमआदमी है कौन ?

डॉ॰रामदरशमिश्र निम्न मध्य वर्ग और निम्नवर्ग के आदमी को आम आदमी मानते हैं । "[1]

डॉ॰विनय कुमार के अनुसार " यह सामान्य जन " महानगरों का वासी भी है और छोटे कस्बों और गाँवों में भी रहता है । "[2]

कमलेश्वर ने जीवन के विविध क्षेत्रों में निरन्तर संघर्षरत व्यक्ति को आम आदमी मानते हुए लिखा है -- " हममें से तमाम लोग विविध क्षेत्रों से आये हैं। कोई क्लर्क है तो कोई अध्यापक, कोई खानदान मजदूर, कोई डॉक्टर तो कोई इंजीनियर और बहुत से लोग ऐसे हैं, जो बावजूद अपनी तमाम योग्यता के अभी कुछ नहीं हैं और जीवन को पकड़पाने की आपाधापी में लगे हुए निरन्तर संघर्ष कर रहे हैं । "[3]

---

1. डॉ॰ रामदरश मिश्र " हिन्दी कहानी " -- अन्तरंग पहचान - पृ॰ 115॰
2. डॉ॰विनय " समकालीन कहानी " समान्तर कहानी - पृ॰ 11॰
3. सारिका { दिसम्बर, 1975 } पृ॰ 91॰

संक्षेप में भौतिक उपलब्धियों की दौड़ में पीछे पड़कर निरन्तर बौना और हीन होता जा रहा व्यक्ति ही आम आदमी कहलायेगा । यही कारण है कि भूमिहीन किसान, खेतिहर मजदूर, फुटपाथ पर सोया आदमी प्रशासनीय तन्त्र का शिकार पढ़ा-लिखा नौजवान, वर्ण और वर्ग व्यवस्था सेसपीड़ित व्यक्ति, दूसरे शब्दों में, एक सर्वहारा व्यक्ति ही आम आदमी है । जो हमारे " समान्तर कहानी " आन्दोलन का केन्द्र बिन्दु बना है । " सारिका " के समान्तर कहानी विशेषांकों में प्रकाशित और हिमांशुजोशी के सम्पादकत्व में निकली " श्रेष्ठ समान्तर कहानियाँ " हमारे उक्त कथन की पुष्टि करती है ।

इस दशक में हर बड़ा-छोटा कहानीकार " सारिका में समान्तर " की छत्र छाया में प्रकाशित हुआ है और यह भी सच है कि भीष्म साहनी तथा राजेन्द्रयादव सरीखे वरिष्ठ कथाकारों और डॉ॰विनय जैसे आलोचकों का इस आन्दोलन को भरपूर समर्थन मिला ।

स्वरूप और प्रवृत्तियाँ :-

" समान्तर कहानी का आमआदमी पूरे समाज में व्याप्त है । वह किसान, मजदूर, क्लर्क या सर्वहारा वर्गों में विभक्त होकर एक संश्लिष्ट व्यक्ति है । आज की समान्तर कहानी का यह नायक अनेक समस्याओं, अन्तर्विरोधों और संघर्षशील प्रवृत्ति को लेकर व्यवस्था के दमन चक्र में पिसता हुआ दिखायी देता है । "[1] समान्तर कहानी ने धर्म, दर्शन, संस्कृति तथा परम्परा से विघटित रूप को त्यागकर स्वस्थ रूप को ही स्वीकारा है ।

" गरीबी हटाओ " और लोकतन्त्र बचाओ " ही समानान्तर नारेबाजी रही है । फलत: व्यवस्था पर पूँजीवादी तत्वों का आधिपत्य, शोषितों को दबाने के लिए अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता का हनन, दलितों पर होनेवाले अत्याचार

---

1. डॉ॰ विनय : समकालीन कहानी = समान्तर कहानी - 1977 - पृ॰66॰

आदि सब ने देश को हिलाया ही नहीं बल्कि कहानी साहित्य में भी अपना स्थान पाने लगे । एक नारे के तौर पर ही सही " गरीब " और " गरीब " की चर्चा राजनीतिक क्षेत्र में होने के कारण इस दशक की कहानी पर इस रूप में पड़ा कि वह " जन साधारण " और " आम आदमी " पर केन्द्रित होती रही ।

आमआदमी के दर्द, यातना और मुक्ति का संघर्ष ही समान्तर कहानी का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पक्ष है । आमआदमी की जिजीविषा उसे लड़ने के लिए ही प्रोत्साहित करती है । " उसकी लड़ाई उस व्यवस्था से है जिसमें सामन्तवादी, पूंजीवादी और धर्मवादी शक्तियों की साजिश शामिल है । समान्तर कहानीकार का पहला दायित्व यह है कि आमआदमी के खिलाफ षड्यंत्र करनेवाली इन शक्तियों की ओर उंगली उठाये और उसका दायित्व यह है कि निरन्तर लड़ते हुए आमआदमी को बतलाए कि उसका दुश्मन कौन है और उसके खिलाफ कैसी लड़ाई होनी चाहिए ।"

समांतर कहानी अपने लक्ष्य को एक सीमा तक निभाने में सफल रही है । शोषण प्रधान व्यवस्था के विरुद्ध लड़ते हुए आदमी की तस्वीर जितेन्द्र भाटिया की " शहादतनामा ", मधुकर सिंह की " पूरा सन्नाटा " मिथिलेश्वर की " बाबूजी ", सुदीप की " अंतहीन " रमेश उपाध्याय की " देवीसिंह कौन ? " आदि कहानियों में है । इसी नेपथ्य में तेलुगु की कहानियाँ हैं — " पोट्टु-पोरू (अप्पलनायुडु), तोर्पु (भूषणम) " चींटी " (रायकोंड विश्वनाथ शास्त्री) " निश्चयम " (भार्गवीराव) आदि कहानियाँ हैं । अत्याचार और शोषण के विरुद्ध न लड़नेवाले पात्र भी है जैसे " तोक्कुडुबंडा " जाडि " सदानंद शारदा), पीर्लसंदीडि (केतु - विश्वनाथ रेड्डी (अडवि काचिन वेन्नेला (कालुव मल्लय्या) आदि है । हिन्दी की कहानियाँ है " आदमखोर ", मक्कार (इब्राहीम शरीफ), प्रथम पुरुष (सतीशजमाली) मांस का दरिया (कमलेश्वर) आदि है ।

1· डॉ·रामवचन राय – समांतर साहित्य – सितम्बर – दिसम्बर 1974 पृ· – 68, 69·

आठवें दशक की कहानी के विश्लेषण से पता चलता है कि वह एक ओर सामान्य जन के जीवन का दर्पण बनी रही है तो दूसरी ओर उसमें राजनीतिक मुद्दे भी गम्भीरता से उठाये गये हैं । समांतर कहानी में न केवल नगर महानगर के श्रमजीवियों के अलावा दूर दराज के गाँवों के खेतिहरों का जीवन, अपनी सम्पूर्णता के साथ चित्रित हुआ है । मधुकर सिंह, रामदरश मिश्र, विवेकीराय, धूमकेतु आदि की कहानियों में गरीबी की रेखा से नीचे जी रहे जन-समुदाय का जीवन प्रामाणिकता के साथ उपलब्ध है । सारिका के समान्तर कथा विशेषांकों में, लेख परिचर्चा और सम्मेलन में विचार बिन्दुओं के आधार पर समांतर कहानी की स्थापनायें इस प्रकार हैं --

1. समान्तर लेखन हर कथाकार को अपना समकालीन मानता है जो अपने समय के समान्तर सोच को लिख रहा है, तथा हर उस कथाकार को अस्वीकृत करता है जो अपने समयगत सत्यों से कटा हुआ है ।

2. लेखक की सही भूमिका यही है कि वह अन्तिम हदों तक अपनी लेखनी के जरिये ही लड़ता है । कलम को हाथ में लेना ही लड़ाई की शुरूआत करना है ।

3. समांतर लेखन में भाषा का उद्‌भ्रम नहीं है । क्योंकि यहाँ कथ्यहीनता नहीं है और इसलिए लेखक के पास अभिव्यक्ति का संकट भी नहीं है ।

4. जीवन और लेखन को लेकर उसके दुहरे मानदण्ड नहीं हैं । लेखन और जीवन के मूल्यों का एकीकरण हर उस कथाकार के लिए आवश्यक है जो अपने दौर में एक जीवन्त आदमी की तरह शामिल है ।"[1]

---

1. डॉ. चन्द्रभान रावत - डॉ. रामकुमार खण्डेलवाल - हिन्दी कहानी - पिछहत्तर - पृ. 35.

समान्तर कहानी की मानसिकता को स्पष्ट करने के लिए सिर्फ कमलेश्वर ने ही नहीं अनेक कहानीकारों ने अनेक लेख लिखे हैं । उन लेखों में स्पष्ट किये गये प्रमुख अंश इस प्रकार हैं ---

1. समयगत सत्यों और रचना के बीच सामंजस्य स्थापित करना अर्थात् अपने समय के समान्तर सोचना और लिखना समान्तर कहानी का मूल उद्देश्य है ।

2. समान्तर कहानी आम आदमी की जिन्दगी और उस जिन्दगी के लिए लड़नेवाली लड़ाई से सीधे सम्बद्ध है । यह आदमी के हक में सबकी पक्षधरता, प्रतिबद्धता और संबद्धता को शक और संशयरहित रूप में स्थापित करने के पक्ष में है । उसे मनुष्य की चिरंतन अपराजेय शक्ति में बहुत विश्वास है । उसे विश्वास है कि आम आदमी अपनी लड़ाई जीतेगा ।

3. सारिका में कमलेश्वर कहते हैं -- " ऐसा शायद हमारे यहाँ पहली बार हुआ है कि सम्पूर्ण आदमी की सम्पूर्ण तस्वीर हमें कहानियों में दिखायी देने लगी है ।"[1]

4. समान्तर कहानी एक सुनिश्चित बदलाव के लिए जनसंघर्ष के प्रति समर्पित कहानी है । इस संघर्ष से समान्तर रचनाकार प्रतिबद्ध ही नहीं, संबद्ध और भागीदार है । सर्वहारा या जन सामान्य की विजय के प्रति वह आश्वस्त है । यह विजय वामपंथी लड़ाई से सम्भव है ।

---

1. सारिका, दिसम्बर 1971 - मेरा पन्ना (कमलेश्वर) पृ. 9.

5· समान्तर कहानी पीढ़ियों के विभाजन को अस्वीकार करती है । जो भी समय की गति के साथ है या समय की मानसिकता [आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक दबावों से निर्मित] को पकड़ने में सक्षम है, वह सही और अच्छा लेखक है ।

6· समान्तर कहानीकार राजनीति को अछूता नहीं मानता, बल्कि उससे बहुत निकटता से सम्बद्ध है । राजनीति में सक्रिय भाग लेते हुए वह क्रान्ति का समर्थन करता है और उसके लिये कार्य करता है । वह राजनीतिक लड़ाईयों को सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य देता है और सांस्कृतिक संघर्ष को राजनैतिक दृष्टि भी ।

7· प्रतिबद्धता बहुत व्यापक है । इसे वामपंथी विचारधारा से जोड़कर देखते हैं, लेकिन समांतर कहानीकारों ने इसे आज के संदर्भ में लेखकीय दायित्व से जोड़ा । कमलेश्वर कहते हैं ---

" प्रतिबद्धता को एक संलग्नता या सम्पूर्ण संबद्धता [इन्वाल्वमेंट] ही माना जा सकता है सामान्य आदमी के प्रति और पक्ष में, जिनमें हम सब शामिल हैं -- " संबद्धता ज्यादा व्यापक और सघन होती है, प्रतिबद्धता की तरह आरोपित नहीं, संबद्धता समांतर स्थितियों में जीने की शर्त भी है और लेखन के संदर्भ में अनुभव के अर्थों को समाहित करने के लिए रचनात्मक निर्णयों की एक अनिवार्य परिणति भी । इधर की रचना इसका प्रमाण भी है । "[1]

कमलेश्वर ने " प्रतिबद्धता " शब्द से भी ज्यादा व्यापक संबद्धता शब्द को माना ।[1]

1· समांतर - 1 " पृ· 11·

इससे स्पष्ट है कि प्रतिबद्धता को जीवन के साथ आत्मीय संलग्नता में देखना चाहिए। कोरे वामपंथी विचार में नहीं। यद्यपि समांतर कहानी के समर्थकों ने समांतर लेखन को ही वास्तविक वामपंथी लेखन माना, "वस्तुत: समांतर लेखन सही वामपंथी चिन्तन से युक्त आज का वह लेखन है जिसे प्रगतिशील विशेषण समग्रत: अपने आपमें समेट नहीं पाता, ठीक वैसे ही जैसे कि मानवतावाद शब्द क्रांति की परिभाषा को व्यक्त नहीं कर पाता।"[1]

कमलेश्वर के अनुसार समान्तर कहानी लेखन की सार्थकता आम आदमी (सामान्य आदमी) से संबद्धता में है -- "हम स्वयं सामान्य आदमी (आम आदमी) हैं। उसी सामान्य जन में शामिल। हमारी संबद्धता उसी के प्रति हो सकती है। यह संबद्धता हर स्तर पर है क्योंकि मामूली आदमी हर स्तर पर है [illegible] मूर्त व अमूर्त तकलीफों से ग्रस्त है। हम इसी वर्ग से, इसी वर्ग के प्रति और इसी वर्ग से संबद्ध हैं। हमारी यह संबद्धता ही हमें वाम बनाती है और यह वाम यानी हमारी जिन्दगी, हमारा यथार्थ, हमारा संपूर्ण संघर्ष और हमारा लेखन हमें वैज्ञानिक मार्क्सवाद के स्रोत से जोड़ता है। कोई वामपंथी, इसलिए वह सामान्यजन के साथ है, यह आरोपित स्थिति है और कभी-कभी नितांत झूठ भी होती है। हमारी आस्था जीवन में है और उस जीवन को वहन करनेवाला केन्द्र है -- मामूली आदमी और उसी के संबद्ध हैं हमारे लेखन और जीवन की आकांक्षाएं।"[2]

समांतर कहानी आन्दोलन को फैलाने के लिए और कहानी साहित्य में एक मोड़ लाने के लिए, कमलेश्वर ने आन्दोलन के केन्द्र में रहकर योजनाबद्ध तरीके से आन्दोलन को आगे बढ़ाया। भीष्म साहनी जैसे वरिष्ठ कथाकार ने भी इस आंदोलन का समर्थन किया। इसे आन्दोलन के रूप में स्वीकार न करनेवाले शैलेश मटियानी, राजेन्द्र यादव जैसे कहानीकार भी हैं। लेकिन यह निश्चित है कि

---

1. ललित मोहन अवस्थी -- सारिका - मार्च 1975 - पृ. 88.
2. समांतर - 1, पृ. 12.

समांतर कहानी एक सुनियोजित आन्दोलन रहा है -- "जो कमलेश्वर द्वारा पुनः सुर्खियों में आने, हिन्दी कहानी के केन्द्र में खुद स्थित होने और कुछ मित्रों-परिचितों को जनुइन कहानीकार के रूप में स्थापित करने की नीयत से योजनाबद्ध तरीके से शुरू किया गया है।"[1]

समांतर कहानी का संघर्ष आम आदमी के संघर्ष का सहभागी बनना है। इस दृष्टिकोण से समांतर कहानी के सीधे दो पक्ष हो जाते हैं। "एक पक्ष में वह उन सारी शक्तियों के उन्मूलन का स्वरघोष करती है जिनके कारण आजके समाज में आम आदमी ऐसे दमघोंटू वातावरण में रहने को अभिशप्त है जहाँ उसकी कम से कम आवश्यकताओं की पूर्ति का आधार भी लुप्त हो गया है, दूसरे पक्ष में वह आम आदमी के संघर्ष को अभिव्यक्ति करते हुए उन सारे कमजोर स्थलों को भी बेरहमी से चीर रही है जिसके कारण आम आदमी के संघर्ष की पकड़ दुर्बल हो रही है। इस प्रक्रिया में समांतर कहानी को उस बिन्दु की तलाश है जहाँ अंतर्वर्ती दुर्बलता का ह्रास हो और प्रतिगामीशक्तियों के ध्वंस के रास्ते खुलें।"[2]

समांतर कहानी आम आदमी के संघर्ष को पहचानने की कोशिश करती है। आम आदमी आज जिस दयनीय स्थिति में है, उसका कारण उसकी स्वयं की संस्कार ग्रस्तता है। वह उन विचारों और मूल्यों को छोड़ा नहीं, जो उसके हितों के विपरीत हैं।

समांतर कहानी जीवन के स्पंदन को स्पष्ट करनेवाली रचनात्मक विधा है और वह अपनी पूरी रचनात्मक शक्ति के साथ आमआदमी के नायकत्व को स्थापितकर, भ्रष्ट राजनीति और चतुर पूँजीवादी व्यवस्था से संघर्ष करके सामने आयी है। यही संघर्ष उसकी मूल संवेदना है। संघर्षरत आमआदमी के समक्ष तीन स्थितियाँ हैं—

---

1. समकालीन कहानी - वेदप्रकाश अमिताभ, दिनेश पालीवाल - पृ. 27.
2. समकालीन कहानी - समांतर कहानी - डॉ. विनय - पृ. 63-6864.

1· आम आदमी में संघर्ष में निर्णय लेने की क्षमता का अभाव है ।

2· निरंतर अपमान सहने के कारण प्रतिष्ठित प्रतिगामी शक्तियों को परास्त करने के लिए वह अपने भीतर लावे की तरह उबला रहा है, तथा

3· अपने ही साथियों में वह उन लोगों को देख रहा है जो पूंजीवादी शक्तियों के इशारे पर उसे परास्त करने को उद्यत रहते हैं ।

समांतर कहानी में इन तीनों स्थितियों के बीच सामान्यजन के विविध पक्षों का उद्घाटन दिखायी देता है ।

समांतर कहानी पति-पत्नी के संबंधों को भी चित्रित करती है लेकिन सेक्स का खुला चित्रण उसमें दिखायी नही देता । पति-पत्नी के संबंधों में आर्थिक-मनोवैज्ञानिक कारणों से जो परिवर्तन आया है उसमें पत्नी अपने अधिकारों के प्रति सजग है तथा वह व्यर्थ ही पति की श्रेष्ठता स्वीकार नहीं करती ।

उपलब्धियाँ :-

समांतर कहानी की सब से बड़ी उपलब्धि है कि उसने " भावुक सोच में कैद लोगों के सामने आम आदमी की तकलीफों को उजागर करनेवाली कहानियाँ बदलते तेवर "[1] के साथ प्रस्तुत की । सामान्य जन को केन्द्र में रखकर चलनेवाली समांतर कहानी के सामान्यजन की " समस्या सिर्फ रोजी-रोटी की ही नहीं -- उस मोर्चे पर तो वह जूझ ही रहा है -- वह अनेक मानवीय स्थितियों का सामना कर रहा है जो किसी भी व्यक्ति को कहीं भी आन्दोलित करती है । अतः सामान्यजन को केन्द्र में रखनेवाला साहित्य जीवन को उसकी संपूर्णता में लेता है ।"[2]

1· समकालीन कहानी - समांतर कहानी -- डॉ·विनय - पृ· 107·

2· - वही - पृ· 103·

समांतर कहानी के केन्द्र में सामान्य जन है फिर भी समांतर कहानी जीवन के विभिन्न रूपों को विश्लेषित करती है । समांतर कहानी के प्रादुर्भाव ने कहानी को आत्म केन्द्रित अनुभववाद से मुक्ति दिलायी है । " इस कथा चेतना ने व्यक्ति अनुसंधान को वैयक्तिकता के घेरे से निकालकर समाज के बोधोबोध प्रतिष्ठित किया । "[1]

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट होता है कि समांतर कहानी ने व्यक्ति को असहायता, नैतिक-संकट, मूल्य हीनता तथा विघटन को समग्र सामाजिक तंत्र के परिप्रेक्ष्य में देखा गया है ।

सामांतर कहानी इस तथ्य को रेखांकित करती है कि आज की स्थितियों में सभी मानव-संबंध पूर्ण रूप से आर्थिक पक्ष से संचालित होते हैं । " चाहे संबंध सत्ता और व्यक्ति का हो, परिवार और व्यक्ति का, समाज और व्यक्ति का, हर संगठन के सामने संपन्न व्यक्ति जीने की शर्तों को अनुकूल बना लेता है और विपन्न के सामने आत्मदाह के अतिरिक्त कोई चारा नहीं । "[2]

सामांतर कहानी का मूल लक्ष्य और उद्देश्य समाज में संघर्ष करनेवाले सामान्य जन को अमानवीय स्थितियों से मुक्त करने के लिए संघर्ष करना है ।

कहानी परंपरा और जनवादी कहानी :-

समान्तर कहानी के संदर्भ में कुछ धारणाएँ है -- " समान्तर कहानीकारों के पास न तो कहने के लिए कोई नयी बात है, न इसके सामने कोई समस्या है । इनके निकट तो कोई रिश्ता, कोई मानवीय संपर्क भी कुछ अर्थ नहीं रखता । अर्थ

---

1. समकालीन कहानी : समांतर कहानी - डॉ. विनय - पृ. 107.
2. - वही - पृ. 104.

रखता है तो मात्र " अर्थ " यानी मुद्रा, और यह अर्थ चाहे जहाँ से मिले और चाहे जैसे मिले -- सेठाश्रय से, सरकाराश्रय से फिल्माश्रय से अथवा स्टंटाश्रय से ।"[1]

समान्तर " हिन्दी कहानी के समकालीन दौर का सर्वाधिक हास्यास्पद और हानिकार आन्दोलन है ।"[2] " समान्तर कहानी के क्षेम में अधिक संख्या कहानीकार वे थे, जो महानगरों या बडे नगरों में अच्छे पदों पर नौकरियाँ कर रहे थे । उन्हें आम आदमी के संघर्ष का किताबी ज्ञान था तथा संवेदना के स्तर पर वे वर्ग संघर्ष से जुडे हुए नहीं थे । ऐसी स्थिति में उनसे वर्ग-संघर्ष को सही संदर्भों में उभारने की संभावना करना व्यर्थ ही था ।"[3]

" उसमें [समांतर कहानी में] क्रांतिकारी की मुद्रा थी, क्रांतिकारी का संकल्प और साहस नहीं ।"[4]

" कहानीकार कहानियों में जबरन खोजा हुआ और गढा हुआ [सामान्य] आदमी परोसने लगे ।"[5]

इस सब का मूल कारण यह है कि समांतर कहानी के संदर्भ में जो दावे, घोषणाएँ किये गये, उनके अनुरूप कहानीकारों का अनुभव संसार नहीं रहा । अधिकतः समांतर कहानीकार वे थे जो महानगरों या बडे नगरों में अच्छे पदों पर नौकरियाँ कर रहे थे । इसलिए समांतर कहानी तो चिंतन तथा व्याख्या के स्तर पर तो बडी-बडी बातें करती रही किन्तु रचनात्मक स्तर पर भी वह चिंतन के अनुरूप रचनायें नहीं दे पायी । कहानीकार भी वर्ग संघर्ष से सीधे जुडे नहीं थे । साथ-साथ

---

1. सुदर्शन चोपडा " समान्तर कहानी " सरिता - अगस्त - 1976 - पृ. 23.
2. शैलेश मटियानी " मेरी कथा यात्रा " माया - नवम्बर - 1976 - पृ. 64.
3. राजनीश कुमार " हिन्दी कहानी के आन्दोलन : उपलब्धियाँ और सीमायें पृ. - 73.
4. सं. राजेन्द्र अवस्थी " कहानी की वर्णमाला " पृ. 49.
5. डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ " हिन्दी कहानी " : एक अन्तर्यात्रा - पृ. 69.

सामान्यजन के प्रति कथाकारों का इतना आग्रह रहा कि कई बार तो " आम आदमी " के नारे के नीचे लिखी गयी कहानी आम आदमी को ही नहीं उभार पायी । लेखक या कहानीकार, अपने मस्तिष्क से आम आदमी का चित्र उभारने लगा और उसके चारों ओर की स्थितियों का भयावह परिवेश को भी बनाने लगे । कहानीकार का यह प्रयत्न आम आदमी का बनावटी चित्र ही रह गया । आम आदमी को कच्चे माल के रूप में प्रयुक्त करनेवाली समांतर कहानी अपनी समस्त घोषणाओं के बावजूद वास्तविक जीवन से उटने लगी । सुरेश सेठ की " यंत्र पुरुष " कहानी एक बनावटी मानसिक लेखन का उदाहरण है जिसमें आम आदमी गढ़ा गया है, वास्तविक स्थितियों से उत्पन्न नहीं है । उसी प्रकार श्रवण कुमार की " मैं ", " मणि मधुकर की " विस्फोट ", निर्मला ठाकुर की " इत्जार " आदि कहानियाँ बनावटी संवेदनाओं की कहानियाँ है, जो पाठकों को कहीं भी आश्वस्त नहीं करती ।

तेलुगु क्षेत्र की स्थिति :-

इस प्रकार की स्थिति तेलुगु कहानी के क्षेत्र में नही हैं । श्रीकाकुलम और तेलंगाना से जो भी आन्दोलन उभरे हैं, वे समाज की भलाई के लिए सहज उत्पन्न हैं । सामान्यजन और आमआदमी की समस्याओं को खुलकर व्यक्त करने में कहानीकार पूर्णत: सफल रहे । साथ-साथ रायलसीमा से समकालीन समस्याओं को लेकर और सामाजिक वातावरण को भी स्पष्ट करनेवाली कहानियाँ आने लगीं । एक दूसरे के प्रति आग्रह व्यक्त करने या चिढ़ने की स्थिति तेलुगु कहानी के क्षेत्र में नहीं है । यहाँ कहानीकार अपने आप को कहानी के क्षेत्र में प्रतिष्ठित करने के लिए नहीं आया । निजी जीवन में उत्पन्न समस्याओं से जलते हुए अपनी कहानियों में स्पष्ट करने लगे । इस नेपथ्य में तेलंगाना से अल्लमराजय्य, कालुव मल्लय्या, आन्ध्र प्रान्त के श्रीकाकुलम से कालीपट्नम रामाराव, भूषणम, अप्पलनायुडु और रायलसीमा से केतुविश्वनाथ रेड्डी, महेन्द्रा, नरेन्द्र आदि अनेक कहानीकार हैं । वे सब अपनी अपनी क्षेत्रीय समस्याओं को कहानियों में प्रतिष्ठित करने लगे । " विप्लव रचयितल संघम " की

स्थापना से तेलुगु का कहानी क्षेत्र और चमकने लगा । कहानीकारों का लक्ष्य रहा है " समाज में दिन ब दिन बढ़नेवाली कचरा को या गंदगी को जड से उखाडना ।"

हिन्दी कहानी के क्षेत्र में समांतर कहानी आन्दोलन की सीमित दृष्टि की भूमिका में व्यापक दृष्टि को लेकर उभरा हुआ आन्दोलन है जनवादी कहानी और सक्रिय कहानी । तेलुगु के कहानी क्षेत्र में " विप्लवरचयितलु संघम " की तरह हिन्दी के कहानी क्षेत्र में जनवादी लेखक संघ की स्थापना हुई है । " आम आदमी " को " जनवादी कथाकारों ने सर्वहारा के रूप में देखा है ।"[1] सक्रिय कहानी शोषण का विरोध करते हुए शोषितों के अधिकारों का समर्थन करती है ।"[2] इन दोनों के समांतर में तेलुगु कहानी क्षेत्र में दलित कहानियों को और स्त्रीवाद कहानी साहित्य को देख सकते हैं ।

जनवादी कहानी : स्वरूप और प्रवृत्तियाँ :-

आन्दोलन के रूप में जनवादी कहानी की शुरूआत पर वेद प्रकाश अमिताभ का कथन है — " जनवादी कहानी का उदय सातवें दशक के अंतिम वर्षों में माना जाता है । लेकिन उसका वास्तविक उभार आठवें दशक में देखने को मिलता है ।"

जनवादी कहानी की तीव्रगति 1982 में " जनवादी लेखक संघ " की स्थापनासे दिल्ली में हुई । 13-14 फरवरी, 1982 को दिल्ली में जनवादी लेखक संघ का प्रथम राष्ट्रीय अधिवेशन हुआ जिसमें इस संघ का संविधान भी स्वीकृत हुआ । इस अधिवेशन के पश्चात् जनवादी कहानी पर " कलम " { कलकत्ता से } " कथन " { दिल्ली से }, उत्तरगाथा { मथुरा से पहले प्रकाशित होती थी लेकिन अब दिल्ली से प्रकाशित होने लगी } " उत्तरार्ध { मथुरा }, कंक { रतलाम } आदि पत्रिकाओं में व्यापक रूप में चर्चा प्रारंभ हो गयी ।

---

1. उत्तरार्द्ध - 5, आठवें दशक की हिन्दी कहानी - ब्रजमोहन शर्मा - पृ.86.
2. हिन्दी कहानी : आठवां दशक, सं. मधुर उप्रेती, सक्रिय कहानी - बदलते तेवर और फौलादी संकल्प - डॉ.गोविन्द रजनीश - पृ. 99.
3. हिन्दी कहानी : एक अंतर्यात्रा - डॉ.वेदप्रकाश अमिताभ - पृ. 70.

"जनवाद" के जन्म के बारे में विचार करने से स्पष्ट होता है कि — "जनवाद का जन्म सामंतवाद के विरुद्ध संघर्ष करते पूंजीवादी के उदय के साथ हुआ।"[1] तब तक "हमारे देश में जनवादी व्यवस्था का वर्तमान स्वत्व साम्राज्य विरोधी, सामंतवाद विरोधी, स्वतंत्रता-संग्राम के दौरान, उस संग्राम के नेता पूंजीपति वर्ग द्वारा आम जनता के विभिन्न हिस्सों को साथ लेने के लिए उनके साथ संयुक्त मोर्चा बनाने के दौरान, विकसित हुआ।"[2]

लेकिन स्वातंत्र्योत्तरकाल में भारत में जो भी परिस्थितियाँ उभरकर आयी उन्होंने पूंजीपति वर्ग को पूर्ण संरक्षण दिया, फलस्वरूप स्वतंत्रता-संग्राम के दौरान विकसित जनवाद खंडित हो गया क्योंकि "जनवाद की रक्षा सर्वहारा वर्ग के नेतृत्व में सामंतवाद, साम्राज्यवाद और एकाधिकारी पूंजीवाद के विरुद्ध, समस्त जनता के संयुक्त मोर्चे द्वारा ही संभव है।"[3]

उक्त कथन से स्पष्ट है कि जनवाद का नेतृत्व सर्वहारा के हाथ में होता है और वह समाज में सभी प्रकार के शोषण को समाप्त करने के लिए सामंतवादी, साम्राज्यवादी तथा पूंजीवादी शक्तियों का विरोध करता है। वह समाज को सभी प्रकार के शोषण, अन्याय और उत्पीडन से मुक्त करने का स्वर मुखरित करता है। मुक्तिबोध के शब्दों में जनवादी साहित्य में "जनता के परिष्कार, उसके आदर्श, मनोरंजन से लगाकर उसे क्रांतिपथ पर मोड़ने वाला साहित्य, मानवीय भावनाओं का उदात्त वातावरण उपस्थित करनेवाला साहित्य, जनता का जीवन, चित्रण करनेवाला साहित्य, मन को मानवीय और जन को जन जन करनेवाला साहित्य, शोषण और सत्ता के घमंड को चूर-चूर करनेवाले स्वातंत्र्य और मुक्ति के गीतोंवाला साहित्य, प्राकृतिक शोभा और स्नेह के सुकुमार दृश्यों वाला सभी प्रकार का साहित्य सम्मिलित है बशर्ते कि

---

1. शिवराम – जनवादी साहित्य के मानदंड – अभिव्यक्ति – नवम्बर 1981 – पृ. 55
2. – वही –
3. – वही – पृ. 56.

वह मन को मानवीय, जन को जन-जना बना सके और जनता को मुक्ति-पथ पर अग्रसर कर सकें ।"[1] यहाँ मुक्ति-पथ का अर्थ राजनीतिक मुक्ति से लेकर अज्ञान से मुक्ति तक है ।

जनवादी कहानी की शुरुआत एक तरह से प्रेमचन्द से ही माना जाता है । " स्वतंत्रता से पूर्व विदेशी शासन के तहत प्रेमचन्द ने कहानी ही नहीं, अपने संपूर्ण लेखन में जनवादी मूल्यों की स्थापना की .... " पूस की रात ", " कफन " जनवादी कहानी की आधारशिला बनकर उभरी ।"[2]

उपर्युक्त कथन से अर्थ यह निकलता है कि प्रेमचन्द की " पूस की रात ", " कफन " आदि कहानियों से ही जनवादी कहानियों की शुरुआत मानी जा सकती है । निराला और नागार्जुन ने प्रेमचन्द की जनवादी परंपरा को विकसित किया । जनवादी कहानी की परंपरा " परदा " ‖ यशपाल ‖, " गदल " ‖ रांगेयराघव ‖, " श्रम ", " हड़ताल " ‖ भैरव प्रसाद गुप्त ‖, हंसा जाई अकेला ", " बीच के लोग " ‖ मार्कण्डेय ‖, " चीफ की दावत ", " चाचा मंगलसेन " ‖ भीष्म साहनी ‖, " दोपहर का भोजन, " डिप्टी कलक्टरी " ‖ अमरकान्त ‖ आदि कहानियाँ " नयी कहानी " के दौर में समृद्ध हुई । लेकिन " इस बीच यह दुर्योग रहा कि अनेक सशक्त रचनाकार इन आन्दोलनों ‖ अकहानी, सचेतन कहानी, सहज और समांतर कहानी ‖ में नयेपन के आकर्षण में शरीक हो गये । इसके बजूहात भी हमारे देश की राजनीतिक और सामाजिक परिस्थिति में देखे जा सकते हैं । यह वही दौर था जब कि कम्युनिस्ट पार्टी के भीतर वर्ग-सहयोगवाद पनपा और उसमें विभाजन की स्थिति पैदा हुई तथा जन आन्दोलन मंद और कमजोर पड़ने लगे । जनता की

---

1. मुक्तिबोध रचनावली - खंड - 5, पृ॰ 60 - 61.
2. अवधेश श्रीवास्तव - जनवादी चेतना का ऐतिहासिक विकास - लहर - सितम्बर - अक्टोबर 1982 - पृ॰ 8.

सामाजिक चेतना को समुन्नत करने के इस गंभीर क्षण में इस परिस्थिति ने शासक वर्ग को मूल्य-संभ्रम की स्थिति पैदा करने का मौका दिया ।"[1]

अकहानी, सचेतन कहानी और समांतर कहानी आन्दोलनों के दौर में भी {उनकी} कहानियों के साथ जनवादी कहानियाँ भी लिखी गयी । वे " घंटा " " पैंस के इधर-उधर {ज्ञानरंजन}, " लालकिले के बाज ", " सुबह का डर {काशीनाथ सिंह}, " फर्क ", " पंच " {इसराइल} आदि हैं ।

जनवादियों के विचार में -- " नयी कहानी से लेकर " अकहानी तक " अनुभव की प्रामाणिकता " और " अद्वितीयता " का जो दौर हिन्दी में चला था, उसने एक खास किस्म के अनुभववाद के तहत गलत अनुभवों का ऐसा जाल रचने की प्रक्रिया को आगे बढ़ाया जो यथार्थ के केन्द्र में सामान्य को हटाकर " असामान्य " को प्रतिष्ठित और गौरवान्वित कर रही थी ।"[2]

जनवादी कहानी मुख्यत: निम्नवर्ग के जीवन संघर्ष को रचना के केन्द्र में रखती है । इसराइल ने अपने कहानीसंग्रह " फर्क " की भूमिका में स्पष्ट किया है -- " इस संग्रह में उस मजदूर वर्ग के आत्मसंघर्ष की गाथा है, जो मेरा निजी खानदान है, मेरा रचना-संसार है और जिसके प्रति मेरा कलाकार समर्पित है ।"[3]

जनवादी कहानी से पूर्व की कुछ कहानियों में ऊब, संत्रास, निराशा की मानसिकता उभरी थी । जीवन की बुनियादी सचाईयाँ लगभग अनुपस्थित रहीं । जनवादी कथाकारों ने इस स्थिति को सहन नहीं किया । "उन्होंने ऊब, थकान,

---

1. ज्ञान की प्रसाद शर्मा - कहानी की यथार्थवादी परंपरा - कथन - मार्च - अप्रैल - 1982 - पृ. 48.
2. डॉ. राम कुमार शर्मा, उत्तर गाथा - 2, जनवादी कहानी की पहचान । पृ. 70.
3. " फर्क " कहानी संग्रह की भूमिका में इसराइल

संत्रास एवं निराशा की मानसिकता वाली कहानियाँ लिखने के बजाय वर्ग संघर्ष को अभिव्यक्त करना ज्यादा जरूरी समझा । मध्यवर्ग को बजाय किसानों और मजदूरों के जीवन को कहानी का आधार बनाया गया ।"[1]

राजनीतिक मुद्दों को साहित्यिक विषय वस्तु बनाना अच्छा नहीं समझा जाता था । लेकिन जनवादी कहानीकारों ने राजनीतिक प्रश्नों पर जमकर विचार किया । नीरज सिंह, इसराइल, रमेश उपाध्याय, असगर वजाहत, प्रदीपमांडव, नमितासिंह आदि की अनेक कहानियों में राजनीतिक, आर्थिक यथार्थ की परतों को खोला गया है । " फगतराम " (इसराइल), " देवीसिंह कौन ? " (रमेश उपाध्याय), " गलत इतिहास " (हेतुभारद्वाज) आदि प्रमुख कहानियाँ हैं । कुछ कहानियों में " नयी कहानी ", " अकहानी " की प्रतिक्रिया में निराशा के स्थान पर आशावाद को उभारा गया है ।

" इस काल्पनिक आशावाद के कारण कहानियों का अंत सुखद होने लगा, आंदोलनों का अंत सफलताओं में होने लगा, जबकि हकीकत इसके विपरीत थी ।"[2]

पूँजीवादी व्यवस्था के दमनतंत्र की क्रूरता और अमानवीयता को स्पष्ट करनेवाली अनेक जनवादी कहानियाँ हैं । " जनवादी कहानी में मध्यवर्ग के कई आयाम खुलते दिखायी देते हैं -- मध्यवर्गीय संस्कारों से मोह-भंग, आत्मालोचना, सामाजिक विसंगतियों के प्रति तीव्र असंतोष और सर्वहारा के निकट जाने की लालसा ।"[3]

" पैंस के इधर- उधर " (ज्ञानरंजन) कहानी में मध्यवर्गीय संस्कारों की जकड़न के टूटने की पीड़ा है तो " विश्वास " (हेतु भारद्वाज) कहानी में एक

---

1. जवरीमल्ल पारेख, लहर - अक्टोबर-नवम्बर 1978 " समकालीन कथा " पृ. 7-8.
2. - वही - पृ. 8.
3. असगर वजाहत - जनवादी कथा रचना की समस्याएँ - जनवादी साहित्य के दस वर्ष - पृ. 65.

मजदूर के अंधविश्वास के टूटने की वेदना के साथ उच्चवर्ग की मानसिकता पर चोट है । "जनवादी कहानी की मूल प्रवृत्ति श्रमजीवी वर्ग के प्रति सहानुभूति है और यह अंत चेतना के निरंतर विकास का ही परिणाम है ।"[1] इसकी प्रमुख विशेषताएँ है --

1· जनवादी कहानी आमआदमी के अधिकारों को प्राप्त करने की लडाई लड रही है । शोषणकर्ताओं के खिलाफ एक जुट होकर संघर्ष करने की चेतना भी उत्पन्न कर रही है ।

2· जनवादी कहानीकारों ने गाँवों में चलनेवाले वर्ग संघर्ष, प्रचलित समस्याओं को और विशेषताओं को भी अपनी कहानियों का विषय बनाया है । "गाँवों में व्याप्त गरीबी भुखमरी, बेकारी राजनैतिक भ्रष्टाचार व जातिवादी संघर्ष को ही कहानी का विषय नहीं बनाया, बल्कि इन सबके साथ उभरती उस नयी जनचेतना को भी स्वर दिया गया है, जो सामंती-पूँजीवादी व्यवस्था के अन्त की सूचक है ।"[2]

3· जनवादी कहानियों का मूल स्वर हिंसक नहीं है लेकिन कहानियों के पात्र हिंसा का जवाब हिंसा से देने के लिए ही सोचते हैं । इसराइल की कहानी "फर्क" का विशु ऐसा ही सोचता है -- "हम इतना समझ गये हैं कि इसी सत्ता ने हमारा सब कुछ छीन लिया है, इसलिए सत्ता भोगियों के हाथ से इस सत्ता को ही छीन लो । इसी कहानी में बजरू का रुख और भी कहाता है "हमको अब भरोसा अपनी लाठी पर है । जाकर उस जमींदार के बच्चे से कह दीजिए ।"[3]

1· चारुमित्र प्रदीप मांड्य - जनवादी कहानी : स्वरूप और असीमाएँ - जनवादी साहित्य के दस वर्ष - पृ· 67·

2· डॉ· वेदप्रकाश अमिताभ "हिन्दी कहानी एक अन्तर यात्रा" पृ· 68

3· धर्म सिंह चौहान -- लहर - दिसम्बर - 1978 - पृ· 54 - 55·

जनवादी कहानियों को देखने से लगता है कि शोषितों का संघर्ष हिंसक भी नहीं है और अहिंसक भी । कहानियों का और कहानीकारों का मूल उद्देश्य है पूरी व्यवस्था में आमूल परिवर्तन लाना । इसी से शोषण तंत्र मिटेगा ।

जनवादी कहानीकारों में विचारधारा का अतिरिक्त दबाव दिखलायी पड़ता है । इस तरह की कहानियों में कहानी की सहजता ही भंग नहीं होती, बल्कि विचार-धारा के प्रति अधिक सजग होने के कारण ज्ञान और संवेदना के बीच का संतुलन भी टूटने लगता है । पूर्ववर्ती कहानी आन्दोलनों के निराशावादी दृष्टिकोण की प्रतिक्रिया में कई जनवादी कथाकारों ने अपनी कहानियों में जबरन आशावाद का प्रवेश कराया । इस काल्पनिक आशावाद के कारण कहानियों का अन्त सुखद होने लगा जबकि यह पूर्ण सच्चाई नहीं थी ।"

इस प्रकार कहानीकारों ने सामाजिक यथार्थ को ही अपनी कहानियों में दुहराने लगे तो और कुछ कहानीकारों ने कथ्यों में थोड़ा बहुत हेर-फेर करके कहानियों की रचना की है । शायद इसीलिए ही कहानीकार सामाजिक अनुभव से कटने लगे ।

जनवादी कहानी की सबसे बड़ी उपलब्धि यही है कि वह जीवन के वास्तविक स्पंदन को बहुत सहज ढंग से स्थापित करती है । यह समांतर कहानी की तरह आम आदमी के संघर्ष की कथा गढ़ती नहीं, प्रत्युत समस्याओं को जीवन से उठाती है और उसे जीवन की भाषा में ही स्पष्ट कर देती है । जनवादी कहानी के केन्द्र में निम्न मध्यवर्ग का संघर्ष है किन्तु यह संघर्ष बनावटी न होकर वास्तविक जीवन से है । यह वैचारिक दृष्टि से मार्क्सवादी विचारधारा का पोषण करती है ।

इस प्रकार जनवादी कहानी समांतर कहानी की तरह फार्मूलेबाजी का शिकार हो गयी ।

जनवादी कहानी में कथ्य के स्तर पर भी अपने-आपको किसान-मजदूरों से जोडा, परिणाम स्वरूप जीवन का व्यापक क्षेत्र उससे वंचित रह गया । प्रेम, नारी-जीवन, बालक्रीडा, प्रकृति आदि का चित्रण जनवादी कहानी में कम होने लगा ।

तेलुगु कहानी की प्रवृत्तियाँ (1970 - 80) :-

हिन्दी कहानी क्षेत्र में समांतर और जनवादी कहानी की प्रवृत्तियाँ लगभग एक ही हैं । लेकिन तेलुगु में ऐसा विभाजन नहीं है । वे प्रवृत्तियाँ तेलुगु की अनेक कहानियों में मिलती हैं । साथ-साथ जनवादी लेखक संघ के समांतर में " विप्लव रचयितल संगम् " का आगमन तेलुगु कहानी क्षेत्र में एक प्रमुख मोड लाने में सफल रहा है । तेलुगु क्षेत्र के प्राय: प्रचलित कहानीकार विरसम का सदस्य हैं । तेलुगु साहित्य क्षेत्र में " विप्लव रचयितल संगम् " का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है ।

तेलंगाना में किसानों के आन्दोलन के नेपथ्य में, नक्सलबरी आन्दोलन की प्रेरणा से, श्रीकाकुलम के किसानों के श्रम को इंदन की तरह बनाकर, दिगंबर साहित्य आन्दोलन को एक विकसित रूप देते हुए 4 जुलै 1970 में विरसम की स्थापना हुई । यह विप्लव रचयितल संगम " मार्क्सिज्म " लेनिनिज्म और माओ विचारों की रोशनी में काम करने लगी है । विरसम का मूल लक्ष्य है — " मार्क्सवादी भावनाओं का प्रचार करते हुए समाज में चेतना लाना " " मार्क्सवाद " को शास्त्र की तरह नहीं, शस्त्र (हथियार) के रूप में भी उपयोग करके राजनैतिक आन्दोलन के लिए सहयोग देना "

" आन्दोलनों को समीक्षा करते हुए जनता की भलाई चाहनेवाले आन्दोलनों को आगे बढ़ाना है ।"

यह विरसम " अभ्युदय लेखक संघ " [प्रगतिशील लेखक संघ] का ही विकसित रूप है । वहाँ " आभ्युदयम " या प्रगति है तो यहाँ " विप्लवम " या " क्रांति " है । दोनों का लक्ष्य एक ही है ।

समकालीन वातावरण ऐसा रहा है कि जाति, अपनी मुक्ति के लिए, देश अपनी आजादी के लिए, जनता विप्लव लाने के लिए आन्दोलन करने लगी । ऐसी स्थिति में रचनाकार चुप नहीं रह सकता । " आन्दोलन " के प्रति अपना एक उद्देश्य बना लेता है । ऐसी स्थिति में विरसम का आगमन, रचनाकारों के लिए सहारा बनने लगा ।

समाज में उत्पन्न भिन्नताओं को, ऊँच-नीच भेदभावों को, वर्ग भेदों को, धन से उत्पन्न मायाओं को, शोषण प्रथा को, लूट को और ऐसे ही अनेक विषयों को स्पष्ट करने से ही कहानीकार या रचनाकार का लक्ष्य पूरा नहीं होगा । ऐसी अनेक समस्याओं को दूर करना और समाज से निकालना रचनाकार का ही नहीं बल्की विरसम का ही मूल लक्ष्य रहा है ।

" विप्लव रचयितल संगम् " की स्थापना से ही तेलुगु कहानी " विप्लव कहानी " के रूप में बदलने लगी । इस के अनेक लक्षण " कालीपटनम रामाराव जी की " यज्ञम " और रावकोंड विश्वनाथ शास्त्री जी की " साराक्षु " में देख सकते हैं । लेकिन उनका विकास विरसम की स्थापना से ही होने लगा ।

विरसम की कहानियों से या रचनाओं में दीन-हीन, वेश्यायें, विद्यार्थी, ज्ञानी, श्रमिक, मजदूर, किसान, हरिजन, गिरिजन आदि सब का चित्रण होने लगा । अपना पेट भरने के लिए हमेशा काम करनेवाले गरीब, हमेशा लूट के चक्कर में फँसकर पिसजाने वाले निम्नवर्ग, अपनी खेती में ही मजदूर बनकर दिन-रात मेहनत करके अपनी पेट का भूख न मिटा पाने वाले गरीब किसान, मजदूर, नौकर, दलित ।

यंत्रों को साफ करते हुए मालिकों के खजानों को भरते हुए, खुद उपवास रहनेवाले गिरिजन, पुरुषों से पीड़ित स्त्रियाँ आदि सब कहानियों में जगह पाने लगे ।

इस भूमिका में आन्ध्र प्रान्त को क्षेत्रीय विशेषताओं के आधार पर तीन भागों में देख सकते हैं --- 1. तेलंगाना 2. सागर तट वर्ती प्रान्त या आन्ध्र प्रान्त 3. रायलसीमा ।

1. तेलंगाना :-

हमारे देश में जमीन के लिए संघर्ष करना और लाखों एकड़ बँटवारा होने की बात जो है वह पहले पहल तेलंगाना में ही देख सकते है । लगभग पूरा भारत अंग्रेजों से आजाद होने पर भी तेलंगाना तो निजाम के शासन में पिसने लगा । फलत: निजाम के खिलाफ आन्दोलन उभरे ।

निजाम शासन का अंत होने पर भी पट्वारी, पटेलु, जमींदार और गाँव के मुखिया वर्ग आदि सब निजाम से भी बढ़कर आमजनता को लूटने लगे । फ्यूडलिज्म बहुत तेज चलने लगी । " अय्यबांचेनु " { जी मैं आपका गुलाम हूँ } " अब्बबांचेनु { माताजी मैं आपका गुलाम हूँ } जैसी संस्कृति पूरे तेलंगाना में फैली । मुखिया के सामने " नी बांचेन " कहने लगे और उनके घरों में बेगार करने लगे । भूख-अकाल तो मामूली-सी बात होने लगी । गलत कामों के लिए मुखियाओं की दूकाने केन्द्र बनने लगीं ।

तेलंगाना वासियों के आचार-व्यवहार, मेहमानों के प्रति उनकी प्रेम भावना, अपनी भूख मिटाने के बजाय, मेहमानों की भूख मिटाने में उनकी तृप्ति, भूख, अकाल, खेतीबारी की समस्यायें, मेहनत का फल न मिलने से उत्पन्न समस्यायें आदि अनेक कहानी की वस्तु बने हैं ।

शोषण जहाँ होता है वहाँ विद्रोह का उठना स्वाभाविक है । तेलंगाना में ही पहले पहल यह स्थिति उत्पन्न हुई । आन्दोलन को स्पष्ट करने में और समस्याओं को जनता के सामने प्रस्तुत करने में तेलुगु के अनेक कहानीकार पूर्णतः सफल रहे हैं । उनकी प्रमुख कहानियाँ हैं -- जाडि तोक्कुडुबंडा सदानंदशारदा, भूमि ‌॥जमीन॥ संघम् ॥ संघ ॥ अल्लमराजय्या, अडविकाचिन वेन्नेला ॥ जंगल में फली रोशनी ॥ कालुवमल्लय्या, दुन्ना ॥भैंसा॥,हैचरिका ॥ बोय्यजंगय्या॥, पालु ॥ दूध ॥ बो॰यन॰रामुलु आदि हैं ।

आन्ध्रा प्रान्त ॥ सागरतटवर्ती प्रान्त ॥ :-

यह आन्ध्र प्रान्त अंग्रेजों के शासन में था । इसीलिए आधुनिक सभ्यता का प्रवेश यहीं पहले हुआ । शिक्षा का विस्तार भी होने लगा । जनता में नये दृष्टिकोण भी पलने लगे ।

पानी की सुविधा से खेती की समस्या नहीं रही । यहाँ खेतीबारी करने के लिए अनेक,सुविधायें होने पर भी " किसान " आत्महत्या कर ले रहा है । इसका मूल कारण हैं -- गाँव का मुखिया वर्ग, दलालों का धोखेबाजी और लुटेरे-पन । दलालों की धोखेबाजी एक तरह से आन्ध्रा प्रांत की विशेषता है । उनका धोखापन, चटाई के नीचे पानी की तरह और भीगी हुई कपड़ों से गला काटने की तरह रहता है । इसके अलावा बाढ या तूफान से भी बहुत नुक्सान होता है ।

आन्ध्र प्रांत के कहानीकार समकालीन वातावरण को, समस्याओं को स्पष्ट करने में पूर्णतः सफल रहे हैं । श्रीकाकुल में उत्पन्न गिरिजनों के आन्धोलन को लेकर भी अनेक कहानियाँ लिखी गयी हैं । आन्ध्र प्रांत की प्रसिद्ध कहानियाँ हैं -- यज्ञम ॥ कालीपटनम रामराव ॥ साराकथलु, श्रीकुपल्ली, पिपीलिकम ॥चींटी॥, ॥ रावकोंड विश्वनाथशास्त्री ॥ तोर्पु, (भूषणम) पाडु-पोरु ॥अप्पलनायुडु ॥ आदि कहानियाँ हैं।

रायलसोमा :-

अन्य प्रान्तों की तरह यहाँ कोई भी आन्दोलन नहीं उठा है । आजादी के बाद से ही कहानियाँ आने लगी हैं । यहाँ की (रायलसोमा की) प्रमुख विशेषतायें हैं -- हत्यायें, सशस्त्र संघर्ष, गुटबन्दी, बंबों से हमले, रिश्तेदारों के बीच प्रतिशोध की भावनायें हैं । ऊपरीतौर पर ये सब छोटे-मोटे झगडे होने पर भी उनके पीछे राजनैतिक दल या नेता रहते हैं । इज्जत के तौर पर भी लडाइयाँ होती हैं। वहीं पैदा होकर, बडा होकर, समकालीन परिस्थितियों को पचाकर, संघर्ष की जड को पकडकर, यथार्थवादी दृष्टिकोण से कहानियाँ लिखने में यहाँ के कहानीकार पूर्णत: सफल रहे हैं ।

बेकार पडा हुआ जमीन, कसाई अकाल, दुर्भर माननेवाली किसानी जीवन, रेगिस्तान जैसी जमीन घास के अभावसे अच्छे-अच्छे बैलों को कसाई को बेचकर अपनी भूख मिटानेवाले किसान, पानी के अभाव से उत्पन्न समस्यायें आदि का चित्रण कहानियों में मिलता है ।रायलसीमा के प्रमुख हस्ताक्षर कहानीकार हैं श्री केशुविश्वनाथ रेड्डी, महेन्द्रा , स्वामी, नरेन्द्रा आदि हैं ।

तेलुगु प्रान्त के हर एक कहानीकार अपनी-अपनी क्षेत्रीय विशेषताओं को और समस्याओं को स्पष्ट करने में पूर्णत: सफल रहे हैं । कहानियों को पढने से ही स्पष्ट हो जाता है कि कहानीकार किस क्षेत्र का है । हर क्षेत्र में आन्दोलन उभरे हैं। पूरे आन्दोलनों का मूल लक्ष्य रहा है " शोषण तंत्र " को भगाना । शोषित वर्ग जो भी है वे सब एकत्रित होकर आन्दोलन में भाग लेने लगे । शोषित वर्ग चाहे वह किसान हो या मजदूर हो या अन्य शोषित आदि सब अपनी भलाई के लिए संघ की स्थापना करके निम्न विषयों पर ध्यान देने लगे --

1. बेगारी काम रद्द करना ।
2. मुखिया या मालिकों के अधिकारों पर प्रश्न करना ।
3. बंजर जमीन का आक्रमण
4. जनता के पंचायत
5. पंचायतों के नाम पर मुखिया वर्ग जो भी लूट लिये । उस संपत्ती को वापस करना ।
6. गाँव की संयुक्त समस्याओं को, पंसलों को समस्याओं को संघ ही परिष्कार करना ।
7. संघ को जो भी तिरस्कार करेगा उसको संघ से बहिष्कार करना । "[1]

विरसम के उपाध्यक्ष श्री कोडवटिगंटि कुटुंबराव इस प्रकार कहते हैं ---

" विप्लव लेखक संघ " एक राजनैतिक दल का अनुसरण करने में मुझे एतराज है । राज नैतिक दल जिस प्रकार चलाते हैं उसी प्रकार साहित्य में संभव नहीं है । "[2]

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट होता है कि विरसम एक राजनैतिक दल को अनुसरण करने लगी । साहित्य और राजनीति दोनों रेल की पटरियों की तरह हैं। दोनों चलते हैं मिलते नहीं । स्वार्थी नेता, साहित्य को अपनी ओर घुमाने की व्यर्थ कोशिश में रचनाकारों को दल के सदस्य बनाने में असफल रहे । फलत: विरसम अपने लक्ष्यों को पूरा करने में असफल रही है । इसीलिए इसका प्रभाव कम दिखायी देता है ।

---

1. कथावेदिका § 1992 § विशालान्ध्रा पब्लिशिंग हौस - पृ. 49.
2,

हिन्दी और तेलुगु की समांतर कहानी की प्रवृत्तियाँ : एक तुलना :-

समांतर कहानी की मूल प्रवृत्ति रही है " आम आदमी का जीवन " को कहानी में स्पष्ट करना । आम आदमी के अन्तरगत सभी शोषित आते हैं । ऐसा आम आदमी सिर्फ हिन्दी क्षेत्र का ही नहीं है बल्कि तेलुगु क्षेत्र का भी है । उसे इन विभिन्न रूपों में पाते हैं । तटीय प्रान्त कहलानेवाले आन्ध्रा प्रांत, तेलंगाना प्रान्त और " रायलसीमा " इन तीनों प्रांतों में आमआदमी का चित्र विभिन्न रूपों में उभरता है । साथ-साथ शोषकों के भी विभिन्न रूप सामने आते हैं । हर प्रान्त के कहानीकार, अपनी कहानियों में आम आदमी के चित्र का प्रस्तुत करने में अत्यंत सफल रहे हैं । आन्ध्र प्रदेश में शोषकों के खिलाफ तेलंगाना आन्दोलन, श्रीकाकुल आन्दोलन आदि समाज से उभरे हैं । उस प्रकार हिन्दी कहानी के क्षेत्र में विभिन्न आन्दोलन तो नहीं उभरे । कहानियों का प्रकाशन ही आन्दोलन की तरह चलता रहा । हिन्दी कहानी के क्षेत्र में पत्रिकाओं का प्रमुख योगदान रहा है । कमलेश्वर सारिका के संपादक बनकर अनेक कहानियों के संग्रहों को प्रकाशित करने में सफल रहे । अनेक गोष्ठियाँ भी चलायी गयीं । शायद इस प्रकार पिछले दशकों में नहीं हुआ होगा । लेकिन तेलुगु कहानी के क्षेत्र में ऐसी स्थिति नहीं रही । जो भी आन्दोलन उभरे, वे सब शोषकों के खिलाफ, उनको भगाने के लिए ही उत्पन्न हैं । हिन्दी में भी ऐसा आन्दोलन का रहा है वैसा हिन्दी के लिए आन्दोलनों का रूप नहीं रहा है । साथ-साथ कहानीकारों का आन्दोलनसेजो संबंध रहा है उसी प्रकार हिन्दी कहानीकारों का नहीं रहा । हिन्दी कहानीकारों का मूल उद्देश्य तो कहानीक्षेत्र में अपने आप को स्थापित करना ही रहा । तेलुगु कहानीकारों का मूल लक्ष्य समाज से शोषण को पूर्णत: भगाना ही रहा । तेलुगु की कहानियों से आन्ध्र का पूरा नक्शा सामने आता है लेकिन हिन्दी कहानियों में हिन्दुस्थान की पूरा नक्शा देख सकते । क्योंकि हिन्दुस्थान अनेक राज्यों का मिलन है । लेकिन आन्ध्रा तो एक छोटा-सा राज्य है ।

(3) इब्राहीम शरीफ - " मक्कार " :-

इब्राहीम शरीफ आठवें दशक का प्रमुख हस्ताक्षर है । आठवें दशक के आरंभ में सन् 1970 में ही " कहानी " पत्रिका में " मक्कार " के प्रकाशन से हिन्दी कहानी क्षेत्र में खलबली मच गयी और उसे एक विशिष्ट कहानी मानने लगे । " मक्कार " कहानी में ही कई आलोचकों ने सा दशक तथा आठवें दशक की कहानियों के अलगाव का बिन्दु पहचाना था । " मक्कार " की रचना प्रक्रिया में साठवें दशक की मान्यताओं से अलग नवीन रचना-विधान भी देख सकते है ।

अनुभव की अभिव्यक्ति, उसकी प्रतिक्रिया, उसके अव्यक्त अंश और उन सब के विरोधा-भास को एक साथ प्रकट कर सकने की निस्संग निर्मम शक्ति और बौध्दिकता इब्राहिम शरीफ में थी और मक्कार कहानी इसे प्रामाणित करती है ।

" मक्कार " कहानी में एक व्यक्ति के द्वारा विभिन्न स्थानों पर पात्रों के प्रति अपनी सामयिक " मक्कारी " को प्रदर्शित करते हुए भी उसे छिपाये रखने की कोशिश का मनोवैज्ञानिक वर्णन है । दोस्ती की बात सुनाकर उसकी बहन को पेडी की सूजन से राहत दिलाने के लिए उसे अस्पताल ले जाता है और बाहर उसे बहन के रूप में समझने का आभास देते हुए भी शारीरिक संबंध चाहता है जो एक मक्कारी काम है । यहाँ सामाजिक मूल्यों को पतन होते हुए पाते है । दोस्त के द्वारा अतीत के बारे में पूछे जाने पर कथानायक अनचाहे ही शून्य की ओर चला जाता है । अतीत से उसके " मोह भंग " की स्थिति अद्भुत है । उसने एक लडकी से प्यार किया था । लेकिन अपने को बचाने के लिए उससे मक्कारी की थी । बाहरीतौर पर लडकी के प्यार को वह " कमर्शियल " कह डालता है । भावुकता एक ईमानदार व्यक्ति के लिए जरूरी हो सकती है । पर यहाँ नायक का भावुक होना भी उसकी मक्कारी है । इसी मक्कारी के साथ वह अपने दोस्त की बीबी से भी शारीरिक संबंध रखने का प्रयत्न करता है । उसके साथ घण्टों साँप-सीढी का खेल

खेलता रहता है। पत्नी के द्वारा तलाक का प्रस्ताव रखना और पर पुरुष के साथ चले जाने में हम बदलते हुए परिवेश का प्रभाव पाते हैं। पारिवारिक सम्बन्धों में दिन ब दिन आती हुई गिरावट, सामाजिक परिवर्तन के साथ-साथ नैतिक मूल्यों में परिवर्तन तथा उसके परिणामों को कहानीकार ने प्रभावोत्पादक ढंग से चित्रित किया है। कथानायक अपने दोस्त के हाथ पकड़कर कहता है "चलो, मेरे दोस्त इन बातों को तुम समझ नहीं पाओगे। तुम समझते हो कि सारी दुनियाँ तुम जैसी ही ईमानदार है .... इसलिए तो तुम अब तक उसी लड़की की याद में घुलमिल रहे हो जिससे तुमने प्यार किया था .... लेकिन असलियत इससे अलग भी हो सकती है।"[1]

लेखक यह बताने में सफल रहा है कि पूँजीवादी व्यवस्था ने हर आदमी के भीतर मक्कार, पैदा कर रहा है। जिससे सामाजिक जीवन की न केवल जटिलता बढ़ रही है, अपितु उसका पतन भी हो रहा है। आज के सभ्य समाज में रिश्ते-नाते और नैतिकता का विघटन भी पाते हैं। मध्यवर्गीय आदमी की प्रवृत्ति में दिखावा-झूठ, छल, बड़बोलापन आदि कई प्रकार से मक्कारी घेर कर जाती है। इस कहानी में स्त्री पुरुष में संबंधों में बदलाव देख सकते है। नारी स्वयं आत्मनिर्भर होकर, पुरुष की अमानवीय जंजीरों से मुक्ति पा सकती है। अपनी इच्छानुसार वहाँ पर पुरुष से मुक्त यौनसंबंध बनाने में नहीं झिझकती। यह बदलती हुई नैतिकता का क्षेत्र है। इन सभी विशेषताओं को इब्राहीम शरीफ ने "मक्कार" में सरल काव्यात्मक तथा कलात्मक भाषा के सहारे यथार्थ के धरातल पर अभिव्यक्त किया।

इब्राहीम शरीफ की प्रमुख कहानियाँ है "बौध्दिक", "दिग्भ्रमित", "प्रलाप" आदि है। उनकी कहानियों में सोच और संघर्ष के बोध की स्थिति का तर्क हावी रहता है।

---

1. मक्कार " कहानी वर्ष " 17 अंक - 1 जनवरी, 1970 पृ. 16.

<u>बोकुपल्ली</u> (ब्लीकीनी)

यह रावसाहब की कहानी है । एक ही बात में बताना है तो राव साहब उस शहर के धनिक वर्ग के नींव के पत्थर और प्रतिनिधि है । उसकी पत्नी समय काटने के लिए या गुजारने के लिए ही अनेक समितियों की सदस्या बन चुकी है । नंदमोहन उनका ﴾ 25 वर्ष का ﴿ बेटा है । मालिनीराव ﴾ 20 वर्ष की ﴿ बेटी है । नंदमोहन बडा ही कुशल है । इस व्यवस्था की कमियों को पिता से भी ज्यादा जानता है ।

अपने सुख की प्राप्ति में जो रुकावट डालते हैं उनको जिस प्रकार बिल्ली अपने गुण के अनुसार मार डालती है उसी प्रकार नंदुबीबी भी जिससे उसने प्यार करता था, उस लडकी के शादी करने के लिए पूछने पर, ब्राथल केस में फँसाकर, उसको ﴾सब﴿ जीवन का सर्वनाश कर देता है । खतरे का सामना करने का मार्ग जानकर नंदुबीबी के पिता भी बहुत खुश हो जाता है गर्वित हो जाता है । गरीबों के शील से, प्राणों से खेलना धनिकों के लिए मनोरंजन का खेल और उनकी आदत है । अधिकारी वर्ग धन के लिए जब तक सिर झुकाता हरहता है तब तक धनवानों की लूट और अत्याचारों की कोई रुकावट ही नही रहती । धोका, छल आदि के लिए जिस प्रकार बिल्ली प्रतीक है । उसी प्रकार नंदुबीबी जैसे धनिकों भी है । इसीलिए अपने जीवन को रुकावट बनी हुई सरु की जिन्दगी का सर्वनाश कर देता है । उस पर वेश्या की मुहर भी लग जाती है । हमारे समाज में ब्राथल केस में फँसकर जेल गयी हुई औरत के सामने दो ही रास्ते है - आत्महत्या कर लेना नहीं तो आत्मा को मारकर वेश्या बन कर जीवन बिताना ।

धनिक वर्ग या शोषक वर्ग गरीबों पर आर्थिक और नैतिक तौर पर किस प्रकार अपना जुल्म दिखाते है । उसका नग्न चित्रण इस कहानी में दिखायी गया है । धनवानों की बुद्धि का एक चित्र इस प्रकार है ---

नन्दमोहन को तीक्ष्ण बुद्धि निम्न वाक्यों से स्पष्ट हो जाती है —

" आजादी की दुनिया में उच्च स्तर पर पहुँचने के लिए हर एक को अधिकार और मौका भी है। धन, नौकरी या कठिन कर्म, सुन्दरता आदि सब को ज्यादा मौके हैं। हफ्ते में दिनों में बम्बई जा रहा हूँ। पिताजी को शायद यह बात मालूम नहीं है। बेचारे पिताजी। इस बच्चों को शीशे का दूध पिलाकर पालना चाहता है। उनको मालूम नहीं है कि कठिन काम (अण्ट प्राइजिंग) के लिए पंख उगे हैं। उनको मालूम नहीं है कि यह बेबी पूरे बम्बई को बाँधकर घुमायगा। एक ही हफ्ते में उनको पता चल जायेगा।"[1]

हिन्दी और तेलुगु की समांतर कहानियों के तुलनात्मक विश्लेषण करने से आम आदमी के विभिन्न रूप सामने आते हैं।

(अ) इब्राहिम शरीफ " मक्कार " रावकोंड विश्वनाथ शास्त्री " चोकुपिल्ली "

इन दोनों कहानियों में आम स्त्रियों की इज्जत लूटने की स्थिति का वर्णन है। लेकिन तरीका तो अलग - अलग रहा है। लूटनेवाले तो दोनो कहानियों में अमीर (शोषक-वर्ग) ही है। अपनी मक्कारी से स्त्रियों को किस प्रकार अपने वश में लेते है और

---

1. स्वातंत्रोत्तर साहित्य में तेलुगु कहानी - पृ. 81.

अपना काम पूरा होने तक किस प्रकार अपनी मक्कारी का प्रदर्शन करते उसका नग्न चित्र इन कहानियों मे है । लेकिन दोनों कहानियों में एक अन्तर देख सकते है कि " मक्कार " में पुरुष के लिए औरत चाहे जो भी हो उससे शारीरिक संबंध रखना ही मूल उद्देश्य रहा है स्त्री तो बहिन भी हो सकती है और दोस्त की भाभी भी । शायद इसीलिए इस कहानी में पुरुष पात्र हर स्त्री से शारीरिक संबंध रखने की कोशिश करता रहता है पत्नी से तलाक लेने के लिए भी तैयार होता है । लेकिन " चोकु - चिल्ली " का कथ्य कुछ भिन्न होने पर भी लक्ष्य तो एक ही रहा है । इस कहानी में नंदु भाभी, सरु से प्रेम का नाटक चलाता है और उसको इज्जत लूटता है । " सरु " उससे शादी करने के लिए पूछने पर उसे ब्रोतल हौस का झूठा मुकद्दमा लगाकर वेश्या को छाप लगाकर जेल भिजवाता है । अपने जीवन में कांटा वत बनी हुई सरु की जिन्दगी को सर्वनाश कर देता है । " मक्कार " में अपनी शारीरिक इच्छा को पूरा करना ही पुरुष का प्रमुख लक्ष्य रहा है तो " चोकुचिल्ली " में और आगे बढ़ते हुए स्त्री को इज्जत लूटना ही क्या उसकी जिन्दगी का ही सर्वनाश करना ही लक्ष्य बन जाता है ।

दोनों कहानियों में पारिवारिक संबंधों में दिन ब दिन आती हुई गिरावट, सामाजिक परिवर्तन के साथ-साथ नैतिक मूल्यों में भी परिवर्तन और अमीर वर्ग या शोषक वर्ग गरीबों पर अपना अधिकार दिखाने में और उनकी जिन्दगी लूटने में सफल होना आदि सब को चित्रित करने में दोनों भाषाओं के कहानीकार पूर्णत: सफल रहे । दोनों कहानियों में और एक अन्तर भी देख सकते है कि आठवे दशक तक तो हिन्दी कहानियों में पुरुष, विवाहित या अविवाहित स्त्री से, रिश्ते को भी भूलकर शारीरिक संबंध रखने की कोशिश करता है लेकिन ऐसी स्थिति तेलुगु की कहानियों में नही रही । तेलुगु कहानियों का पुरुष, इज्जत लूटना है तो अविवाहित युवतियों का या कपट प्रेम में फँसी हुई गरीब युवतियों का।

(आ) कामतानाथ -- " छुट्टियाँ " :-

आठवें दशक की कहानी प्रवृत्ति के अनुरूप कहानी में अकेलेपन, अजनबीपन, संत्रास, ऊब और घुटन आदि विडम्बनाओं के स्थान पर जीवन के सरल पक्षों का चित्रण (मार्मिक) कामतानाथ की कहानियों में मिलता है । कामतानाथ जीवन को प्रतिकूल परिस्थितियों से अनवरत संघर्ष करते रहने का भाव पैदा करते है आज मनुष्य के सामाजिक और पारिवारिक संबंधों में दरार पैदा हो जाएगी । व्यक्ति की मनःस्थिति में टूटन, बदलाव, निराशा, अनास्था आदि आने लगी । व्यक्ति की जिन्दगी का चित्रण " छुट्टियाँ " के कहानीकार ने यथार्थपरक ढंग से किया है --

इस कहानी में कथानायक विपिन के छोटे भाई सन्नू के द्वारा अफीम ले आने और घर से बरामद होने पर जेल जाने से संबंधित है । उसी से उत्पन्न स्थिति के अनेक पहलुओं एवं मनः स्थितियों को लेकर कहानी का ताना-बाना बुना गया है । कथा - नायक विपिन होली की छुट्टियों में अकेला घर पहुँचता है तो उसे सन्नू की गिरफ्तारी की खबर मिलती है । बाद में वह अपने दोस्त खुर्शीद के द्वारा उसे जमानत पर रिहा करके घर ले आता है । इसी संबंध में जब नायक होली खेलने गाँव के परिचित व्यक्तियों के घर चलता है तब उसे तरह-तरह के सवालों का सामना करना पड़ता है । अंत में वह सन्नू को सुधारने का विचार छोड़कर निस्सहाय स्थिति में ही लौट जाता है ।

इस कहानी में सूक्ष्म रूप से समसामयिक सामाजिक स्थितियों और व्यक्ति की विभिन्न प्रकार की मनः स्थितियों का चित्रण किया गया है । कहानी में परिवार में विघटन आपसी संबंधों और किसी असामाजिक कार्यों के प्रति समाज की प्रतिक्रिया को प्रभावशाली भाषा-प्रयोग के साथ यथार्थ के धरातल पर चित्रित किया गया है ।

कामतानाथ की कहानियाँ अर्थपूर्ण हैं। कहानियों में सामाजिक मूल्यों का विघटन, पारिवारिक सम्बन्धों में टूटन व मान्यताओं का खण्डन आदि सामाजिक विद्रूपताओं को वे बडे प्रभावोत्पादक रूप से प्रस्तुत करते हैं।

केतुविश्वनाथ रेड्डी :-

रायलसीमा के प्रसिद्ध कहानीकार हैं श्री केतुविश्वनाथ रेड्डी। इनकी कहानियों में रायलसीमा का सामाजिक वातावरण, गाँवों का वातावरण और समस्यायें दिखायी देती हैं। वे 1970 से ही कहानियाँ लिख रहे हैं।

सानुभूति :-

केतुविश्नाथ रेड्डी की एक चर्चित कहानी है " सानुभूति "। रायलसीमा में अग्र वर्णों के बीच में ही होनेवाले झगडे, लडाइयाँ पीढ़ी दर पीढ़ी पिता के बाद ज्येष्ठ पुत्र को मिलने की संपत्ति है। कहानी में भी नायक छोटा पुत्र होने के कारण बचता दिखायी देता है। पढाई के कारण से गाँव से बहुत दूर भेजा जाता है। गाँवों में एक गुट से दूसरे गुट के बीच में या एक गाँव से दूसरे गाँव के बीच, प्रतिशोध की भावनाओं से अनेक लडाइयाँ होती रहती हैं। खास करके एक ही कुल या जाति के सगे-संबन्धियों के बीच ही ये लडाइयाँ चलती थी। वहाँ के गाँवों में खून होना एक साधारणसी बात है। हमेशा होता ही रहता है। नायक को गाँव से शिक्षा केलिए और नौकरी के कारण शहर में ही मिलने बहुत दूर रहना पडा। " नायक " जैसे एकाध व्यक्ति ही बच निकलते थे। नहीं तो ऐसे वातावरण में फंसकर अनेक समस्याओं का सामना करना पडता है।

बुसिरेड्डी कहने लगा -- " छोटे भाई के मर जाने की बात तो दु:ख की है, लेकिन प्रतिशोध के लिए अंत कहाँ है ? कहीं न कहीं रुक जाना है । लेकिन प्रतिशोध बढानेवालों से ही समस्या है .... इसके छोटा भाई की मौत से, घर और गाँव के एक पक्ष के लिए सिर्फ यही है । इनके घरवाले और गाँव में इनके पक्षवाले कडपा को छोडकर गाँव आकर पार्टी चलाने के लिए कहते रहे हैं । हमारे जैसे लोग पूरी तरह से मनाने के लिए ही कोशिश कर रहे हैं -- माधव धीरे-धीरे गुनगुनाने लगा वे एक लाख देने के लिए तय्यार हो रहे है ।"

हाँ जो हुआ सो हुआ । वेंकटरेड्डी तो प्रतिशोध लेना ही चाहता है । लेकिन उसके लिए अंत कहाँ है ? बुसिरेड्डी ने पूछा । " तो वे इतना बडा काम करे तो हमें चूडियाँ पहनकर चुप रहना है ? वेंकटरेड्डी क्रोध से हिलने लगा ।"[1]

(आ) कामतानाथ " छुट्टियाँ " -- केतुविश्वनाथ रेड्डी " सानुभूति " :--

इन दोनों कहानियों में व्यक्ति की मन:स्थितियों को स्पष्ट करने में दोनों कहानीकार सफल रहे हैं । आजकल के परिवारों में भाई-भाई का रिश्ता कैसा चल रहा है उसका एक चित्र इन दोनो कहानियों में पाते है । यह कहानी सिर्फ भाई-भाई से संबंधित नही है । पूरे परिवार से संबंधित है । कामतानाथ की " छुट्टियाँ " में कथानायक विपिन्न, अपने भाई सन्तू के प्रति बहुत रखता है । उससे अनेक गलतियाँ होने पर भी उसे बचाने के लिए कोशिश करता रहता है । उसकी वजह से समाज से समस्या उत्पन्न होने पर भी उसे ख्याल न करके " संतू " को बचाने के लिए कोशिश करता है । " संतू " के मन में भी परिवर्तन लाने के लिए पूर्णत: कोशिश करता है । लेकिन तेलुगु की कहानी " सानुभूति " में ऐसा चित्र नहीं मिलता । रिश्तेदारों में तो प्रेम रहता है लेकिन वह प्रेम एक हद तक ही है । रिश्तेदारों में भी कुछ

---

1. सानुभूति --- केतुविश्वनाथ रेड्डी

गड़बड़ हुई तो खून-खराबा होता है। मन में प्रतिशोध की भावना स्थिर होती है। अपना मूल लक्ष्य प्रतिशोध लेना और हत्या करना ही रह जाता है। इनमें " मन " में परिवर्तन लाने की कोशिश है। लेकिन " छुट्टियाँ " में कहानीकार " संतू " के मन को परिवर्तित करने में असफल हो जाता है लेकिन " सानुभूति " में रेड्डी अपना प्रतिशोध लेना चाहता है।

दोनों प्रांतों के सामाजिक वातावरण में कुछ भिन्नतायें भी देख सकते हैं। रायलसीमा के वातावरण में प्रतिशोध के नेपथ्य में अनेक गरीब मारे जाते हैं। नेताओं से भी अधिक नुकसान गरीबों का ही होता है। लेकिन " छुट्टियाँ " में ऐसा नहीं।

(ङ) मधुकर सिंह -- " पूरा सन्नाटा " :-

मधुकर सिंह की चर्चित कहानी है -- " पूरा सन्नाटा " इसमें जिन्दगी और कहानी की सीमा रेखाएँ धुल मिल जाती हैं। इनकी भाषा में आम आदमी की जिन्दगी की धड़कन रही है। कथ्य किसी साहित्यिक दृष्टि से न लेकर उसे जिन्दगी के संघर्ष से गढ़ लिया गया है। मधुकरसिंह की कहानियों से गुजरना-अराजक और खौफनाक व्यवस्था के बीच से गुजरना और अमानवीय चेहरों को पहचानना है। इनकी कहानियों में देश की राजनीतिक असरवादिता और पूँजीवादी अर्थतन्त्र से, आम आदमी की बदहवासी से साक्षात्कार होता है। यहाँ ऐसे पात्र हैं जिन्हें शासन, संस्कृति यानी व्यवस्था के सम्पूर्ण खोखले ढाँचे से इन्कार है। इनकी कहानियों में कुण्ठा, ऊब, भूख और जिन्दगी के सीधे संघर्ष से पनपी भौतिक प्रक्रियाओं का खौफनाक चित्रण मिलता है। एक विदेशी द्वारा अपने आपको भारतीय बना लेने की आकांक्षा से मन में उत्पन्न संवेदनाओं का चित्रण " पूरा सन्नाटा " में है। नायक रिचार्ड {आफ्रिकन} अपने को भारतीय सभ्य समाज में प्रतिष्ठित करने की आशा से बालों को कटवाकर भारतीय सभ्यता और संस्कृति के प्रति आकर्षित होने लगे तो भारतवासी विदेशों की सभ्यता और संस्कृति को अपनाने की कोशिश करने लगे हैं। इस कहानी में कहानीकार ने

प्रसंगों के अंतर्गत रंगभेद और जातिभेद को सूक्ष्म रूप से चित्रित किया है । कहानी-कार मधुकर सिंह ने कहानी में एक ऐसे सामान्य व्यक्ति का चित्रण किया है जो समाज में रहते हुए भी अकेला महसूस करता है । वह दिल्ली जैसे शोर-शराब से भरे महानगर में रहते हुए भी किसी को जरा-सी आत्मीयता नहीं पाता है । इसमें प्रतिकूल परि-स्थितियों के कारण जीवन के प्रति वितृष्णा, घृणा, अनासक्ति, सामाजिक सम्बन्धों की एक प्रकार से अमान्यता महानगरीय जीवन बोध आदि का मार्मिक चित्रण मिलता है ।"[1]

तोक्कुद्दुबंडा (गाँव खलिहान के रूप में उपयोग में आनेवाली चट्टान) :-

इस कहानी में गाँवों के जमीन्दारों का अपने नौकरों के प्रति व्यवहार का नग्न चित्र है । वे स्वार्थ से अपने नौकरों की भलाई चाहनेवाले ही नहीं रहते । यह कहानी इस तथ्य को स्पष्ट करती है । इस कहानी का मूल पात्र " गंगड्डु " अपना मालिक के पुत्र और पुत्री से जो भी काम दिया जाता है, चाहे जितना भी कष्टदायक क्यों न हो करता है । लेकिन उन अमीरों को गंगड्डु को परेशानियों से बचाने की बात ही नहीं सूझती । वह क्या खा रहा है ? पी रहा है ? यह उनके लिए अनावश्यक है । पूरे घरवाले गंगड्डु को पशु से भी हीन देखते है । पशु को तो कम से कम घास खिलाते है । लेकिन गंगड्डु को वह भी नहीं ।

(इ) मधुकरसिंह : " पूरा सन्नाटा " - सदानंदशारदा " तोक्कुद्दुबंडा " :-

दोनों कहानियों में आमआदमी का चित्र खींचा गया है । दोनों का परिवेश (गाँव और नगर होकर) अलग-अलग होने पर भी शोषण की स्थिति तो एक ही है । " पूरा सन्नाटा " में " रिचार्ड्स" नामक एक विदेशी भारतवासी होना चाहता है भारतीय सभ्यता और संस्कृति को अपनाना चाहता है । उसके

---

1. पूरा सन्नाटा - मधुकर सिंह - पृ. 33 " पहला पाठ " (क.सं.) से ।

माध्यम से " आमआदमी " का चित्र खींचा गया है तो " तोक्कुडुबंडा " में " गंगडु " गाँव के जमीन्दार के पास बेगार करता है । उसके माध्यम से गरीबों पर और आम आदमी पर शोषण किस प्रकार होता है उसको स्पष्ट किया गया है । शोषण की स्थिति भिन्न होने पर भी आमआदमी पिस रहा है । नगर में " रिजईस " जाति भेद, रंग भेद आदि से अनेक समस्यायें पाता है और कोई भी उसे " आदमी " के रूप में नही देखते और कुछ मदद भी नही करते । वह " दिल्ली " जैसे महानगर में ही अकेला है और उसको आत्मीयता नही मिलती । विदेशी होकर भारत में इतनी समस्याओं को सामना कर रहा है तो भारतवासी होकर एक जमीन्दार के पास बेगार करनेवाला, " गंगडु " की स्थिति भी ऐसी ही है । लेकिन शोषण की स्थिति अलग हो सकती है । लेकिन पिसनेवाला एक रूप में ही पिसता है ।

दोनों कहानियों का विश्लेषण करने से पता चलता है शोषकों के लिए जरूरत नही है कि वह गाँव का किसान है या विदेशी है । उनका काम तो सिर्फ निरीह को सताना और उसकी मेहनत को लूटना ही है ।

बिना बताये बिना बाहर जाने से गंगडु पर मालिक नाराज होता है । " अरे तू कहाँ जाकर आ रहे हो " हंटर गंगडु पर चलाते हुए पूछने लगा । .... " क्या बोलना है ? ... " छोटे मालिक ने भेजा, ऐसा नही बोल सकता । छोटी मालकिन ने भेजा ऐसा भी नही बोल सकता । मुँहबंध करने का ही अवसर था और सिर झुकाने का ही समय था । पीठ मालिक के हंटर को सौंपने के सिवा कोई दूसरा रास्ता गंगडु को नही सूझा ।"

ई) आशीस सिन्हा " आदमखोर " :-

समान्तर कहानीकारों में एक प्रमुख हस्ताक्षर कहानीकार है " आशीस सिन्हा " उन्होंने अपने समसामयिक युग और परिस्थितियों को यथार्थ के धरातल पर चित्रित किया है । जब समाज में तरह-तरह के शोषण से जनता की जिन्दगी दिन ब दिन बदतर

होने लगी । व्यवस्था का क्रूर चेहरा जीवन के सभी क्षेत्रों का शोषण करने लगा तो परिणाम स्वरूप भुखमरी की जिन्दगी समाज में चारों ओर दिखायी देने लगी ।

" आदमखोर " कहानी में व्यवस्था के लिए हानिकारक बनकर " आदमखोर " आता है । आदमखोर गर्म और ताजा खून देखना पसन्द करता है । कहानी में अमूर्त (अप्रस्तुत), उस क्रूर, कर्कश जानवर के रूप में छोटे जमीन्दार त्रिदिव नारायण को अंकित किया गया है । त्रिदिवनारायण जमीन्दार का बेटा है । अपने बड़े-बड़े कारखाने हजारों एकड़ जमीन आदि के साथ विलासमय संसार से ऊबकर कभी-कभी जंगली इलाकों में घूमने, शिकार खेलने जाता हैं और इसी बहाने वहाँ की औरतों का शिकार भी करता हैं । त्रिदिवनारायण के लिए औरत का कोई मूल्य नहीं ।वे नारी को अपनी शारीरिक इच्छा की पूर्ति की वस्तु समझते है । जंगली जानवरों को शिकार करना, यौन वासनाओं की पूर्ति, गर्म खून देखने की अमानवीय प्रवृत्ति आदि ने त्रिदिवनारायण को एक क्रूर " आदमखोर " बना दिया हैं । इलाके में अकाल पड़ा है । भूखी, नंगी जनता की कमजोरियों से फायदा उठाकर वस्तु की तरह आदमी को खरीदने - बेचने में त्रिदिव नारायण का विज्ञापन है । त्रिदिव नारायण में यह दानवी रक्त पिपासा बड़े अमानवीय रूप से सामने आयी है । नौकर सूरज से त्रिदिव नारायण कहता है -- " जो नशा गर्म - ताजा खून देखने में है सूरज । वह इस स्कॉच में नहीं है ।" [1]

वह (त्रिदिव नारायण) आदमखोर के चारे के रूप में आदमी का बच्चा रखना चाहता है । पहाड़ी के निचले गाँव में एक बच्चे को उसके माँ-बाप को धमकी देकर दो हजार रुपये में जबर्दस्ती खरीदकर ले आता है । बच्चे को दूध के साथ शराब मिलाकर पिला देता है । इस प्रकार बच्चे को बेहोश करके, शेर के शिकार के लिए जीते जी चारे की तरह रखता है । अपने मन माने ढंग से निचले वर्ग को शोषित, पीड़ित करना शोषक व्यवस्था की क्रीड़ा होती है । व्यवस्था से संबंधित व्यक्तियों में मानवमूल्यों के लिए

---

1. आदमखोर - आशीष सिन्हा - पृ. 142.

कोई आदर नहीं होता । शोषण के भयावह परिणाम समाज में कैसी-कैसी अवांछनीय परिस्थितियों को उत्पन्न करते है उन्हें कहानीकार ने मार्मिक ढंग से चित्रित किया है ।

अप्पलनायुडु "पोडु - पोरु" :-

श्रीकाकुल आन्दोलन का मैदान प्रांतों में फैलाने से पहले वहाँ की स्थिति कालीपट्नम रामाराव की कहानियों में देख सकते है तो उसके बाद की स्थितियों को भूषणम की कहानियों में पाते है । उन दोनो की कहानियों को आगे बढ़ाते हुए, आन्दोलन के विकास को स्पष्ट करनेवाली हैं अप्पल नायुडु की "पोडु-पोरु" कहानियाँ ।

इस कहानी में (पोडु-पोरु) व्यापारियों से लूटे जानेवाले गिरिजनों का चित्रण है । सरकार और अफसर भी व्यापारियों का ही साथ देते है । उसका ही एक चित्र इस कहानी में हैं । गिरिजनों का कामेड जब भी उनसे मिलता है, उनमें होश आती है, कुल्हाड को पकड़कर कहने लगते हैं --

"मुकाबले के लिए तय्यार रहो । अरे पुलीस, तुम लोगों ने हमारे साथियों का सर्वनाश किया । हमें जेल भिजवाये । हमारी हड्डियों को तोड दिये । हमें जलाकर मार दिये थे ।"[1]

1· "पोडु - पोरु" कथलु - अप्पल नायुडु - पृ· 106·
(विरसम, श्रीकाकुलयूनिट (प्रचुरण) प्रकाशन)

हमारे जमीन को हमें छोडकर, हमारी संपत्ति को हमें छोडकर, हम पर चलाने-वाले जुर्म छोडकर भागे हुए साहूकार लोगों को ﴾स्वर्राजु को खींचकर लाते हुए, दिखाते हुए﴿ फिर सहारा देकर हमें फिर सता रहे हैं। हमारे दैनिक जीवन के लिए रोडे बना रहे हैं।

"जब भी गिरिजन आन्दोलन हुआ था तब यह स्वर्राजु शहर भागकर वहाँ छुप गया रूजन्सी को भूल गया। जमीन जायदाद को छोड दिया। सरकार से, पुलीस से, पूरा रक्षण पाकर भी डर से काँपता हुआ रह गया। उसके नस नस में डर था प्राण खोने का डर, संपत्ति को खोने का डर।"[1]

कहानीकार इस कहानी में गिरिजनों का बदला हुआ रूप स्पष्ट कर रहा है। एक बार गिरिजनों के आन्दोलन से, उनकी समस्यायें दूर हो सकी। लेकिन बाद में फिर शोषकों की जुल्म शुरू होती है। साहूकार फिर पैदा हो जाते हैं। ऐसी हालत में गिरिजन, अपने नायक से प्रेरणा पाकर अपनी समस्याओं को दूर करने के लिए फिर कुल्हाडी को हाथ में लेते है। साहूकारों के गिरिजनों पर अत्याचारों का प्रभाव कारी चित्र खींचना कहानीकार का लक्ष्य रहा है। इसके साथ-साथ यह संदेश भी है कि शोषण तंत्र को सिर्फ साम्य आन्दोलन ही भगा सकता है। शायद इसीलिए कहानी कार ने गिरिजनों को फिर कुलाडी उठाने की प्रेरणा दी।

4) आशीष सिन्हा "आदमखोर" -- अप्पलनायुडु "पोडु-पोरू" :-

इन दोनों कहानियों में से "आदमखोर" में एक गाँव का जमीन्दार और उसके बेटे के गाँववासी को ही नहीं बल्कि पास के वनजातियों को भी लूटते रहते है, तो "पोडु-पोरू" में सिर्फ गिरिजन ही लूटते हैं। आदमखोर में जमींदार के बेटे त्रिदिवनारायण को छोडकर अन्यों का प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से दिखायी नही देता लेकिन "पोडु-पोरू" में स्वर्राजु के साथ-साथ सरकारी अफसर, पुलीस ये सब प्रत्यक्ष रूप से ही गिरिजनों को लूटने लगते हैं।

---

1. "पोडु-पोरू" कथलु - अप्पल नायुडु - पृ. 94.
﴾विरसम, श्रीकाकुलयूनिट ﴾प्रचुरण﴿ प्रकाशन﴿

इन दोनों कहानियों में अन्तर तो यह है कि " आदमखोर " में " त्रिविक्रम नारायण " का सामना करनेवाला कोई भी नही रहा है । लेकिन " पोडु-पोरू " में गिरिजनों के लिए एक नायक है जो जेल से भागकर आया था । वह उनकी समस्याओं को दूर करने में कुछ हद तक सफल हो जाता है । गिरिजनों को ऐसी प्रेरणा देता है कि कुल्हाड को लेकर ही शोषकों को भगाया जा सकता है ।

(3) सतीश जमाली " प्रथम पुरुष " :-

समांतर कहानियों में चर्चित कहानी वर्ग में सतीशजमाली की " प्रथम पुरुष " इसमें फैक्ट्री में रहनेवाले विभिन्न वर्ग के मजदूरों का चित्रण है । इसमें सिर्फ मजदूरों का नही मालिकों का भी चित्रण है । एक मजदूर अपनी मालिकिन का सौन्दर्य को इस प्रकार स्पष्ट करने लगता है -- " वे साबुन की जगह शरीर पर मक्खन रगडते हों होंगे और दूध से नहाते होंगे । ऐसे लोग जब कारों से बाहर निकलते तो आश्चर्य होता कि वे फुटपाथ पर चल कैसे पायेंगे, भुरभुरा जायेंगे, या कहीं से बेहद गन्दे हो जायेंगे । ऐसे लोग बहुत सारी अतिरिक्त सुविधाओं के स्वामी होते हैं । न कोई कष्ट, न चिन्ता । ये लोग आदमी की जात से ऊपर होते है । सिर्फ इनकी शक्ल और शरीर आदमी जैसे होते है । वैसे इनमें आदमी के कोई गुण नहीं होते ।"[1]

इस कहानी में जो " मैं " है वह पहले फैक्टरी में कामकरता था लेकिन चेयरमन साब के आज्ञानुसार उनके ही बाग में काम करने का मौका मिलता है । सुखी जीवन बितानेवालों के लिए, वेतन कमानेवालों के लिए अच्छी नौकरी थी । लेकिन उसे वहाँ की नौकरी से सुख के बदले ऊब मिलती है । ट्रांसफर के लिए दरख्वास्त भी भेजता है । साधारणतः वहाँ जो भी नौकरी करता है उच्च पद प्राप्त करते नही तो कुछ न कुछ फायदा । लेकिन सिर्फ मैं ही एक है जो बिना फायदा से वापिस आया शायद इसीलिए फैक्ट्री के कर्मचारी उसे अभागा कहते है ।

---

1. कथा क्रम - डॉ. देवेश ठाकुर - सतीश जमाली - प्रथम पुरुष - पृ. 578.

फैक्ट्री के पूरे मजदूर एक समान नही रहते । " ट्यूबलक शॉप " एक ऐसा सेक्शन है -- " इस सेक्शन में दो बडे नुक्स थे । एक तो फैक्ट्री के जितने भी बडे-बडे बदमाश और गुण्डे थे, वे वही पर थे । वे क्लर्क को वही सेक्शन में पीट देते, अगर क्लर्क बेचारा उनके कहे अनुसार नही चलता था फेरकार नही करता .... दूसरे शब्दों में वे फैक्ट्रीकी वर्क्स-यूनियन के बडे उपयोगी गुण्डे थे । इसीलिए उनकी हर बात और बदमाशी के पीछे यूनियन की पूरी ताकत होती थी । ... " ऐसे सेक्शन में नायक का ट्रान्सफर हो जाता है । उस सेक्शन में, गुण्डों के बीच एक सीधा-सादा क्लर्क कैसा रह सकता है ? इसके चित्रण में कहानीकार ने अपनी संपूर्ण कुशलता दिखायी । इस कहानी में फैक्टरी का वातावरण को, मजदूरों की मन: स्थितियों को, मालिकों की सुविधाओं को स्पष्ट करने में कहानीकार अत्यंत सफल रहे हैं ।

" आदी होता जा रहा हूँ " - वि.राजाराम मोहन राव :-

यह वि.राजाराम मोहन राव की एक चिर्चित कहानी है । यह दीलतों पर लिखी गयी कहानी है । इस कहानी के मूल पात्र है -- " शिवुडु और लक्ष्मी " ।

शिवुडु, पहले गाँव में जमीन्दार के पास बेगार करता था । उसकी पत्नी लक्ष्मी भी वही काम करती थी । लेकिन जमीन्दार के मन में किसी न किसी तरह लक्ष्मी को पाने की इच्छा जगती है । और लक्ष्मी से अपनी इच्छा प्रकट करता है । वह बहुत डर जाती है । डरती हुई अपने पति शिवुडु से जमीन्दार की इच्छा की बात कहती है तो शिवुडु को बहुत नाराज होता है । उसे वहाँ काम छोडने के लिए कहता है । तब से शिवुडु का काम बहुत बढ़ जाता है । एक दिन जमीन्दार के मुँह से वह सुनता है -- जमीन्दार अपने दोस्त से कह रहा था --

क्या रे तुम "शिपुडी" को पत्नी लक्ष्मी के बारे में ही पूछ रहे हो न। काम छोड दिया तो भी वह कहाँ जायेगी। ... अब उसके पति को बहुत काम दिया। उसको समझ में आया होगा। वही लाकर हमें सौंपेगा। नही तो उसकी माँ का कर्ज हमारे पास है। खाने के लिए भी अनाज न दिये तो बस है ... भूख के सामने सब झुक जाते हैं। ... तब भी नही होगा ... तो किसी न किसी रात को उठाकर लाये तो भी हमें पूछने वाला कोई नही है ..... ।"[1]

उनकी बातें सुनने के बाद शिपुडु को वहाँ रहना अच्छा नही लगा। अपनी पत्नी के साथ उसी रात को गाँव छोडकर शहर चला गया।

आरंभ में अनेक समस्याओं का सामना करना पडा खास करके अपनी पत्नी को लेकर है। दुकानों के बाहर सोना चाहा तो पुलीस या चौकीदार उनको सोने नही देते। ऐसे ही अनेक स्थानों पर कोशिश करके तंगाकर अति आवश्यक होने के कारण एक चौकीधार की सहायता से अपने जैसे लोगों के पास सोने के लिए कुछ जगह पाता है। लेकिन जब वे दोनों लेटते है तो लक्ष्मी के पैरों पर दूसरे किसी का पैर देखकर चिल्लाता है। तो वह आदमी इसे सार्वजनिक स्थान होने की याद दिलाता है तो शिपुडु कुछ नहीं कह पाता। धीरे-धीरे उनको आदत हो जाती है, शहर में जीने के लिए कुछ बदलना जरूरी समझता है "शिपुडु"। बाद में उसको काम भी मिल जाता है। साथ-साथ लक्ष्मी को भी काम पर भेजने के लिए तय्यार हो जाता है।

शहर से अपरिचित युवक आकर किस प्रकार की समस्याओं का सामना करता है। अपनी आजीविका के लिए इसका एक चित्र इसमें है।

(3) सतीशजमाली " प्रथम पुरुष " – वि॰राजा राममोहन राव " अलवाटै पोतुन्ना "

इन दोनों कहानियों में समकालीन परिस्थितियों में बुद्धिमत्ता से चलनेवाले आमआदमी का चित्रण है। हर एक को अपनी जीविका चलाने के लिए कुछ न कुछ बदलना पडता। नहीं तो अनेक समस्याओं का सामना करना पडेगा। " प्रथमपुरुष " में एक सामान्य ऐसी ही है। वह एक फेक्टरी में कामकरनेवाला लिपिक है। उसे पेयर – मेनसाहब की मर्जीपर ही उनके बाग में नौकरी करना पडता। लेकिन बाग में काम ज्यादा होने के कारण और वहाँ की स्थितियों से तंगाकर, ट्रान्सफर के लिए कोशिश करता है तो उसे ऐसा सेक्सन मिलता जहाँ कोई भी ज्यादा दिन नही रह पाता। वह एक ऐसी जगह है जहाँ गुंडों का ही शासन है। ऐसे वातावरण में एक सामान्य कैसे रह सकता है? उसका एक चित्र " प्रथम पुरुष " में है। वि॰राजा राम मोहन राव की " अलवाटै पोतुन्ना " कहानी में शिवुडु का पात्र भी लगभग ऐसा ही है। वह पहले एक जमीन्दार के पास काम करता थां। वह जमीन्दार शिवुडी की पत्नी पर कामवासना रखता है और कोशिश भी करने लगता है। परिणामत: " शिवुडु " को वहाँ गाँव छोडकर, अपनी पत्नी के साथ शहर जाना पडता है। शहर से अपरिचित होने के कारण शुरू में अनेक समस्याओं को सामना करता है लेकिन बाद में ऐसा बदल जाता है। वहाँ रहने का आदी हो जाता है। आदत होने लगा " में शिवुडु समझौते की मानसिकता लेकर नगर में जमता है।

(3) जितेन्द्र भाटिया – शहादतनामा :-

समांतर कहानियों में चर्चित कहानी है " शहादत नामा " है। इस कहानी में कंपनी के मालिक और श्रमिकों का संघर्ष है। " अमरजीत " एक ऐसा पात्र है जो श्रमिकों की भलाई के लिए लडता रहता है और मालिकों के चाल को समझने में बहुत

सफल रहता है । इसीलिए मालिकों की हर चाल, साजिश में रुकावट डालने की कोशिश करता है और मजदूरों को भी धोखेबाजी और कूटनीति को स्पष्ट करता रहता है । टेंपररी मजदूर की भलाई के लिए पूरी तरह से कोशिश करता है । " कीमतीलाल की दुर्घटना " तो टेंपररी मजदूर का ही है । उसके लिए यूनियन से लड़ता है अंत में उसको पाँच सौ रुपयाँ देने का फैसला होने पर भी अमरजीत खुश नहीं होता बल्कि उस दुर्घटना फिर न होने के लिए लड़ता है । मजदूरों के आन्दोलन को चित्र इस प्रकार देख सकते हैं --

" तीन दिनों की खामोशी के बाद कम्पनी ने शहर के दूसरे हिस्से से मजदूर लाकर उन्हें काम पर लगाने की कोशिश की थी, पर कम्पनी के गेट के बाहर खड़े पुराने मजदूरों को देखकर ये नये मजदूर बिना भीतर घुसने की कोशिश किये चुपचाप वापस लौट गये यह सिलसिला दो दिनों तक चला था । पाँचवे दिन पर्सनेल मैनेजर ने मजदूरों के प्रमुख नेताओं को बुलाकर उनके सामने प्रस्ताव रखा था कि कम्पनी कुछ खास-खास मजदूरों को वापस काम पर लेने के लिए तैयार है, बशर्ते वे पुरानी मजदूरी के के लिए तैयार हों । इन सब मजदूरों को अलग-से चोरी-छिपे पचास-पचास रुपये देने की लालच भी कम्पनी ने दी, पर यह प्रस्ताव नेताओं द्वारा अमरजीत से सलाह लेने के बाद तुरन्त अस्वीकृत हो गया और स्थिति ज्यों-की-त्यों बनी रही । "[1]

मजदूरों का संघर्ष लगभग एक महीने तक चलता रहा । अंत में फैक्टरी के मालिक इच्छाओं को पूरा करने के लिए तय्यार हो गये । लेकिन अपनी मंजूरी के साथ-साथ नये नियमों की तालिका भी मजदूरों के सामने रखी । इससे अमरजीत को मालिकों की साजिश समझ में आयी । वह मजदूरों से कहने लगा -- " भाइयों । क्या हमेशा आपके बारे में सारे फैसले आप लोगों की गैरमौजूदगी में किये जाते रहेंगे ? क्या इसी शर्मनाक समझौते के लिए आपने अपनी लड़ाई शुरू की थी ? क्या आप लोगों की महीने भर की कुरबानी बेकार साबित होगी । "[2]

---

1. जितेन्द्र भाटिया -- शहादतनामा - पृ. 163
" कथा क्रम " - डॉ. देवेश ठाकुर

2. - वही - पृ. 164.

मालिकवर्ग जो भी है वे अपनी भलाई के लिए सोचते है न की मजदूरों की भलाई के लिए मजदूरों की इच्छाओं को पूरा करने के पीछे उनकी जो योजना है वह मजदूरों को और फंसानेवाली है यह विषय सिर्फ अमरजीत की समझ में ही आती है । इसीलिए वह मजदूरों को समझाने के लिए पूरी तरह से कोशिश करता है । मालिकों की पैसले से ही तृप्त मजदूरों को अमरजीत की बातें समझ में नही आती और साथ भी नही देते ।

अपने लिए कांटा बना हुआ " अमरजीत " जैसे कुशल और चतुर मजदूरों को किस प्रकार अपने रास्ते से निकाल देते है उसका एक चित्र कहानीकार, अमरजीत के दोस्त के रूप में स्पष्ट करता है -- " अमरजीत, पीछे देखो । मैं चिल्लना चाहता था, लेकिन मेरे कुछ भी कह सकने से पहले ही उस आकृति ने फुरती से हाथ का एक हलका-सा झटका अमरजीत की पीठ पर दिया था और वह लड़खड़ाता हुआ रेलिंग से फिसल गया था । इतनी ऊँचाई से नीचे गिरती हुई उसकी भयावह आकृति सिर्फ कुछ क्षणों के लिए मेरी आँखों के सामने उभरी थी और उसके बाद नीचे कास्टिक टैंक में एक मामूली " छपाक " के साथ सब कुछ खत्म हो गया था - अमरजीत को किसी ने बहुत सफाई के साथ कास्टिक टैंक में धक्का दे दिया था -- "[1]

मजदूरों की मानसिकता का चित्र अमरजीत की मौत के बाद उसके दोस्त को स्मरण दिलाता है -- " तुम साले कुत्ते हो । सबके निचले तब के के मजदूरों से अमरजीत कहा करता था -- इधर से मार खायी, उधर से दुतकारे गये ... दो रोटी के लिए जान लड़ाने को हाजिर । चार पैसों के लिए अपने आपको बेचने को मजबूर ..। भाई जान जिस दिन तक तुम्हें पता नहीं चलता कि तुम वाकई कुत्ते की जिन्दगी जी रहे हो, उस दिन तक कोई तुम्हारे लिए कुछ नही कर सकता .... न मैं, न रॉड्रिग्ज, न हेवल केमिकल्स के दादा लोग, न यह यूनियन ... ।"[2]

---

1. जितेन्द्र भाटिया - शहादतनामा - पृ. 164,165.
   " कथा - क्रम " - डॉ.देवेशठाकुर
2. - वही - पृ. 165.

फैक्टरी काम करने वाले मजदूरों की समस्याओं का और उनको अपने कब्जे में रखने के लिए मालिकों से की गयी कोशिश आदि सब इस कहानी के केन्द्र में है ।

जितेन्द्र भाटिया की अन्य प्रमुख कहानियाँ है, " एक आदमी का शहर ", " डानविवगजोट की मौत ", " साजिश ", " रक्तजीवी " आदि है ।

रमेश उपाध्याय " देवी सिंह कौन ? " :-

रमेश उपाध्याय की कहानियों में बहु चर्चित कहानी है " देवी सिंह कौन ? " इस कहानी में पूंजीवादी व्यवस्था में उत्पन्न विभिन्न परिणामों का यथार्थ चित्र है । पूंजीवादी व्यवस्था में गरीबों पर कटु व्यवहार होता है । विभिन्न रूपों में शोषण होता है । उनकी जिन्दगी में तरह-तरह से बाधाएँ पहुँचाती जाती है ।

देवी सिंह कौन " कहानी फैक्ट्री के जनरल मैनेजर (प्रबन्ध निदेशक) और " जासूस " चौधरी के बीच के संवाद के रूप में लिखी गयी है । कहानी के आरंभ में ही कहानीकार का कथन है कि -- " यह एक असफल जासूस की कहानी है क्योंकि इसमें अपराधी पकड़ा या माना नहीं जा सका तीसरी बात गोपनीय है ।"[1]

कहानी के आरंभ में ही जिस मजदूर को मार डालने की कोशिश किया जाता है, समाधान में उसके एक विस्मयजनक व्यापक रूप को बनाकर उसके माध्यम से सर्वहारा वर्ग की निरंतर बढ़ती हुई शक्ति और विराटता को स्पष्ट किया है । देवी सिंह अशिक्षित, अनपढ़ होकर भी बड़ा चुस्त, फुर्तीला और सतर्क है । मैनेजमेन्ट की साजिशों को सामना करने का और बचने का साहस उसमें है । उसे कहानीकार ने निरंतर संघर्षरत,

---

1. देवी सिंह कौन : रमेश उपाध्याय (रमेश उपाध्याय मोनो ग्राफ पृ. 36 पर उद्धृत) राजस्थान साहित्य अकादमी द्वारा प्रकाशित ।

ईमानदार और काम के प्रति श्रद्धा रखनेवाले व्यक्ति के रूप में चित्रित किया है। अन्त में कहानी एक पैंटसी में परिवर्तित होती है।

कहानी में " देवी सिंह " मजदूर यूनियन का ही एक अच्छे कार्यकर्ता है। कहानी का कथास्थल है एक फैक्ट्री जहाँ मजदूर आन्दोलन हो रहा है। शोषक वर्ग माने फैक्ट्री के मालिक देवी सिंह को मार डालना चाहते हैं इसके लिए हत्यारे भी नियुक्त किये जाते हैं मगर मारनेवाले को एक नहीं अनेक देवी सिंह दिखायी देते हैं जिससे वे ऐसे संन्देह में पड जाते हैं कि पता नहीं इनमें से किस देवी सिंह को हत्या करना है? इनमें असली कौन है इसका पता लगाना असंभव है क्योंकि वह कोई व्यक्ति न रहकर चेतना [स्पिरिट] बन जाता है, जिसे खत्म करना साम्राज्य व्यवस्था के लिए मुमकिन नहीं होता।

रमेश उपाध्याय की अनेक रचनाओं में पूंजीवादी सामन्ती व्यवस्था के खिलाफ जनता के संघर्ष को पूरी जटिलता और पेचीदगी में देखने की कोशिश की गयी है। उनकी कहानियों के बारे में स्वयं प्रकाश ने लिखा है -- " इनका नायक दु:खी, कमजोर, असहाय, कायर, अकर्मण्य और दिग्भ्रमित नहीं है। वह साहसी व्यक्ति है जो मुसीबतों से घिरकर भी संघर्ष की बात सोचता है, साहसिक निर्णय लेता है। और परिस्थितियाँ जिसे तोड नहीं पाती। इन कहानियों में आदमी की पीडा व टूटन की ही नहीं, उसकी युग-निर्मात्री शक्ति की झलक मिलती है। ये कहानियाँ पाठक को कमजोर नहीं करतीं, उसे तिलमिलाती है, प्रेरणा देती है, रास्ता बताती है और निर्णायक फैसलों तक पहुँचने को आमादा करती है।"[1]

कहानी के अंत से स्पष्ट होता है कि देवीसिंह एक व्यक्ति नही है सामाजिक शक्ति है।

---

1. रमेश उपाध्याय [राजस्थान साहित्य अकादमी द्वारा प्रकाशित पत्रिका, अंक 48] सं. प्रकाश आतुर - पृ. 10 पर उद्धृत।

पिपोलिका (चींटी) - रावि शास्त्री (राचकोंड विश्वनाथ शास्त्री) :-

राचकोंड विश्वनाथ शास्त्री की कहानियों में एक अत्यंत महत्वपूर्ण और चर्चित कहानी है -- "पिपीलिका" (चींटी) ।

इस कहानी में चींटी, दैनिक जीवन में काम करनेवाला "मजदूर" का प्रतीक है । वह सिर्फ काम ही नहीं करता बल्कि अपना अस्तित्व के बारे में, जीवन के बारे में ऊँच-नीच को लेकर, सुख-दु:ख को लेकर भी सोचने लगता है और सफर करते हुए अनेक महान पुरुषों से अपनी जिज्ञासा को प्रकट करते हुए मूल कारणों की जानकारी के लिए कोशिश करने लगता है ।

मानव के इतिहास के पृष्ठों में बसनेवाले लुटेरों का वर्ग, अपने लुटेरेपन के खिलाफ उठी, शोषितों के आवाज को, प्राचीनकाल से ही भगवान के नाम पर दबाने लगे । अपने वश में न आनेवाले शोषितों को और अपने खिलाफ विद्रोह मचानेवालों को बिना हिच-किचाहट से मार डालने लगे । शोषित वर्गों की क्रोधाग्नी से अपने आप को बचाने के लिए, शोषक वर्ग से उत्पन्न सम्मोहनास्त्र है "भगवान" (देवुडु) । सात पहाड़ों की यात्रा को समाप्त करके, वापस आनेवाले हमारे श्रमिक को, साथी पूरे श्रमिक भयभीत होकर भागते हुए दिखायी देते हैं । एक श्रमिक से पता चल जाता है कि एक लुटेरा साँप, सबको भगाकर, सालों भर का मेहनत को और अपनी संपत्ती को लूटने लगा है । वह बात सुनते ही हमारा श्रमिक, अपने अक्ल को उपयोग करने का वक्त आने की बात पहचानकर अपनी साथी मजदूरों को धीरज देकर, अपने साथ लेकर अपने ही गृह में लुटेरा बना हुआ उस साँप से पूछने लगता है -- "तुम कौन हो ? हमारे घर को लूटकर, हमारे अस्तित्व पर ही प्रश्नचिह्न लगा रहे हो ?

तब वह शोषक साँप श्रमिकों से इस प्रकार कहने लगता है -- " अरे किसी को भी न काम आनेवाला मजदूर । मैं सुख भोगी हूँ, तुम तो मेहनत करनेवाले हो । आपकी मेहनत से उत्पन्न संपत्ति को भोगना ही हमारा काम है । हमारा अधिकार है । ऐसे अधिकार को भगवान ही हमें दिया । इसीलिए आपको जीवनभर इसी प्रकार मेहनत करना ही होगा । यही न्याय है । यही धर्म है । जो नही मानेगा, बन्दूक से मार डालेंगे । "[1]

शोषक साँप का यह कथन, अन्य मजदूर चीटियों की आँखों को खोलने में सफल रहा है । तब तक सब के सब उसे मानव कहने लगे । ब्रहत पदार्थ की बात कहने लगे । आत्मा-परमात्मा की बात करते हुए मोक्ष के बारे में कहने लगे । लेकिन कोई भी नही बताया -- " तुम एक श्रमिक हो, श्रम करना या मेहनत करना ही तुम्हारा जीवन है । "[2] ऐसे जीवन सत्य को कोई भी नही बताया ।

इस प्रकार ज्ञानार्जन करके शोषकों के अधर्म, अन्याय, अत्याचारों को भगाने के लिए " वर्ग संघर्ष " को ही साधन के रूप में लेना चाहा है । इसीलिए अन्य साथी मजदूरों को परिस्थितियों का, समस्याओं का विवरण देकर शोषक साँप को भगाने के लिए एकता की आवश्यकता को स्पष्ट करते हुए प्रेरणा देने लगा । इस प्रकार एक नूतन साम्यवाद व्यवस्था की स्थापना के लिए जो कोशिश की गयी है, वही है रावकोंड विश्वनाथ शास्त्री की " चीटी " ।

(इ) जितेन्द्र भाटिया "शहादत नामा" रावकोंड विश्वनाथ शास्त्री "चीटी" रमेशउपाध्याय "देवीसिंह कौन है" :-

दोनो कहानियों में " आमआदमी " के प्रतिशोषण का ही विभिन्न रूप सामने आते है । इन कहानियों का आमआदमी है " मजदूर " । जितेन्द्र भाटिया की " शहादतनामा " में रमेश उपाध्याय की " देवी सिंह कौन " में मजदूरों की समस्याओं को लेकर एक स्पष्ट चित्र खींचा गया है । इसमें प्रमुख और मूल पात्र रहा है ।

अमरजोत और देवीसिंह जो हमेशा मजदूरों को भलाई के लिए लडता रहता है और फैक्टरी के मालिकों को साजिशों को पर्दाफाश करता है । शहादतनामे में जो भी होता है वह सब में का पात्र, जो अमरजोत का ही एक अच्छा - दोस्त है उससे स्पष्ट होने लगता है । " देवीसिंह कौन है " में जनरल मैनेजर और जासूस चौधरी के संवादों में स्पष्ट होता है । राचकोंड विश्वनाथ शास्त्री " चींटी " एक ऐसी कहानी है जिसके माध्यम से मजदूरों को समस्याओं का चित्र खींचा ही नहीं बल्की उनपर होनेवाले शोषण के मूल कारणों को पहचानने की कोशिश की गयी है । साथ-साथ शोषकों के शोषण को जड से उखाडने की प्रयत्न भी किया गया है । हर जगह मजदूरों के हकों के लिए, अधिकारों के लिए जो भी लडेगा उसको किसी न किसी प्रकार मार डालना ही शोषकों का साजिश है । " शहादतनामा " में " अमरजोत " को भी अपनी रास्ते से निकालने के लिए मार डालते है । गवाह बना हुआ उसके दोस्त को नौकरी में " सूपरवैजर बनाने का अपना फैसला सुना देते है और उसे भी अपने काबू में रख लेते हैं । आजकल फैक्टरियों में लगभग ऐसा ही होता है । मजदूरों की भलाई के लिए जो भी लडेगा उसका पहले रिश्वत देकर अपने काबू में रखने के लिए कोशिश करते है । सफल नही हो पाये तो उस नेता को अपने लिए जो चाहिए उसे देने के लिए भी तय्यार हो जाते है । मगर मजदूरों को इच्छाओं पूर्णत: पूरा नही करते । किसी से भी वह नेता नही झुके तो उसे मार डालते हैं । रविशास्त्री जी की " चींटी " एक अलग किस्म की कहानी है । इसमें " चींटी " के द्वारा यह जानने की कोशिश है कि उनका अपना जीवन ऐसा क्यों है ? कारण क्या है ? किससे हो रहा है ? अंत में उसे पता चलता है कि सब के सब भगवान के नाम पर लूटनेवाले ही है । वह अपने घर पहुँचते ही देखता है कि वहाँ बहुत गडबड हो रहा है । अपनी साथी चींटी बहुत ही डर से घर छोडकर भागने लगीं । पूछे तो पता चलता है कि एक बडा साँप आकर उनकी संपत्ति को लूटने लगी है । तब यह नायक की चींटी उन सब को धीरज देकर एकता से सामना करने से शत्रु को भगा सकते है । ऐसा कहते हुए पूरे चींटियों को लेकर साँप को भगाने के लिए आगे बढ़ती है । इस कहानी में कहानीकार कहना चाहते है कि मिलजुलकर ही शत्रु को सामना कर सकते है और भगा भी सकते है । यहाँ शत्रु या साँप का प्रतीक शोषक वर्ग और चींटी का प्रतीक है मजदूर और श्रमिक ।

इन कहानियों का निष्कर्ष इस प्रकार निकला जा सकता है कि शोषित चाहे मजदूर हो या श्रमिक हो या गरीब किसान हो या जो भी हो उसे अपनी समस्या का परिष्कार मिलजुलकर मालिकों से या शोषकों से संघर्ष करने से ही मिलेगा माने साथी मजदूरों को लेकर संघर्ष करना ही अपना कर्तव्य रहा है । अकेला सामना करने से उसको मौत के सिवा कुछ नही मिलेगा ।

उपर्युक्त कहानियों की श्रेणी में ही आनेवाली कहानी है रमेश उपाध्याय की " देवी सिंह कौन " । कहानीकारों का मूल लक्ष्य तो एक ही रहा है लेकिन ढंग" ही अलग-अलग है । " अमीर " और भी अमीर हो रहा है उसी प्रकार गरीब और गरीब हो रहा है । इसका मूल कारण क्या है ? इसके बारे में स्पष्ट करने की कोशिश की गयी है । सामाजिक व्यवस्था और शासन तंत्र ही मूल कारण रहा है । दिन भर काम करके अपना पेट का भूख मिटाने में असमर्थ रहा है " मजदूर " । अमीर और अमीर हो रहा है उसकी संपत्ती दिन ब दिन बढ़ती जा रही है । इस कहानी में भी "देवीसिंह" एक ऐसा इन्सान है जैसा कि जितेन्द्र भाटिया " शहादत नामा " में "अमरजीत" । लेकिन इस कहानी की विशेषता है कि देवीसिंह को जो भी मानना चाहते हैं उनको हजारों देवीसिंह दिखायी देते हैं । इससे कहानीकार यह स्पष्ट करना चाहता है कि देवीसिंह जैसे एकाद को मारने से मजदूरों की संघर्ष का अन्त नही होगा । एक के बाद दूसरा पैदा होगा । जिस प्रकार पूरे मजदूरों को नही मिटा सकते उसी प्रकार मजदूरों का संघर्ष भी नही मिट पायेगा । जब तक शोषक, मजदूरों को सताते रहेंगे या शोषण करते होंगे तब तक मजदूरों का संघर्ष चलता ही रहेगा ।

(ऋ) सुदीप - अंतहीन :-

समांतर कहानियों में चर्चित कहानी है " अंतहीन " । इस कहानी में "नरेन" एक ऐसा पात्र है जो समकालीन समाज के प्रति अपना आक्रोश व्यक्त करता रहता है । पूरे आन्दोलनों में आगे रहता है । शहर में कहीं भी कुछ हलचल चले तो उसमें शामिल होता है । वह शिक्षित होकर नौकरी करना नहीं चाहता । नतीजा यह हुआ कि वह " गुंडा " घोषित कर दिया गया । बिना यह सोचे-समझे कि कौन-सा आन्दोलन कौनसी राजनीतिक पार्टी चला रही है, वह समान रूप में उनमें भाग लेता । इस तरह वह जनसंघी कम्यूनिस्ट, गांधीवादी, नक्सलवादी आदि सब कुछ एक साथ हो गया था । यहाँ तक कि पुलिस वालों की खतरनाक युवकों की सूची में भी उसका नाम जुड गया था ।"

उसे संभालने में पिता, अशक्त होकर, उसके बडे भाई के पास नौकरी दिलाने के सिलसिले में भेजता है । आजकल तो शिक्षितों के लिए ही नौकरी नहीं है तो दसवी कक्षा भी पूरा न करनेवाले युवकों को कहाँ मिलेगा । नरेन का बडा भाई पूरी तरह से कोशिश करता है । अपने ही दफ्तर में नौकरी दिलवाने पहले असफल होने पर भी अंत में सफल हो जाता है ।

लेकिन "नरेन" उस कार्यालय, अपना काम करने में असफल रहता है । अपनी कुर्सी पर बैठता ही नहीं । घंटी बजी तो फौरन जाता भी नहीं । उसका भाई को समझ में नहीं आता "नरेन" ऐसा क्यों कर रहा है । दफ्तर में वह किस प्रकार रहता है उसका चित्र इस प्रकार है --

" .... खामोशी से वह साहब के केबिन के बाहर पडे स्टूल पर बैठा रहता । घण्टी बजती तो आहिस्ता से उठकर केबिन में चला जाता और .... न वह किसी को नमस्ते कहता, न किसी से बातचीत करता । साहब दफ्तर में आते तो वह अक्सर स्टूल से गायब मिलता .... ।"[2]

---

1. कथा-क्रम - डॉ• देवेश ठाकुर - सुदीप - अंतहीन - पृ• 620•

2. - वही - पृ• 624•

आदमी चाहे जो भी हो जिसको जहाँ रहता है वही रहना उसके लिए अच्छा है नहीं तो "नरेन" कार्यालय में नौकरी मिलने से जिस प्रकार अपना काम संभालने में असफल रहा है उसी प्रकार हर आदमी को होता है । एक बार अपने बड़े भाई और "नरेन" के बीच बातचीत भी होता है जैसे --

" मैंने उससे पूछा भी था कि आखिर इसका इस तरह बिद पेंदे का लोटा बने रहने का मतलब भी क्या है ? और उसने जो जवाब दिया था, उसने मुझे खामोश कर दिया था -- भाई साहब, पार्टी-वार्टी तो अपनी समझ से बाहर की चीज है । हमें जहाँ यह लगता है कि किसी गलत चीज के खिलाफ कुछ हो रहा है, हम साथ हो लेते है ।"[1]

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट होता है कि "नरेन" का पात्र जो है वह समाज की गंदगी को दूर करना चाहता है । इसीलिए ऐसे ही व्यक्तियों से मिलता रहता है । शायद कार्यालय में न जम सकने का मूल कारण भी यही हो सकती है ।

<u>अलगोड - पेद्दिभोट्ल सुब्बरामय्या :-</u>

पेद्दिभोट्ल सुब्बरामय्या की एक चर्चित कहानी है " अलगोड " । बेकारी समस्या " युवक " के अस्तित्व पर किस प्रकार प्रश्न चिह्न लगाती है । उसका नग्न चित्रण इस कहानी में है ।

" अलगोड " कहानी का मूल पात्र गांधी बेकारी से संत्रस्त युवक है । उच्च स्तर की शिक्षा प्राप्त करने पर भी गांधी को नौकरी नहीं मिलती है । वह बचपन से ही आर्थिक समस्या का विकराल स्थिति को सामना करता हुआ आ रहा है । पेट भरने के लिए भी दूसरों का सहारा लेता हुआ आया है । आर्थिक तंगी से जूझता हुआ "वह" उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए आत्मनिर्भर होकर आगे बढ़ता है । " भ्रष्ट राजनीति

---

1. कथा-क्रम - डॉ. देवेश ठाकुर - सुदीप - अहीन - पृ. 620.

और कुरूप व्यवस्था के परिणाम स्वरूप उच्च शिक्षा के बावजूद भी उसको नौकरी नही मिलती है। नौकरी न मिलने पर आवश्यकताओं की परिपूर्ति से वंचित रह जाता है। आर्थिक विपन्नता का शिकार बनकर, वह धीरे-धीरे निराश होने लगता है। बेकारी से संत्रस्त होकर वह सर्वहारा और दिशाहीन हो जाता है। आजीविका को रास्ता दिखाई न देने पर वह आत्महत्या का प्रयत्न भी करता है। किन्तु रेंगड़ से वह बच जाता है। आत्महत्या के जुर्म में गांधी को गिरफ्तार किया जाता है और कोर्ट में मुकद्दमा भी चलता है। बेकारी से परेशान होकर दिशा-हीनता की स्थिति में आत्मघात का प्रयत्न करनेवाले उसे गिरफ्तार करने से वह तनाव पूर्ण स्थिति से गुजरने लगता है। परिणामत: वह पागल हो जाता है। कहानी में गांधी की यह स्थिति आजकल की युवापीडि का ही प्रतीक है।

आत्मघात के पहले गांधी एक पत्र में इस प्रकार लिखता है -- "गांधी नामक मैं .... एम..एस.सी... न्यूक्लियर फिजिक्स ‖ यूनिवर्सिटी ‖ पूरे विश्वविद्यालय में द्वितीय ..... उब और कुंठा ग्रस्त होकर जीवन में हारकर .... बेकारी से न जीकर .... जीवन का अंत कर रहा हूँ। मुझे कोई नही है ... रिश्तेदार नही है ... दुश्मन नहीं हैं ... मेरे मौत के लिए कोई भी जिम्मेदार नही है। किसी को भी गाली नही दूंगा ... मैं खुद ही मर रहा हूँ।"[1]

(ख) अंतहीन ‖ सुदीप ‖ --" अलजडि " ‖पेद्दिभोट्ल सुब्बरामय्या ‖ :-

दोनों कहानियों में "बेकारी समस्या" का ही विभिन्न रूप है। कहा-नियों के प्रमुख पात्र गांधी ‖ अलजडी ‖ और नरेन ‖ अंतहीन ‖ की मन: स्थितियाँ भी बिल कुल भिन्न है। दोनों युवक नौकरी के लिए कोशिश करते रहते हैं। "अंतहीन" में "नरेन" जो पात्र है वह कहीं भी कुछ गलत होना सह नही पाता और उसके खिलाफ विद्रोह करता है। व्यवस्था के प्रति उसके मन में अच्छी भावना नही रही। उसके पिता, उससे तंगाकर शहर भेज देता है जहाँ उसका बडा भाई है। उसका बडा भाई

---

1. तेलुगु कथा - पृ. 207 "अलजडी-पेद्दिभोटल सुब्बरामय्या ‖ 1960-85 ‖

नौकरी दिलाने में असफल होने पर भी अंत में एक साल के लिए नौकरी दिलवा देता है। लेकिन "नरेन" उस नौकरी से तृप्त नहीं है। एक तरह से उसे नौकरी ही नहीं चाहिए। उसका मूल उद्देश्य रहा है व्यवस्था को ठीक करना, उसके लिए आन्दोलन मचाना है। शायद इसीलिए नौकरी में ठीक तरह से जम नहीं पाता। हमेशा कुछ न कुछ सोचता रहता है। "अल्जीह" में गांधी नामक जो युवक है वह बहुत शिक्षित है और वह बचपन से अनेक समस्याओं को सामना करता रहता है। नौकरी के लिए पूरी तरह कोशिश करता है। तो भी वह सफल नहीं हो पाता। शायद इसीलिए जीवन से तंग आकर वह आत्मघात करने के लिए कोशिश करता है। बेकारी से संत्रास होकर वह पागल होकर विक्षालीन हो जाता है।

दोनों कहानियों के युवक पात्रों में बहुत अन्तर देख सकते हैं। एक पूर्णतः शिक्षित है तो दूसरा दसवीं कक्षा भी पूरा नहीं कर सका। शिक्षित युवक गांधी में कायरता की भावना है शायद इसीलिए वह आत्मघात करना चाहता है लेकिन "नरेन" समकालीन व्यवस्था के प्रति आन्दोलन मचाना चाहता है फलतः उसे गुंडों की तालिका में जोड़ा जाता है। गांधी को तो नौकरी ही नहीं मिलता। नरेन को तो नौकरी तो मिलता है लेकिन वह करना नहीं चाहता। दोनों युवकों में व्यवस्था के प्रति आन्दोलन है। लेकिन एक में धीरज है तो दूसरे में नहीं है।

(E) संजीव - "अपराध" :-

संजीव का कथन इस प्रकार रहा है -- "धुंधली दृष्टि से की गयी पक्षधरता का परिणाम है कि इतिहास की द्वन्द्वात्मक विकासधारा को बिना समझे, प्रधान अंतर्विरोधों को बिना पहचाने, अन्तर्विरोधों और अन्तर्सम्बन्धों को बिना और किये हम जबरन क्रान्ति कराने के कल्पना-विलास में भटक जाते हैं, जबकि कहानियों में क्रान्ति कराने से ज्यादा जरूरी है - सोशल इंजीनियरिंग को समझते हुए क्रान्ति की जमीन तैयार करना -- संजीव।"[1]

---

1. दशकारंभ (जुलाई - सितम्बर 1982) (पृ. 60-61) (संजीव का आलेख - सृजन के सही अर्थों से जुड़ने का प्रयास)

उनकी कहानियों में " तीस वर्षों के आजाद भारतीय मानस के कैनवास पर उभरे आर्थिक, नैतिक, राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक यथार्थ को शिनाख्त है ।"[1]

" अपराध " संजीव की प्रारंभिक प्रकाशित कहानियों में से है, पर साथ ही यह एक विशिष्ट महत्वाकांक्षी को स्पष्ट करनेवाली कहानी है । संजीव की अधिकांश कहानियों की तरह इस कहानी में भी पात्र " मैं " से अभिहित है जो उच्च मध्य वर्ग से आया है । यह पात्र सैद्धान्तिक रूप से ईमानदार और व्यावहारिक रूप से जोखिम उठाते हुए भी अंततः छटपटाता ही रहता है । अपराध " कहानी " , " नक्सलाइट मूवमेंट " को आधार बनाकर व्यापक स्तर पर भारतीय समाज में फैली हुई भयावह विषमताओं और विद्रूपताओं को स्पष्ट करते हुए, भ्रष्ट शोषण जाल फँसे ईमानदार आदमी की आवाज से हमारा साक्षात्कार करवाती है ।ऐसे लोगों को व्यवस्था " अपराधी " घोषित करके मरते दम तक उनका अमानवीयतापूर्वक दमन करती रहती है । इस कहानी में वाचक ( ) " मैं " के परिवार के संस्कारों से सम्बद्ध स्थितियों का मनोवैज्ञानिक वर्णन किया गया है और इसके माध्यम से पूरे जटिल तन्त्र और नक्सलाइट सीधन-रानी की मानसिक टकराहट आदि को बड़े प्रभावशाली ढंग से उपस्थित किया गया है । निहत्थे सीधन रानी की राखालबाबू से परोक्ष रूप से लड़ाई को व्यवस्था अपराध करार देती है लेकिन " मैं " इसको अपराध न मानकर इस पर " शोध " करता है ।

" अपराध " नक्सलाइटों के प्रति व्यवस्था के अमानवीय अत्याचारों को मार्मिकता से उभारा गया एक दस्तावेज है । इस कहानी के पात्र और परिस्थितियाँ अत्यन्त जीवन्त हैं । अपने देश की पुलिस अपने ही देशवासियों से अत्यन्त क्रूरतापूर्वक पेश आती है । मारपीट में आम बात है, वह अत्यन्त अमानुषिक और पाशविक ढंग से व्यवस्था के विरोधियों से बर्ताव करती है । गुप्तांग से रूल घुसाकर जब स्त्री को तबाह किया जाता है तो रानी की व्यथा के प्रति नायक " मैं " भावात्मक सहानुभूति से द्रवित होकर उठता है । ऐसे जघन्य दृश्यों में आज के तंत्र की क्रूरता को नंगाकर दिया गया है ।

---

1. हिन्दी कहानी - आठवाँ दशक - सरबजीत - पृ. 45.

रचनाकार अपने समाज में घटती हुई घटनाओं के प्रति तटस्थ और वस्तुपरक रुख नहीं रखता बल्कि वह सामाजिक स्थितियों से जुड़कर उन्हें विश्लेषित-व्याख्यायित करने की कोशिश करता है। रचनाकार इस व्यवस्था इस पूरे तंत्र पर चुभती हुई, हिंसात्मक ढंग से, टिप्पणियाँ करता है और पात्रों के माध्यम से अपने भावों को खुलेआम प्रकट करता है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि उसे इस पूंजीवादी प्रतिक्रियावादी व्यवस्था में विश्वास नहीं रहा है। आम जनता जिसे न्यायालय कहानी समझती है वहाँ अराजकता, अन्याय, झूठ आदि का ही बोलबाला है। कचहरी में कालाबाज़ारी और टे-वकील, नाज़िर, पेशकार छुट्टे सांड की तरह घूमते हैं। जो अपराधी तत्व हैं वे आपस में मिलकर एक ऐसा तंत्र बनाते हैं जिसमें निरपराध को झूठी गवाहियों से अपराधी घोषित करके अमानुषिक सज़ाएँ दी जाती हैं। नायक अपराध सम्बन्धी समाज शास्त्रीय और मनोवैज्ञानिक शोध करने में लग जाता है। वह व्यवस्था के प्रति भीतर से विद्रोही हो उठता है। लेकिन अंतत: " मैं " अपने शोध प्रबन्ध को गंगा के हवाले कर देता है क्योंकि वह इसे अपने वैयक्तिक स्वार्थ के लिए भुनाना नहीं चाहता। वह " पैरासाइट " नहीं, ईमानदार जीवन जीना चाहता है।

अपराध कहानी का एक अलग पहलू भी है और वह यह कि आंतरिक रूप से पूंजीवादी तंत्र की अपराधिक प्रवृत्तियों (चाहें वे प्रशासनिक हों या राजनैतिक) का विश्लेषण करके भी वह अपना निष्कर्ष पाठकों पर थोपती नहीं बल्कि पाठकों के मस्तिष्क को सोचने की प्रेरणा देती है। समस्त्र दृष्टि से सम्पन्न सचिन और उसकी बहन संघमित्रा की जनतांत्रिक सरकार द्वारा जो दुर्गति हुई विदेशी राज्य में भी ऐसी पाशविकता नहीं दिखाई पड़ती है। संघमित्र को अपनी जनक्रान्तिकारिता के कारण, पुलिस की पैशाचिकता का शिकार होना पड़ता है। प्रजातंत्र की ख्याल में व्यवस्था जनदमन का तानाशाही खेल खेलने में यह कहानी पूर्णत: सफल रही है।

प्रजासाहिति, अप्रैल, 1979

जमीन (भूमि) - अल्लमराजय्या :-

अल्लम राजय्या की कहानियों में एक बहुचर्चित कहानी है "जमीन"। गाँवों में गरीब किसान अपनी खेती का जमीन को किस प्रकार खो रहा है। गाँव के जमींदार और मुखिया किसानों को (खास करके गरीब किसानों को) किस प्रकार सता रहे हैं। उसका नग्न चित्रण इस कहानी में है।

गाँवों में गरीब किसान श्रमिक, मजदूर आदि जो भी जमींदारों से, मुखियों से पिसने लगे हैं, उनको जगाने के लिए अनेक गीत प्रचलित है।

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट होता है कि खेती का देखभाल जो भी करेगा उसीको जमीन से उत्पन्न फसल लेने का अधिकार है। उससे जमीन छीनने का अधिकार किसी को भी नहीं है। खेती को जोतना, बीज बोना, खाद डालने का काम जो करता है उसका मेहनत को लूटने का अधिकार किसी को नहीं है।

कहानी का मूल पात्र मुसलय्या एक जगह कहता है --

जो शराब पीयेगा वह शराब का कर चुकायेगा । जिसके पेट में दर्द होगा वह अजवाइन खायेगा । मुझे क्या ? ऐसा सोचकर मैं अपना काम कर रहा हूं तो भी भिन्नतायें नहीं होने के लिए कहते हैं । जो जोतेगा उसीको जमीन देने के लिए पूछता । मजदूरी बढ़ाने के लिए पूछता । काम करनेवाले नौकर अपना वेतन बढ़ाने के लिए पूछते । ... ये सब जो भी पूछेंगे । वे सब मुखिया लोग देते रहे तो उनको मिलेगा खाली झोंपड़ी । ... नहीं दिये तो काम बन्द .... न माने तो झगड़ा शुरू होता है ... हमला भी करते हैं । ... धन-दौलत, अधिकारों से रहित धनिक इनकी इच्छाओं को पूरा करने के लिए पागल हैं क्या ?[1]

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट होता है जो भी जोतेगा, जमीन उसका ही होता । गरीब किसानों की इच्छाओं को पूरा न करने से मुखिया या जमींदारों के घरों पर हमला कर देते । इनकी इच्छायें पूरा करने के लिए वह अमीर जिनको पूरा-पूरा अधिकार भी है, पागल है क्या ।

(ए) संजीव " अपराध " - अल्लम राजय्या " भूमि " (जमीन) :--

इन दोनों कहानियों में शोषण का ही विभिन्न रूप है । " संजीव " की "अपराध" में नक्सलाइट मूवमेंट को आधार बनाकर, भारतीय समाज में फैली हुई भयावह विषमताओं और विद्रूपताओं का स्पष्ट चित्र है । साथ-साथ भ्रष्टशोषण में कैसे इमानदार आदमी की आवाज से हमें साक्षात्कार कराती है । अल्लमराजय्या की " भूमि " (जमीन) में कहानीकार अपनी मन की बातों को ही मुसलय्या (बूढा आदमी) से कहलवाता है । उससे स्पष्ट है कि गांव में गरीब किसान अपनी जमीन को किस प्रकार खो रहा है और जमींदार के शोषण में " किस प्रकार पिस रहा है । शोषक वर्ग, गरीबों की जिन्दगियों से किस प्रकार खेलते हैं और उनका श्रम किस प्रकार लूटते हैं वे सब " भूमि " (जमीन) में देख सकते हैं ।

शोषक वर्ग के अत्याचारों के प्रति, शोषण के प्रति जो भी विद्रोह करता है उसका अंत हो जाता है । सरकारी तंत्र भी शोषकों को ही साथ देता है । खास करके पुलीस तो जनता को और भी लूट लेते है और शोषक वर्ग को अपनी ओर से पूर्णत: सहयोग देता है । एक जमाना ऐसा था कि प्रत्यक्ष रूप से शोषकों से संघर्ष करते थे लेकिन बाद में जो भी शोषकों के प्रति आवाज उठाना चाहता है वे सब मिल - जुलकर चुपके-चुपके रहकर शोषकों को सामना करने लगे । फलत: उन्हें नक्सलाइट कहने लगे । आजकल { शोषित मानव } आमआदमी समझ सका कि सीधा शोषकों से संघर्ष करना मुमकिन नही है । इसीलिए वह नक्सलाइट बनकर अपना काम पूरा करने के लिए कोशिश करता है । ऐसे नक्सलाइटों के प्रति व्यवस्था के अमानवीय अत्याचारों को { ये अत्याचार अप्रत्यक्ष रूप से शोषकों का ही है } मार्मिकता से " अपराध " में उभारा गया है ।

दोनों कहानियों में " आमआदमी " का शोषण को उभारने में दोनों कहानीकार सफल रहे । लेकिन अन्तर तो यह है कि " जमीन " में गरीब किसान है तो " अपराध " उसकी जगह नक्सलेइट के नाम पर आमआदमी ही है जो अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करना चाहता है । " जमीन " में खेती का काम करनेवाला एक है तो उसका फसल लेनेवाले है दूसरा माने शोषक । ऐसा क्यों हो रहा है ? किसान अपना ही खेती का फसल क्यों नही खा सकता ? ऐसा आवाज उठानेवालों को क्या स्थिति होती है ? और सच्चाई के लिए, अधिकारों के लिए लड़नेवालों को क्या होती है " अपराध " में देख सके है ।

(L) कमलेश्वर " मांस का दरिया " :-

कमलेश्वर की कहानियों में उल्लेखनीय कहानी है " मांस का दरिया " । इस कहानी में कहानीकार ने वेश्या जीवन पर एक तीखा व्यंग्य कसा है । "वेश्या" को पेशा में उत्पन्न होनेवाली प्रमुख समस्याओं को चित्रण करने में कहानीकार पूर्णत: सफल रहा है ।

" मांस का दरिया " का मूल पात्र है " जुगनू " । उसके माध्यम से शारीरिक, मानसिक और आर्थिक समस्याओं को कहानी में प्रतिष्ठित किया गया है । उस पेशा में उनकी आजादी पर कीचड़ उछालने का प्रयत्न भी है । कहानी का मूल पात्र जुगनु न चाहते हुए भी अपनी पारिवारिक समस्याओं के कारण वेश्या होना पड़ता है । इस कहानी में खूबसूरत युवतियों को " वेश्या " बनानेवाले दलालों का भी चित्रण है । शहरों में वेश्याओं को फैलाने में उनका योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है । ये दलाल वेश्याओं का (आयात-निर्यात) इंतजाम करने के लिए ग्राहकों से पैसे लेते हैं और वेश्याओं से भी । वेश्या को जो भी पैसे मिलता है उसी में अपना देखभाल और घरवालों का भी देखभाल, अपने शरीर की रक्षा दवायें खरीदना, चमक-दमक के लिए सुगंदद्रव्यों को खरीदना पड़ता है । दलाल और वेश्याओं को खरीदने-वाले मालिक या मालकिन, चाहे जो भी हो, वे सब वेश्याओं को किस प्रकार लूटते हैं उसका ही नग्न चित्र इस कहानी में है । साथ-साथ ग्राहकों से जो भी परेशानी उत्पन्न होती है उसका एक नक्शा इस प्रकार रहा है --

" आज बहुत तकलीफ है ... फोड़ा पक गया है ।"

जुगनू ने जैसे आजिजी से उसे समझाया था । ... बिलकुल तकलीफ नहीं होने दूँगा ... बहुत आसानी से .... कहते हुए कँवरजीत खाटपर लेट गया था । .... बहुत बार उसने कराह दबायी और कँवरजीज को रोका । .... अरे, रुक तो, ... वह चीखी थी और जुगनू की टाँगें दबाकर वह हावी हो गया था । .... " अरी अम्मा रे .... मार डाला .... वह पूरी आवाज से चीखी थी जैसे किसी ने कत्ल कर दिया हो और छटपटाकर बेहोश-सी हो गयी थी ।"[1]

---

1. माँस का दरिया - कमलेश्वर - पृ.

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट होता है कि स्त्री, वेश्या होने पर भी अपनी मन मर्जी से, आजादी से जी नहीं सकती । उसकी तबियत चाहे जैसा भी होने पर भी अपना काम पूरा करते जाना ग्राहकों का लक्ष्य बन जाता है ।

मनोधर्मम् :-

इस कहानी में आधुनिक नारी के विभिन्न आधुनिक रूप दिखायी देते हैं । इस कहानी में रामम् नामक एक आदर्श युवक, शारीरिक बात छोडकर मन को प्रमुख स्थान देकर सरस्वती से शादी कर लेता है, जो शादी से पहले ही अनेकों से शारीरिक संबंध रखती थी । वह शादी से पहले रामम् से कहती है --

" आप जैसा मित्र अब तक न मिलने की वजह से मेरा जीवन व्यर्थ हो गया .. अपरिचितों को मेरा पति कहकर परिचय करने की बात पर आपको मुझसे शादी करने की जरूरत नही है । सिर्फ हाथ में हाथ डालकर मिलकर रहने की निर्णय लेंगे । हमारी रिश्ता/मित्रता मेरी ख्याल से विवाह से भी बढ़कर है । मेरे संगीत के लिए रुकावट न बनकर मुझे साथ दिये तो, मेरा तन, मन, धन, आनन्द सब कुछ आपका हो जायेगा ।"

रामम् और सरस्वती की शादी हो जाती है । शादी होने के बाद एक बार सोचती है ---

" निसंकोच इसका प्रेम मेरे शरीर से नही है । इसको अपने शरीर के प्रति, अपने सुख के प्रति इच्छा दिखायी नही देता । इसीलिए शायद इसमें ईर्ष्या नहीं है ।

शादी के बाद भी उसको राममु की भविष्य को दृष्टि में रखकर अच्छी नौकरी दिलाने के लिए " वासवा " नामक अधिकारी को अपना शरीर सौंपना पडता है । उससे पहले वासवा कहते हैं --

" उसको बो॰एम नौकरो मिलने का विषय मेरे हाथों में है, वह तुम्हारे हाथों का काम भी ।" ... रामम् को जोवन में यह एक अति प्रमुख मोड है । समुचित निर्णय तुम नहो लो तो और उसको मदद नहो को तो यहो उसको " रिटर्निंग" मोड भी हो जायेगो । "[1]

रामम् जब साक्षात्कार के लिए जाने को तय्यारो में है तब रामम् और सरस्वतो के बोच इस प्रकार बातचोत होता है --

> " यह क्या साक्षात्कार है, यह सब लक्ष्मो को कृपा है,
> नहो जो । सरस्वतो को कृपा भी होगो ।"[2]

उपर्युक्त कथन में न चाहते हुए भी सरस्वतो अपने हो नाम से माने अपनो कृपा को ो स्पष्ट कर देतो है और रामम् को बात टालते हुए सरस्वतो को " शिक्षा " को ‹देवता› और सूचित करतो है । लेकिन रामम् को क्या पता, उसको घर आने के पहले हो सरस्वतो अपना शरोर वासव को सौंप चुको है । उसी को दर्द से हाथ भी न डालने देतो बात टालते हुए नहाने चलो जातो ।

(ट) कमलेश्वर " मांस का दरिया " - भारागो " मनोधर्मम् " :-

दोनो कहानियों में " वेश्याओं " का हो विभिन्न मन: स्थितियों का चित्रण है । मांस का दरिया को " जुगुनु ", " मनोधर्मम को " सरस्वतो " दोनों अलग-अलग किस्म को औरतें हैं । " जुगुनू " को घर की परिस्थितियों से, आर्थिक समस्या से वेश्या बनना जरूरो हो जाता है । उसके अलावा, जुगुनू को और एक रास्ता ही नहो मिलता । लेकिन " मनोधर्मम " की सरस्वतो में आधुनिकता के अनेक

लक्षण देख सकते हैं । सरस्वती को " विवाह व्यवस्था " के प्रति प्रेम भावना नही रही है । विवाह और शारीरिक संबंध को लेकर उसका विचार ही अलग रहा है । वह अपने पति से शादी से पहले ही कह देती है कि विवाह से भी " दोस्ती " ही अच्छी है ।

दोनों नारी पात्रों के विचारों में भिन्नता दिखायी देती है । जुगनू एक बार जाँघ के पास " फोडा " होने से आया हुआ ग्राहक को उस दिन न करने के लिए, समझाने की कोशिश करके असफल हो जाती है । लेकिन सरस्वती सोचती है कि अपने पति को अपना शरीर से नही अपने से प्यार है । एक तरह से " मांस का दरिया " में शरीर और वासना के प्रति जो स्थान दिया गया है वह " मनो धर्मम " में नही रहा है । परिस्थितियों के अनुसार समझौते पर चलना ही जीवन है । ऐसी भावना " सरस्वती " में हैं इसीलिए वह अपने पति को अच्छी नौकरी दिलाने के लिए अपने शरीर को, दूसरों को सौंपना पडता है सफल भी हो जाती है । लेकिन जुगनू को ऐसा रहने से जीवन नही चलता । उसके लिए वह एक पेशा, जो हमेशा चाहे या न चाहने पर भी चलता रहता है । समाज की परिस्थितियाँ ही उसे वेश्या बना दिया है ।

दोनों कहानियों में समकालीन वातावरण को स्पष्ट करते हुए, ऐसे वातावरण में नारी की विभिन्न मन: स्थितियों को स्पष्ट करने में दोनों कहानीकार सफल रहे हैं ।

अडविकाचिन वेन्नेला (कालुव मल्लय्या) :-

कालुवमल्लय्या की कहानियों में एकचर्चित कहानी है " अडविकाचिना वेन्नेला " । यह गडरियों की जिन्दगी प्रस्तुत करती है । इस कहानी के मूल पात्र हैं -- दादा भूमय्या और पोता कोमरय्या । इन दोनों के बातचीत से ही कहानी आगे बढ़ती है । पोते की शादी कुछ ही दिनों के पहले हुई थी । लेकिन रात में अपनी पत्नी से रह नहीं पाता क्योंकि उसको भेड़ियों का रखवाला करना है । इसीलिए वह अपना यव्वन का लक्ष्य पूरा नहीं कर पाता । परंपरा से ऐसी ही जिन्दगी चल रही है । वहाँ गाँव के शोषक वर्ग किस प्रकार शोषण करते हैं उनपर तीखें व्यंग्य से प्रहार करते हुए भूमय्या कहता है --

" भेड़िया है तो अच्छे कुत्तों को पालकर जीवों की रक्षा कर सकते हैं । चोर आये तो सब के सब जागकर रक्षा कर सकते हैं लेकिन शोषकों से (मुखियों से) बचना मुश्किल है । सचमुच वे ही चोर हैं ।"[1]

भूमय्या सोच रहा है -- " मैं मेरा बेटा, पोते, अपने पूरे पेशेवाले ऐसे ही है .... शादी के बाद पत्नी से पूरा रात बिताने की सुविधा ही नहीं है । अपना पूरा यव्वन ऐसे ही गुजर रहा है -- गुजर रहा है ।" अपनी जीवनियाँ जंगल में उत्पन्न रोशनी हो गयी है । अपनी कष्टमय जीवन में रोशनी ही मिट गयी है ।" जुगल में उत्पन्न रोशनी जैसी अपनी जिन्दगियाँ जंगल की रोशनी में बदल गये तो अच्छा होता ।

---

1. रीघत वर्धुलु - संग्रह - भागवीराव - पृ. 149.

जाडि :-

इस कहानी में धनिक या अमीरों के हाथों में श्रमिक किस प्रकार पिस रहा है उसका नग्न चित्रण है । इस कहानी का मूल पात्र गौरय्या खेती का काम करनेवाला नौकर है । वह अपने मालिक के आज्ञानुसार अचार की जाडी लेकर बीस मील के दूर रहनेवाले मालिक की बेटी को ﴾सिरस्तेदार को ﴿ देने के लिए जाता है । बीच में बरसात आती है । बस पढ़ने के पहले ही पैसे खो जाता है और साथ साथ तौलिया भी खो जाता है । चाहे जो भी होने दो, वह नौकर जाडी को छोडता नहीं और कहीं भी फेंकता नहीं । बहुत सावधानी से बीस मील पैदल चलकर भूखा, प्यास मरकर पहुँचता अचार की जाडी देने में सफल होता है । उसके बदले में गवरय्या को मिलता है भूख प्यास और अनारोग्य । जाडी तो फौरन ले लेते है । लेकिन गवरय्या से पानी पीने के लिए भी नहीं कहते । लज्जा को छोडकर अपना भूख मिटाने के लिए पूछे तो एक मुट्ठी का खाना भी नहीं देते । सीधा चलनेवाला श्रमिक या मजदूर को घमंडी धनवान किस प्रकार सताते है उसका नग्न चित्रण ही है " जाडि " ।

" बस उस गाँव को न आने का मूल कारण, मुखियों का आन्तरिक मन की बात को कहानीकार इस प्रकार स्पष्ट करने लगा —

" गाँव को सडक आये तो वह शहर के लिए रास्ता हो जायेगी । शहर को रास्ता निकले तो गाँववालों के आँख सिरपर चढेगा ? तब गवरय्य जैसा आदमी काम करने के लिए क्यों आयेगा ? शहर में काम करने के लिए ही जायेंगे । शहर के असर से हमें ख्याल में नहीं रखेंगे । " यह सब मुखियों का विचार है । बाहरी तौर पर तो कुछ न कुछ बोल देते । गवरय्या जैसे किसान-मजदूर ही उन के लिए चाहिए । उनकी पसीना ही मुखियों की संपत्ति के लिए पूँजी है ।"[1]

---

1. जाडी ﴾कं.सं.﴿ पृ. - 7. सदानंद शारदा

कोलक्लूरि इनाक - उरभावि ‖ कुँआ ‖ :-

कोलक्लूरि इनाक की कहानियों में एक बहु चर्चित कहानी है " उरभावि " ‖ कुँआ ‖ । यह निम्नवर्ग पर लिखी गयी कहानी है । उच्च और निम्न वर्गों के बीच होनेवाला संघर्ष ही कहानी का मूल विषय है और निम्न वर्ग पर होनेवाला अत्याचार, शोषण तंत्र और गाँवों में उनकी स्थिति और उनके लिए दिया गया स्थान आदि अनेक घटनाओं का भण्डार है इस कहानी में ।

एक जमाना ऐसा था कि निम्नवर्ग को देवालयों में प्रवेश नहीं था । बाहर से ही देखकर जाना पड़ता था । इसके अलावा कुँओं का पानी सिर्फ उच्च वर्ग के लिए ही है । निम्नवर्ग कुँओं से पानी नहीं ले सकते । कुँओं को खोदनेवाले तो निम्नवर्ग ही है लेकिन उस कुँआ की पानी नहीं पी सकते । उच्चवर्ग जो भी बोलते हैं उसे ब्रम्हवाक माना जाता है । उच्चवर्ग की बेगारी करनेवाले हैं निम्नवर्ग, जिनको छूने से पाप माना जाता हैं । अग्रवर्ण या उच्च वर्ग, जो भी करेगा वह मान्य हो जायेगा । लेकिन निम्न वर्ग या वर्ग जो भी करेगा वह गलत होगा । अगर गलती नहीं है तो भी गलत साबित किया जायेगा ।

इस कहानी में रामुडु के पुत्र के माध्यम से एक आन्दोलनकार का चित्र खींचने की कोशिश है । गाँव के कुँआ में मरी हुई बैल के कलेवर को डालने के जुर्म में राम को और उसके पुत्र को अलौकिक सजा दिया जाता है ।

आजकल भी गाँवों में अग्रवर्णों के शोषण में फँसकर निम्न वर्ग किस प्रकार अपने जीवन में अनेक मुसीबतों को सामना कर रहे हैं । उसका ही नग्न चित्र इस कहानी में है ।

(10) निष्कर्ष :

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि आठवें दशक के प्रारंभ में एक दूसरे के विरूद्ध उत्पन्न हिन्दी की प्रवृत्तियाँ है " समांतर कहानी " और " जनवादी कहानी " । इन दोनों का मूल लक्ष्य रहा है " समाज से शोषण को भगाना " । समान्तर कहानी है शोषित मानव " आमआदमी " है तो जनवादी कहानी में " सर्वहारा " है । इसी समय तेलुगु कहानी के क्षेत्र में बहुत ही तेज से रायलसीमा, तेलंगाना और आन्ध्रा से क्षेत्रीय विशेषताओं, समस्याओं को लेकर अनेक कहानियाँ आने लगी । कहानीकारों को एकत्रित करने में " विप्लव रचयितलसंघम् " का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है ।

प्रवृत्तियों के नेपथ्य में मक्कार ॥ इब्राहीम शरीफ ॥ - पीकुपिली ॥ रावि - शास्त्री ॥ - कुटियाँ ॥ कामतानाथ ॥, सानुभूति ॥ केयुविश्वनाथ रेड्डी ॥, पूरा सन्नाटा ॥ मधुकर सिंह ॥ - तोक्कुडु बंडा ॥ सदानन्दशारदा ॥, आदमखोर ॥ आशीश सिन्हा ॥ - पांडु-पोक ॥ आपलनायुडु ॥ प्रथम पुरूष ॥ सतीशजमाली ॥ - आदी होता जा रहा हूं ॥ वि.राजाराम मोहन राव ॥ शहादतनामा ॥ जितेन्द्र भाटिया ॥ देवी सिंह कौन ? ॥ रमेश उपाध्याय ॥ - पिपीलिकम ॥ राविशास्त्री ॥, अंतहीन ॥ सुदीप ॥ - अलजडि ॥ पेद्दिदमोद्दल सुब्बरामय्या ॥, अपराध ॥ सजीव ॥ - भूमि ॥ अल्लमराजय्या ॥, मांस का दरिया ॥कमलेश्वर॥, मनोधर्मम ॥ भूमिक्कियाटि रामगोपालम ॥, अडविकाचिन वेन्नेला ॥ काटुव मल्लय्या ॥, जाडि ॥ सदानन्द शारदा ॥, उर्वशाति ॥ इनाक ॥ आदि कहानियों का विश्लेषण करते हुए, साथ-साथ हिन्दी और तेलुगु को क्षेत्रीय विशेषताओं को और समस्याओं का एक तुलनात्मक चित्र प्रस्तुत किया गया है ।

पंचम अध्याय

नये संदर्भ और नयी आशाएं : कहानी का नया चरण (1971 - 90)

पंचम अध्याय

5. नये संदर्भ और नयी आशायें कहानी का नया वरुप [1971-90]

1. सक्रिय कहानी
2. सक्रिय कहानी की प्रवृत्तियाँ
3. दलित कहानी [तेलुगु] साहित्य
4. स्त्रीवाद कहानी साहित्य
5. हिन्दी और तेलुगु : प्रवृत्तियों की तुलना
   [नौवे दशक की भूमिका में]
6. [अ] पंकज " कामरेड का कोट " — भीफ्फंगुया " दुन्ना " [बैया]
   तुलना ।
   [आ] उदय प्रकाश " टेपचु " — कुप्पर " ओगे " तुलना
   [इ] पंकजविष्ट " बच्चे गवाह नहीं हो सकते – केतु विश्वनाथ रेड्डी
   " मीदे मीदे आस्त देशम " कोलकलूरि इनाक " आकलि "
   [भूख] तुलना ।
   [ई] शैवाल " मृत्युबन्ध " – कोलकलूरि इनाक " पूर्णकुतवेत्ताडु " तुलना
   [उ] अवधेशस्वास्त " दिल्ली पहुँचना है " – कौमो राय " निश्चयम "
   तुलना ।
   [ऊ] रमाकान्त श्रीवास्तव " खानदान में पहली बार " – पाणिनिनिशिवशंकर
   " इतीयाा " — तुलना ।
   [ए] राजेशमल्ल " उसका हिस्सा " – बी.एन.राजुलु " पाठु " – तुलना
   [ऐ] हतात्मुल्ल " शीषक " – पी.सत्यवति " मातृमूर्तिकांति " —

[ऐ] उत्तराढल " रोजनामचा " कुम्मेटि रवोत्तम रेड्डी " नीरु तागु " बलराम " कलम छुए हाथ " पेद्दिबोटल सुब्बरामय्या " नीरु " विनायक कराडे " कथा नायक " महेन्द्रा " वेक्तित्रिष्ठी दभारा " तुलना ।

उपसंहार

परिशिष्ट

[अ] तेलुगु कहानीकारों का संक्षिप्त परिचय

[आ] सहायक ग्रंथ सूची

[इ] 1. कहानी संग्रह [हिन्दी]

2. आलोचनात्मक ग्रन्थ

3. पत्रिकायें

[ई] 1. कहानीक्ष संग्रह [तेलुगु]

2. आलोचनात्मक ग्रन्थ

3. पत्रिकायें

[उ] अप्रकाशित ग्रन्थ सूची

5• नये संदर्भ और नयी आशायें कहानी का नया चरण {1971-90}

(1) सक्रिय कहानी :-

उत्तरशती की हिन्दी कहानी का विकास इस बात का साक्षी रहा है कि वह विभिन्न आन्दोलनों अथवा नारों से जुड़ा हुआ इतिहास रहा है। यहाँ ध्यान देने की बात है कि जब तक कमलेश्वर " सारिका " के सम्पादक रहे है तब तक उनका " समांतर कहानी आन्दोलन " फलता और फूलता रहा है। सन् 1978 ई• में कमलेश्वर ने " सारिका " को त्यागपत्र देने से " समान्तर कहानी आन्दोलन " का अंत होने लगा। उस वक्त ख्यातनामा कहानीकार राकेशवत्स ने अपनी " मंच " पत्रिका के माध्यम से " सक्रिय कहानी " को नया नारा दिया।

राकेशवत्स के सम्पादकत्व में निकल रही पत्रिका " मंच " के सामने न तो कोई खोखला नारा रहा है और न ही सस्ते ढंग का कोई नाम उछालू आन्दोलन। बदली हुई जीवन स्थिति में से उपजी समकालीन मानसिकता में से सही और गलत की पहचान के लिए सोच का रास्ता खोलना और प्रबुद्ध पाठक-वर्ग के सामने चयन और

स्वीकार तथा अस्वीकार का एक साफ और ईमानदार अवसर प्रस्तुत करना ही मिशन रहा है ।"[1] तथापि " समान्तर " आन्दोलन की समाप्ति के पश्चात् हिन्दी कहानी के आकाश की सूचना पाकर वे नया नारा देने का लोभ संवरण नहीं कर पाये । परिणाम स्वरूप पश्चिम से " एक्टिवस्टोरी " शब्द चुराकर "[2] उन्होंने " मंच-78 " और " मंच-79 " के अंक " सक्रिय कहानी विशेषांक " के रूप में निकाले । " बाद में इन्हीं विशेषांकों की सामग्री राकेश वत्स के संपादन में " सक्रिय कहानी की भूमिका " शीर्षक से पुस्तक रूप में प्रकाशित हुई ।"[3]

इस प्रकार " सक्रिय कहानी " का जन्म सन् 1978 ई॰ में हुआ । " सक्रिय कहानी का सीधा और स्पष्ट मतलब है - आदमी के चेतनात्मक ऊर्जा और जीवंतता की कहानी । उस समय और एहसास की कहानी जो आदमी को बेबसी, वैचारिक निहत्थेपन और नपुंसकता से निजात दिलाकर पहले स्वयं अपने अन्दर की कमजोरियों के खिलाफ खड़ा होने के लिए तैयार करने की जिम्मेदारी अपने सिर लेती है जो साहित्य की इस सार्थकता के प्रति समर्पित है कि साहित्य और प्रयत्न के बीच की दरार को पाटने का एक जरिया है ।"

नवलकिशोर ने प्रगतिशील अवधारणा को ही फिर-फिर जाँचने-परखने का आग्रह करते हुए सक्रिय कहानी को प्रगतिशील साहित्य चिन्तन से अलगाने को संदेह की दृष्टि से देखा है ।[4]

1॰ मंच (स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी - कहानी समीक्षा : मूल्यांकन - पुनर्मूल्यांकन (विशेषांक) 1973 - पृ॰ 40

2॰ डॉ॰लालचन्द्र गुप्त " मंगल " " साहित्य रसायन " पृ॰ 75॰

3॰ रजतीशकुमार " हिन्दी कहानी की उपलब्धियाँ और सीमायें - पृ॰ 84

4॰ नवल किशोर - सक्रिय कहानी की भूमिका - पृ॰ 88

डॉ॰हरदयाल की दृष्टि में सक्रिय कहानी प्रगतिवादी / प्रगतिशील कहानी का ही दूसरा नाम है । जाहिर है कि साफ-साफ न कहा जाय फिर भी सक्रिय कहानी वामपंथी चिन्तन से लैस है ।"[1]

डॉ॰शंभुनाथ ने " सक्रियता को अपेक्षाकृत अच्छे ढंग से परिभाषित किया है -- " रचनाकार के रूप में इस सक्रियता का बराबर मतलब है - पहले अपनी सीमाओं को समझना, छपाईतंत्र की सीमाओं को समझना, अपने पेशागत, वर्गगत चरित्र को बदलना, लोकग्राही तथा निम्नवर्ग के कृषक-मजदूर, बेकार, भूमिहीन संघर्षशील जनता के पूँजीवादी फासीवादी, सामंती और उपनिवेशवादी शत्रुओं को पहचानना-फिर उरचना के साथ जनक्षेत्रों में चला जाना ।"[2]

राजकुमार सैनी अपना मंतव्य देते हुए कहते हैं कि " सक्रिय कहानी " मेरी राय में वही है, जिस की अन्तर्वस्तु में पूँजीवाद-विरोध से शुरू होकर, पूँजीवाद का खात्मा कर देने तक की संकल्प धर्मा सक्रियता बरकरार रहती है । वरना सारा विश्लेषण-संश्लेषण हवाबाजी बनकर रह जाता है । फिलहाल रचना का यही युगधर्म है और जब तक रचना में यह युगधर्म ध्वनित नहीं होता, रचना सक्रिय नहीं कहला सकती । यह युगधर्म रचना के शाश्वत धर्म का ही एक वह पहलू है, जिसकी पूर्ति आज के रचनाकार को करनी है ।" इस संबन्ध में डॉ॰शम्भूनाथ का कहना है --

" रचनाकार के रूप में इस " सक्रियता " का बराबर मतलब है - पहले अपनी सीमाओं को समझना, छपाई तंत्र की सीमाओं को समझना, अपने पेशागत, वर्गगत चरित्र को बदलना, लोकग्राही तथा निम्नवर्ग के कृषक, मजदूर, बेकार भूमिहीन-संघर्ष शील जनता के पूँजीवादी, फासीवादी, सामंती और उपनिवेशवादी शत्रुओं को पहचानना फिर रचना के साथ जन क्षेत्रों से चले जाना ।

1· डॉ॰हरदयाल - सक्रिय कहानी की भूमिका - पृ· 59·

2· डॉ॰शंभुनाथ - सक्रिय कहानी की भूमिका - पृ· 54·

आचार्य विश्वंभरनाथ उपाध्याय मानते हैं कि -- " सक्रिय कहानी " जीवन की सक्रियता [जो कहानी में पात्र-सक्रियता के रूप में प्रतिबिम्बित होती है] को पहचान कर, उसके द्वारा परिवर्तन की सम्भावना को मजबूत करना चाहती है। जाहिर है " सक्रिय कहानी " इन झूठे एवं हिपोक्रेट लोगों के द्वारा रचे जा रहे लाउड फैशनपरस्त साहित्य को चुनौती देती है। यह साहित्य जहाँ कहीं भी है, " सक्रिय कहानी " उसका विरोध करती है। अगर वह नई कहानी के नामपर चलाई गई, नये प्रतीकों से लदी हुई, पर बाप-दादा के जमाने के कथ्य वाली क :नियों में है तो उसे नकारती है।

सक्रियता और कथा साहित्य के अन्तर्सूत्रों पर विचार करते हुए गोर्की का यह उद्धरण हमारा ध्यान आकर्षित कर लेता है --

"There are two currents or schools " in Literature, Romanticism and realism. By the letter is meant a truthful, unvarnished presentation of people and their conditions of life. Several difinitions of romanticism have been brought forward, but till now no precise of exhanstive definition has been evolved that will satisfy all historians or literature. Two sharply contrasting tendencies should be distinguished in Romanticism....."

गोर्की ने ACTIVE [सक्रिय] विशेषण का प्रयोग रोमांटिक साहित्य के उज्ज्वल पक्ष को रेखांकित करते हुए ही किया, उन्होंने यथार्थवादी साहित्य के संदर्भ में इसका प्रयोग नहीं किया, किन्तु आज की परिस्थितियों में यथार्थवादी कथा साहित्य के उज्ज्वल पक्ष को पृथक रूप से रेखांकित करने के लिए " सक्रिय कहानी " जैसा प्रयोग अप्रासंगिक न होगा। क्योंकि ऐसा कथा साहित्य भी लिखा जा रहा है जो यथार्थवादी होते हुए भी (ACTIVE) [सक्रिय] नहीं है, दूसरे शब्दों में वह नितान्त निष्क्रिय (PASSIVE) है। लेकिन इसी सन्दर्भ में यह जान लेना भी बहुत जरूरी है कि गोर्की का आशय क्या था, जब वे अपने युगवर्ती एवं युगपूर्व के

रोमांटिक कथा साहित्य को पुष्कांकित कर रहे थे। उनका कहना था कि —

"Passive romanticism endeav-ours to reconcile man with his life by embellishing that life or to distract him from the things around him by means of a barren introspection into his inner world into thoughts of 'Life's insoluble problems, such as love, death & other inponderables, problems that can not be solved by speculation or contimplation, but only by science"

(NOTE: Maxim Gorkey termed the Romanticism in two types. They are (1)ACTIVE ROMANTICISM, (2)PASSIVE ROMANTICISM)

इस उद्धरण में जो बात रोमांटिक साहित्य के बारे में कही गई है, वही बात आज समकालीन निष्क्रिय यथार्थवादी साहित्य पर भी लागू होती है। बस अन्तिम पंक्ति में ... but only by science के स्थान पर Not-only by science and ideology but by practice and participation.. जोड देने की जरूरत पड़ेगी। इस संदर्भ में गोर्की का यह उद्धरण देकर आगे सक्रिय कहानी और उसकी अवधारणा पर विचार करें।

"Active romanticism strives to strengthen man's will to live and raise him up against the life around him against any yoke it would impose

गोर्की के उपर्युक्त उद्धरणों की ओर ध्यान आकर्षित करने में दो मन्तव्य है। एक तो यह कि जो लोग रोमान्टिक साहित्य और यथार्थवादी साहित्य को एक दूसरे के खिलाफ बुरी तरह काउंटरपोज करते है वे समझने की कोशिश करें कि गोर्की के अनुसार "एक्टिव रोमांटिसिज्म" और एक्टिव रियलिज्म" एक दूसरे के इतने नजदीक है, तो क्यों? मेरा दूसरा मन्तव्य यह स्पष्ट

करना था कि निष्क्रिय रोमांटिक कहानी और निष्क्रिय यथार्थवादी कहानी भी एक दूसरे के [उसी तरह] काफी नजदीक हैं । शायद इसीलिए निर्मलवर्मा की " परिन्दे " टाइप की यथार्थवादी कहानियों और अज्ञेय की " रोज " जैसी रोमांटिक कहानियों में प्रवृत्ति और निवृत्ति संबंधी कोई ज्यादा भेद नहीं है।

" सक्रिय कहानी " की पृष्ठभूमि पर चर्चा करते हुए राकेश वत्स ने कहा -- " साधारण आदमी को पस्त, नपुंसक, विचारशून्य और संवेदनहीन बनाने के लिए विदेशी ताकतें जिन हथकंडों और हथियारों का इस्तेमाल कर रही थीं, आज भी इन्हीं से काम लिया जा रहा है ।" [1]

इससे स्पष्ट है कि आजादी के बाद भारतीय जन जीवन में सिर्फ इतना सा ही परिवर्तन आया कि पहले साधारण जनता का भाग्य, मुट्ठी-भर विदेशियों के हाथ में था और अब विदेशी हाथों से स्वदेशियों के हाथ में आया ।

एक महत्वपूर्ण उदाहरण देते हुए राकेश वत्स कहते हैं -- " इसीलिए सामान्य-जन को अंधकार में रहते रहते अंधेरे से प्यार हो गया है । गहरी गुफा के स्याह अंधेरे में कहीं उसे थोड़ी-सी भी रोशनी दिखायी देती है तो उस रोशनी को मुक्ति का द्वार समझ वह पूर्ण समर्पण के साथ रोशनी की तरफ भागता है । लेकिन वह मुक्ति का द्वार नहीं होता, एक गुफा से दूसरी गुफा में धकेलने के लिए भ्रम की जलती हुई मशाल होती है । जनसमूह के नयी गुफा में प्रवेश करते ही वह मशाल बुझा दी जाती है । जनता फिर रेंगने लगती है - मुक्ति के लिए हाथ छल की तरह उठाये, किसी आलौकिक शक्ति का आ   करती हुई ।" [2]

इस निराशपूर्ण स्थिति में कहानीकार का कर्तव्य और भी बढ़ जाता है उसका कर्तव्य तो उन अमानवीय स्थितियों के विरुद्ध लड़ना है ।

---

1. हिन्दी कहानी - एक अंतर्यात्रा - डॉ. वेदप्रकाश अमिताभ - पृ. 76.
2. सक्रिय कहानी की भूमिका - पृ. 11-12.

ऐसी स्थितियों से कहानीकार किस प्रकार अपना कर्तव्यपालन कर रहा है। उसको उनकी कहानियाँ ही स्पष्ट कर देती हैं। नई कहानी, अकहानी, सचेतन कहानी, समांतर कहानी और जनवादी कहानी आदि कहानी आन्दोलनों में लिखी गयी कहानियों पर विचार किया जाये तो मिलता है कि प्राय: बहु संख्यक कहानियों में करुणा को भिन्न-भिन्न पकवानों की शक्लों में भिन्न बर्तनों में पाठकों के सामने परोसा गया है।

राकेशवत्स के अलावा सक्रिय कहानी से रमेश बत्तरा, चित्रामुद्गल, विवेक निझावन, सच्चिदानन्द धूमकेतु, नवेन्दु आदि कहानीकार जुड़े हुए हैं। सक्रिय कहानी आन्दोलन जो है वह एक तरह से समांतर कहानी आन्दोलन का ही एक अन्य रूप या दूसरा रूप है क्योंकि राकेशवत्स ही यह कहें कि वे समांतर कहानी से संबद्ध नहीं रहे, पर कमलेश्वर उनके लिए आदर्श कहानीकार रहे हैं।

(2) <u>प्रवृत्तियाँ</u> :-

सक्रिय कहानी व्यक्तिवादी और दानवी प्रवृत्तियों को विरोध करते हुए मानवीय मूल्यों की स्थापना को ही अपना संपूर्ण लक्ष्य मानती है। राकेश वत्स के अनुसार " सक्रियता प्रवृत्तियों का निषेध करके उनके स्थान पर मूल्यों की स्थापना करती है, अर्थात् व्यक्तिगत स्वार्थों और लाभों को समाजगत लाभों में बदलती है। इसीलिए उर्जा प्रसूत सक्रियता की दिशा वही हो सकती है जिसकी तरफ " गोदान " की धनिया ने संकेत किये हैं और निमित्त उस साधारण आदमी के होनी चाहिए जो " गोदान " के होरी की तरह खास आदमी की बदौलत भूखा-नंगा और दोहित होने के बावजूद रूढ़ संस्कारों में जकड़ा होने की वजह से, बेबसी और निष्क्रियता की मौत मर रहा है।" [1]

---

1. सक्रिय कहानी की भूमिका - पृ. 17.

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट होता है कि सक्रिय कहानी शोषण का विरोध करती है और साधारण आदमी के हित को अपना लक्ष्य बनाती है। सक्रिय कहानी के केन्द्र में भी " आमआदमी " हो रहा है, जो शोषण से मुक्ति पाने की दिशा में सक्रिय है। इसलिए सक्रिय कहानीकार सुरेन्द्र कुमार कहते हैं --

" सक्रियता का अर्थ मेरे लिए यह है - रचनाकार की रचना, सक्रियता, शोषित जनता को उसके अधिकारों के प्रति जागरूक करना, उसके वर्ग- शत्रु को उसके सामने नंगा करना, वर्ग-शत्रु के तमाम माध्यमों, तरीकों एवं उसके मूल्यों का पर्दाफाश करना एवं उनसे निपटने के लिए शोषित वर्ग को संघटनात्मक तरीके से सक्रिय करना।"

एक तरह से " सक्रिय कहानी आन्दोलन " श्री राकेशवत्स की महत्वकांक्षा का ही परिणाम था, जो उनकी मंच पत्रिका तक ही सीमित रह गया। डॉ॰मन-मोहन सहगल ने मंच-78 के प्रथम " सक्रिय कहानी विशेषांक " में जो चेतावनी दी थी, वह उनकी भविष्यवाणी सिद्ध हुई। उन्होंने कहा था -- " सक्रिय कहानी केवल नया नारा ही बनकर न रह जाये और यह व्यक्ति का आन्दोलन न बना रहे। नया नारा बना तो आधुनिक कहानी, नयी कहानी, अकहानी, सचेतन कहानी और समान्तर कहानी की भाँति शीघ्र ही लेखक इससे ऊबकर एक और नारे की खोज में निकल पड़ेंगे और व्यक्ति का आन्दोलन बना तो कमलेश्वर की " समान्तर " की तरह के अन्त को प्राप्त होगी।" [2]

सक्रिय कहानी समाज में व्याप्त शोषण के विरुद्ध आवाज उठाती है और शोषण के कारणों को रेखांकित करती है। सक्रिय कहानी के पात्र जो हैं वे एक दिशा में, शोषण से मुक्ति पाने को सक्रिय है। सच्चाई, ईमानदारी तथा दूसरों की भलाई के लिए संघर्षरत पात्रों को सक्रिय कहानी में पर्याप्त अभिव्यक्ति मिली है। सक्रिय कहानी के पात्र जनसमर्थक मूल्यों के पक्षधर हैं।

1· सक्रिय कहानी की भूमिका - राकेशवत्स - पृ· 180·

2· " मंच - 78 " - पृ· 101·

यह सक्रिय कहानी जो है वह एक तरह से समांतर कहानी और जनवादी कहानी का ही मिश्रण है । इसके लिए निम्न कथन द्रष्टव्य है -- " सक्रिय कहानी ने आमआदमी को समांतर कहानी से लिया है और उसे सक्रियता और तेजस्विता जनवादी चिंतन से लेकर दी गयी है ।"[1]

सक्रिय कहानी आम आदमी से संगठित होकर जूझने, उसके आत्मविश्वास, समाज में जनसमर्थक मूल्यों तथा समानता की स्थापना को स्पष्ट करती है ।

③ दलित कहानी साहित्य :-

महात्मा गांधी जी, एक वर्ग को " हरिजन " नाम से प्रेम से पुकारने लगे तो उस वर्ग को " दलित " कहकर समाज में उनके अधिकारों को, उनकी उन्नति के लिए पूरी तरह से कोशिश करनेवाला है डॉ॰बी॰आर॰ अंबेडकर" । सामाजिक, आर्थिक और मानसिक तौर पर जानवरों से भी हीन जीवन बितानेवाले करोड़ों लोग उनके भाषण से प्रेरित होने लगे । निम्न वर्णों की तरह देखे जानेवाले समाज से बहिष्कार करनेवाले उनकी मेहनत को अनेक प्रकार से लूटनेवाले शोषकों का सामना करने का नारा डॉ॰अंबेडकर से ही शुरू होने लगा । साथ-साथ अछूत समझनेवाले उस वर्ग को, उनके अधिकारों की रक्षा के लिए सरकार से और कानून से अनेक सुविधाओं का इंतजाम करने में पूर्णतः सफल रहे । दलितों की समस्याओं को लेकर साहित्यकार कविता, कहानी आदि लिखने लगे ।

1· हिन्दी कहानी : एक अंतर्यात्रा - डॉ॰वेद प्रकाश अमिताभ - पृ॰ 78,79·

तेलुगु कहानी के क्षेत्र में श्री कस्ण कुमार जी (कंदुकूरि अनंतम) से लिखी गयी " बिल्लमोलत्राड़ु ", " सन्जीवाड़ु " आदि कहानियाँ ही पहले प्रचलित हैं । उनके बाद कोड्यटिगंटि कुटुंबराव, गोपीचन्द, रावूरिभरद्वाजा, रावशास्त्री, कालीपट्नम रामाराव आदि अनेक कहानिकार महत्वपूर्ण कहानियों को लिखते रहे । विप्लव रचयितल संगम् को स्थापना से " दलित साहित्य " के लिए एक रूप उभरने लगा । नौवेदशक में दलित साहित्य बहुत तेज से व्याप्त होने लगा । बोज्जा तारकम, सत्यमूर्ति, सांबशिवराव, कडील आदि से दलितों की उन्नति के लिए पत्रिकाओं को भी स्थापित करने लगे और समारोह भी चलाने लगे । दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्रिकाओं में कविता, कहानियाँ, लेख आदि को प्रचुरित करने लगे ।

1930 से लगभग 1970 तक समाज में समानता लाने के लिए साहित्यकार मार्क्सवाद को अपनाने लगे । वे इस प्रकार मानने लगे कि आर्थिक समानता लाने में ही समाज की भलाई है । समाज और आर्थिक स्थितियों में पूर्णत: बदलाव लाने के लिए मार्क्सवादी तत्वों से कोशिश करने लगे । उनका मूल लक्ष्य रहा है " आर्थिक समानता " और " अमीर और गरीब " वर्गों को समाज से भगाकर वर्गहीन समाज की स्थापना है । उन्होंने सांस्कृतिक एकता लाने की कोशिश नहीं की । अपने ख्यालों में " संस्कृति को पूर्णत: छोडने लगे । फलत: वर्ण की समस्या उत्पन्न होने लगी । आर्थिक समानता के लिए भेदभाव दिखायी नहीं देता । लेकिन वर्ण को लेकर अनेक भेद सामने आने लगे । सब के सब ऐसा मानने लगे कि मेरा वर्ण ही महान है । " वर्ण " के तौर पर गुटबन्दी भी उत्पन्न होने लगी । साथ-साथ निम्न वर्णों को विभिन्न रूपों में शोषण देने लगे । यह " वर्ण की समस्या " वर्गहीन " समाज की स्थापना से भी और महत्वपूर्ण होने लगी । यही " दलितवाद के लिए नींव बन गयी ।अंबेद्कर की कोशिश दलितवाद के लिए रीढ की हड्डी बन गयी ।

दलितों में होश, निजी जीवन में उत्पन्न समस्याओं से ही होने लगा । इज्जत और शोषण को लेकर, उनमें चेतना उत्पन्न होने लगी । उनके होश को लेकर महाराष्ट्रा के प्रसिद्ध दलितों का नायक आरजुन डानग्ले (ARJUN DANGLE) इस प्रकार कहने लगे --

" Dalit literature is marked by revolt and negativism, since it is closely associated with the hopes for freedom of a group of people who, as untouchables, are victims of social, economic and cultural inequality"

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट होता है कि सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक तौर पर असमानता से देखे जाने वाले और अछूता समझने वाले एक वर्ग, अपनी आजादी के लिए संपूर्ण विश्वास से कोशिश करने लगे ।

दलितों पर लिखनेवाले साहित्यकारों के दो वर्ग हैं । एक वर्ग मानते हैं कि वर्णहीन समाज की स्थापना होने से ही वर्गहीन समाज की स्थापना संभव है । यह वर्ग मार्क्सवाद को स्वीकार नहीं करते । दूसरा वर्ग ऐसा है कि मार्क्सवाद से ही वर्गहीन समाज की स्थापना संभव है । वे कहते हैं पूँजीपती और साम्राज्यवादियों के दुष्प्रभाव को पहचानते समय सिर्फ वर्ण को ही नहीं अन्य विषयों को भी खयाल में रखना है । एकदम वर्गहीन समाज की स्थापना तो नहीं हो पायेगी । धीरे-धीरे होने की संभावना है । सिर्फ वर्ण को ही नही अन्य कुप्रथाओं को भी भगाना है और उनके प्रति विद्रोह करना है । इसके अलावा आजकल जो भी आन्दोलन हो रहे हैं उनमें पूरे वर्ण, प्रगतिवादि आदि सब मिलकर कोशिश करने से ही वर्गहीन समाज की स्थापना होगी । पलायनवादि दृष्टिकोण को भगाने की ताकत मार्क्सवाद को है । साहित्यकार को सिर्फ वर्ण को ही नही अन्य विषयों को भी लेकर रचनायें करनी है और पूरे देश की उन्नति को ही अपना लक्ष्य मानना है ।

1970 के बाद से तेलंगाना से अल्लम राजय्या, सदानंद शारदा, कालुव - मल्लय्या, रायलसीमा से केतुविश्वनाथ रेड्डी, मधुरांतकम महेन्द्र, नरेन्द्र आन्ध्रा से भूषणम, अप्पलनायुडु आदि अनेक कहानिकार अपने-अपने प्रांतों में उत्पन्न आन्दोलनों को केन्द्र में रखकर और अनेक समस्याओं को लेकर कहानियाँ लिखने लगे । अपनी ओर से महत्त्वपूर्ण सुझाव भी देने की कोशिशें भी करने लगे ।

एक बार दुनिया की ओर देखने से स्पष्ट होगा कि पूँजीवादी प्रथा को अपनाने से अमेरिका और जपान, मार्क्सवाद को स्वीकार करने से रूस और अन्य पूरब के यूरपदेश आदि में श्रमिक को मेहनत का फल मिल रहा है ? अपने लिए आवश्यक चीजों को खरीद रहा है । आदि प्रश्नों के उत्तर 1989 उत्तारार्ध में मिलता है । रूस में सैबोरियन कोयले के खानों के मजदूर या श्रमिक 1989 में हड़ताल पर थे । इसके मूल कारण पर विचार करने से स्पष्ट हुआ था कि हाथ धोने के लिए आवश्यक साबुन का इंतजाम नहीं था । साथ-साथ पूरब जर्मन से पश्चिम जर्मन को जानेवाले कांदिशीकों को मुफ्त में " ब्रेड " या " रोटी " देने से वह पूरब जर्मन की स्त्री आँसू बहाती हुई कहने लगी कि हमें पाँच-छे घंटे काम करने से भी न मिलनेवाला यह ब्रेड इतनी आसानी से मिल रहा है " इससे स्पष्ट होता है कि " वर्गहीन " समाज की स्थापना था र्थिक समानता को अपनालक्ष्य माननेवाले मार्क्सवादी को अपनाकर जनता की अति आवश्यक सुविधाओं का भी इंतजाम करने में भी असफल रहे ।

गोर्की से बीसवी शती के प्रथम दशक में स्पष्ट किया गया यह कथन इस दशक के वातावरण में स्पष्ट जमते हुए नजर आता है " हमारा साहित्यिक क्षेत्र, अनेक महान् पुरुषों से मन रूपी हलों से जोतकर तैयार किया गया है । हरे फसलों से शोभित यह क्षेत्र आजकल बंजर बन गया है । वहाँ अब घास के पौधे फैले है । फ्रेंच, अंग्रेजी, जर्मन आदि पुस्तकों के रंगारंग कागजों के टुकड़े फड़फड़ा रहे हैं" । हमारे लिए

अनावश्यक पाश्चात्यों के रीतिरिवाज फलने और फूलने लगे हैं । मानसिक तौर पर कमजोर साहित्यकारों के विचारों से उत्पन्न सुखरोग, साहित्यपृष्ठों के जरिए विशेष गतिविधियों से फैला रहे हैं ।"

इससे स्पष्ट होता है कि भारतीय साहित्यकार पाश्चात्यों के मोह में फँसकर उनकी सभ्यता और संस्कृति को ध्यान में रखकर रचनायें करने लगे ।

दलित कहानियों में अन्तर्गत " भैसा " § भोयजंगय्या § तोर्पु § भूकम्प § सूर्य ने सिर उठा § कोलकलूरि इनाक §, निश्चयम § भार्गवीराव § दूध § बी॰एन॰ रामुलु § पानी के लिए झगडा § तुम्मेटि रघोत्तम रेड्डी §, पानी § पेदिद्दबोट्ल सुब्बरामय्या § आदि को लिया जा सकता है । इससे स्पष्ट होता है कि भारतीय साहित्यकार पाश्चात्यों के मोह में फँसकर उनकी सभ्यता और संस्कृति को ध्यान में रखकर रचनायें करने लगे ।

दलित कहानियों के अन्तर्गत भैसा § भोयजंगय्या §, तोर्पु § भूकम्प § सूर्य ने सिर उठा § कोलकलूरि इनाक §, निश्चयम § भार्गवीराव §, दूध § बी॰एन॰ रामुलु §, नील्ल लबु § तुम्मेटि रघोत्तमरेड्डी §, " पानी " § पेदिद्दबोट्ल सुब्बरामय्या §, बेसिन ब्रिड्ज दग्गरा § महेन्द्र § आदि को लिया जा सकता है ।

(4) स्त्रीवाद साहित्य :-

" स्त्रीवाद " शब्द अंग्रेजी शब्द [FEMINISAM] का रूपान्तरण है। " स्त्रीवाद " शब्द कहानी लेखिकाओं से अधिक चलायी गयी है। उसके बारे में विभिन्न रचनाओं की परिभाषायें इस प्रकार है --

स्त्रीवाद को फेमिनिष्ट स्टडी सर्किल से संबध्द विद्वानों ने इस प्रकार परि - भाषित ... -- " समाज में, परिवार में, कामकाज में स्त्रियों पर होनेवाला शोषण और लूट के संबंध में जानकारी पाकर ऐसी स्थिति को बदलने के लिए स्त्री-पुरूष से होनेवाला काम ही स्त्रीवाद है।" [1]

स्त्रीवाद साहिती समाख्य की परिभाषा इस प्रकार है -- " समाज के समस्त क्षेत्रों में स्त्रियों को बराबर स्थान होना है, स्त्रियों का जीवन, वैयक्तिकता आदि सब कुछ पुरूषों के हाथ में है ऐसी स्थिति में बदलाव लाने के लिए प्रमुखतः नारी पर " माँ " और " पत्नी " की छाप मिटाकर, उसे एक इन्सान के रूप में देखने के लिए ..... पुरूषों के अधिकारों को कम करने के लिए उत्पन्न आन्दोलन है " स्त्रीवाद आन्दोलन "।" [2]

मल्लादि सुब्बम्मा कहती है - " स्त्रीवाद [फेमिनिज्म] के अनेक अर्थ हैं। .... एक वर्ग पुरूषों के अधिकार को नहीं मानता तो दूसरा वर्ग स्त्रियों को आजादी चाहता है और एक वर्ग पूरे क्षेत्रों में चाहे वह शिक्षा संबंधी हो या नौकरी संबंधी, समानता चाहता है और एक वर्ग पति-पत्नी के संबंध में आजादी चाहता है। कुछ

---

1. फेमिनिज्म : प्रश्न और उत्तर - नागमल्लेश्वर राव [अनुवादक]
   [फेमिनिष्ट स्टडीसर्किल, अप्रैल - 1989]
2. स्त्रीवाद साहिती समाख्या - जनवरी 1989 [करपत्रिका में]

लोग पूछते हैं काम को विभाजन करने की आवश्यकता क्या है ? ... स्त्री-पुरुषों को सामाजिक असमानता मिटाना चाहे तो वह भी स्त्रीवाद है ... स्त्री की आजादी को लेकर समाज में जो भी परिवर्तन चाहा जायेगा वे सब स्त्रीवाद के ही विभिन्न अंग है ।"

गुडिपाटि वेंकटाचलम कहते है " स्त्री को चाहिए अपने पर, अपने जीवन पर, अपने शरीर पर, मन पर, हृदय पर पूर्ण अधिकार ।" श्री मधुरांतक राजाराम कहते हैं - " कीचड में रहकर कीडा कितना सुख या शांति पाती है उसी प्रकार स्त्रियाँ भी जीवन जैसे कीचड में पा रही हैं ।"

चाकाटिपांडुरंगाराव कहते है - " स्त्रियों के लिए मेहनत का फल नही मिल रहा है, लेकिन पुरुषों के लिए बहुत मिल रहा है । ज्यादा काम करनेवाली स्त्रियाँ है तो बहुत कम काम करके मेहनत का फल भोगनेवाला है " पुरुष " ।

उक्त कथनों से स्पष्ट होता है कि समाज में " स्त्री " की स्थिति कैसी रही है । उसको किस प्रकार अपने अधिकारों को पाना है और स्त्रियों की समस्याओं का समाधान किस प्रकार होगा ? इसको स्पष्ट करनेवाला साहित्य है स्त्रीवाद साहित्य । स्त्रीवादी कहानीकारों पर रचनाकारों का मूल लक्ष्य क्या है और उनका मूल उद्देश्य क्या है उसे इस प्रकार देखा जा सकता हैं --

घर में और बाहर इज्जत से जीने के लिए, अपने जीवन पर, शरीर पर अधिकार पाने के लिए लडना ही स्त्रीवादियों का मूल लक्ष्य रहा है । समाज में बदलाव लाना ही उनका मूल उद्देश्य है ।

स्त्रीवाद के कहानीकारों ने उत्पन्न समस्याओं को निम्न वर्गों में पाया है --

1. पितृस्वाम्यम् (पिता का अधिकार)
2. जेंडर (लिंग भेद)
3. मातृत्वम (माता बनना)
4. गृह कर्म (घर का काम)
5. लैंगिकस्वेच्छा (लैंगिक स्वेच्छा)
6. स्त्री विमुक्ति (स्त्री की आजादी)

इनसे संबंधित समस्याओं को अपनी अपनी कहानियों में स्पष्ट करने में कहानीकार सफल रहे हैं। गुरजाड अप्पाराव जी से लेकर आज तक अनेक कहानीकारों की और कहानी लेखिकाओं की कहानियाँ हैं।

साहित्यक्षेत्र में " स्त्री " समस्याओं को लेकर लिखनेवालों में अग्रणी है " कंदुकूरि वीरेशलिंगम पंतुलु "। लेकिन कहानी के क्षेत्र में श्री गुरजाड अप्पाराव जी को ही प्रथम स्थान देना पड़ेगा। " स्त्री-शिक्षा " की प्रमुखता, विधवाओं में रहनेवाली मातृत्व की जिज्ञासा, किसी न किसी प्रकार विधवाओं को फिर शादी कराने की कोशिश, स्त्रियों पर पुरुषों का लैंगिक अत्याचार, विवाह व्यवस्था में रहनेवाली कमियाँ, पति-पत्नी के बीच उत्पन्न होनेवाले असमान रिश्ते, स्त्री की आजादी आदि को लेकर चलम्, श्रीपाद सुब्रह्मण्य शास्त्री, कोडवटिगंटि कुटुंबराव, रंगनायकम्मा, मल्लादि सुब्बम्मा, ओल्गा, अब्बूरि छायादेवी आदि हैं। इनमें " चलम् " का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। उनकी प्रसिद्ध कहानियाँ हैं रेड्डिरंगम्मा " " मामगारि मर्यादा ", " वितंतुवु ", " आरग्युमेंट ", " नायुडुपिल्ल " आदि हैं। वे अपनी कहानियों में स्त्रियों को अपने बच्चों पर संपूर्ण अधिकार, गर्भधारणा और गर्भस्राव आदि पर स्त्रियों को ही संपूर्ण अधिकार होने की बात स्पष्ट करने में सफल रहे। श्रीपाद सुब्रह्मण्य शास्त्री की " चिन्न कथलु ", " षट्कर्मयुक्त ", " तील्ल प्रेम " आदि कहानियाँ अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। रंगनायकम्मा " " आडपिल्ल अन्तरात्मा ", " पेल्लानिकि प्रेम लेखा " आदि प्रसिद्ध कहानियाँ हैं।

ये सब कहानीकार नौवें दशक की स्त्रीवाद कहानी साहित्य को महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने में अत्यंत सफल रहे । आजादी के बाद से स्त्री, शिक्षा और चेतना से, जनता के आन्दोलनों में भाग लेती हुई, उनसे उत्पन्न अनुभव से अपनी उन्नती के लिए रुकावट बनी हुई सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों से प्रेरित होने लगी । मन की भावनाओं को स्पष्ट करने के लिए और विज्ञापन के लिए बहुत उपयोगी साधन है " साहित्य " । शायद इसीलिए ही " स्त्रीवाद " साहित्य 1975 के बाद एक विभिन्न रूप पा चुका है । 1978 ई॰ में " अभ्युदय समाख्य " को मल्लादि सुब्बम्मा, बी॰प्रभावति, वी॰काशीरत्नम आदि मिलकर स्थापित करने में सफल रहे । साथ-साथ स्त्रीवादी साहित्यकार कहलानेवाली रमा मेल्कोटे, के॰लीलता, वसंताकन्नाभि रामन आदि से " स्त्री शक्ति संघटना " 1979 ई॰ में स्थापित होकर दहेज प्रथा के खिलाफ और इज्जत लूटने की घटनाओं के खिलाफ आन्दोलन मचाने में सफल रही । " स्त्री " समस्या को कथ्य बनकर नाटक चलाना इनकी विशेषता है । आन्ध्र राज्य को " स्त्रीवाद दृष्टकोण " से परिचित करने का श्रेय " स्त्री शक्ति संघटना " का है । 1980 ई॰ में मल्लादि सुब्बम्मा के नेतृत्व में " महिलाभ्युदय संस्था की स्थापना हुई । यह, मीटिंग, सेमिनार आदि चलाने में आगे बढ़ी । 1988 ई॰ में ओल्गा ने अपने मित्रों से फेमिनिष्ट स्टडी सर्किल की स्थापना की । इसका मूल लक्ष्य रहा है स्त्रियों से उठनेवाले आन्दोलनों को प्रेरित करना । समाज में, परिवार में, काम-काज में स्त्रियों के शोषण से, लूट से परिचित होकर, ऐसी स्थिति को बदलने के लिए स्त्री-पुरुषों से चलायी जानेवाला आन्दोलन ही स्त्रीवाद है ।"[1]

कात्यायनी विद्महे कहती हैं -- " स्त्रीवाद वह एक विचार करने का विधान है । एक सामाजिक चेतना का दृष्टकोण है । इसके लिए एक पक्का सिद्धांत नहीं है । लेकिन स्त्रियों की आजादी के लिए उनके मन में उत्पन्न विचार विधान ही है " स्त्रीवाद "[2] ।

1· कमलावासिन निघात - सय्यदखान - 1983 : 3

2· कात्यायनी विद्महे, 1991

ओल्गा कहती है -- " समाज में, परिवार में कामकरनेवाली स्त्रियाँ, लूट और शोषण में पिसने की बात का पता लगाकर, ऐसी स्थिति को बदलने के लिए अपनी ओर से कोशिश करनेवालों को स्त्रीवादी कह सकते हैं । लैंगिक लूट, पुरुषों के अधिकारों और लिंग विधान पर आश्रित पिताओं के अधिकारों के खिलाफ उठे आन्दोलन में भाग लेनेवाले हैं" स्त्रीवादी " ।

वसंता कन्नभि रामन कहती है - " स्त्रियों को जो भी अधिकार हैं उनको पाने में असफल हो रही हैं । इसका मूल कारण है सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक परिस्थितियाँ । इनमें बदलाव आने के लिए और स्त्रियाँ अपने अधिकारों को पाने में सफल होने के लिए जो भी कोशिशें करेंगी उनको स्त्रीवादी मान सकते है ।"

रंगनायकम्मा की कहानी " अम्मा " (माँ) 25-1-1989 आन्ध्र ज्योति में प्रकाशित है । यह कहानी " स्त्रीवाद " साहित्य में एक मोड लाने में सफल रही । बहनों के बातचीत में ही लडकियों को घर की स्त्रियों की तरह बनानेवाली पारिवारिक व्यवस्था का स्पष्ट चित्रण है । अपनी माँ की देखभाल में बाहर, तेरह वर्षों में ही माँ की तरह बननेवाली बच्ची का चित्र खींचा गया है ।

पाटिबंडूल रजनी से लिखित " पाइतोले मनुष्लु " कहानी में आजकल गर्भवित स्त्री जो भी समस्यायें सामना कर रही है उसका ही नग्न चित्र है । बच्चा है तो रखना नहीं तो आपरेषन करने की जो स्थिति है वह पूर्णत: अमानवीय है । इस कहानी में एक बेटी की माँ अपने गर्भ में " बेटा " है तो आपरेषन करना चाहती है क्योंकि उसको डर है कहीं बेटा पैदा हो गये तो बेटी-बेटा में भेदभाव मन में आ सकता है । इसीलिए वह अपने गर्भ में " बेटा " को रहने नही देती । कहानी लेखिका का यह निर्णय आधुनिक समाज के लिए एक महत्वपूर्ण धक्का देनेवाली है ।

" उष्टपक्षी " एददपुड्ड " (कोंडेपूडि निर्मला) " सीत " (केतुविश्वनाथ रेड्डी) कमला, नीति (अल्लमराजय्या), नित्यमु-निरंतरमु (मधुरांतकम नरेन्द्र) आदि नवें दशक की महत्वपूर्ण कहानियाँ हैं।

1983 में मल्लादि सुब्बम्मा का " मातृत्वानिकि मरो मुडि " नामक कहानी संग्रह सामने आया । इस संग्रह की भूमिका में लेखिका ने इस प्रकार कहा – " समाज में आधा भाग स्त्रियों का है, उनके शोषण को साहित्य से भगाने की इच्छा ही मेरी कहानी रचना के लिए प्रेरणा बन गयी ।"

इस कहानी संग्रह में " पैलिस्लिकट्टा ", " प्रतीकारवांछा ", " कनुविप्पु " " बोम्मपलकींद ", " कींदपेलुगु ", " वेगुचुक्का " आदि कहानियों में " स्त्री समस्याओं क. ही विभिन्न रूप पाते हैं ।

इस दशक की कहानी लेखिकाओं में अतिप्रमुख कहानी लेखिका है " ओल्गा " । स्त्री समस्याओं को स्पष्ट करने में उल्लेखनीय लेखिका है " ओल्गा " । इनकी " पीन्नकल्लो ", " आर्ति ", " सीतजडा ", " प्रेम चेरयालि ", " मुक्कुपुडक " आदि कहानियाँ अत्यंत महत्वपूर्ण है । इनमें " सीताजडा और मुक्कुपुडक " कहानियों में स्त्री समस्याओं का ही विभिन्न चित्र देख सकते हैं।

अब्बूरि छाया देवी की कहानियाँ है " सुखांतम ", " पीलुवराहु " । ये दोनों नौवें दशक की ही हैं । उनकी सुखांतम कहानी में " स्त्री " पात्र एक पल भी सो नहीं सकती और उसे कुछ रुपयाँ भी नहीं मिलता । अंत तक वह सोने के लिए कोशिश करती है, लेकिन असफल हो जाती है । उसको दिनभर घर का काम ही करना पडता है । अंत में वह सोने के लिए नींद की गोलियाँ लेकर हमेशा के लिए सो जाती है ।

" पिल्लयसु " कहानी में जुड्वा भाई-बहन का चित्र है। इन दोनों के माध्यम से आजकल लडका-लडकी को किस प्रकार देखभाल कर रहे हैं। उन दोनों की देखभाल में जो भी भिन्नतायें है जैसे आचार व्यवहार, रहन-सहन, स्वेच्छा आदि को लेकर उसका स्पष्ट चित्र खींचा गया है।

इस प्रकार अति प्रचलित कहानियों की चर्चा करना संभव की बात नहीं है इसीलिए कुछ कहानियों के माध्यम नौवें दशक की स्त्रीवाद कहानी साहित्य का विश्लेषण करने की कोशिश की गयी है। प्रमुखतः " सुशीला " (पापिनेनि शिवशंकर), निश्चयम (भार्गवीराव), माधुसूर्यकांति (पो·सत्यवति) नील-तानु (~~तुम्मेटि~~ रघोत्तम रेड्डी) मनोधर्मम (भीमिडि पाटि रामगोपालम) आदि कहानियों को लेकर स्पष्ट किया गया है।

(5) नौवें दशक की हिन्दी और तेलुगु कहानी की प्रवृत्तियाँ -- तुलना :-

इस दशक की हिन्दी कहानियों में " सक्रिय कहानी " की प्रवृत्ति मिलती है। साथ-साथ जनवादी साहित्य का असर भी रहा है। सक्रिय कहानी का मूल लक्ष्य है " शोषण को जड से उखाडना "। इसके समान्तर में चलनेवाली तेलुगु की प्रवृत्तियाँ है " स्त्रीवाद " और " दलितवाद "। आन्दोलन के तौर पर " स्त्रीवाद कहानी साहित्य " जिस तरह से तेलुगु में है उस तरह हिन्दी में नहीं रहा है। लेकिन जनवादी लेखक संघ के कहानीकारों की कहानियों में दलितों पर लिखी गयी अनेक कहानियाँ हैं।

हिन्दी में जो भी आन्दोलन उभरे हैं वे सब व्यक्तियों पर या कुछ कहानियों पर निर्भर रहे हैं। ऐसा ही आन्दोलन राकेशवत्स से चलाया गया सक्रिय कहानी आन्दोलन।" किन्तु तेलुगु के आन्दोलन समाज से उत्पन्न आन्दोलन हैं। उनके

पीछे सामाजिक चेतना भी है । नौवें दशक की कहानियों में मूलतः दिखायी देनेवाली प्रवृत्ति रही है शोषण का निर्मूलन । शोषण के ही विभिन्न रूपों को लेकर हिन्दी और तेलुगु कहानी क्षेत्रों में अनेक सफल कहानियाँ आयी हैं । " स्त्रीवाद " और " दलितवाद " की जितनी चर्चा तेलुगु में हुई है उतनी चर्चा हिन्दी में नहीं ।

(अ) सृंजय " कामरेड का कोट " :-

युवा कथाकार सृंजय की कहानी " कामरेड का कोट " हंस के फरवरी, 1989 के अंक में प्रकाशित हुई । यह कहानी दलगत राजनीति की गुट बन्दियों पर सीधे-चोट करती है लेकिन इस पर आलोचकों ने साहित्येतर आरोप ही ज्यादा लगाये । सृंजय के शब्दों में — " कहानी के शिल्प पर बातचीत नहीं हुई, सिर्फ राजनीति पर बात हुई है । वह भी अपनी-अपनी राजनीतिक समझ के अनुसार पीड़ा, दुःख, मोहभंग और देश की मौजूदा राजनीति से असंतुष्टियों का यह कहानी एक ईमानदार बयान है ।"[1]

कहानी के पूर्वार्ध में कम्युनिस्ट पार्टी के ईमानदार कार्यकर्ता कमलकान्त उपाध्याय की पारिवारिक समस्या, गरीबी आदि के साथ-साथ गाँव से सम्बन्धित किवदंतियों, स्मृतियों और किस्सों से समृद्ध इतिहास है । जिसमें उस पीपल का भी किस्सा है जो किसी मामले में अदालत में गवाही भी दे चुका था । उसी पेड़ में गाँव के चार खेत-मजदूरों को न्यूनतम मजदूरी के मामले में वहाँ के जमीन्दार जगतनारायण सिंह के द्वारा उलटा लटका कर मार डाला गया था । इसी विषय को लेकर पार्टी की बैठक में बहस करने के लिए कमलाकांत वहाँ जा रहा है ।

---

1. शिरीष कथा { जनवरी, 1990 } में प्रकाशित कथाकार सृंजय से अमरेन्द्र की बातचीत - पृ. 23.

कमलाकान्त के मन में मारे गये मजदूरों के बिम्ब तैरने लगते हैं । गाँववालों की जीवन दशा और ग्रामीण परिवेश के { कहीं-कहीं अप्रासंगिक } विवरणों की कहानी को " लम्बी कहानी " बनाने में योगदान रहा है ।

कमलाकांत संघर्ष को शान्तिपूर्ण ढंग से चलाना चाहते थे । पर शोषक के रुख और बदलती हुई परिस्थितियों को देखते हुए वे हिंसक कार्यवाही अपनाना चाहते हैं । इस स्थिति को उन्होंने बड़ी गंभीरता और सूक्ष्मता से सोचा है । वे पार्टी सदस्यों को स्पष्ट करते हुए कहता है कि " आपको पता होगा ", बिहार में उत्पीड़न अपने निकृष्ट रुप में है । अतः इन सामंती उत्पीडनों, प्रहारों को रोकने के लिए उसे उसी भाषा में रिफ्लेक्ट करना एक तरह से पीड़ित लोगों की बाध्यता बनती जा रही है ।"[1]

भीष्मंगय्या " दुन्ना " { भैंसा } :-

भीष्मंगय्या की कहानियों में " भैंसा " प्रसिद्ध कहानी है । इसमें एक गाँव में पटवारी के दुराचार, अत्याचारों का चित्रण है । उनका निर्णय ही गाँव का निर्णय है । ऐसे ही निर्णयों में एक है " भैंसा को पालना ।" उस भैंसा को कुछ करने से देवी माता को गुस्सा आयेगा ऐसा विश्वास गाँव में फैलाया गया । इसीलिए गाँव के लोगों में पटवारी को क्या उनके भैंसा को भी कुछ करने की हिम्मत नहीं रही ।

पटवारी प्रथा रद्द होने के बाद " करणम " हैकोर्ट में मुकद्दमा दाखिल करने के लिए जाता है । उस वक्त गाँव को आर,आय आता है और करणम का घर जाँच करता है । तब करणम का घर इस प्रकार है .... ।

---

1. कामरेड का कोट - सृंजय { फरवरी - 1989 हंस } पृ. 79.

" दो एकड़ की जमीन में बनायी गयी वह महल, चमक-दमक से बनाये गये दर्वाजा ﴾ किवाड़ ﴿ नवाब के घर जैसा है । रंगाराव जी को मिलने वाला वेतन सैकड़ों में है तो हजारों कमानेवाले आदमी की तरह है उसका घर । उस घर को देखकर, उसकी आमदनी को पहचान सकते हैं । .... बातों से पता चलता है उस घर का निर्माण लगातार तीन साल हुआ था । उस गाँव के किसान काट कर लाई हुई बबूल के पेड़ों, ईंटों की भट्टियों को जला दिये । वही नहीं, जागिर जमीनों को हरिजनों को दिये तो उन जमीनों में जो भी इमली और आम के बड़े-बड़े पेड़ हैं उनको काटकर चूना जलाया गया । बिना मजदूरी से ही वर्णों के अनुसार काम करके उस भवन ﴾ महल ﴿ का निर्माण किया गया ।"

आर.ऐ ﴾R.I ﴿ फैलों को देखने से वे इस प्रकार है -- " एक का जमीन दूसरा खरीदने की तरह कुछ दस्तावेज, नकद पुस्तक को देखें तो यो भी रुपया वसूल किया गया उस रकम को बैंक जमा करने का चलान दिखायी नहीं दी ... रजाकारों के बाद, पाकिस्तान जाने के बाद उनके जमीन कोई दूसरा खरीदा गया दस्तावेज है । अकाल में सरकार से मंजूर की गयी घर, कभी भी नहीं बाँटा गया । गाँववालों के कथन से पता चलता है कि ऐसा घास कभी भी गाँव को नहीं आया । लेकिन कागजों में अंगूठा छाप ऐसे ही कि घास आया है और बाँटा भी गया है । ... अनेक किसानों के दस्तावेज करणम के पास ही है ।

पेंटय्या के कथन से स्पष्ट होता है कि गाँव में छोटी मोटी गलतियाँ करने से ही बहुत बड़ा सजा दिया जाता है तो पूरे गाँव को लूटनेवाले पटवार को कौनसी सजा देना है ? गाँववासियों को गलतियाँ तुलना करें तो यह कितना बड़ा धोखा है या गलती है । इसको ﴾करणम को ﴿ इलाज करना बहुत जरूरी है । कब तक बचकर निकलेगा ? " करणम " को चर्बी या मस्ती, आर.ऐ. से दबाया गया तो भैंसा की मस्ती को जानवरों का इलाज करनेवाले डाक्टरों से किया गया । इस कहानी में करणम से भैंसा की तुलना एक विशेषता है ।

(31) सृंजय "कामरेड का कोट" - भैसा (भीखमंगपुरा) :-

इन दोनों कहानियों में गाँव का मुखिया, चाहे वह पटवारी हो, या जमीन्दार हो या ऐसे ही कोई भी हो। ऐसे शोषकों से गाँववासियों को जो शोषण होता है उसका ही नग्न चित्र खींचा गया हैं। "कामरेड का कोट" में जमीन्दार जगतनारायण सिंह ने अपने लिए काँटे बने हुए चार मजदूरों को एक पेड में उल्टा लटकाकर मार दिया। यही घटना जमीन्दारों के अत्याचारों का ही एक प्रतीक है। "भैसा" में तो करण्म और आगे बढ़कर एक भैसा को पालता है और गाँववालों को धमकी भी देता है कि वह भैसा देवता है उसे कुछ नहीं करना और भैसा जो भी करेगा उसे मान लेना है। फलत: गाँव के लिए करण्म ही नहीं, उससे पालनेवाली भैसा भी गाँववालों को बुरी तरह से लूटने लगता हैं। भैसा में तो समस्याओं को और करण्म के शोषण को स्पष्ट करना ही नहीं बल्कि परिष्कार भी दिखाने की कोशिश है। आर॰आय॰साब करण्म की अनुपस्थिति में आकर, करण्म का घर जाँच करने से पता चलता है कि उसने (करण्म) गाँववासियों को किस प्रकार लूटा है। गाँववालों का अज्ञान और अशिक्षा का फायदा उठाया। पशु डाक्टरों से "भैसा" का गर्व दबाया जाता है। करण्म और भैसा के माध्यम से गाँवों में होनेवाला शोषण को व्यक्त करने में और शोषण को अंत करने की कोशिश में कहानीकार पूर्णत: सफल रहे हैं। "करौंदे का पेड" में कमलाकान्त शोषकों से शुरू में अहिंसात्मक दृष्टिकोण से ही संघर्ष करता है और असफल भी हो जाता है। उसे लगता है कि (शोषकों को) जमीन्दार जैसे लोगों को भगाने के लिए हिंसात्मक दृष्टिकोण को अपनाना जरूरी है।

दोनों कहानियों में एक अन्तर देख सकते हैं — "भैसा" में आर॰आय से समस्याओं का परिष्कार दिखाकर सरकार की महत्ता को बढ़ाने की कोशिश है। तो "करौंदे के पेड" में सरकार से या और किसी से भी समस्या का समाधान नहीं मिलेगा। सिर्फ हिंसात्मक दृष्टिकोण से ही शोषक वर्ग को भगा सकते है जैसा परिष्कार मिलता है।

1) उदय प्रकाश " टेपचू " :-

" टेपचू " कहानी को पढ़ते ही पता चल जाता है कि आजादी के बाद के चालीसेक सालों से अपने देश में आमआदमी की स्थिति में जो बदलाव आने लगा वह बेहतरी की नहीं बदतरी की दिशा में है। आम आदमी की समस्याएँ इस बीच कम नहीं हुई बल्कि और जटिल हुई। कहानी साहित्य में भी साधारण व्यक्ति के प्रति व्यवस्था का, शोषक के बरताव, दमन, उत्पीडन आदि उसी प्रकार जारी है जैसे पहले थे। लेकिन एक नयी बात इधर की कहानियों में यह हुई कि आज आमआदमी में संघर्ष चेतना पहले से कहीं ज्यादा बढ़ी है। इसका एक प्रभावशाली चित्रीकरण उदय प्रकाश की कहानी " टेपचू " में हुआ है।

" टेपचू " के नायक को हम बचपन से लेकर हमेशा जटिल समस्याओं से घिरा हुआ देखते हैं वह सदैव संघर्षशील रहता है। " टेपचू " जैसा आम आदमी विपरीत परिस्थितियों के कारण शोषित दमित, कुण्ठित, बेसहारा और निस्सहाय प्रतीत होता है। लेकिन उसके भीतर संघर्ष का दृढ़ संकल्प उत्पन्न होता है जो मिटाने पर भी नहीं मिटता। वैसे शोषित जीवन की समस्याओं से जूझते हुए हम तीन दशकों की कहानियों (जैसे अमरकान्त की जिन्दगी और जोंक का रजुआ, शेखर जोशी की कोसी का घटवार का गुसाई आदि) में भी देख सकते हैं। लेकिन जीवन को आगे बढानेवाली वह आग वहाँ नहीं दिखाई देती। वहाँ एक प्रकार की स्थितियों के प्रति स्वीकार भाव है। आज की कहानियों में आरोपित स्थितियों को इनकार करने का साहस और उनसे निरंतर संघर्ष करने का संकल्प भी है।

" टेपचू " कहानी आमआदमी की पशुप्राय जीवन को दर्शाता है। " टेपचू " को गाँव में सभी के द्वारा ठुकराया जाता है। उसको हर छोटी-बडी बात को लेकर गाँव वाले उसे बुरी तरह पिटाई करते है। " टेपचू " पंडित के घर चरवाह के काम पर जाता है पर पंडित के द्वारा उसको बुरी तरह शोषण होता है।

टेपचू अपने शोषण की स्थिति को समझते हुए विद्रोह करता रहता है, जिसके फलस्वरूप उसे काम से निकाल दिया जाता है। गाँव के मुखिया किसनपाल सिंह गुंडों से बुरी तरह पिटवाता फिर उसे मरा हुआ समझकर नदी में फिकवा देता है। इस हद से भी सही सलामत बचकर " टेपचू " मुखिया की " पआल " में आग लगाकर शहर भाग जाता है। इस प्रकार गाँव में सामंती और जमीन्दारी वर्ग द्वारा शोषित होनेवाला टेपचू अपने भीतर विद्रोह करनेवाली एक चेतना रखता है।

लेकिन " टेपचू " गाँव के जमीन्दार से विद्रोह करके शहर में आ जाने से " टेपचू " शोषण से मुक्त नहीं हो पाता है। " टेपचू " के माध्यम से क्या गाँव। क्या शहर। हर जगह के सर्वहारा के शोषण का अंकन किया गया है। गाँव से शहर आने पर शोषण तो जैसा का तैसा विद्यमान है, मात्र स्थिति और परिवेश में बदलाव है। पूँजीवादी अर्थ व्यवस्था का कुप्रभाव हर स्थान पर देखा जा सकता है। लेकिन " टेपचू " सारी समस्याओं, मुसीबतों, जान के खतरोंवाली घटनाओं के हर दम बच जाता है और सभी लोगों के मन में यह शक होता है कि " टेपचू " कभी मरेगा नहीं - साला जिन्न है।"[1]

टेपचू कहानी पढ़ते समय एक प्रकार की रोचकता और उत्सुकता पाठक पाता है। यह कहानीकार के अभिव्यंजना ढंग की विशेषता है। टेपचू को प्रतीक के रूप में लेकर कहानीकार ने " सर्वहारा " वर्ग की अमरता और विराटता का चित्रण किया है जब वह कहता है -- " आपको अब भी विश्वास न होता हो तो जहाँ जब जिस वक्त आप चाहें मैं आपको " टेपचू " से मिला सकता हूँ।"

---

1. टेपचू - उदय प्रकाश (ग्रामजीवन की कहानियाँ) सं. गिरिराजशरण - पृ. 31

2. - वही -

इन कहानियों से यह स्पष्ट होता है कि हम मजदूर वर्ग की स्थापना को हर स्थान पर देख सकते हैं । जहाँ भी यह शोषण तंत्र जीवित है वहाँ देवीसिंह और टेपचू मौजूद रहते हैं ।

" टेपचू " बार-बार मौत की गुफाओं में जाकर ही जिन्दा वापस आता है और खुद आगे बढ़ता हुआ संघर्ष चेतना को भी बढ़ाता है । कम्पनी का मैनेजमेन्ट जब काम से मजदूरों को निष्कासित कर देता है तो पुलिस दारोगा उसके बाद टेपचू को गिरफ्तार करता है । " टेपचू " को बहुत बुरी तरह मारपीट कर जीप के पीछे रस्सी से बाँधकर घसीट ले जाता है । आखिर में उसे जंगल में गोली से मार डालने की घटना पुलिस व्यवस्था के अमानवीय कार्य का पर्दाफाश करती है । बेकसूर आदमी को " एनकाउण्टर " के नाम पर मार डालना व्यवस्था के नाम पर कलंक है पर यह एक कड़वा सच है ।

कहानीकार ने " सर्वहारा वर्ग " की शोषण के कुचक्र से निरन्तर संघर्षरत होने की भावना को प्रमुखता देते हुए उजागर करने का प्रयत्न किया है और टेपचू की फैंटसी गढ़ी है । एक बहादुर के मर जाने से यह जीवन संघर्ष रुकता नहीं बल्कि और भी तीव्र होता है । अतः टेपचू का अंत सतही अविश्वसनीय और हास्यास्पद हो गया है । फिर भी कुल मिलाकर इस कहानी में " आमआदमी " के संघर्ष की कई विडंबनाओं को उद्घाटित किया गया और जीवन की समस्त प्रतिकूलताओं से संघर्ष करते हुए उसे आगे बढ़ने का सन्देश मिलता है ।

तोर्पु (भूषणम्) :-

भूषणम् को कहानियों में " तोर्पु " एक महत्वपूर्ण और चर्चित कहानी है । इस कहानी का मूल पात्र है सीत्तगाडु और सरसा । सीत्तगाडु एक ऐसा युवक है जिसको कोई रिश्तेदार ही नहीं है और वह जमीन्दारों के पास बेगार करना नहीं चाहता । वह हर दिन मजदूरी करके अपना पेट का पोषण करता है । हर समय उसको काम मिलता है । उसमें एक प्रमुख विशेषता भी है कि वह चार-पाँच आदमियों का काम अकेला ही कर सकता है । काम चाहे जैसा भी हो उसको पूरा कर देता है डरता नहीं । गाँव के बड़े-बड़े किसान से लेकर जमीन्दार तक उसको अपने पास बेगार रखना चाहते हैं लेकिन कहीं भी बेगार करने के लिए सीत्तगाडु तय्यार नहीं होता ।

एक बार वह बिजली का खंभा चढ़कर तार को छूने से गिर जाता है । लगातार तीन महीनों तक पलंग में ही रहना पड़ता है । तब उसको चाहनेवाली सरस्वती ही उसकी सेवा करके बचाती है । लेकिन पापिनायुडु से उधार लेना पड़ता है । " उधार " के चक्कर में फँसकर पापिनायुडु के पास बेगार के रूप में रहना पड़ता है । इस कहानी का और एक प्रमुख पात्र है " सरसा " । उसको भी कोई रिश्तेदार नहीं है । वह बहुत दिनों से सीत्तगाडु को चाहती है । उसकी देखभाल भी करती है । बाद में दोनों की शादी भी हो जाती है । सरसा संघ का सदस्य पहले ही बन चुकी थी ।

पापिनायुडु सीत्तगाडु से सरसा संघ की सदस्य बनने की बात पर कहता है -- " .. तुमको मालूम नहीं है कि इस संघ के आदमी हमेशा झूठ बोलते हैं । जिनके पास बहुत पैसा है उनसे लूटकर गरीबों को देने के लिए कहते हैं । ऐसे ही पत्नी को भी, जिनके पास पत्नी नहीं उनको देने के लिए कहते हैं । एक दिन यहाँ, एक दिन वहाँ सोने के लिए कहते हैं ... "

उपर्युक्त कथन से प्रभावित होकर सरसा जो बोलना चाहती है उसे नहीं सुनता और कुछ बोलने नहीं देता । लेकिन बाद में सत्तिगाडु भी संघ का सदस्य बन जाता है ।

" लच्छी " की चोरी के इल्जाम में सत्तिगाडु की पत्नी को लेकर बाँद लेते है । सत्तिगाडु जब यह जान लेता है तो आगबबुल्ला हो जाता है । लेकिन पापिनायुडु और गाँव के अन्य सदस्य जो अमीर है उनसे फैसला भी हो जाता है । पापिनायुडु का फैसला ही उनका ही फैसला है । पापिनायुडु कहता है -- " ... सिर्फ मुझे ही नही, इस गाँव को ही नहीं, इस देश को भी नाश कर देता है । सिर फोडनेवालों को छोडने से देश जल जाती है । इसलिए उसे पुलीस को सौंप देता हूँ । ... " तब सत्तिगाडु पापिनायुडु और वहाँ के लोगों से कहता है -- " मेढ़कों पर साँपो का, बकरियों पर बाघों का, शेरो का, चूहो पर बिल्लियों का फैसला नही होना चाहिए । तुम्हारा फैसला तुम्हारे पास ही रख लो । मैं अभी इसी वक्त जा रहा हूँ मुझे रोकने का धीरज किसी को है तो आये । ..... पहले पहल जो भी मरना चाहते है वे ही पहले आइये । एक ही मार से खून बहा दूँगा । "

(आ) उदय प्रकाश " टेपचू " -- भूषणम " तोपुं " :-

दोनो कहानियों में शोषक और शोषित वर्गों के संघर्ष का चित्र है । गाँवों में मुखिया वर्ग, धनिक या अमीर वर्ग, गरीबों की जिन्दगी से किस प्रकार खेलते है और उनका श्रम किस प्रकार लूटते हैं आदि का चित्रण इन कहानियों में मिलता है । दूसरों के पास बेगार करने से क्या होता है, ऐसा सोचकर ही कहानी का मूलपात्र सत्तिगाडु (तोपुं) अपनी मन मर्जी से चलता है । किसी के पास बेगार करने के लिए तय्यार नही होता । लेकिन " टेपचू " का नायक, सदैव संघर्षशील है एक तरह से वह बचपन से ही गिरा हुआ है । अनिवार्यकारणों से " सत्तिगाडु "

को बेगार करना पड़ता है " एक अमीर किसान के पास । " कहानियों में दोनों के नायक ऐसे है कि " सौरुलगाडु " को अपनाने के लिए पूरा गाँव तय्यार है क्योंकि वह चार पहलवानों का काम खुद ही कर सकता है साथ-साथ बहुत नेक और ईमानदार है । " टेपचू " के नायक,हर जगह उसे हटाया जाता है और भगाया जाता है । सिर्फ गाँव में ही नही शहर में भी । " टेपचू " के नायक को एक तरह से अमरकान्त की जिन्दगी और जोंक के " रजुआ " से तुलना कर सकते हैं । दोनों पात्रों में यह अन्तर भी देख सकते है कि टेपचू के नायक " शोषण " को जल्दी ही पहचानता है और हर जगह, जहाँ भी शोषण होता है वहाँ विद्रोह करने लगता है । लेकिन " सौरुलगाडु " अपने मालिक के प्रति विद्रोह करने के लिए अंत तक तय्यार नही होता । लेकिन अंत में अपनी पत्नी सरस्वती की बातों से समझकर यूनियन का सदस्य बन जाता है और अपने ही मालिक के प्रति विद्रोह करने के लिए तय्यार हो जाता है । कहानी के दोनों पात्र " सर्वहारा " वर्ग के ही प्रतीक है । " टेपचू " का नायक हर जगह विद्रोह करता है और असफल होता रहता है लेकिन " सौरुलगाडु " अपने मालिक " पापिनीडु " को ऐसी धमकी देता है कि हिम्मत है तो सामने आओ । " तीर्पु " की विशेषता है कि गरीबों पर या शोषितों पर शोषकों का फैसला (तीर्पु) कैसा चलेगा ? शोषक, शोषितों पर फैसला नही कर सकते । कहानीकार का फैसला यह हो सकता है " शोषितों पर फैसला शोषित ही करेंगे ।"

(ड) पंकजबिष्ट " बच्चे गवाह नहीं हो सकते " :-

नौवे दशक के कहानीकारों में पंकजबिष्ट बहुचर्चित रहे और अपनी रचनाओं में जीवन की वास्तविकता को प्रस्तुत करने में सक्षम हुए हैं । अपनी कहानियों में उन्होंने अधिकांशतः मध्यवर्ग के लोग समाज में अपने लिए एक अलग स्थान और अपनी अलग अस्मिता बचाये रखने की तरह-तरह की कोशिशें करते है वे किसी तरह से भी समाज में अपने स्तर पर टिकाने का प्रयास करते रहते हैं । मध्यवर्ग में

प्रमुखत: बुद्धिजीवी वर्ग से पंकजबिष्ट के पात्र आते हैं और उनकी अपनी विशेषताएँ होती है। अपनी जिन्दगी की दूसरों से तुलना करते हुए भ्रामक आडम्बरों में फँसकर उन्हें अन्त में विवश जिन्दगी जीनी पड़ती है। मध्यवर्ग में व्याप्त व्यापक दिखावे की प्रवृत्ति, अवसरवादिता, स्वार्थपरता आदि को पंकजबिष्ट अपने ध्यान में रखते है। शहरी मध्यवर्गीय स्थितियों को पंकजबिष्ट अपनी रचनाओं में प्रभावोत्पादकता से प्रस्तुत करते हैं।

पंकजबिष्ट " बच्चे गवाह नहीं हो सकते " कहानी में मूलत: नगर सभ्यता चाल-चलन पर टिप्पणी करते हैं इस वर्ग की अन्तहीन इच्छाएँ होती है और इच्छा सम्पूर्ति नहीं होने पर मध्यमार्ग में ही लाचार होकर रह जाना पड़ता है।

कहानी में कॉलोनी के बच्चे के द्वारा 102 नम्बर क्वार्टर की खिड़की का शीशा तोड़ देने से आस-पास हलचल मच जाती है। 102 नम्बर क्वार्टरवालों का तर्क है " चलो खिड़की का काँच टूटा, अगर कोई और चीज टूटजाती तो ? "[1] इस कथन में तो ध्यान देना आवश्यक है कि जिसमें संवेदना भरित मन:स्थिति को बताया गया है। इस मामले को जल्दी ही रफा-दफा करवा दिया जाता है। क्योंकि सबको उस दिन (रविवार) दूरदर्शन में प्रसारित होनेवाली फिल्म को देखनी पड़ी थी। आधुनिकता की प्रक्रिया के फलस्वरूप समाज में इलैक्ट्रानिक्स का युग आरम्भ हुआ है। दूरदर्शन (टी॰वी॰) फ्रिज, स्टीलअलमारी आदि वस्तुओं को घर में सजाना सामाजिक स्तर की निशानी है। कथानायक बिशन दत्त की जिन्दगी का दस्तावेज ही बच्चे गवाह नहीं हो सकते " है। बिशन किस्तों में पैसे लेनेवाली वाणिज्यक प्रणाली में " दूरदर्शन " खरीदकर उसके लिए बिना नागा माहवार सौ रुपया जमा करने की जीतोड़ कोशिश करता है। प्राविडेंटफण्ड के रूपयों से किस्ते जमा करने के पीछे बिशनजी जान से लगा हुआ है।

1· बच्चे गवाह नहीं हो सकते - पंकजबिष्ट - पृ· 45·

यहाँ तक कि वह अपनी " दुराग्रह " की बीमारी की भी परवाह नहीं करता । दूरदर्शन के विज्ञापनों को देखते हुए एक शान्तिपूर्ण संतोषजनक स्थिति में प्रोग्राम का मजा लेते हुए अपनी जान लेवा बीमारी से बचने की उम्मीद करता है । इसी समय वह किसी की गोली का शिकार होता है । विज्ञापन के साथ अंतिम घटना को बड़े ही मार्मिक ढंग से जोड़ दिया गया है । टी॰वी॰ देखते हुए केवल पिता और पुत्र ही उस कमरे में थे । गोली चलने के वक्त उसका बेटा रघुवा था जो स्वयं टेलिविजन के विज्ञापनों में तल्लीन था । पाप की मृत्यु को देखकर रघुवा की सारी इन्द्रियाँ स्तब्ध हो जाती है ।

इस कहानी में ऊपरी तौर से नजर डाले तो नगर के मध्यवर्गीय जीवन के संघर्ष को चित्रित किया गया है । अपने जीवन की गाड़ी को साफ सुथरे रास्ते पर चलाने के लिए आम आदमी के द्वारा जो संघर्ष किये जा रहे हैं उसे ही कहानी प्रस्तुत करती है । मृत्यु के समय बच्चे की उपस्थिति भी कानूनी तौर पर गवाह की हैसियत मिलने का ख्याल ही नही उठता पर सच तो यह है कि बच्चा इस व्यवस्था का नादान शिकार भी है और गवाह भी । कहानीकार ने आज के मध्यवर्गीय जीवन की मरीचिका के पीछे आमआदमी की भागदौड़ को प्रस्तुत किया है ।

<u>मीदे मोदे समस्त देशम (यह पूरा देश आपका ही है) :-</u>

यह वेंकटेश्वरनाथ रेड्डी की एक चर्चित कहानी है । मेहनत का कीमत क्या है ? इस कहानी में पता चलता है । इस कहानी में चन्द्रमौली एक प्रमुख पात्र है, जो एक अच्छा इन्सान है । लेकिन उसकी पत्नी ऐसी नही है । इस कहानी में एक भिक्षुक का बच्चा ही कहानी का मूल पात्र है । एक बार भीख माँगते हुए चन्द्रमौली के घर को भी आता है तब चन्द्रमौली की पत्नी उसे बेगार कराती है

लेकिन उस बच्चे को मेहनत का फल नही देती । बहुत कम पैसे देकर बेजती है । तब से वह बच्चा उस घर को भीख मांगने के लिए भी नही आता । लेकिन बाद में चन्द्रमौली को यह सब मालूम हो जाता है । उस बच्चे को बुलाकर पैसा देकर बेजता है । आजकल समाज में अनेक घरों में ऐसा ही हो रहा है । अनेक मजदूरों को मेहनत का फल नही मिल रहा है । इसका एक वास्तविक रूप इस कहानी में है ।

कहानी में उषा, अपने पति से जो भी कहना चाहती है वह इस प्रकार कहने लगी -- " सुबह आप जाते जाते दस पैसे देने से ही वह बच्चा पूरा काम कर दिया । बेचारा कही गाँव से आया होगा । लगभग तीस टोकरियों को मिट्टी और खाद भरकर लाया है और अभी चला गया है । .... तब पतिदेव कहता है - उस बच्चे से इतना काम करवाना तुम्हें अन्याय नही लगा ? उषा सोच रही थी पति, उसे प्रशंसा करेगा । लेकिन ऐसा पूछने से उषा को अच्छा नही लगा । चोरों की तरह वह भी कहने लगी -- " तो क्या हुआ । बिना अन्याय से ही संसार चल रही है ?

उपर्युक्त बातचीत से मानव मन के विभिन्न रूप स्पष्ट हो जाते हैं ।

" भूख " (आकिल) :-

कोलकलूरि इनाक की कहानियों में " भूख " भी एक चर्चित कहानी है । देश में अनेकों भूखे मर रहे हैं । उसका मूल कारण क्या है ? ऐसा क्यों हो रहा है । उसका नग्न चित्रण एक मासूम लडकी की जिन्दगी से खेलनेवाली " भूख " का चित्रण है ।

---

1. वेलुविश्वनाथ रेड्डी कथलु - वेलुविश्वनाथ रेड्डी - पृ.

" अल्गा " नामक एक बच्ची " अपनी भूख " माता और पिताओं से और अन्य किसी से न मिटने के कारण वह खुद ही भूख मिटाने की कोशिश में लारी के नीचे पड़ती है । लेकिन सौभाग्यवश वह बच जाती है । कुछ दिन तक, लारी का मालिक दयालु होने की वजह से, उस बच्ची का भूख मिट जाता है । उसके बाद कहानी फिर शुरू हो जाती है । भूख मिटाने के लिए क्या करना है ? इसके बारे में उस मासूम बच्ची को वैसा पता चलेगा । वह ऐसा सोचती है " लारी के मालिक ने मुझे बहुत दिन खिलाया और मेरा पेट का भूख मिटाया । इसीलिए फिर लारी के नीचे पड़े तो फिर भूख मिटायेगा । ऐसा सोचकर वह लारी के नीचे गिरती है लेकिन उसका भूख मिटता नहीं । उसका प्राण ही जाता है । पाठकों का दिल पिघलानेवाली कहानी है यह " भूख " ।

" भूख " कहानी की कुछ महत्वपूर्ण पंक्तियाँ इस प्रकार है -- " पहले कभी भी भूख लगी तो, सुबह होने से भूख मिटजायेगा ऐसी आशा होने से हमेशा कब सुबह होगा ऐसा सोचते हुए इंतजार करना " चिन्नी " के लिए खुशी की ही बात है परसों सुबह हो गयी लेकिन भूख नहीं मिटी । कल सुबह हो गयी थी फिर भी भूख नहीं मिटी । आज भी सुबह हो गयी । बहुत भूख लग रही है और एक सुबह आयेगी । ऐसा सोचने से चिन्नी के लिए आनन्द से भी ज्यादा दु:ख ही आ रही है । " भूख " के लिए इतना विजय " चिन्नी " के लिए अच्छा नहीं है .... चिन्नी देखने लगी । अमृत जैसी लारी । भूख मिटानेवाली लारी । बचकर निकलना चिन्नी के लिए तो बहुत ही दु:ख की बात है । लारी जिदर से जाने लगी उदर से चिन्नी भी जाने लगी । सामने दीवार की तरह खड़े रही । "[1]

---

1. अरभाँव [क॰स॰] कोलकलूरि इनाक - पृ॰ 55॰

(इ) पंकजबिष्ट " बच्चे गवाह नहो हो सकते " - मोदे मोदे समस्त देशम (वेट्टविश्वनाथ रेड्डो) भूख (कोलकलूरिइनाक) :-

इन कहानियों में आम बच्चों को मना स्थितियों को विभिन्न कोणों में उभारा गया है । कहानियों में समकालोन वातावरण को चित्रण करने में, मध्यवर्ग को विभिन्न मन: स्थितियों को पहचानने में तोनो कहानोकार सफल रहे हैं । " बच्चे गवाह नहो हो सकते " में " गवाह " को " मोदे-मोदे समस्त देशम ", " भूख " कहानियों में " भूख " और " मेहनत का लूट आदि को प्रमुख स्थान मिला है । अपने हो सामने पिताजो का खून होना देखकर भी कुछ नहो कर पाता । अदालत में गवाह बनना चाहे तो भी उसे उम्र को कमो है । इसोलिए कानूनो तौर पर भी गवाह को हैसियत उसे नहो मिल सकता । " मोदे-मोदे समस्त देशम " में, भीख माँगनेवाला बच्चा का श्रम किस प्रकार लूटा जाता है उसका हो स्पष्ट चित्र है । इन दोनों कहानियों में आज के मध्यवर्गीय जोवन को मरोचिका के पोछे आमआदमो को भागदौड है । शहर और गाँव में रहनेवाले मध्यवर्ग को विभिन्न मन: स्थितियों को स्पष्ट करने में दोनों कहानोकार बहुत समर्थ रहे हैं । कोलकलूरि इनाक को " भूख " कहानो में निम्न वर्ग को एक बच्चो " जो भूखी है " उसका चित्र है । घरवाले, उस बच्ची की भूख मिटाने में असमर्थ रहे हैं । घर में भूख रह रहकर, खुद हो अपना भूख मिटाने को कोशिश में लग जातो है । एक बार वह लारो के टक्कर से बच जातो है । लारो का ड्राइवर उसे कुछ दिन तक अपने पास रख लेता है फलत: उस बच्चो की भूख भी मिट जाता है । बाद में वह लारी ड्राइवर उसे छोडकर चला जाता है । अपनी भूख मिटाने को कोशिश में वह बच्चो दूसरो बार सफल नहो होतो और उसे अपने प्राणों को भी खोना पडता है । " मोदे मोदे समस्त देशम" - में " भूख " को आंशिक तौर पर ही लिया गया है । इस कहानो में भीख माँगनेवाला बच्चा को दस पैसा, देकर उसका श्रम को लूटा जाता है । वह भी एक मध्यवर्ग परिवार में ।

तोनो कहानियों में बच्चों को विभिन्न मन: स्थितियों का चित्र उभारा गया है ।

(ई) " शैवाल " - धूप बन्ध :-

नौवें दशक के हिन्दी कहानी क्षेत्र में बिहार के अनेक युवा कहानीकारों का आगमन हुआ, जिन्होंने कहानी को नये सिर से प्रतिष्ठा की। यह पीढ़ी अपनी कहानियों में कथारस को बरकरार रखते हुए समसामयिक सामाजिक परिस्थितियों को यथार्थ रूप से चित्रित करने में सक्षम थी। इन युवा कहानीकारों की रचनाओं में वास्तविकता उभरी उतरी है। जीवन की विसंगति, कुण्ठा, संत्रास आदि भावों को संवेदना के स्तर पर बड़े ही मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया गया। ऐसे कहानीकारों में शैवाल भी उल्लेखनीय हस्ताक्षर है। शैवाल अपनी कहानियों में सामाजिक अंध विश्वासों, कुरीतियों, जाति-प्रथा, शोषण आदि विषयों को उठाया और उनका मनोवैज्ञानिक-सामाजिशास्त्री विवेचन किया है। जिन्दगी के सारे उत्पीड़नों को निरंतर झेलते हुए आम आदमी की जीवन चर्चा का दस्तावेज ही " धूप बन्ध " कहानी है। कहानी में विभिन्न दृष्टियों से मोह भंग की स्थिति को देख सकते हैं। मूल रूप से यह कहानी नायिका (कृष्णा पसरीचा) और नायक " मैं " की मानसिक विडंबनाओं और द्वन्द्वों को ही स्पष्ट करती है। नायक " मैं " पसरीचा को बचपन से ही बहुत जानता और समझता है और चाहता भी है पर पसरीचा के पिता के द्वारा इनकार किये जाने से वह निराश होता है। लेकिन वही कृष्णा बड़ी होने के बाद अपने ही भाई रोहित से प्यार करने लगती है। एक विचित्र मानसिकता से पसरीचा उसे पागल कह डालती है और अपने ऊपर अत्याचार करने का झूठा आरोप उसपर लगाती है जिससे रोहित को पागल खाना जाना पड़ता है। नायक " मैं " कहानी के आरंभ से लेकर अंत तक पसरीचा के प्रति अपने सद्भावपूर्ण मित्रता बनाये रखता है। लेकिन कभी भी उसे अपने प्यार का विषय नहीं बताता है। पसरीचा के पिता की हालत खराब होने पर वह उसे पैसों की मदद भी करता है। पसरीचा अपनी माँ के द्वारा एक स्वामीजी से धोखा खाकर विदेश में रहनेवाले व्यक्ति " महेन्द्र सन्धू " से शादी कर लेती है।

विदेश के मोह में फँसी वह सन्धू के द्वारा सभी प्रकार से लुटकर फिर वापस लौटती है ।

इस कहानी में समाज में फैले हुए जाति-वैषम्य को और महानगरीय स्वार्थी प्रवृत्ति को यथार्थ के धरातल पर चित्रित किया गया है । विदेशों में घूमने, निवास करने वाली शान-शौकतों के व्यामोह में पड जाने से होनेवाली कुपरिणामों को मार्मिक ढंग से यहाँ बताया गया है । सभी पात्रों में उनकी आकांक्षाओं के अनुरूप नहीं बल्कि परिस्थितियों के तीव्र दबाव के कारण परिवर्तन आता है । व्यक्ति की विवशता को यह तथ्य तीव्रता से व्यक्त करता है । समाज में आज भी भयावह रूप से अपनी जडें फैलाई हुई है । ऊँच-नीच की भावना जो सदियों से आ रही है । इसके खिलाफ आज के आदमी को अनवरत संघर्ष करना होगा । यह समाज पैसेवालों का है । सबको यहाँ समान अधिकार नहीं । " ट्रक नाट युवर फ्ले बेबी - अंडर स्टैण्ड ।"[1]

समाज में यह वर्ग-भेद देखकर कहानीकार भी विक्षुब्ध हो उठता है । कहानी में बस्ति में आग लगने की घटना को एक प्रतीक के रूप में दिखाया गया है । यहाँ यथा स्थितिवाले आनंदमय जीवन में लगनेवाली संघर्ष की आग अमानवीय स्तर पर आज के साम्प्रदायिक और जातिपरक विनोदों से सभ्य समाज में मूल्यों की गिरावट को दर्शाता है जिसमें जीवन की खुशियाँ झुलस रही हैं । इस कहानी में पात्रों की संवेदनात्मक मन:स्थिति को मनोवैज्ञानिकता से व्यक्त किया गया है । अपने मन में निहित भावनाओं को अन्दर ही अन्दर छिपा रखने की कोशिश की जाती है और ऐसी सूक्ष्म स्थिति को शैवाल कुशलता से चित्रित करते हैं । जिन्दगी से ऊबे अथवा संत्रास भरित मन: स्थिति में रहनेवाले पात्रों का वर्णन हम यहाँ देख सकते हैं । अपनी हैसियत से बढ़कर विलासमय जीवन की मृगतृष्णा पसरोचा के पिता में देख सकते हैं । उसकी कामना थी कि उसकी बेटी ऊँच जीवन स्तर में जाएगी वह कहता है --

---

1. दृश्यपथ बन्धं - शैवाल - पृ. 140.

"मेरी बेटी डाक्टर बनेगी -- बड़े आदमी से शादी करेगी ... फॉरेन में सैटिल करेगी ।"[1] इस कथन से यह पता चल रहा है कि पूंजीवादी व्यवस्था के परिणामस्वरूप व्यक्ति के सामाजिक संबंधों, व्यवहारों और मानसिक विचारों में पर्याप्त बदलाव आ रहा है । कहानीकार ने विघटित मूल्यों के प्रति अश्रद्धा और अनास्था अत्यन्त कलात्मक रूप से प्रकट की है । मध्यवर्ग की दिखावे की प्रवृत्ति को हम कहानी में यथार्थ के धरातल पर पाते हैं । रोहित बीमारी के समय पसरीचा की माँ घर आकर सान्त्वना की बातों के द्वारा आस्तिकता के भाव को व्यक्त करती है । भौतिकता के बावजूद व्यक्ति सबसे शक्तिशाली सत्ता के प्रति अब भी नतमस्तक है क्योंकि असहायता की स्थिति में उसका और कोई सहारा नहीं नजर आता है । पसरीचा के अन्दर एक और व्यक्ति का वास है जिसे पाठक पहचान सकता है । यद्यपि व्यक्ति किसी न किसी तरह अपने संत्रासमय जीवन से जल्द से जल्द मुक्ति पाने की कोशिश करता है । लेकिन विडम्बना यह है कि पूंजीवादी जकड़न में अपनी निस्सहाय स्थिति से वह आ नहीं पाता और विवश होकर उसे पुरानी जिन्दगी में ही वापस लौटना पड़ता है ।

शैवाल की कहानी "दुष्पथबन्ध" समसामयिक जीवन में व्यक्ति की मनो-वैज्ञानिक प्रतिक्रियाएँ समेटती है । मध्यवर्ग के विलासिता के प्रति मोह और उसकी छटपटाहट को अत्यन्त हृदयस्पर्शी ढंग से यहाँ उपस्थित किया गया है । कहानी के अंत में कृत्रिम रोशनियों की बाढ़ झिलमिला रही है । स्वप्न लीला नाटक खेला जा रहा है । जीवन की यथार्थता स्वप्नों की कृत्रिम झिलमिलाहट नहीं आग की लपटें होती है । समकालीन समाज में मध्यवर्ग के लिए विद्रूपताओं के बीच मोहभंग के सिवा कुछ भी हाथ नहीं लगता है ।

---

1. दुष्पथ बन्ध - शैवाल - पृ. 143.

कोलकलूरि इनाक " सूर्युडु तलेताडु " (सूर्य ने सिर उठाया) :-

यह श्री कोलकलूरि इनाक की कहानियों में एक चर्चित कहानी है और एक संग्रह का नाम भी है । इस कहानी में निम्न वर्ग का ही चित्रण है । निम्न वर्ग में हर एक सोचता है " अपना पुत्र शिक्षित हो जाय और एक बडा अफ्सर बनजाये । साथ-साथ व्यक्ति अपने स्तर से ऊँचेपन को चाहता है । जैसा कि एक छोटी-सी नौकरी करनेवाला, अपने पुत्र को अफ्सर के रूप में देखता है जो अफ्सर है वह अपने पुत्र को खुद से भी बडा अफ्सर बनाना चाहता है । एक सीढी से दूसरी सीडी चढ़ना आसान है । लेकिन पहली सीढ़ी से दसवी सीढ़ी चढ़ना असंभव की बात है । उसी प्रकार आदमी चाहे जो भी हो सोचते है सीमा से बाहर । ऐसे सोचनेवालों में ही एक है " रिक्शावाला " है ।

इस कहानी में एक रिक्शावाला है । रिक्शा चलाकर अपना जीविका चलाता है । वह अपने पुत्र को शिक्षित करके एक अच्छा अफ्सर बनाना चाहता है । लेकिन पुत्र का लक्ष्य अलग है । वह रिक्शा चलाना ही चाहता है । रातों में जब पिता सो जाता है तब पुत्र रिक्शा चलाना सीख लेता है । अचानक पिता को बीमारी आती है तब पुत्र रिक्शा चलाकर पैसा कमाकर पिता को इलाज कराता है । तब पिता सोचता है कि पुत्र रिक्शा चलाकर भी जी सकेगा । उसके लिए चिन्तित होना बेकार है । ऐसा सोचकर बहुत संतुष्ट हो जाता है ।

इस कहानी में कहानीकार का मूल उद्देश्य है कि आजकल के युवकों को तकनीकी शिक्षा की आवश्यकता है । सिर्फ पढ़ने से या लिखने से ही जीविका नही चला सकते । कुछ न कुछ तकनीकी काम भी सीखना है । उदाहरण के लिए " रिक्शा चलाना " सीखने की वजह से ही रिक्शावाला का पुत्र, अपने पिताजी को बचा सका और अपनी जीविका भी चला सका ।

(ई) शैवाल " दुश्चक्र " -- कोलक्लूरि इनाक " सूर्यइत्तलेत्ताडु " :-

दोनो कहानियों में पिता वर्ग या पुरानी पीढ़ी अपनी हैसियत से बढ़कर अपने बच्चों की जिन्दगियों को लेकर क्या सोचते है बदले में क्या होता है उसका ही चित्र इन दोनों कहानियों में मिलता है । दोनों कहानियों का वातावरण पूर्णत: अलग-अलग होने पर भी " हैसियत से बढ़कर विलासमय जीवन की मृगतृष्णा " की बात जो है वह अमीर से लेकर गरीब तक है । इस नेपथ्य में ही इन दोनों कहानियों को प्रस्तुत किया गया है । " दुश्चक्र " में एक पिता सोचता है कि बेटी को खूब पढ़ाउँगा, डाक्टर बनाउँगा और ऊँचे खानदान की बहू बना दूँगा । लेकिन ऐसा नही हो पाता । उसकी बेटी, उसकी माँ के द्वारा परिचित एक स्वामीजी से शादी करके पूर्णत: धोखा खाकर अपने जीवन को सर्वनाश कर लेती है । कोलक्लूरि इनाक की कहानी " सूर्यइ तलेत्ताडु " में भी एक रिक्शावाला, अपने बेटे को खूब पढ़ाकर एक अफ्सर बनाना चाहता है । इसीलिए उस बच्चे को रिक्शा को छूने का अधिकार तक नही देता । लेकिन वह बच्चा रिक्शा को छूना ही नही चलाना भी चाहता है । रिक्शा चलाने और किसी न किसी प्रकार सीखना ही उसका लक्ष्य बन जाता है । इसीलिए वह रातों में जब पूरे घरवाले सोते है तब रिक्शा को लेकर चलाना सीखता है । एक बार रिक्शावाले को बिमारी आती है, तब वह चिन्तित होने लगता है कि मेरा बच्चा कैसा जियेगा ? लेकिन उसका बेटा, रिक्शा चलाकर, कमाकर अपने पिता की बिमारी को दूर कर देता है । तब उसका पिता भी बहुत संतुष्ट हो जाता है और मानने लगता है कि मेरा बेटा रिक्शा चलकार भी जी सकेगा । " दुश्चक्र " कहानी का पिता पूर्णत: असफल है और अपनी बीमारी की इलाज के लिए दूसरों से पैसे लेना पड़ता है । " सूर्यइ तलेत्ताडु " में पिता, असफल होने पर भी सफल रहा है । अपनी बीमारी का इलाज बेटे से कमाई गयी पैसों से ही होता है । इस कहानी में " रिक्शावाला " का ही सीधा और स्पष्टचित्रण है । " दुश्चक्र " में " विदेशीमोह ", " धोखे पन के विभिन्न रूप ", विफल प्रेम का चित्र " " जाति वैषम्य " महानगरीय स्वार्थप्रवृत्ति " आदि को समकालीन परिस्थितियों के नेपथ्य से चित्रण करने में कहानीकार पूर्णत: सफल रहे है ।

(3) असगर वजाहत : " दिल्ली पहुँचना है " :-

आज की हिन्दी कहानी पर चर्चा करते हुए नामवरसिंह ने दो कहानीकारों को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना है । उनमें एक असगरवजाहत है । इस दौर के मुझे दो महत्वपूर्ण युवा कहानीकार लगे असगरवजाहत और स्वयं प्रकाश जो कहानी की सीमा को समझते है । ... अगर एक शब्द में कहूँ मार्क्सवादी अर्थ में इन दोनों लेखकों में मुझे वह प्रखर वर्ग दृष्टि, आलोचनात्मक दृष्टि मिली और इस दृष्टि से जितनी भी कहानियाँ मैंने इन दोनों की पढ़ी । मुझे ये सार्थक कहानीकार लगे और काफी संख्या में मैंने इन लोगों की कहानियाँ पढी अगर इनके आधार पर मुझे कहना हो तो विचारधारा की प्रखरता इन लेखकों में दिखायी पडती है । तो ज्ञानरंजन, काशीनाथ से तो कुछ ज्यादा नही पर उसी परम्परा में ।"[1]
" दिल्ली पहुँचना है " यह कहानीकार का तीसरा कहानी संग्रह है ।

" दिल्ली पहुँचना है " कहानी में कहानीकार चंदनपुर गाँव के वातावरण का वर्णन करता है -- " इमली, आम और नीम के बडे-बडे पेडों के नीचे दुबला गाँव सो रहा था ...... "[2] प्राकृतिक यथार्थ यहाँ बडा सक्षम होकर उभरा है । इसी के माध्यम से जोश रहित जन जीवन का यथार्थ चित्र अंकित किया गया है । इस कहानी में इन सर्वहाराओं की दिल्ली पहुँचने की कहानी है । जो कहानीकार के शब्दों में ऐसे है " खोपडा और चेहरा लाल शरीर नंगा । दु:ख और भुखमरी और जुल्म से मुरझाये चेहरों पर हँसी पहाडी झरनों की तरह फूट पडी । उन चेहरों पर हँसी कितनी अच्छी लगती है, जिन पर शताब्दियों से भय,आतंक के काँटे लगे है ।"[3]

---

1. कहानी : आज की कहानी - नामवर सिंह - पृ. 59.
2. - वही -
3. - वही - पृ. 136.

दिल्ली इस कहानी में एक नगर के नाम से ज्यादा एक प्रतीक है। विपिन बिहारी शर्मा और उनके साथी किसी भी हालत में दिल्ली पहुँचना चाहते हैं और ट्रेन में जगह नहीं है। केवल प्रथम श्रेणी के डब्बे में घुसा जा सकता है। आखिर में यही होता है और प्रथम श्रेणी के डब्बे का दरवाजा खोलने की धमकी इस प्रकार देते हैं। " देखिए हमने आप के डिब्बे का बड़ा लोहावाला दरवाजा तोड दिया है। भीतर आ गइले लेकिन का दरवाजा खोल दीजिए नहीं तो इसे तोडन में क्या टाइम लगेगा।[1] अन्दर से कोई जवाब नहीं आया। " आप अपने से खोल देंगे तो हम केवल बैठकर जायेंगे और जो हम तोडकर अन्दर आयेंगे तो आप लोगों को मारेंगे भी।"

आखिर दरवाजा खुल जाता है और सर्वहारा श्रमिक प्रथम श्रेणी में बैठ जाते हैं। उपर्युक्त दो कथनों ﴾2,1﴿ में समाजवादी यथार्थदृष्टि गोचर होता है। प्रस्तुत कहानी इसका प्रमाण है कि समाज के संघर्षमूलक यथार्थ और राजनीति के दाँव पेच से युक्त यथार्थ को पूरी शक्ति के साथ प्रस्तुत करने के कारण निःसन्देह यह कहानी नौवेदशक की चर्चित कहानी है।

श्रीमति भार्गवीराव " निश्चयम " :-

" निश्चयम " श्रीमति भार्गवीराव की प्रमुख कहानी है। इसमें दैनिक वेतन पर अपनी जिन्दगी चलानेवाली मजदूरी स्त्रियों पर अधिकार चलानेवाले ईश्वरय्या जैसे मिस्त्रियों का चित्र सामने आता है। इस कहानी में " यादम्मा " एक प्रमुख पात्र है। वह अपनी जिन्दगी गुजारने के लिए दैनिक वेतन पर काम करने के लिए तय्यार हो जाती है। लेकिन वहाँ की स्थिति ऐसी है कि मिस्त्रियों का अधिकार बहुत ही ज्यादा चलता है। उनके खिलाफ कोई भी दैनिक मजदूरी पर काम नही पा सकते। काम करना चाहे तो भी काम नही मिलता। मैंकेमन का फायदा

---

1. कहानी - आज की कहानी - नामवर सिंह - पृ. 136.

उठाकर मिस्त्रियाँ, स्त्रियों को अपने कब्जे में लेकर उनका इज्जत लूटते है इस प्रकार अपनी शारीरिक इच्छाओं को भी पूरा कर लेते हैं। लेकिन यादम्मा, ईश्वरय्या के खिलाफ लडना चाहती है। लेखिका अपना उद्देश्य एक जगह यादम्मा के विचारों में इस प्रकार स्पष्ट करती है -- " चारों मिलकर सामना करने से अन्याय को खडा कर सकते है। उनका खेल कितने दिन चलेगा ? सब को एकत्रित करना है। उसके बाद अड्डा पर रहनेवालों को भी बोलना है। ईश्वरय्या का खेल को खत्म करना हैं। ऐसा सोचते हुए बाल को बाँधकर सीधा खडी रहती है "यादम्मा"।

इस कहानी का मूल लक्ष्य रहा है "शोषण के विरुद्ध लडना।" शोषण " चाहे जैसा भी हो उसके खिलाफ लडकर विजयपाना ही कहानी का मूल लक्ष्य बना है। इस कहानी में " यादम्मा " अपने ही जैसे शोषितों को जुटाकर, शोषण के खिलाफ लडना चाहती है। कहानी लेखिका का मूल उद्देश्य रहा है कि एकता से, मिलजुल कर लडने से हर एक समस्या का समाधान मिल जायेगा।

(उ) अजहरवजाहित " दिल्ली पहुँचना है " -- भार्गवी राव " निश्चयम " :-

दोनों कहानियों में, समस्याओं का परिष्कार संघर्ष करने से या धमकी देने से ही होता है जैसा चित्र खींचा गया है। " दिल्ली पहुँचना है " में गाँव के वातावरण को यथार्थ के धरातल पर उतारा गया है। इस कहानी में विपिन बिहारी शर्मा और उनके अन्य मित्र, जो " सर्वहारा " वर्ग के अन्तरगत आते हैं सब मिलकर दिल्ली जाने का फैसला कर लेते हैं। उनकेलिए दिल्ली जाना बहुत जरूरी है। लेकिन, ट्रेन में जगह न होने के कारण क्या करना है पहले उन्हें समझ में नहीं आता। बाद में उन्हें लगता है कि प्रथम श्रेणी के डिब्बे में बैठ कर जाने की

---

1. दलित कथलु - भार्गवीराव (दलित कहानियाँ) " निश्चयम " से

संभावना है । इसीलिए अपनी ओर से पूर्णतः कोशिश करते है । असफल होने के बाद ही धमकी देकर सफल हो जाते है । भार्गवीराव की " निश्चयम " कहानी में भी यादम्मा को दलालों से कैसा संघर्ष करना है ? समझ में नहीं आता । वह अपना शील खोने के लिए तय्यार नहीं थी । इसीलिए वह ऐसा निर्णय लेने के लिए तय्यार हो जाती है । जिससे स्पष्ट हो जाता है कि अन्य शोषित मजदूरी स्त्रियों को भी इकट्टा करके लडना जरूरी समझ लेती है ।

उपर्युक्त कहानियों में दोनों कहानीकार, यह स्पष्ट करना चाहते है कि चाहे समस्या जो भी हो उसका हल अकेला कोशिश करने से नही होगा । मिलजुल कर, एकत्रित होकर लडने से समस्या के लिए परिष्कार मिलेगा । दलालों को कपटता को भी स्पष्ट किया गया है ।

(3) रमाकान्त श्रीवास्तव " खानदान में पहलीबार " :-

कहानी में मध्यवर्ग को अपनी इज्जत के लिए जो मोह होता है इसके विरुद्ध प्राचीन पीढी और नवीन पीढी दोनों को एकमत बतलाया गया है । यहाँ तक कि " हम लोग बेवजाह खुश हो गए ।" यह वाक्य बच्चों के मुँह से कहलवाकर भविष्य को नये मूल्यों के साथ जोड दिया गया । " खानदान में पहलीबार " कहानी संग्रह में यूँ तो सात कहानियाँ है । किन्तु जिस कहानी के नामपर संकलन का नामकरण हुआ है वही इसकी चर्चित कहानी है । एक परिवार में दादा, अम्मा और जिज्जी " नयी पीढी की नारी, नारी की प्रतिनिधि है । वही सबसे पहले टाइप सीखती है और नौकरी करती है और अपनी शादी का फैसला स्वयं लेती है ।

समाज में अत्याचार केवल बाहरी रूप में ही नहीं होता है बल्कि वह सूक्ष्म और लगभग अदृश्य रूप में भी होता है । विशेषतः परिवार में नारी के साथ जो घटित होता है । वह एक सूक्ष्म अत्याचार है । " खानदान में पहलीबार " कहानी इसी सूक्ष्म अत्याचार का विरोध करती है । स्त्री का यह दुर्भाग्य रहा है कि उसके जीवन के बारे में निर्णय वह स्वयं नहीं करती बल्कि दूसरे करते हैं । लेकिन इस कहानी की नायिका अपना निर्णय स्वयं करती है । परिवार, समाज का एक प्रतिनिधि अंग है और उसमें संघर्ष दिखलाकर प्रतीकात्मक रूप से सामाजिक संघर्ष को ही प्रस्तुत किया गया है ।

नायिका के शब्दों में -- " लडके के लिए दर-दर भटकने की जरूरत नहीं ।" जिज्जी की आवाज हल्की तो थर्रा रही थी लेकिन फिर भी संतुलित थी .. " मैंने खुद ... यानी ... कि मैंने अपने लिये तय कर लिया है ।" [1] यहाँ पर नारी जीवन के प्रति नवीन दृष्टि मिलती है ।

इस कहानी में नौकरी को लेकर आर्थिक स्थिति या समस्या की ओर भी संकेत किया गया है । माँ पुरानापन और अंधविश्वासों से जकड़ा हुआ है इसीलिए नौकरी का विरोध करती है । किन्तु वेतन पाने पर सन्तुष्ट हो जाती है " लेकिन जब जिज्जी ने पहली तारीख को तनखा लाकर दी तो अम्मा मुस्काई थी और उस तनखा का असर जब पन्द्रह, सोलह दिन के बाद निश्चिन्तता के रूप में दिखलाई दिया तो उनके चेहरे पर संतोष झलकाया था ।"[2] आर्थिक तौर पर आत्मनिर्भर होने के बाद ही लडकी अपने विवाह के बारे में स्वयं निर्णय ले पाती है ।

---

1. खानदान में पहलीबार : रमाकान्त श्रीवास्तव - पृ. 70.
2. - वही - पृ. 65.

सुशीला - पाणिनेनि शिवशंकर :-

एक अविवाहित युवति की मन: स्थितियों का महत्वपूर्ण चित्रण इस कहानी में है । " विवाह " से पहले पति सिर्फ पत्नी के बारे में और पत्नी सिर्फ अपने पति के बारे में ही सोच रहे हैं । पति का मन दूसरों की ओर भागता नहीं और पत्नी भी अपना मन को सिर्फ पति तक ही सीमित कर देती है । आजकल के समाज में दाम्पत्य जीवन और विवाह व्यवस्था पर एक तीखा नजर उठी गयी कहानी है " सुशीला " । शारीरिक पवित्रता और मानसिक पवित्रता का स्पष्ट चित्रण इस कहानी में है । " विवाह " शब्द का एक नया अर्थ इस कहानी में पाते हैं । साधारणत: अविवाहित युवक या युवती की भावनाओं को यहाँ की भावनाओं से समझौता कराना कहानीकार का मूल उद्देश्य रहा है ।

इस कहानी में " नरेन्द्र " जो नायक का पात्र है, उसकी विवाह करने के लिए " रिश्ता " देखनेवाला है " जीजाजी " । " सुशीला " नामक एक युवति को देखते है । देखने के लिए बहुत ही सुन्दर है । उसका आचार-व्यवहार भी बहुत अच्छा है । उस युवति में कुछ भी कमी दिखायी नहीं देता । नरेन्द्र से उसकी शादी फैसला करना भी चाहते हैं । लेकिन अंतिम क्षण में पता चलता है कि वह युवती अपना " शील " खो चुकी है । उस युवती के दूर के रिश्तेदार ने जबरदस्ती से बेहोशी में पडी हुई उस युवती का शील लूटा है । नरेन्द्र सोच विचार करने के बाद उससे शादी करने के लिए तय्यार हो जाता है । इस कहानी में कुछ ये पंक्तियाँ इस प्रकार है -- जो हानीकार, पात्रों से अपने मन के विचारों को स्पष्ट कर करता है । " शील " किसे कहते हैं इसके बारे में नरेन्द्र कहता है [कहानीकार का निर्वचन] " पति के सिवा दूसरे पुरुषों को मन से नहीं चाहना और पवित्र रहना ही " शील " है । कभी भी मन से परपुरुष के बारे में न सोचनेवाली स्त्रियाँ कितनी रहती हैं [कर्मणा काबू में रखेंगे] शादी होने के पहले "पति" को ही पसन्द करेंगे । ऐसा सोचकर कोई भी स्त्री मन को काबू में रख सकती है । ऐसे ही पुरुष भी । " इसलिए मन की पवित्रता पर मुझे विश्वास नहीं हैं । शारीरिक

पवित्रता भी ऐसी ही है । स्त्री या पुरुष जो भी हो, अपना मन पसन्द व्यक्ति को चाहने में गलती नही है । उस चाह में मन और शारीरिक समतुल्यों के आधार पर अच्छाई या बुराई होती है माने एक व्यक्ति दूसरे के मन को छोडकर शरीर को चाहना गलत मानता हूं । सीधा शील जैसा यथार्थ कहाँ है ?

पवित्रता, अपवित्रता की बातें बहुत बडी बातें हैं । इक पवित्रता का निर्णय करने के लिए " शादी " प्रमाणदायक नही हो सकती ।

" एक स्त्री को मानभंग होने से, नही " मान भंग " बराबर शब्द नही है । मानव को अभिमान ही है " मान " कहा है ? अगर है तो वह सिर्फ स्त्री के लिए ही मानम् या शीलम् नामक शब्द कल्पित किया गया है । उसे अपना शील को पुरुष के लिए बचा रखनेवाली अंग की तरह " पवित्रता " का रंग लेपे हैं, तो पुरुष की बात क्या है ? सच तो यह है कि स्त्री पर अत्याचार करते समय पवित्रता को खोनेवाला कौन है ? स्त्री है या पुरुष मेरे उद्देश्य में पुरुष ही पवित्रता खो रहा है ।

तन और मन के विचारों का टकराहट इस कहानी में छुआ हुआ है । स्त्री-पुरुष-तन-मन इन चार स्तंभों का खेल बहुत महत्वपूर्ण ढंग से चित्रित किया गया है ।

(ऊ) रमाकान्त श्रीवास्तव " खानदान में पहलीबार " - पापिनेनिशिवशंकर " सुशीला "

इन दोनों कहानियों में स्त्रियों पर आन्तरिक तौर पर होनेवाले सूक्ष्म अत्याचारों का चित्रण है । साधारणत: आजकल समाज में स्त्रियों पर पुरुषों का ही अधिकार चल रहा है । प्रमुखत: विवाह और आर्थिक स्थितियों का प्रभाव स्त्री पर अधिक है । इन दोनों के सहारे ही पुरुष, स्त्री पर अधिक है । इन दोनों के सहारे ही पुरुष, स्त्री का शरीर और मन को लूटने लगा है । स्त्री का शोषण भी इस इस नेपथ्य में ही हो रहा है । इन दोनों कहानियों में अविवाहित युवतियों को मन: चित्रण को स्पष्ट करने में दोनों कहानीकार सफल रहे हैं । " खानदान में पहली बार " के मूल पात्र, जो अविवाहित युवती है, अपनी मन मर्जी से शादी करके, जीना चाहती है । तब उस युवती को परिवार से और समाज से किस प्रकार संघर्ष करना पडता है । उसका ही नग्न चित्र इस कहानी में पाते हैं । " सुशीला " कहानी में कहानीकार ने ऐसे प्रश्न चिह्न उठाने की कोशिश की है । उन्हें कोई भी सोच नहीं सकता । कहानीकार के प्रश्नों से यह स्पष्टहोता है कि पति या पत्नी शादी के बाद एक दूसरे के बारे में ही सोच रहे हैं । अन्यों के बारे में नहीं सोंच रहे हैं ? विवाह से पहले युवक या युवती अन्यों के प्रति अपने मन को नहीं मोड रहे हैं ? युवति या युवक को शादी के बाद ही पति या पत्नी से ही प्यार करना है ? ऐसा नियम क्यों है ? इस प्रकार अनेक प्रश्न चिह्न कहानी में विद्यमान है । इस कहानी में " सुशीला - बेहोशी में दूर के रिश्तेदार युवक की वजह से अपना शील (शारीरिक तौर पर) खो चुकी है । वही उसकी शादी के लिए रुकावट बन जाती है । नरेन्द्र, जो उससे शादी करना चाहता है । सच्चाई जानने के बाद भी शादी करने के लिए तय्यार हो जाता है । नरेन्द्र के कथन से कहानीकार, अपना उद्देश्य इस प्रकार स्पष्ट कर रहा है ---

" मन को सिर्फ पति पर ही लगाकर, अन्यों के बारे में न सोचना ही " शील " कहा जा सकता है ।"

दोनो कहानीकार आधुनिकता को मानवता जुडाकर अपनी मन की बातों को स्पष्ट करने में सफल रहे हैं ।

(अ) राजेशदत्त --- " उसका हिस्सा " :-

राजेशदत्त की कहानियों में एक महत्वपूर्ण सौन्द्रय कहानी है " उसका हिस्सा " इस कहानी में घरो में बर्तन धोनेवाली नौकरानियों का चित्रण है । यह साधारण बात है कि कुछ जगह मालिक या मालकिन अच्छे है तो नौकरानी अच्छी नही रहती माने हर दिन वक्त पर आकर ठीक तरह से काम नही करती । कुछ जगहों में तो इससे उल्टा होता है । हर दिन वक्त पर आकर अच्छी तरह से काम करनेवाली नौकरानियों पर मालकिनों का जुल्म किस प्रकार होता है उसका नक्शा इस कहानी में है ।

इस कहानी का मूल पात्र है मोहन और सेठानी (मालकिन) । माँ की बीमारी की वजह से उसकी जगह मोहन को जाना पडता है । वह सेठानी को बताकर छुट्टी माँगता है तब - सेठानी की आवाज में और भी ज्यादा तल्खी भर उठी -- " आजकल छुट्टी मारने के उल जलूल बहाने बहुत बनाने लगे हो तुम लोग ।"

" नहीं, बहाना कौन बनाता है ।" मोहन को लगा जैसे उसकी साँसों में घुटन भर आई है ।

" यह बहाना नही तो और क्या है ?

मोहन के दिल में आया कि चीखकर मोटी सेठानी को एक भद्दी सी गाली दे और क्राकरी से भरी अलमारी को उलटकर भाग निकले । पर उसे तुरन्त खयाल आया कि माँ सचमुच में चल फिरने के काबिल नहीं होगी और आज पैसे लेकर उसने माँ के लिए खरीदी अस्पताल से दवाई ले जानी है । उसके मुँह से बस इतना ही निकल सका -- " हम झूठ नहीं बोलते ।" [1]

बिमारी माँ को खुशी के लिए उसकी जगह बर्तन धोना चाहता है और महीने की तनखा भी ले जाना चाहता है । लेकिन सेठानी मोहन से ऊपरी तौर पर बातचीत करती है । जब मोहन अपनी माँ से मिलने रोटियों को लेकर जाता है तब तक वह मर चुकी है ।

इस प्रकार धनिक और उच्च मध्यवर्गों में ही ज्यादा होता है । मालिक और नौकरानियों के बीच जो भी संघर्ष होता है उसे स्पष्टकरने में कहानीकार पूर्णतः सफल रहे है ।

पालु (दूध) -- बी॰एन,रामुलु :-

साधारणतः तेलुगु में " पालु " जिसे कहते है उसका एक अर्थ दूध है तो दूसरा अर्थ है " हिस्सा " । इस कहानी का मूल पात्र " गंगा पोचम " जो बालक है वह प्रश्न करता है -- मालिक की गाय को पालनेवाले हम है तो उसका पूरा दूध मालिक को ही जा रही है क्यो ? उस दूध में हमारा हिस्सा या भाग नही है ?

---

1. सक्रिय कहानी की भूमिका (1979) -- राकेशवत्स - पृ॰ 230॰

यह प्रश्न साम्राज्यवादियों की व्यवस्था की बुनियादों को हिलानेवाला प्रश्न है । मूलत स्वभाव सौदों को उखाडनेवाला पिरंग प्रश्न है । भरतखंडम चक्कनि पाडियावु (भरत खंडम् अच्छी गाय है) लेकिन गाय से दिया गया (दूध) पालु किसका (दूध) पालु है । ऐसा प्रश्न पूछते हुए " पालु " (दूध) शब्द का और एक अर्थ " परमु " (पराया) का याद दिलाया ।

घास खिलाकर, पानी पिलाकर, शरीर की सफाई करके आँख के पलकों में गाय को पालनेवाले या देखभाल करनेवाले घूँट डाल रहा है या दूध के लिए तडप रहा है तो दूध, दही, घी में सब अमीरों का ही (माल) हो रहे हैं क्यों ? यह शंका आठ साल के बच्चे में उत्पन्न होती है ?

इस कहानी में कहानीकार का मूल लक्ष्य रहा है " बच्चों में महत्वपूर्ण विचारों को उत्पन्न करना और समाज में आर्थिक समानता लाना ।

(ख) रावेशदत्त " उसका हिस्सा " - बी॰यन॰रामुलु " पालु " (दूध) :-

दोनों कहानियों में बच्चों की विभिन्न मनःस्थितियों का चित्रण रहा है । दोनों कहानियों में बच्चे समझते है कि श्रम का फल नहीं मिल रहा है ? ऐसा क्यों हो रहा है ? ऐसे सवाल बच्चों में उत्पन्न होना कहानीकार की कुशलता का ही नमूना है । बी॰यन॰रामुलु की " पालु " कहानी में अर्थ को ही बदल दिया गया है । " पालु " का अर्थ दूध है तो यहाँ उसका अर्थ है " हिस्सा " और " पराया " है । एक बच्चा पूछता है कि गाय को घास खिलानेवाले हम है और पालनेवाले हम है तो उसका दूध पीनेवाला है मालिक । क्यों हमें उस दूध में हिस्सा नहीं मिलता ? यह प्रश्न सिर्फ दूध तक ही सीमित नहीं रहा है आजकल के समाज में ही उठनेवाला

प्रश्न है मेहनत करनेवाला वर्ग एक है तो उसका फल लूटनेवाला और भोगनेवाला वर्ग दूसरा है । जो भी मेहनत करेगा, उसका पेट तक नहीं भरेगा, लेकिन अमीर या शोषक कुछ करता हो नहीं लेकिन उसको बहुत फल मिलता है । ऐसा क्या हो रहा है । मूल कारण क्या है हृदय पिघलानेवाला प्रश्न है । राकेश वत्स, जो सक्रिय कहानी का प्रवर्तक भी रहा है उसकी कहानी है " उसका हिस्सा " । इसमें एक नौकरानी का पुत्र, अपनी माँ की तबियत ठीक न होने की वजह से और महीने का तनखा लेकर रोटी और दवाइयाँ लाने के लिए अपनी मालकिन के पास जाकर माँ की स्थिति की जानकारी देता है और महीने का वेतन पूछता है । उस वक्त मालकिन गुस्से में अपनी मन मर्जी से गालियाँ देने लगती है तो वह बच्चा बहुत ही दु:खी होता है । मन में उत्पन्न क्रोध छायाओं को जोड़कर अपनी माँ का काम खुद ही करता है । महीने का वेतन लेकर, माँ को खिलाने के लिए रोटी लेकर घर पहुँचने में देर हो जाता है फलत: उसकी " माँ " मर जाती है ।

इन दोनों कहानियों में शोषकों के प्रति, अपने मालिकों के प्रति बच्चों में उत्पन्न प्रश्नों का उत्तर ही आजकल की सामाजिक स्थिति है । दोनों कहानीकार, बच्चों के जरिये ही सामाजिक वास्तविकता को पर्दाफाश करने में पूर्णत: सफल रहे हैं ।

(I) मृत्युंजय "क्रौंचवध" :-

एक तरह से देखा जाये तो हिन्दी कहानी को आन्दोलनों और खेमों से मोह भंग हो चुका है । मौजूदा दौर में नये कहानीकारों ने पूर्ववर्ती कहानी के छद्मों को बेनकाब भी किया है । आज मूल्य भावात्मक नहीं, वस्तुपरक बन गये है । वैसे अधिकतर जल्दबाज रचनाकार अपनी रचना प्रक्रिया में शार्टकट के अभ्यस्त भी हो चुके हैं फिर भी कुछ रचनाकार सही रचनाशीलता को अपनी शर्त पर निबाह रहे हैं, यह शुभ लक्षण है ।

नयी पीढ़ी को प्रोत्साहित करने के लिए परम्परा को आगे बढ़ाने के लिए भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा आयोजित नयी पीढ़ी कथा प्रतियोगिता में ऋता शुक्ल को " क्रौंचवध " तथा अन्य कहानियाँ नामक कहानी संग्रह को प्रकाशित किया गया था। इस संकलन की सर्वाधिक प्रसिद्ध कहानी है " क्रौंचवध "।

ऋता शुक्ल बचपन से ही ग्राम्य परिवेश से जुड़ी रही है और आज भी नागरिक व्यवस्थाओं और उलझनों के बीच गाँव की माटी (मिट्टी) की सुगन्ध अपनी रचनाओं में अंकित करती हैं। उनकी रचनाओं की मुख्य चिन्ता मानवीय सम्बन्धों के विघटन से उत्पन्न संत्रास है। इस संत्रास की सब से स्पष्ट छवि ग्रामीण मानसिकता वाले पात्रों के बीच से उभरकर सामने आती है। वे अपने पात्रों से अपने को अलग नहीं मानतीं।

" क्रौंचवध " कहानी में संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान, वेदों और उपनिषदों की ऋचाएँ और सूक्त अपनी जिह्वा पर रखनेवाले पंडित यदुनाथ मिश्र उर्फ यदुनाथ बाबू का समग्र जीवन फलक उपस्थित किया गया है।

लेखिका ने इस कहानी में पूँजीवादी और औद्योगीकरण के प्रभाव से देश के देहाती हिस्सों में परिलक्षित होनेवाली शहरीकरण की प्रक्रिया को सूक्ष्मता से अभिव्यक्त किया है। फैशनेबुल जीवन गुजारने के मोह में चलते समाज में परम्परागत देशीय आचार-व्यवहार, रहन-सहन, मानसिकता आदि में बदलाव आया है। सामाजिक संबंधों में विघटन से उत्पन्न संत्रास, कुण्ठा, अकेलापन निस्सहायता आदि का मार्मिक अंकन इस कहानी में किया गया है।

यदुनाथ बाबू कट्टर सनातनी पवित्र, यज्ञोपवीतधारी ब्राह्मण हैं जो वेद वेदांग पारंगत, संस्कृत में स्नातक होने के बावजूद अपनी सच्चाई और ईमानदारी के कारण परिस्थितियों की चुनौती नहीं झेलपाते और जीवन में हार जाते हैं। अपनी बेटी सावित्री के विवाह के समय दहेज की असीमित माँग वे नहीं पूरी कर

सकते । बाद में उनकी जायदाद को हड़प लेने, बेटी के साथ-ससुर षड्यंत्र करते हैं । सावित्री पर तरह-तरह के अत्याचार ही नहीं होते बल्कि पतिद्वारा उसे मार डालने की साजिश भी होती है । अपनी बेटी की ससुराल में बदतर स्थिति के प्रति यदुनाथ बाबू असहायता और विवशता का अनुभव करते हैं । संस्कृत ग्रन्थों तथा अन्य पुस्तकों से उनका लगाव अधिक ही था । घर का काम निपटाने की बजाय किताबों में वक्त गुजारने से पत्नी क्रोधित होती है तो वे कह डालते हैं कि -- "तुमसे पहले इन्हीं किताबों से मेरा ब्याह हुआ था मालिनी । इनसे अलग होने के लिए कहती हो न, तो क्रौंचवध वाली वाल्मीकीय पीड़ा का साक्षात् अनुभव होता है । आओ तुम्हें इस श्लोक का अर्थ समझाऊँ ।"[1]

इस कथन से पंडितजी के अपने जीवन में घटित हो रहे क्रौंच वध का पता चलता है । पुराने मूल्यों और मान्यताओं के प्रति आज की पीढ़ी की असंचिपूर्ण नकारात्मकता ही मिलती है । अपनी जिन्दगी में घटित घटनाओं के कारण उत्पन्न संत्रास को अपने ही मन में छिपा लेने की मानसिकता पंडितजी के व्यक्तित्व में प्रस्तुत है । कहानी में प्रत्येक पात्र कोई काल्पनिक चरित्र न होकर आम जिन्दगी का हिस्सा नजर आता है । सावित्री के ससुरालवाले उसे उसके पिता की मरण वार्ता तक भी नहीं बतलाते और उसे भूखे-प्यासे दो दिनों तक कमरे में बन्द रखते हैं । पिता की मृत्यु पर उसे रोने भी नहीं देते । अंत में जान से मार डालने की धमकी भी दी जाती है । यह स्थिति आज भूत की तरह समाज पर हावी हो रही है । "दहेज" को वह भूत है जो भारतीय पारिवारिक-सामाजिक और सांस्कृतिक प्रगति में बाधा पहुँचा रहा है ।

---

1. क्रौंचवध - [क्रौंचवध और अन्य कहानियाँ क.स.]
   सुधा शुक्ल - पृ. 175.

लेखिका को पुराने मान्यताओं के साथ जुडे पति-पत्नी का अन्योन्य सह-सम्बन्ध बनाये रखनेवाले भावुकों में एक रोमांटिक आकर्षण मिलता है । फिर भी आज का यह नया दृष्टिकोण किसी भी व्यक्ति को करुणा से तड़पा देता है । उस हृदय विदारक दृश्य को ही लेखिका आज के परिवेश में उतारती है । उन्होंने संबंधों के विघटन, उसके द्वारा उत्पन्न संत्रास, उस अलगाव की मानसिकता, विवशता आदि को हृदय स्पर्शी ढंग से यथार्थ के धरातल पर इस कहानी में उतार दिया है ।

मायुसूर्यकांति - पि॰सत्यवति :-

स्त्रियों की समस्याओं को लेकर लिखी गयी कहानियों में सत्यवति से लिखित " मायुसूर्यकांति " एक चर्चित कहानी है । शिक्षित और नौकरी करनेवाली " स्त्री " को विवाह होने के बाद कौनसी मुसीबतें सामना करना पड़ता है । उसका नग्न चित्रण इस कहानी में है । इस कहानी के मूल पात्र है — कमला और रविकुमार आदि ।

इस कहानी में " कमला " शिक्षित है और नौकरी भी कर रही है । मध्यवर्गीय परिवार में जन्म लेने के कारण, उसकी शादी एक आलसी, आवारा युवक रविकुमार से होता है । रविकुमार भी कमला की तरह बी॰ए॰ उत्तीर्ण है, लेकिन नौकरी नहीं मिली । वह, अपने दत्तक पिता के लिए दत्तक पुत्र था । रवि कुमार के पिता की संपत्ति देखकर कमला की शादी उससे किया जाता है ।

रवि कुमार का दत्तक पिता एक विचित्र इन्सान है । वह, अपनी बहू से ही अपना पूरा काम कर लेना चाहता है । पुत्र भी उसका ही समर्थन करता है और कहता है वे तुम्हारे पिता समान है । लेकिन रवि कुमार के पिता का बर्ताव ऐसा है कि पति-पत्नी जब भी सोते हैं । पूरे रात भर घंटे में एक बार आकर दरवाजा खटखटाता है । कमरे में आकर देखकर चला जाता है ।

रवि कुमार तो आलसी, बेकार आदमी ही नहीं बल्कि स्त्री लोलुक भी है । उसको अनेक वेश्याओं से संबंध है । वह पत्नी को भी वेश्या के रूप में ही देखता है और बहुत सताता है । रात होते ही कमला भयभीत हो जाती है । " मिलन " जैसी पवित्र भावना को वह राक्षस क्रिडा से अपवित्र कर देता है । सिर्फ एक ही हफ्ते में कमला पति से और उसके दत्तक पिता से तंग हो जाती है । हर क्षण एक युग-सा बिताती है । मायिका आने के बाद वापस जाना नही चाहती । त्योहार आने के कारण कमला का पति आता है उसको ले जाने के लिए ।

एक ही रात में अपनी राक्षस क्रीडा के लिए कमला मर्दन गोंटना चाहता है । वह चिल्लाती है तो वह भाग जाता है और चोर का बहाना बनाकर बच जाता है लेकिन कमला की माँ को बहुत शंका उठती है । बार-बार पूछने पर कमला सब कुछ बताती है और कहती है -- " मुझे तलाक नही चाहिए - मैं अदालत नहीं आऊँगी । मैं अपना जीवन खुद जी सकती हूँ । उसको चाहे जितनी भी शादियाँ करने दो । मुझे कोई आपत्ति नही है । मैं रुकावट नहीं बनूँगी । माँ, मुझे और जीने की इच्छा है । मैं नहीं जाऊँगी । अगर वहाँ गयी तो जरूर मर जाऊँगी ।

इस कहानी में ऐसी पंक्तियाँ है जो कमला की माँ के विचारों को स्पष्ट करनेवाला है । वे लेखिका के हृदय से ही आयी हुई हैं । ये स्त्री के जीवन का प्रस्तुत रूप साथ-साथ दाम्पत्य जीवन की निजता स्पष्ट करनेवाली पंक्तियाँ हैं- हमारे देश में खास करके मध्यवर्ग के परिवारों में ऐसी स्थिति देख सकते हैं -- " इतने दिन तक संप्रदाय और आचारों को स्वीकार करती हुई आयी हूँ, कुछ न कुछ जीवन को समझ सकी । आदमी को सब चाहिए । उपरी तौर पर बता न सके तो भी या छुपा रखने पर भी सबको सब कुछ चाहिए । पत्नी की तबियत ठीक नही तो, या थकी हुई तो, वासना या शारीरिक इच्छा न होने पर भी वह {पति} बुलाये तो जाना ही चाहिए । अगर न गयी तो वह मानेगा नही ।

यह पुरुषों का जमाना है । पुरुषों का संसार है । इच्छा से भरी हुई मन से मिठी कल्पनाओं से पानेवाला अनुभव यंत्र की तरह, डर से पाना दुर्भाग्य की बात है । शायद इस देश में 50% दाम्पत्य जीवन में इस अनुभव को यंत्र की तरह होने की बात झूठ नहीं है । जीवन को सार्थक, शरीर को तन्दुरुस्ती देनेवाला यह अनुभव अति भयंकर-बुरी स्वप्न की तरह होना और आत्मघात करने की स्थिति उत्पन्न करना आदि को मैं पढ़ चुकी हूँ और सुन भी चुकी हूँ ।

माँ की घर से सहायता न मिलने पर, आर्थिक आजादी न होने पर, पति को छोड़ कर जीवन न बिता सकने वाली औरतें कायर औरतें आत्मघात के सिवा क्या करेंगी ।[1] संसार में चलनेवाली दाम्पत्य जीवन की असलियता को पकड़ने की चेष्टा लेखिका से की गयी है । लेखिका स्पष्ट कर रही है कि पति से समझौता करके उसी के साथ, उसी के इच्छाओं के अनुसार, अपना व्यक्तित्व को गला घोंटकर जीवन बिताना प्राचीन सांप्रदाय ही नहीं बल्कि आजकल भी अनेक घरों में ऐसा ही हो रहा है लेकिन डर की वजह से, इज्जत की वजह से, वंश की प्रतिष्ठा को देखकर स्त्रियाँ स्पष्ट नहीं कर पा रही हैं । परेशानियों को सहन कर रही हैं नहीं तो आत्मघात कर रही हैं । ऐसी स्त्रियों को जीने की जिज्ञासा, अपनी व्यक्तित्व को जगाने की कोशिश, आर्थिक स्वतंत्रता आदि से भरकर आधुनिक नारी आगे बढ़ने की प्रेरणा दे रही है " कहानी की लेखिका ।

---

1. तेलुगु कथा (1960 - 85) पृ. 264.

(ए.) ममता शुक्ल " क्रौंचवध " -- पि.सत्यवति " माधुसूर्यकांति " :-

दोनों कहानियों में दाम्पत्य जीवन का एक ऐसा नक्शा दिखाया गया है कि उस नक्शे को देखने से स्पष्ट होता है स्त्री शादी करना ही नही चाहती । ऐसा क्यों ? आजकल के दामत्य जीवन में पति-पत्नी सुखी नही है ? इस पर दोनों कहानियों में विवाहित " स्त्री " जो भी समस्यायें सामना कर रही है उसका ही नग्न चित्र खींचा गया है । ममताशुक्ल की " क्रौंचवध " में " सावित्री " सत्यवति की " माधुसूर्यकांति " में " कमला " दोनों स्त्रियों पर तरह-तरह के अत्याचार ही नही बल्कि उन्हें मार डालने का साजिस भी रचा जाता है । " माधुसूर्यकांती " में कमला शिक्षित ही नही बल्की नौकरी भी करके कमानेवाली स्त्री है । उसकी शादी एक अमीर युवक से होती है । युवक के पीछे जमीन जायदाद होने की वजाह से कमला की शादी उससे हो जाता है । कमला के पति में राक्षसता के अनेक लक्षण विद्यमान है । वह आलसी है । वेश्याओं से उसका संबंध होने की वजह से "कमला" को भी " वेश्या " की तरह देखने लगता है । अपनी मनमर्जी से उसे सताने लगता है । कमला का ससुर भी पुत्र से भी भयंकर, राक्षस प्रवृत्ति वाला है । वह भी अपनी बहु को सताने लगता है । त्योहार मनाने के लिए कमला [मायिके] घर आती है । उसका पति वहाँ भी आता है । एक ही रात में उसे मारने के लिए विफल कोशिश करता है । ममताशुक्ल की कहानी क्रौंचवध में लगभग ऐसा ही चित्र खींचा गया है । लेकिन वहाँ का मूल विषय रहा है " दहेज " । " दहेज के कारण " ही सावित्री पर अनेक अत्याचार होते हैं । उसके पिता की मौत का खबर भी नही देते । इसके अलावा सावित्री को अनेक दिन भूखा ही रखते हैं । संबंधों में विघटन, उसके द्वारा उत्पन्न संत्रास, ऊब, अलगाव की मानसिकता विवशता आदि को हृदय स्पर्शी ढंग से प्रस्तुत किया गया है । लेकिन " माधुसूर्यकांती " में कमला सिर्फ अबला की तरह ही नहीं बल्की सबला का रूप धारण भी करती है । वह किसी भी हालत में अपने पति के पास जाना नही चाहती । उसकी कथन से स्पष्ट होता है

" तलाक देने के लिए भी वह तय्यार है । पति, अन्य स्त्रियों से शादी करना चाहे तो भी रुकावट बनना नहीं चाहती । वह अपनी मन मर्जी से, संपूर्ण आजादी से जीना चाहती है । आधुनिक नारी की अत्याधुनिकता का चित्र " मातृमूर्कांति " में है तो अंधविश्वासों से प्राचीन संप्रदायों को प्रतीक बनने वाला चित्र " क्रोधाग्ध " में है ।

(7) इसराइल - रोजनामचा :-

इसराइल की यह कहानी बहुत चर्चित इसलिए हुई कि उसमें सामान्य श्रमिक के संघर्ष का असाधारण दर्शन मिलता है । राजन नामक एक मजदूर है, जो कहानी समाप्त होते न होते शहीद हो जाता है । ऐसा शहीद जो अठारह हजार मजदूरों के दिलों में स्थायी रूप से बस जाता है । इस कहानी में एक ओर मजदूर है और उनका हड़ताल है और उनका प्रतिरोध है । दूसरी ओर मालिक है, कंपनियाँ है और सरकार है । हड़ताल करने से पहले मीटिंग में वीरेन्द्र बाबू ने कहा " कम्पनी अभी अप्पर हैंड है । देश पर संकट आनेवाला है । यह कहकर सरकार खुल्लम-खुल्ला कम्पनी के साथ देगी । हड़ताल के नोटिस के साथ ही हड़ताल को गैर कानूनी करेगी ।" [1]

यह कहानी पूर्णतः मजदूरों के संघर्ष के परिप्रेक्ष्य में देखा गया है । किन्तु राजन को एक ऐसा आदर्शवादी प्रतीक माना गया है । जो अठारह हजार मजदूरों के दिल में एक प्यासा बना हुआ है । इसका उदाहरण हमें तब मालूम हो जाता है जब राजन को लाश को पानी से निकालकर, मजदूरों के सामने रखते है और उस लाश को देखने से उन मजदूरों पर क्या प्रभाव पड़ता है । वह इस प्रकार है -

---

1. रोजनामचा - इसराइल - पृ. 16.

" जैसे किसी विस्फोटक बम के मुँह पर बर्फ की बुकनी डाल दी गई है । जैसे हजारों की भीड कुछ क्षण के लिए राजन की याद में श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए मौन - धारण किये हुये हो ।" सुस्पष्टतः इस कहानी में आदर्श भी झलकता है । साथ ही साथ मनोविश्लेषणात्मक यथार्थवाद का पुट भी देखने को मिलता है ।

" राजन " इस कहानी में संघर्ष का मूर्तिमान प्रतीक बन जाता है । जिजीविषा के यथार्थ को व्यक्त करने के लिए किसी तरह की सायास कलात्मकता की आवश्यकता नहीं होती है । यदि वैसे कोई व्यक्ति जीवन शक्ति की अदम्य उर्जा बन जाता है और वैसे से लिखने के लिए किसी रोमेन्टिक क्रान्तिकारी की आवश्यकता नहीं होती, यह जानना है तो रोजनामचा के साथ उदयप्रकाश की " टेपचू " को रखकर देखा जा सकता है । टेपचू पढ़ते हुए पाठक चौंकता है । चकित होता है । चमत्कृत होता और बाद में पाठक अपने आप को उन अठारह हजार मजदूरों के साथ पाता है । जिनके दिलों में राजन की असली तस्वीर है ।

बलराम " कलम हुए हाथ " :-

कहानी के क्षेत्र में बलराम की कहानियाँ अपनी निराडम्बरता तथा सहजता की छाप छोडती है । उनकी ज्यादातर कहानियाँ ग्रामीण पारिवारिक प्रवेश से सम्बन्ध है । कुटुम्ब या परिवार भी सामाजिक परिवेश से सदैव जुडा ही रहता है । बलराम में वैयक्तिक, पारिवारिक, जीवन तथा उसके मूल्य दबाव स्थितियाँ आदि का चित्रण मिलता है ।

---

1. रोजनामचा - इसराइल - पृ. 25.

" कलम हुए हाथ " में विभाजित परिवार की कहानी है, जो ठाकुर की मिथ्या दृष्टि का शिकार होता है । परिवार का किशोर शंकर शिक्षा और विकास के बीच पिता की पीड़ा में भाग लेते हुए परिवार की खुशहाली के लिए अपने प्राण दे देता है । यह कहानी पारिवारिक अलगाव, नयी स्वार्थपूर्ण शैलियाँ और किशोर की नयी मानसिकता को उद्घाटित करती है । इसके साथ-साथ ग्राम समाज के बृहत्तर परिप्रेक्ष्य से भी जुड़ती है । ऐसे द्वन्द्व को हम बलराम की कहानी " शिक्षा काल " में भी देख सकते हैं । " कलम हुए हाथ " के साथ-साथ पालनेहारे, शिक्षाकाल जैसी कहानियों में युवा कथानायक अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करते हुए लड़ता है और हारता है । " कलम हुए हाथ " कहानी में शंकर और उसका पिता माधौ अपनी जमीन की रक्षा के लिए लड़ते हैं और ताकतवर जमीन्दार राजा ठाकुर से हार जाते हैं ।

" कलम हुए हाथ " और अन्य कहानियों में आजादी के बाद के हिन्दुस्तान के गाँवों की जिन्दगी का सजीव और आत्मीय चित्रण है । बलराम के पात्र कहानी के बाद भी पाठक के साथ ही रहते हैं और उन्हें सामाजिक शोषण के सम्बन्ध में सोचने के लिए विवश करते हैं ।

" कलम हुए हाथ " एक ग्रामीण परिवेश की कहानी है । जिसमें जमीन्दारी प्रथा का शिकार होकर किसान को मजदूर बन जाने का किस्सा है । हाल ही में सुख से रहनेवाला एक किसान परिवार शोषण परिस्थितियों के कारण टूट जाता है । परिवार का मंझला बेटा दोस्तों के संग बुरी आदतों का शिकार होकर पियक्कड़ बनता है । अपने पिता से शराब पीने के लिए पैसे नहीं मिलने पर झट से अलग चूल्हा जलाने का निश्चय कर लेता है । इस प्रकार परिवार असंतोष के तूफान में फँसकर तीन भागों में बँट जाता है । थोड़ी-सी खेतीलायक जमीन भी तीन हिस्सों में बाँटा जाता है । छोटे टुकड़ोंवाली जमीन को दोनों बेटे अपने दोस्तों के सहारे जोत लेते हैं लेकिन बाप के हिस्से को जोतने के लिए कोई नहीं आता । बापू

अपंग है । उसका हाथ नहीं काम करता और अभी खेती के लिहाज से छोटा है और वह खेती के बारे में कुछ नहीं जानता । फिर उसके पास बैल भी नहीं है । गाँव का प्रधान राजा ठाकुर है जो बापू की बीमारी में शंकर की असहायता को देखकर परिवार को कर्ज देता है । बाद में इसके बदले जमीन हड़प लेने की कोशिश करता है । जमीन बँटवारे के दिन बापू बहुत उदास और व्याकुल हो जाता है और सोचता है मानो उसके शरीर से कोई अंग निकल गया हो । बँटवारे के बाद बेटे बापू की खेती करने के लिए तय्यार होते हैं पर हजार रुपये देने की शर्त रखते ही पीछे हट जाते हैं । इस प्रकार एक ही परिवार के बीच के संबंधों में इतना विघटन हो गया कि विपत्ति में कोई एक दूसरे की मदद को नहीं आता । दिवाली के दिन राजा ठाकुर ऋण के संबंध में बापू से बात करता है । वह पाँच साल के लिए जमीन बिना पैसे के जोतना चाहता है या फिर पैसों के ब्याज में या एक बिगहा जमीन अपने नाम चाहता है । इस स्थिति पर शंकर गंभीर रूप से विचार करता है । वह प्रधान का विरोध करना चाहता है । इसी विषय में बापू भी एक निर्णय लेकर कोठरी में सोने जाता है । सुबह राजा ठाकुर की गरज से शंकर बापू को नींद से उठाने के लिए रजाई उठाकर देखता है तो बापू मरा हुआ है ।

दिवाली के दिन अपने घर की दुःस्थिति के बारे में सोचते हुए शंकर के मन में कोई उजाला ही महसूस नहीं होता । वह निराशा और निर्वेद पूर्णभाव से कहता है -- "दिवाली की ये जलती हुई दियालियाँ रात के अंधेरे को खत्म कर सकती हैं पर हमारे दिलों के अंधेरे को कौन दूर करेगा ? कैसे दूर होंगे ? दिलों के ये खौफनाक अंधेरे, जिन्होंने रिश्तों की चमक तक को लील लिया है ।" अपनी सहजा - भिव्यक्ति के कारण भी यह कहानी अपने समय के श्रेष्ठ मानी गयी ।

विनायक कराडे " कथानायक " :-

दलित और शोषित केवल किताबी शब्द नहीं है । वे एक सामाजिक यथार्थ की धड़कन है । धड़कन की पहचान ही विनायक कराडे की कहानियों को दलित दृष्टि का कहानीकार सिद्ध करती है । सन् 1983 में उनका " कथानायक " नामक कहानी संग्रह प्रकाशित हुआ । इन्डियन पुलिस सर्विस आई.पी.एस. में प्रशिक्षण पाता हुआ एक मध्यम वर्गीय दलितोन्मुखी युवक कैसा आत्म संघर्ष अनुभव करता है उसका एक उदाहरण यह कहानी है । यह सचमुच एक सामाजिक यथार्थ है कि एक सीनियर आई.पी.एस. प्रशिक्षणार्थी से कहता है -- " यार मैं तुम से यह कह रहा हूँ क्योंकि तुम स्नॉब नहीं हो । बड़ी कुत्ता फजीयत है यह बन्दोबस्त की लफांड । हम सब कुत्ते हो जाते है । बड़े कुत्ते । छोटे कुत्ते । बस यही फर्क होता है । एक कुत्ता हाँक पेन्ट्वाला सडक पर, बड़ा कुत्ता जीप में, जरा इतरा कुत्ता समझ लो ।"[1]

नायक के आत्मालाप में इस प्रकार मिलता है -- " माँ को क्या मालूम है कि इसके ये दबे हुए अर्मानों ने मुझे क्या बना दिया है -- माँ का भी क्या दोष वह अपने जाने अनजाने दुश्मनों का हिसाब चुकाना चाहती है । मुझे बाप से भी आगे की मंजिल पर पहुँचकर अपने बुरे वक्त से अपमानित अहं का प्रतिशोध ।"[2]

वर्ग संघर्ष की दृष्टि से सामाजिक यथार्थ को चित्रित करने के कारण यह कहानी, अपने ढंग की अकेली ऐसी कहानी है जो निश्चित ही नौवें दशक की चर्चित कहानी मानी जा सकती है ।

---

1. कथानायक - विनायक कराडे - पृ. 111.
2. - वही - पृ. 105.

नील्ल तगवु - तुम्मेटि रघोत्तमरेड्डी ‖ पानी के लिए झगडा ‖ :-

रघोत्तमरेड्डी की कहानियों में प्रसिध्द कहानी है " नील्ल तगवु " ‖ पानी के लिए झगडा ‖ ।

" चमार के लिए जूतों की कमी ।
कुँआ खोदनेवालों को पानी की कमी ।"

इस तथ्य का निरुपण इस कहानी में चित्रित है । झोंपडियों में रहनेवाले मजदूरों को नल के अभाव की वजह से पानी के लिए क्वार्टर्स को जाना पडता है । वहाँ भी फौरन नही मिलता । लेन में खडे रहना पडता । एक मजदूरी स्त्री को फौरनपानी की जरूरत पडती तो वह दूर के क्वार्टर्स जाती है " पानी को जल्दी लाने के लिए " । वह, अपना काम, सूचना दिये बिना कर लेती है और जाने लगती है तो उस घर का बच्चा पत्थर से गडा को फोडता है और गालियाँ देता है । यह स्त्री भी गाली देती है । झगडा शुरू होता है मजदूर और क्वार्टर्स वालों के बीच में ।

फलत: मजदूरों को पीने के लिए भी पानी नही मिलता । तब वे सरकारी अफसरों से संघर्ष करने के लिए तय्यार हो जाते हैं । सब के सब सडक पर जानेवाले गाडियों को रोक देते है और कहते हैं हमें फौरन पानी चाहिए झूठे वादों की जरूरत नही है और आग बबुल्ला होते हुए एक स्त्री कहती हैं -- " हजारों रुपयों खर्च करके आप, अपनी पत्नियों को खेलने के लिए, तैरने के लिए स्विमिंगपूल बना सकते हैं । लेकिन हमारी झोंपडियों के लिए अतिआवश्यक चार नलों को बनाने में आपके पैसे जाते है ? "

यह " पानी " की समस्या देश में अनेक जगहों में है । कहीं बाढ़ आकर मजदूरों की संपत्तियों को नष्ट कर देती है तो कहीं पीने के लिए भी पानी न पाकर प्यास से तड़प तड़प कर मरते है " मजदूर ! " ।

पेद्दिब्बोट्ला सुब्बरामय्या -- नीळ्ळु (पानी) :-

पेद्दिब्बोट्ल सुब्बरामय्या की कहानियों में एक अत्यंत महत्वपूर्ण और चर्चित कहानी है " नीळ्ळु " (पानी) । एक रायलसीमा से आया हुआ व्यक्ति से जान लेता है कि रायलसीमा में " पानी " की समस्या कैसा है । उसे नेपथ्य के रूप में लेकर कहानीकार ने इसकी (नीळ्ळु) रचना की ।

इस कहानी में रायलसीमा के एक युवक ऐसी जगह नौकरी पाता है जहाँ बहुत पानी है और वहाँ पानी की कमी की बात ही न उठती । वह बहुत खुशी रहता है । अपने घरवाले, जो रायलसीमा में पानी के अभाव से अनेक समस्यायें सामना कर रहे है उनको भी लाकर सुखी रखना चाहता है ।

एक दिन नदि में नहाते समय भी उतरते हुए अपने परिवार के बारे में सोचने लगता है और नदि की पानी से अत्यंत संतुष्ट होते हुए और अपने परिवार के बारे में सोचते हुए, एक कदम आगे बढ़ने से उत्पन्न होनेवाली खतरे को न महसूस करते हुए पानी का आनन्द लेने लगता है । साथ-साथ वह पानी का प्यारा बनकर अपना जीवन खो जाता है । इस कहानी में कुछ पंक्तियाँ इस प्रकार है -- " जोगिनायुम के मन में अपना गाँव, जमीन की दरार, नीन्द के बिना रातों भर पानी के लिए घूमनेवाली माँ और बहने, पानी की घड़ा गिराकर मार-पीठ खाई हुई छोटी बहन, आदि सब याद आने लगे । अन्दर ही अन्दर उसे लगने लगा कि नागार्जुनसागर पूरा हो गये तो परेशानी दूर हो जायेगी और बहुत पानी आयेगी । ... इतने में

उसके पैर उडने लगे । उसका दिल धडकने लगा । हे भगवान मुझे क्या हो रहा है ? क्यों यह पानी मुझे लोकांतर ले जा रही है ? .... पैरों को सीढियाँ नही मिल रही है ? वह लोग क्यों दिखायी नही दे रहे है ? अपने आँखों को यह पानी रुकावट बन गयी है क्यों ? " ।

बेसिन ब्रिड्जि दग्गरा [बेसिन ब्रिड्जी के पास] :-

शहरों में रहनेवाले गरीब, मध्यवर्ग, निम्नमध्यवर्ग, का चित्रण ही है " कहानी का मूल विषय । " उधार वसूल करने के लिए मुनुस्वामिनायुडु, अपना एक जमाना के रिश्तेदार, चन्द्रय्या का घर आता है । उधार लेने के लिए आये हुए मुनुस्वामि नायुडु से अपरंजी इस प्रकार कहती है -- " छिपने के लिए क्या उसने की चोरी या किसी का खून किया ? उधार ही लिया है न । वह यहीं कहीं छिपा नही है सामी । वह अपने पेट भरने के लिए गया । ऐसे ही क्या और भी परेशानियाँ आने पर भी, गले पर तलवार पडते समय भी हम दूसरों की [उधार] संपत्ति न देनेवाले नही है । कैसा भी थोडा-सा जमीन बचा हुआ है । उसे तुम्ही तुम्हारी मर्जी से ले लो । तुम्ही कीमत लगाओं, रिजिस्ट्रेशन कर लो । जो बचा हुआ है उसे हमें फेंक दो । तुम्हारा उधार चुक जाना ही काफी है । बाद में खाते या न खाते यह समस्या हमारी है ।"

एक जमाने में अच्छा जीवन चलायी गयी अपरंजी, कालांतर में पुत्र के मित्रों से अदालतों की वजह से आर्थिक स्थिति को बहुत धक्का लगा है । एक बडा मकान में रहनेवाले अपरांजी को शहर आकर एक छोटी-सी झोंपडी में रहना पडता है । आजकल शहर गंदगी से बरी हुई नहर, बिना सफाई से रहनेवाला शहर का वातावरण भूलोक

---

1. पेद्दिबोट्ल सुब्बरामय्य कथलु - पृ.

नरक की याद दिलाने वाली है । शक्कर किरोसिन आदि आवश्यक चीजों के लिए घंटों भर लेने में खड़े रहनेवाले स्त्री-पुरुष और प्रथम श्रेणी के जेल में बंधे हुए लोगों को टी•वी• आदि देखनेवालों के अन्तरगत देख सकते हैं ।

गरीब लोग शहर में किस प्रकार रहते हैं और उनका समकालीन सामाजिक वातावरण से किस प्रकार परिवर्तित होते हैं । शहरी जीवन को अपनी कहानी के माध्यम से स्पष्ट करने में कहानीकार पूर्णतः सफल रहे हैं ।

रोजनामचा [इसराइल], कलम हुए हाथ [बलराम], कथानायक [विनायक कराडे], नील्ला रंगु [तुम्मेटि रघोत्तम रेड्डी], नोल्लु [पेद्दिब्बोट्ल सुब्ब - रामय्या], बेसिनविझगी दम्मरा [महेन्द्रा] आदि कहानियों में शोषण तंत्र का ही विभिन्न रूप पाते हैं । समस्या " पानी " का हो सकती है या जमीन का या ऐसी ही और एक समस्या । संघर्ष करनेवाला तो गरीब है चाहे वह मजदूर हो या किसान हो या दलित हो । राजन [रोजनामचा-इसराइल], बापु [कलम हुए हाथ - बलराम], मजदूरी स्त्री [नोल्लतगुवु = तुम्मेटि रघोत्तम रेड्डी] आदि पात्रों में संघर्ष का ही झलक पाते हैं । शोषकों के जाल में फंसकर शोषित किस प्रकार पिस रहे हैं और शोषित वर्ग किस प्रकार संघर्ष करके अपने प्राणों को खो रहे हैं। उसका ही चित्रण " रोजनामचा " [इसराइल] में है । अपनी समस्या पानी की समस्या को दूर करने में सफल होनेवाली मजदूरी स्त्री [नोल्लतगुवु तुम्मेटि रघोत्तम रेड्डी] जैसे पात्र समाज में नयी मानसिकता को उत्पन्न करनेवाले पात्र हैं । इनके अलावा और भी अनेक कहानियाँ हैं जैसे -- पानी [स्वामी] बैंडिनारायण स्वामि कहानी में रायदुर्ग नामक शहर में पीने को पानी के अकाल का चित्रण है । दिन-रात नलों के पास पंक्तियों में खड़े रहना, झगड़े, घर को आये हुए मेहमानों को पानी तक न दे सकने की उनकी स्थिति, नलों के इंतजाम में क्षेत्रीय राजनैतिक नेताओं का असर और उनका मौकापन आदि से मिला हुआ वातावरण है । वहाँ लोगों के ख्यालों में भी

पानी की समस्या है । " जिनको पानी नहीं है उनमें नागरिकता क्या होगी " । इस प्रकार कहलानेवाले कहानीकार के कथन से रायलसीमावासियों की दुःखी जीवन स्पष्ट होती है । " मन्नुतिन्न मिनिषि ‍‍‍(मिट्टी खाया हुआ आदमी) चिलकूरि देवपुत्र (नम्मुकुन्ननेल) केतुविश्वनाथ रेड्डी), अत्याचारम (मधुरांतकम नरेन्द्र) अड्डू (सिंगमनेनि नारायण) आदि कहानियाँ रायलसीमा के समकालीन समस्याओं से जुडे हुए वातावरण को स्पष्ट करनेवाली है ।

6. निष्कर्ष:

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि आठवें और नौवें दशकों में मूलतः दिखायी देनेवाली प्रवृत्तियाँ समान्तर कहानी, जनवादी कहानी और सक्रिय कहानी (हिन्दी में), विरसम, स्त्रीवाद, दलितवाद (तेलुगु में) । प्रवृत्तियाँ नाम से अलग होने पर भी उनका मूल लक्ष्य रहा है " आम आदमी " का चित्रण । आम आदमी से तात्पर्य है पीडित या शोषित मानव प्राणी । शोषित मानव लड-लडकर विजयी होता है या मर जाता है । हिन्दी से भी ज्यादा तेलुगु की कहानियों के नायक, अपनी समस्याओं को सामना करके सफल होते हैं । समस्या के लिए परिष्कार ढूँढने की चेष्टा हिन्दी से भी ज्यादा तेलुगु की कहानियों में हुआ है । स्त्रीवाद या दलितवाद जो भी है उनमें अपने वर्ग की समस्याओं के लिए (स्त्रीवाद में स्त्री समस्याओं को लेकर, दलितवाद में दलितों की समस्याओं को लेकर) परिष्कार या समाधान ढूँढने की चेष्टा की गयी है । कामरेड का कोट (संजय), टेपचू (उदयप्रकाश), बच्चे गवाह नहीं हो सकते (पंकजबिष्ट), दृष्यबन्ध (शैवाल), दिल्ली पहुँचना है (असगरवजाहत) खानदान में पहली बार (रमाकान्त श्रीवास्तव), उसका हिस्सा (रावेशवत्स), " दुन्ना " (भीमजंगय्या), तोर्पु (भूषणम) आकलि (कोलकलूरि इनाक), मोदे मोदे समस्त देशम (केतुविश्वनाथ रेड्डी), सुशीला (पापिनेनि शिवशंकर) निश्चयम (भार्गवीराव) आदि कहानियों के माध्यम से प्रवृत्तियों को प्रस्तुत किया गया है ।

उपसंहार

उपसंहार

आधुनिक साहित्यक विधाओं में कहानी अत्यधिक प्रभावशाली है । कहानी के क्षेत्र में नई प्रवृत्तियों का आगमन सामाजिक नेपथ्य में हुआ है । आरंभ की कहानियों में सुधारवादी प्रवृत्ति प्रधान रही है । बाद में राष्ट्रीयता की छाप स्वतंत्रता संग्राम से उभरी है । हिन्दी प्रांत में " प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना " (1936) और तेलुगु प्रान्त में " अभ्युदय लेखक संघ की स्थापना " (1944) (कहानी क्षेत्र में) ने भविष्य में उभरनेवाली प्रवृत्तियों का दिशा निर्देशन किया है ।

पूर्वशती की कहानियों में मार्क्सवादी तत्त्व अनेक प्राप्त होते हैं । दोनों क्षेत्रों के कहानीकार मार्क्सवाद के साथ-साथ फ्रायड मनोविज्ञान से भी प्रेरित रहे हैं । इस नेपथ्य में प्रेमचन्द, जयशंकरप्रसाद, यशपाल, अज्ञेय, जैनेन्द्र, अश्क (हिन्दी में), श्रीपाद सुब्रह्मण्यशास्त्री, गुडिपाटि वेंकटाचलम, कृष्ण कुमार, गोपीचन्द्र, बुचिबाबु, चिन्तादीक्षितुलु, श्री वेलूरि शिवराम शास्त्री, श्री विश्वनाथ सत्यनारायण (तेलुगु) आदि कहानीकारों का कहानी-क्षेत्र के लिए योगदान विशेष महत्वपूर्ण रहा है ।

उत्तरशती में प्रसाद और प्रेमचन्द परंपरा के बाद के कहानीकारों ने, क्षेत्र की सीमा से बाहर आकर " वैयक्तिकता ", " भोगा हुआ यथार्थ ", " अनुभूति की प्रामाणिकता ", " परिवेश से प्रतिबद्धता " जैसे पक्षों से कहानी को नयापन देने और नयी दिशा में प्रवृत्त करने की कोशिशें कीं । तेलुगु कहानी के क्षेत्र में अभ्युदय भावनाओं के विकास के साथ-साथ पलायनवादी प्रवृत्तियों का भी आगमन रहा है । पाश्चात्य कहानीकारों का जितना प्रभाव हिन्दी कहानीकारों

पर रहा, उतना तेलुगु कहानीकारों पर नहीं रहा । दोनों भाषाओं के कहानीकारों का मूल लक्ष्य रहा है " समकालीन " सामाजिक परिवेश को जनता के सामने लाना । " इस भूमिका में परिन्दे (निर्मल वर्मा) जहाँ लक्ष्मी कैद है (राजेन्द्र यादव), चीफ की दावत (भीष्म साहनी), पिता (ज्ञानरंजन), वापसी (उषा प्रियंवदा), तीसरी कसम उर्फ मारे गये गुलफाम (फणीश्वरनाथ रेणु), जिन्दगी और जोंक (अमरकान्त), मलबे का मालिक (मोहनराकेश), दिल्ली में एक और मौत (कमलेश्वर), यही सच है (मन्नू भण्डारी) (हिन्दी कहानियाँ), मच्चल शंकम (हितश्री), एदुरुचूस्तुन्ना मुहुर्तम, गालीवाना (पालगुम्मि पद्मराजु), नया जीवन, अन्तरात्मा (कोडवटिगंटि कुटुंबराव), भीगम मीनीष (मुनिपल्ले राजु), पातपगलु कोत्तकगलु (गोपीचन्द), एम्पु (चागंटि सोमयाजुलु), नीलि (पुराणम सुब्रह्मण्य शर्मा), डाक्टर्स डैलमा (रावूरि भरद्वाजा), बिल्वलसमोलत्राडु (करुणा कुमार), नन्नुगुरिंच कथ्राायवु (बुच्चिबाबु) (तेलुगु कहानियाँ) आदि कहानियाँ आयीं ।

काफ्का, सात्र, कामु, ज्योजाइन आदि पाश्चात्य साहित्यकारों से प्रभावित होकर, अपने आप को कहानी के क्षेत्र में प्रतिष्ठित करने के लिए विनूतन कथ्य का सहारा लेकर " अकहानीकार " आये तो तेलुगु कथा-क्षेत्र में समकालीन सामाजिक वातावरण से क्रोधित होकर, समाज में समानता लाने के लक्ष्य से दिगंबर साहित्यकारों का आगमन हुआ । आठवें और नौवे दशकों में उत्पन्न आन्दोलनों के लिए पृष्ठभूमि बनकर " यज्ञम " (कालीपटनम रामाराव) " सारा कथलु (रायपोलु विश्वनाथ शास्त्री) जैसे महत्वपूर्ण कहानियों की रचना हुई । अकहानी, दिगंबर कहानी, सचेतन कहानी

§ महीपसिंह § और सहज कहानी § अमृतराय § के कहानीकारों का लक्ष्य सामा - जिक सच्चाई से कटकर रहने के कारण, असीमित अंगागवर्णन के कारण जितनी तेज से उभरे उतनी तेज से प्रवृत्तियों का अंत भी हो गया । इस नेपथ्य में " पेपरवेट " § गिरिराज किशोर §, " सुधीर घोषाल " § काशीनाथ सिंह §, स्थानपूर्ति § सुवास कुमार §, त्रिकोण § कृष्णबलदेव वैद §, रीछ § दूधनाथ सिंह §, " शौर्यकेन " § गंगाप्रसाद विमल § " एक पति के नोट्स § महेन्द्र भल्ला §, " नौ साल छोटी पत्नी " § रवीन्द्र कालिया §, कील § महीप सिंह §, पेशाब § माहेश्वर § § हिन्दी कहानियाँ §, यज्ञम § कालीपट्नम रामाराव §, " पंट तेगुल्लु ", " सिमेंटु संतति ", " विलोमवक्षलु " § नग्नमुनि §, परिवर्तना § तिलक §, सारे जहासे अच्छा § प्रभाकर मंदारा § प्रतिष्ठा § शारदा अशोक-वर्धन §, " तप्पुकु काल्लु रावालि § वाकाटि पांडुरंगाराव §, मनिषि - पशुवु § बलिवाड कांताराव §, छायायें § मुल्लपूडि वेंकटरमणा § आदि तेलुगु कहानियों का निर्माण हुआ है ।

" जनवादी लेखक संघ की स्थापना " कमलेश्वर से उत्पन्न " समांतर कहानी का आगमन § हिन्दी में § और " विप्लवरचयितल संघम § तेलुगु में § आदि सब कहानी क्षेत्र को उजाले की तरफ ले गयी । दोनों भाषाओं के कहानीकारों का मूल लक्ष्य " शोषण का चित्रण " और " आर्थिक समानता लाना रहा है । लेकिन हिन्दी के कहानीकार वास्तविक जीवन सत्यों से उतने जुडे हुए नहीं थे । इसीलिए वे कहानी के क्षेत्र में ज्यादा समय तक टिक नहीं सके । लेकिन तेलुगु क्षेत्र में कहानी की स्थिति ऐसी नहीं रही । क्षेत्रीय स्तर पर विस्तार होता गया । अनेकानेक कहानीकार नये नये कथ्यों को लेकर कहानी के क्षेत्र में आये । क्षेत्रीय विशेषताओं को लेकर भी अनेक कहानियाँ आयीं ।

गिरिजनों से उत्पन्न श्रीकाकुलम आन्दोलन, तेलंगाना में उत्पन्न नक्सलबारी आन्दोलनों को लेकर और रायलसीमा की समस्याओं को लेकर अनेक कहानियाँ लिखी गयी। इस स्थिति में " मक्कार " ﴾ इब्राहीम शरीफ ﴿ " छुट्टियाँ " ﴾ कामतानाथ ﴿, " पूरा सन्नाटा " ﴾ मधुकर सिंह ﴿, आदमखोर ﴾ आशीस सिन्हा ﴿, प्रथम पुरुष ﴾ संतोषकुमारी ﴿, शहादतनामा ﴾ जितेन्द्र भाटिया ﴿, " देवी सिंह कौन " ﴾ रमेश उपाध्याय ﴿, " अंतहीन " ﴾ सुदीप ﴿, " अपराध " ﴾ संजीव ﴿, " मांस का दरिया " ﴾ कमलेश्वर ﴿ ﴾ हिन्दी कहानियाँ ﴿, " चीकुपल्ली ", " पिपीलिकम " ﴾ रावकोंड विश्वनाथ शास्त्री ﴿, " सानुभूति " ﴾ केतु विश्वनाथ रेड्डी ﴿ " तेक्कुड्डबंडा " ﴾ सदानन्द शारदा ﴿ " पाडु-पोरु " ﴾ अप्पलनायुडु ﴿ " आदि होता जा रहा हूँ " ﴾ वि.राजाराम मोहन राव ﴿, " अलजीड " ﴾ पेद्दिब्बोट्ल सुब्बरामय्या ﴿ भूमि ﴾ अल्लमराजरया ﴿, मनोधर्मम ﴾ भीमिडपाटि रामगोपालम ﴿ आदि तेलुगु की कहानियाँ देखी जा सकती हैं।

समांतर और जनवादी आन्दोलनों के विरुद्ध राकेशवत्स से उत्पन्न आन्दोलन है " सक्रिय कहानी आन्दोलन। " समांतर और जनवादी का ही मिश्रण है " सक्रिय कहानी आन्दोलन।" इसका भी मूल लक्ष्य वही है जो समांतर और जनवादी आन्दोलनों का है। इसके समानान्तर में तेलुगु के क्षेत्र में शोषित प्राणी का विभाजन " स्त्रीवाद और दलितवादों के नाम पर हुआ। स्त्रियों की समस्याओं का " स्त्रीवाद " में और दलितों की समस्याओं का " दलितवाद " के अंतर्गत चित्रित करने लगे और समस्याओं का परिष्कार भी अपनी अपनी कहानियों में सूचित करने लगे। यह स्थिति हिन्दी से भी अधिक तेलुगु की कहानियों में रही। इसके उदाहरण है " कामरेड का कोट " ﴾ संजय ﴿,

" टेपयू " ‌‌§ उदय प्रकाश §, " बच्चे गवाह नहीं हो सकते " § पंकजबिष्ट §, " दुश्चक्र " § शैवाल §, " दिल्ली पहुँचना है " § असरवजाहत § " खानदान में पहली बार " § श्रीवास्तव §, " उसका हिस्सा § राकेश वत्स §, " क्रौंचवध § सतापुवित्त §, रोजनामचा § उसराइल §, " कटे हुए हाथ " § बलराम §, कथानायक § विनायक कराडे § § हिन्दी कहानियाँ §, दुन्ना § भोक्कंगय्या §, तोर्पु § भूषणम § " मोदे मोदे समस्त देशम " § वेलु विश्वनाथ रेड्डी §, आकलि " सूर्यडुललेत्ताडु " § कोलकलूरि इनाक §, निश्चयम § भार्गवीराव §, सुशीला § पापिनेनि शिवशंकर § " पालु " § बी·यन·रामुलु § " माधुर्यकांति § पी·सत्यवति §, नोल्ल रगवु § तुम्मेटि रघोत्तम रेड्डी §, नोल्लु § पेद्दिबोट्ल सुब्बरामय्या §, " वेसिनब्रिज्जी दग्गरा " § महेन्द्रा § ।

सामान्यतः कहा जा सकता है कि उत्तरशती की हिन्दी कहानियों में उत्पन्न जो भी प्रवृत्तियाँ है वे सब कहानीकारों में उत्पन्न प्रतियोगिता का ही परिणाम हैं । सागर को मथने से जिस प्रकार अमृत निकला, उसी प्रकार कहानी - कारों में प्रतियोगिता की भावना से महत्वपूर्ण कहानियों का प्रादुर्भाव हुआ है । " समाज " की भूमिका पर समानता की स्थापना लाने के लक्ष्य से और समाज की कुरूपता को, गंदगी को सामने लाने के लिए उत्पन्न प्रवृत्तियाँ है तेलुगु और हिन्दी कहानी के क्षेत्रों में समान है । दोनों कहानिकारों का लक्ष्य एक होने पर भी " वैयक्तिक जीवन " का जो नक्शा हिन्दी की कहानियों में है वह तेलुगु की कहानियों में कम रहा है ।

परिशिष्ट

तेलुगु कहानीकारों का संक्षिप्त परिचय

1. अप्पलनायुडु (1953) :-

इनका जन्मस्थान है विजयनगरम जिले के गुमडी गाँव । आजकल वे विशाख ग्रामीण बैंक में लिपिक रहे हैं । इनका एक मात्र कहानी संग्रह है " पोट्टु-पोरु " । इनकी कहानियों में आन्ध्र शैली में श्रीकाकुल आन्दोलन से जुडी हुई अनेक परिस्थितियाँ और संघर्ष का चित्रण है । वे अब भी अच्छी-अच्छी कहानियाँ लिख रहे हैं । प्रसिद्ध पत्रिकाओं में प्रकाशित हो रही है ।

2. अल्लमराजय्या (1952) :-

इनका जन्म करीमनगर जिले के गाजुलपल्ले नामक गाँव में हुआ है । इन्होंने बी.एस.सी. की उपाधि ले ली । आजकल असोसियेट सिमेंट कंपेनी, मंचिर्याल में नौकरी कर रहे हैं । तेलुगु कहानी को एक महत्वपूर्ण मोड लाने का श्रेय इन्ही को जायेगा । इनका साहित्यक जीवन विप्लव रचयितल संघम् के सदस्य बनने से ही आरंभ हुआ । विद्यार्थी जीवन से ही समकालीन वास्तविक जीवन से प्रेरित होकर लिखने लगे । आजकल के तेलंगाना गाँव की समस्याओं को इनकी कहानियों में देख सकते है । किसान-मजदूर मिल झुलकर, किस प्रकार आन्दोलन में भाग लेते है । मजदूरी बढाने के लिए किस प्रकार लडते है ? आदि से जुडी हुई आन्दोलन की प्रक्रिया इनकी कहानियाँ मिलती है । इनका प्रमुख कहानी संग्रहै हैं - " कोमुरंबी ", " भूमि ", " सृष्टिकर्तलु ", " वूरु अग्निकणम " आदि हैं । इनका दृष्टिकोण है - " मार्क्सिजम ", " लेनिनिजम " और माओ का विचार विधान से जुडी हुई विरसम का दृष्टिकोण है ।

3· कस्णकुमार (1901–56) :-

इनका पूरा नाम है " वंदुकूरि अनंतम " । रायलसीमा की समस्याओं को कहानियों में स्पष्ट करनेवाले कहानीकारों में अग्रणी है । ये साम्यवाद, गांधीवाद के संघर्ष में फँसकर, आदर्श की ओर मुड गये । आजादी के बाद " सरकार " आम आदमी की समस्याओं को ख्याल में न रखने की स्थिति को पकडकर समाज के सामने लाने की कोशिश की । निम्नवर्ग का यथार्थ चित्रण इनकी कहानियों की विशेषता है । इनकी कहानियाँ बहुत कम होने पर भी अत्यंत महत्वपूर्ण है । इनके प्रमुख कहानी संग्रह है " सन्नजीवालु ", " कस्णकुमार कथलु ", " बिल्ललमोलत्राडु " आदि ।

4· कालीपट्नमरामाराव :-

इनका निवासस्थल है " श्रीकाकुल जिले के " मुरपाका " । इन पर श्री कोड - वटिगंटि कुटुंबराव का असर रहा है । जीवन का केन्द्र माननेवाली " स्त्री " की पारिवारिक समस्याओं को सामने लाना इनकी अनेक कहानियों का लक्ष्य रहा है । इनकी कहानियों में शोषण तंत्र, लूटपथा, श्रमिकों और किसानों का दुःखमय जीवन, मध्यवर्ग की आर्थिक समस्यायें, गरीबों में भूख आदि का महत्वपूर्ण वर्णन मिलता है । इनकी कहानी " यज्ञम " प्रेमचन्द की कहानी " कफन " की तरह अत्यंत लोकप्रिय रही है । श्रीकाकुल में उत्पन्न होनेवाले गिरिजन आन्दोलन " के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभाने में भी सफल रही है । उनके कहानी संग्रह है " यज्ञम " कालीपट्नम रामाराव कथलु ", " जीवधारा " आदि है । " रागमयी ", " अभिमानालु " आदि इनकी लंबी कहानियाँ हैं । अब भी अनेक कथा गोष्ठियों में शामिल हो रहे हैं ।

5• केतुविश्वनाथ रेड्डी :-

वे आजकल हैदराबाद में अंबेत्कर विश्वविद्यालय के आचार्य रहे हैं । इनका जन्मस्थल रायलसोमा में एक गांव है । रायलसोमा की क्षेत्रीय विशेषताओं को, और समस्याओं को अपनी कहानियों में स्पष्ट कर रहे हैं । इनको " रितंबरा " पुरस्कार भी मिला है । इनका एक मात्र कहानी संग्रह है " केतुविश्वनाथ रेड्डी कथलु " । आजकल भी अनेक प्रसिद्ध पत्र-पत्रिकाओं में उनके लेख, कहानियाँ छप रही है । इसके अलावा वे अब भी बहुत उत्साह से साहित्यक गोष्ठियों में हाजिर हो रहे हैं ।

6• कोड्वटिगंटि कुटुंबराव § 1909-1970 § :-

गुंटूर जिला, तेनाली में इनका जन्म हुआ । बेनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से एम•एस•सी की उपाधि ली । तेलुगु " युवा " पत्रिका के संपादक रहे । आन्ध्र सचित्र वारपत्रिका § साप्ताहिक § का संपादन भी किया । बाद में वे " चंदमामा " §तेलुगु§ पत्रिका के लिए संपादक बने । " कारवाम " आजीवन उसी में लगे रहे । " स्वागतम ", " कविराट्टु ", " तोल्लिनीपिल्ला ", " काल भैरवुडु कथा " वाहिनी ", " कथा सागरम " आदि आपके कहानी संग्रह है । इनका सुप्रसिद्ध उपन्यास है " चदुवु " । इन्होंने सामाजिक समस्याओं को मार्क्सवादी दृष्टिकोण से देखा था । समकालीन समाज को महान भविष्य की ओर ले जाने के लिए ही उन्होंने कहानियाँ लिखी थी । सर्वमानव समानता ही इनका मूल लक्ष्य रहा । मानव का जीवन किस प्रकार आर्थिक स्थिति पर निर्भर होता है इसका चित्रण इनकी कहानियों में उपलब्ध है ।

7. कोलकलूरि इनाक :-

ये, श्री वेंकटेश्वर विश्वविद्यालय से पी.एच.डी. उपाधि लेकर, श्री कृष्णदेव राय विश्वविद्यालय में अध्यापक बनकर, आजकल प्रोफेसर रहे हैं । इनके प्रमुख कहानी संग्रह है - " उरुभावि ", " सूर्युडुतलेत्ताडु ", " गुलाबिनीवीद ", " भवानि ", " इदाजीवितम " आदि हैं । इनके प्रमुख उपन्यास हैं - समता, अनाथा, सौभाग्यवति, इल्लली विल्लु ", " सोधर्यवती ", " एक्कडीद प्रशांति " आदि हैं । इनका एक मात्र कविता संग्रह है " ऊरा मामूले " । साथ-साथ अनेक लेख भी हैं । इनकी रचनाओं में निम्नवर्ग या शोषित वर्ग की समस्याओं का यथार्थ चित्र मिलता है ।

8. गोपीचन्द :-

इनका जन्म कृष्ण जिले के अंगलूर में हुआ । आधुनिक तेलुगु साहित्य में हेतुवाद युग का प्रवर्तक कविराजु त्रिपुरनेनि रामस्वामी चौधरी का पुत्र है । " ला " डिग्री तो ले लिया । लेकिन पेशा को स्वीकार नहीं किया । " धर्मासुपीत्र ", " इस्नु-पोस्नु " आदि इनके कहानी संग्रह है । इनका प्रसिद्ध उपन्यास है " असमर्थुनि जीवितयात्रा " । चलनचित्र क्षेत्र में कदम रखकर लक्षम्मा, पेरंटालु, प्रियुरालु आदि चित्रों का निर्देशक भी रहे । कुछ समय तक आन्ध्र सरकार में समाचार शाखा के संचालक भी रहे । इन्होंने स्त्री की वैवाहिक आजादी के साथ, शिक्षित होकर, चार दिवारों से बाहर आकर सबसे मिलकर सामाजिक, राजनैतिक आन्दोलनों में भाग लेने के लिए, पुरुषों से बराबर चलने के लक्ष्य से अनेक कहानियाँ लिखी । इसके अलावा मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से पात्रों की मन:स्थितियों का चित्रण भी इनकी कहानियों में पाते हैं ।

9• चागंटि सोमयाजुलु :-

ये, गुरजाड अप्पाराव का वारिस बनकर कलिंग आन्ध्रा में कहानियाँ लिखने-वाले प्रतिभावान कहानीकार है । इनका जन्म श्रीकाकुलं में हुआ । इन्होंने अंग्रेजी में छन्दोबद्ध पद्यों की रचना की है । नामक ढंग से कहानियाँ लिखीं । इनके प्रमुख कहानीसंग्रह है " चिन्नाजी " चासों कथलु " कुछ समय तक आन्ध्रा अभ्युदय रचयितल संघम् के अध्यक्ष रहे । " कलिंग कथानिकलु " नामक एक कहानी संकलन भी इनका ही है । 1985 तक कहानियाँ लिखते रहे । अंतिम समय तक अनेक गोष्ठियों को हाजिर होते रहे । इनका प्रभाव भीमिडपाटि रामगोपालम, चागंटि तुलसी पर है । ये, मार्क्सवादी दृष्टिकोण से जनता की समस्याओं को ग्रहण करके, समाज में, जनता में चेतना लाने के लिए ही अनेक कहानियाँ लिखते रहे । इनकी कहानी " वंडपाटु " 1986 में फ्रांकफर्ट में पुस्तक प्रदर्शन में चुनी गयी कहानियों के संग्रह में जगह पायी ।

10• नग्नमुनि :-

दिगंबर कवियों में प्रमुख है " नग्नमुनि " । तेलुगु साहित्य में दिगंबर कवियों को महत्वपूर्ण स्थान रहा है । उनमें नग्नमुनि, चेरबंडराजु और निखिलेश्वर आदि सबने कहानियों की भी रचना की । नग्नमुनि तो कहानी क्षेत्र में भी अपनी कहानियों में हलचल मचा दिया । उनका प्रमुख कहानी संग्रह है " विलोम कथलु " । शोषणतंत्र को भगाना और आर्थिक समानता लाना, मानव मूल्यों की रक्षा करना इनकी कहानियों का मूल लक्ष्य रहा है । विप्लवात्मक (आन्दोलननात्मक) दृष्टिकोण से, सामान्य कथ्य से, विचारात्मक धरातल पर कहानी को प्रस्तुत करते हुए, वास्तविकता को न छोडते हुए कहानी लिखना इनकी विशेषता है ।

11• पाल्गुम्मि पद्मराजु (1915 – 1983) :-

इनका जन्म पश्चिमगोदावरी जिले के तिरुपतिपुरम नामक गाँव में हुआ। आपने बेनारास विश्वविद्यालय से रसायन शास्त्र में एम,एस•सी• उपाधि ली। आरंभ में कालेज के प्राध्यापक रहे। बाद में चलन चित्र के क्षेत्र में आये और अनेक चित्रों के लिए स्क्रिप्ट और संवाद लिखते रहे। ये अन्तर्राष्ट्रीय तौरपर पुरस्कृत तेलुगु कहानीकारों में " प्रथम " हैं। 1952 में इनकी कहानी " गालीवाना " (तूफान) को अन्तर्राष्ट्रीय कहानी प्रतियोगिता में द्वितीय पुरस्कार मिला। इनके कहानीसंग्रह हैं " कूलीजनम ", " गालीवाना " आदि। 60 से ज्यादा ही कहानियाँ लिख चुके हैं। इनकी कहानियों में ग्रामवासियों का जीवन का चित्रण, नगरजीवन, मनोविश्लेषण, वेश्या जीवन, बच्चों का जीवन आदि का समकालीन परिस्थितियों के अनुरूप चित्रण मिलता है। तेलुगु भाषा की आंचलिकता इनकी कहानियों की मूल विशेषता है। ये मानवतावादी हैं। इन्होंने अपनी कहानियों का कथ्य को कल्पना से नहीं लीं, समकालीन समाज से लिया।

12• पुराणम सुब्रह्मण्य शर्मा :-

इनका जन्म पूरब गोदावरी जिले के पिठापुरम में हुआ है। ये बहुत समय तक आन्ध्र ज्योति सचित्रवार पत्रिका के संपादक रहे हैं। 1953 में न्यूयार्क हेराल्ड ट्रिब्यून " से चलायी गयी विश्व कहानी प्रतियोगिता में चुनी गयी तेलुगु की चार कहानियों में पहली कहानी है " नीलि "। इनकी कहानियों में निम्न और मध्य-वर्ग के विभिन्न चित्र मिलते हैं। " जीवन जीने के लिए है न की खोने का " जैसा तथ्य कहानियों में मिलता है। इनके प्रमुख कहानीसंग्रह - " कथा सागरम " " नीलि ", " चप्रासी ", " शिवकांता " आदि हैं।

13• पेद्दिबोट्ल सुब्बरामय्या ﴾ 1938 ﴿ :-

ये, आजकल लयोला कालेज, विजयवाडा में अध्यापक की पेशा में लगे रहे है । सन् 1959 से ही कहानियाँ लिख रहे है । लगभग पचास से ज्यादा ही कहानियाँ प्रकाशित है । अब भी प्रसिद्ध दैनिक, मासिक पत्रिकाओं में प्रकाशित हो रहे है । रायलसीमा और आन्ध्रा, प्रांत की विभिन्न समस्याओं को लेकर कहानियाँ लिखने में पूर्णत: सफल रहे है । प्रमुख कहानी संग्रह है - " नयनतारा ", " नीलु ", " मुसुरु ", " पोगमंचु ", " कल्लकोडु ", " पेद्दिबोटल सुब्बरामय्य कथलु आदि है । इनके प्रमुख उपन्यास है " ध्रुवतारा ", " पेदुमात्रा ", " पंजरम ", मुक्ती ", " अंगार तल्पम ", " काम्लुतुन्न पूलतोटा ", " सूर्यादयम " आदि है ।

14• बालगंगाधर तिलक :-

इनका जन्म स्थल है " तणुकु " । वहाँ विज्ञान परिषत को स्थापित करके, उसी को " साहितीसरोवरम " को तरह बदलकर साहित्यक सेवा करते रहे । इनकी कविता संग्रह " अमृतम कुरीसिन रात्री " को 1970 में केन्द्र साहित्य अकादमी से पुरस्कार मिला । इनका एकमात्र कहानी संग्रह है " तिलक की कहानियाँ " । इन्होंने उत्तम नाटकों की भी रचना की है । वृन्दावन कलासमिति को स्थापित करके नाटकों को प्रदर्शन भी चलाया गया म इनकी कहानियों में जाति, धर्म का भेदभाव, धनिक और गरीब के बीच का संघर्ष " नारी की समस्यायें, अंध विश्वास आदि अनेक सामाजिक समस्याओं का चित्र मिलता है साथ-साथ " प्रेम " के विविध का भी चित्रित है । मानव मूल्यों की रक्षा इनकी कहानियों का मूल लक्ष्य रहा है ।

15• बुच्चिबाबु [1918 - 1967] :-

इनका असली नाम है " शिवराजु वेंकट सुब्बाराव " । पश्चिम गोदावरी जिले के एलूरु में इनका जन्म हुआ । अंग्रेजी साहित्य में एम•ए• करके, कुछ समय तक अंग्रेजी के व्याख्याता रहकर, उसके बाद से अंतिम समय तक आकाशवाणी के कार्यक्रमों का निर्वाहण करते रहे । 1941 से कहानियाँ लिख रहे हैं । " आत्मप्रिया ", " ना गाजु-मेडा ", " ज्ञाननेत्रम ", " चैतन्यश्रवंती ", " कललो जारिन कन्नीरु " आदि अनेक कहानी संग्रह प्रकाशित है । कुलमिलाकर इनके नौ कहानी संग्रह है । इनका प्रसिद्ध उपन्यास है " आखिरी जो बचा " और " आत्मवंचना " जैसे नाटक भी है । " षेक्सपियर साहित्य परमार्श " इनकी आलोचनात्मक ग्रंथ है । इनकी कहानियों में व्यक्ति की बाहरी मनःस्थिति से भी अंतरंग दुनिया को दिखाने की कोशिश मिलती है । इसे हम " चैतन्यश्रवन्ती " कहते हैं । इसी शैली में लिखी गयी कहानी का नाम भी चैतन्यश्रवन्ती ही है ।

16• बोय्यजंगय्या :-

इनका जन्म नलगोंडा जिले के पतंगी नामक गाँव में हुआ है । 1970 से कहानियाँ लिख रहे हैं । ये, उस्मानिया विद्यालय के स्नातक हैं । राचकोंड विश्वनाथ शास्त्री से प्रशंसित तेलंगाना कहानीकार है । इनके प्रमुख कहानी संग्रह है " गारेलु ", " एच्च-रिका ", " भैसा " । " एच्चरिका " कहानी संग्रह के लिए नागार्जुना विश्वविद्यालय से श्री श्री स्मारक स्वर्णपतक मिला है। इनकी कहानियों में तेलंगाना प्रांत में पट्वारी प्रथा में पिसनेवाले गरीब किसानों का यथार्थ चित्रण और निम्न वर्ग की अनेक समस्याओं का स्पष्ट चित्रण मिलता है ।

17· भीमिडपाटि रामगोपालम :-

वे आजकल कहानी क्षेत्र में भ·रा·गो नाम से प्रसिद्ध है । 1950 से ही कहानियाँ लिख रहे है । ये, लगभग दो सौ कहानियाँ लिख चुके है और भी लिख रहे है । इनका प्रमुख कहानी संग्रह " इट्लु " भी विधेयुडु " को केन्द्र साहित्य अकादमी का पुरस्कार मिला है । इनकी " वेन्नेलवोडा § 1960 § " मनोधर्मम § 1977 §, कहानियों को अच्छे पुरस्कार मिले है । 1991 में " उत्तम हास्य रचनाकार " का पुरस्कार " तेलुगु विश्वविद्यालय से उनकी " कथन कुतूहलम " को मिला है । " नूट पदहारु " नामक एक कहानी संग्रह भी प्रकाशित हो चुकी है । इनकी कहानियों में समकालीन समस्याओं का स्पष्ट चित्र मिलता है और मनोल्लास भी होता है ।

18· भार्गवीराव :-

आजकल वे हैदराबाद में उस्मानिया विश्वविद्यालय में अंग्रेजी विभाग में रीडर रही है । इनकी मातृ भाषा कन्नड है । इसीलिए कन्नड साहित्य को तेलुगु में और तेलुगु साहित्य को कन्नड में और अंग्रेजी में अनुवाद कर रही है । कन्नड के प्रमुख नाटककार गिरीशकर्नाड के नाटकों को तेलुगु भाषा में अनुवाद कर चुकी है । इनका प्रमुख कहानी संग्रह है - " पुक्कनीवादि, " गुंडेक्रिंद तडि, इंकाना इक्पै सागवु § दलित कहानियों का संकलन § आदि है ।

19· भूषणम :-

इनका निवास स्थल है श्रीकाकुलम के निकट एक गाँव । इनपर राचकोंड विश्वनाथ शास्त्री, श्रीरंगम श्रीनिवासराव, कालीपट्नम रामाराव आदि का प्रभाव रहा है । कथा साहित्य में सामाजिक यथार्थवाद के लिए राचकोंड विश्वनाथ शास्त्री को

युगकर्ता मान लिये तो गिरिजन आन्दोलनों के लिए " भूषणम " को युगकर्ता के रूप में लेना होगा। धनिक और शोषक वर्ग मिलकर श्रमिकों को लूटनेवाली सामाजिक स्थिति इनकी कहानियों का मूल केन्द्र रहा है। श्रीकाकुल आन्दोलन से संबंधित लगभग सभी घटनायें इनकी कहानियों में हैं। इनकी प्रसिद्ध कहानी है " सिलोर्पु "।

20· महेन्द्रा (1959) :-

ये मधुरांतक राजाराम जी का ही छोटा बेटा है। एम·एस·सी· उपाधि लेने के बाद, श्री वेंकटेश्वरा ग्रामीण बैंक का मैनेजर बन गये है। रायलसीमा की अनेक समस्याओं का स्पष्ट चित्रण इनकी कहानियों में प्रस्तुत है। अब तक इनका कोई कहानी संग्रह प्रकाशित नहीं है। लेकिन प्रसिद्ध दैनिक, साप्ताहिक, मासिक पत्रिकाओं कहानियाँ छप रही है। इनकी कहानियों में भी शहर और गाँव के वातावरण का स्पष्ट चित्रण, मध्यवर्ग और निम्नवर्ग की समस्याओं के नेपथ्य में मिलता है। इनकी प्रमुख कहानी है "बेसिनब्रिड्ज दग्गरा "।

21· मुनिपल्लेराजु :-

ये 1951 से ही कहानियाँ लिख रहे हैं। कुलमिलाकर पचास से ज्यादा ही कहानियाँ है। रावीशास्त्री जी का स्मारक पुरस्कार पहले पहल " मुनिपल्लेराजु कथलु " को ही मिला है। इनकी कहानियों में मध्यवर्ग ब्राह्मणों की समस्याओं का चित्र मिलता है। वे, अब भी कथा गोष्ठियों में आकर अपनी ओर से, कथा क्षेत्र की उन्नति के लिए, अपना पात्र निभा रहे हैं।

22• मुल्लपूडि वेंकटरमणा :-

इनका जन्म पूरब गोदावरो जिले के धवलेश्वरम में हुआ है। बहुत समय तक आन्ध्र पत्रिका में नौकरो करते रहे। बाद में चलचित्र निर्माता बनकर 15 से भी ज्यादा चित्रों का निर्माण करने में सफल रहे। साथ-साथ चलचित्र रचनाकार बनकर लगभग 100 सिनेमाओं को वार्तालाप के इन्तजाम में हो लगे रहे। इनके प्रमुख कहानो संग्रह है -- " राधा गोपालम ", " इद्दरम्माइलु - मुग्गुरब्बायिलु ", " ऋणानंदलहरि ", " बुड्डु ", " सोराकल्याणम ", " राजकोय बेताल पंचविंशति ", " नीव्वते-नीवादि " आदि इनके कहानो संग्रह है। आजकल के हास्य कहानोकारों में अग्रणी है। " मुल्लपूडि वेंकट रमणा "। इनको " कथलु " चैतन्यश्रवन्तो की शैलो में लिखी गयो है।

23• राचकोंड विश्वनाथ शास्त्री :-

उत्तरशतो को तेलुगु कहानो के कहानोकारों में उल्लेखनोय हास्याकर है " राच-कोंड विश्वनाथ शास्त्रो "। " ला " डिग्रो लेने के पश्चात् लायर को पेशा अपनाकर आगे बढ़ो रहे। इनके प्रमुख कहानो संग्रह है " राचकोंड विश्वनाथ शास्त्रो कथलु " " कलंकंठो और अन्य कहानियाँ है ", " बुंककुलु ", " आरुचित्रालु ", " आरु सारा कथलु ", " आरु सारो कथलु ", " ओ मंचिवाडि कथा " आदि है। " अल्पजोवि रत्ताल-राबालु " इनके प्रसिद्ध उपन्यास है। इनको " आरु सारा कथलु " श्रीकाकुलम के उत्पन्न गिरिजन आन्दोलनों के लिए महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने में सफल रही। उन्होंने पोडित और शोषित वर्गों के बारे में, उनको समस्याओं को स्पष्ट करते हुए उनमें चेतना जगाने के लक्ष्य से हो कहानियों की रचना की।

24· रावूरि भरद्वाज [1926] :-

ये शुरू में चलम से प्रेरणा पाकर कहानियाँ लिखते रहे । इनकी सैकड़ों कहानियाँ लगभग 40 संग्रहों में निकल चुकी है । लगभग 50 साल से कहानियाँ लिख रहे है । इनके 80 रेडियों नाटक और रूपक भी है । इनकी कहानियों को तीन स्वर्णपतक और एक रजित पतक मिला । वे आकाशवाणी, हैदराबाद केन्द्र में काम करते रहे । इनकी कहानियों से अछूता व्यक्ति या अंश दिखायी नही देता । इनकी कहानियों में " त्रिनेत्रुडु " नरक लोकम ", " आहुति ", " चित्राहम् " आदि बहुत चर्चित हुयी हैं । वे अब भी साहित्यक घोष्ठियों को आकर, अपने विचारों को स्पष्ट कर रहे हैं ।

25· वाकाटिपांडुरंगाराव :-

इनका जन्म मद्रास में हुआ है । ये बी·ए· डिग्री लेने के बाद " प्रजा पत्रिका में ", " आनंदवाणि " में " केन्द्र आहार व्यावसाय मंत्रित्व शाखा " में उपसंपादक रहे हैं । उसके बाद हैदराबाद में " न्यूसटैम " [अंग्रेजी दैनिक] पत्रिका के सहायक संपादक रहे हैं । इन्होंने तमिल से तेलुगु में अनेक अनुवाद किया है । हर कहानी के पहले ब्राकेटों में ही कहानी का संक्षिप्त परिचय देने का प्रयोग पहली बार इनकी कहानियों में ही हुआ है । इनके कहानी संग्रह है " अपराजिता ", " सृष्टि लोतिपुर्यीनिद ", " हिमान्विता ", " पेत्तन्नमुद्दा ", " वाकाटि पांडुरंगाराव कथलु " आदि है । आजकल कहानी घोष्ठियों को आकर अपने विचारों को स्पष्ट करते हुए कहानी के उज्वल भविष्य के लिए महत्वपूर्ण योगदान दे रहे है ।

26• शारदा अशोकवर्धन :-

ये आजकल हैदराबाद में बाल भवन का संचालक को जिम्मेदारी निभा रही हैं। इनका प्रमुख कहानी संग्रह है " शारदा अशोकवर्धन कथलु "। दूरदर्शन में प्रदर्शित " स्त्री " को चार पुरस्कार मिले। इनके अलावा और भी अनेक पुरस्कार शारदा अशोकवर्धन जी को मिला है। सिर्फ कहानियाँ ही नहीं, उपन्यास, कविता, गीत और नाटक आदि की रचना भी इन्होंने की। इनकी कहानियों में स्त्री की वैयक्तिक आजादी की और आत्मशक्ति की याद दिलाने की कोशिश मिलती है। हर कहानी में, रचना में मन को स्पन्दित करनेवाले अनेक मूल्य दिखायी देते हैं।

27• सत्यवति :-

स्त्री समस्याओं को लेकर लिखनेवाली कहानी लेखिकाओं में " सत्यवति जी " को उल्लेखनीय स्थान रहा है। स्त्री समस्याओं को, अपनी रचनाओं के द्वारा स्पष्ट करने में इनकी रचना प्रक्रिया की महत्वपूर्ण स्थान है।। ऐसी ही कहानियों में प्रमुख है " इल्लालकाने ", " मातृमूर्यकांति " आदि है। इनकी कहानियाँ अंग्रेजी और तमिल भाषाओं को अनुवाद हो चुकी है। इनका एकमात्र कहानी संग्रह है " सत्यवतिकथलु "।

28• सदानन्द शारदा (1951) :-

वे 1970 से कहानियाँ लिख रहे हैं। इनका निवासस्थल है " वरंगल "। आजकल वे हैदराबाद में एल•एन,गुप्ता कालेज में अध्यापक हैं। तेलंगाना शैली में, क्षेत्रीय विशेषताओं को, समस्याओं को लेकर कहानी लिखनेवालों में एक है। निम्न वर्ग और मध्यवर्ग की समस्याओं का स्पष्ट चित्र इनकी कहानियों में है। कुल मिलाकर 50 से ज्यादा ही कहानियाँ हैं। प्रमुख कहानी संग्रह है - " जाडी ",

" गोलुसु ", " कोंपनोल्ल भाविं आदि । वे आज भी बहुत उत्साह से कथा घोष्ठियों में भाग रहे हैं और चला रहे हैं ।

29• हितश्री :-

इनका असली नाम है " मल्लुकुमिल्लि वेंकटनरसिंहा राव " । निवास स्थल है " तेनाली " । एम•काम• डिग्री लेने के बाद बी•एस•आर•अण्ड यन•वी•आर• कालेज के अध्यापक रहे । ये भी लगभग 1950 से कहानियाँ लिख रहे हैं । विश्व कहानी प्रतियोगिता में इनकी कहानी " स्त्री " को भी प्रमुख स्थान मिला है । " कृष्ण वेणिकल्लिडिल्लिदि " नामक कहानी को आन्ध्र प्रभा में कहानियों की प्रतियोगिता में दो पुरस्कार मिले है । इस कहानी को " दूरदर्शन " में भी प्रदर्शित किया गया है । 1989 में " हितश्री कथा मंजूषिका " नामक कहानी संग्रह को तेलुगु विश्वविद्यालय से " उत्तम कहानी संग्रह " का पुरस्कार भी मिला है । " कथासागरम ", " हितश्री कथामंजूषा " " जरीउंडु ", " गुलाब पुष्पु " " सिगरेट " आदि इनके कहानी संग्रह हैं । " प्राग्ज्योति " इनके रेडियो नाटकों का संग्रह है । " अंतवाहिनी ", " सामान्युडि कामना " इनके उपन्यास हैं ।

उपर्युक्त कहानीकारों के अलावा कालुव मल्लय्या, तुम्मेपूडि रघोत्तम रेड्डी, अमरेन्द्रा, नरेन्द्रा, प्रभाकर मंदारा, पापिनेनि शिवशंकर, पुप्पलनरसिंहम वेदगिरि रांबाबु आदि अनेक कहानीकार भी अच्छी अच्छी कहानियाँ लिख रहे हैं । कथा-घोष्ठियों में भाग ले रहे हैं । प्रसिद्ध साप्ताहिक, दैनिक और मासिक पत्रिकाओं में उनकी कहानियाँ प्रकाशित हो रही हैं ।

कहानी संग्रह [हिन्दी]

कहानीकार का नाम	कहानी का नाम	प्रकाशक	संकलन
1	2	3	4
1• असगर वजाहत	दिल्ली पहुँचना है	प्रकाशन संस्थान दिल्ली ।	1981
2• अमरकान्त	जिन्दगी और जोंक	नया साहित्य प्रकाशन, इलाहाबाद	1958
3• आशीष सिन्हा	आदमखोर	भारती भाषा प्रकाशन, दिल्ली	1974
4• इब्राहीम शरीफ	कई सूरजों के बीच	नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली	1972
5• इसराइल	रोजनामचा	धरती प्रकाशन गंगाशहर, बीकानेर	1981
6• उदय प्रकाश	तिरीछ	वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली	1989
7• उषा प्रियंवदा	जिन्दगी और गुलाब के फूल	भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली	1971
8• ऋताशुक्ल	क्रौंचवध तथा अन्य कहानियाँ	भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली	1985

1		2	3	4
9·	कमलेश्वर	मांस का दरिया	शब्दाकार प्रकाशन दिल्ली	1977
10·	काशीनाथ सिंह	लोग बिस्तरों पर	अभिव्यक्ति प्रकाशन इलाहाबाद-2	1968
11·	काशीनाथ सिंह	आदमीनामा	प्रकाशन संस्थान, दिल्ली	1978
12·	कृष्णबलदेव वैद	मेरी प्रिय कहानियाँ	राजपाल एवं संज, दिल्ली	1978
13·	गंगाप्रसाद विमल	अतीत में कुछ	भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली	1971
14·	गंगाप्रसाद विमल	कोई शुरुआत	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	1973
15·	गिरिराज किशोर	पेपरवेट	राजकमल प्रकाशन, दिल्ली	1967
16·	दूधनाथ सिंह	सपाट चेहरेवाला आदमी	अक्षर प्रकाशन, दरियागंज, दिल्ली	1967
17·	दूधनाथ सिंह	पहलाकदम	रचना प्रकाशन, इलाहाबाद	1976
18·	सं·धनंजय वर्मा	हिन्दी की प्रगतिशील कहानियाँ	राधा कृष्ण प्रकाशन, दिल्ली	1986

1		2	3	4
19.	धर्मवीर भारती	चाँद और टूटे हुए लोग	किताब महल, इलाहाबाद	1967
20.	निर्मल वर्मा	मेरी प्रिय कहानियाँ	राजपाल एंड संज़, दिल्ली	1973
21.	पंकज बिष्ट	बच्चे गवाह नहीं हो सकते	राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली	1986
22.	भीष्म साहनी	भटकती राख	~~राजकमल~~ प्रकाशन, दिल्ली	1966
23.	बलराम	कलम हुए हाथ	पराग प्रकाशन, दिल्ली	1980
24.	मधुकर सिंह	पहलापाठ	वाणी प्रकाशन, दिल्ली	1979
25.	मन्नू भण्डारी	यही सच है	अक्षर प्रकाशन, दरियागंज, दिल्ली	1966
26.	महीप सिंह	उजाले के उल्लू	शारदा प्रकाशन, नई दिल्ली	1979
27.	महेन्द्र भल्ला	एक पति के नोट्स	राजकमल प्रकाशन दिल्ली	1967
28.	महेश्वर	महेश्वर की कहानियाँ	प्रदीप प्रकाशन, कलकत्ता	1971

1		2	3	4
29•	महेश्वर	स्पर्श	मिलन प्रकाशन, अंसारी रोड, दिल्ली	1979
30•	मिथिलेश्वर	बाबूजी	इंद्रप्रस्त प्रकाशन दिल्ली	1980
31•	मृदुला गर्ग	कितनी कैदें	इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन, दिल्ली	1975
32•	मोहनराकेश	श्रेष्ठ कहानियाँ	राजपाल एण्ड संस दिल्ली	1966
33•	रमाकान्त श्रीवास्तव	खानदान में पहलीबार	साहित्यवाणी, इलाहाबाद	1981
34•	रवीन्द्रकालिया	नौ साल छोटी पत्नी	अभिव्यक्ति प्रकाशन इलाहाबाद	1969
35•	रवीन्द्रकालिया	कालारजिस्टर	रचना प्रकाशन, इलाहाबाद	1972
36•	राजेन्द्र यादव	मेरी प्रिय कहानियाँ	राजपाल एण्ड संस, दिल्ली	1974
37•	राजेन्द्र यादव	टूटना और अन्य कहानियाँ	अक्षर प्रकाशन, दिल्ली	1966
38•	राजेन्द्र यादव	जहाँ लक्ष्मी कैद है	अक्षर प्रकाशन, दिल्ली	1984

1		2	3	4
39•	विनायक कराडे	कथानायक	शब्दपीठ प्रकाशन, इलाहाबाद	1981
40•	सतोषमाली	प्रथम पुरुष	साहित्यवाणी, इलाहाबाद	1972
41•	सुदीप	अंतहीन	सारिका, नवंबर	1972
42•	सुवास कुमार	स्थानपूर्ति	ज्ञानोदय के नयी कलम अंक में	जुलाई 1966
43•	संजय	कामरेड का कोट	" हंस "	फरवरी, 1989
44•	हेतु भरद्वाज	प्रतिनिधि कहानियाँ 1987	पंचशील प्रकाशन, जयपुर	1988
45•	ज्ञानरंजन	सपना नहीं	रचना प्रकाशन, इलाहाबाद	1977

क्र•सं•	आलोचक का नाम	पुस्तक का नाम	प्रकाशक	प्रथम संकलन
1	2	3	4	5

आलोचनात्मक ग्रन्थ [हिन्दी]

1•	इकबाल शेख मुहम्मद	स्वतंत्रतापूर्व हिन्दी और तेलुगु कहानी	कन्दर्प प्रकाशन दरियागंज, नयी दिल्ली	1988
2•	इन्द्रनाथ मदान	हिन्दी कहानी : एक नयी दृष्टि	संभावना प्रकाशन हापुड़	1978
3•	इन्द्रनाथ मदान	समकालीन कहानी : एक नयी दृष्टि	लिपि प्रकाशन, दिल्ली	1977
4•	इन्द्रनाथ मदान	इलाचन्द्र जोशी : साहित्य और समीक्षा	साहित्य प्रकाशन, विलासपुर, मध्यप्रदेश	1959
5•	कमलेश्वर	नयी कहानी की भूमिका	शब्दकार प्रकाशन, दिल्ली	1978
6•	गंगा प्रसाद विमल	आधुनिक हिन्दी कहानी	मैक मिलन आफ इंडिया दिल्ली	1978
7•	जितेन्द्रवत्स	साठोत्तरी हिन्दी कहानी और राजनीतिक चेतना	साहित्य रत्नाकर 104/ए/118, रामबाग, कानपुर	1989

1	2	3	4	5
8•	देवीशंकर अवस्थी	नयी कहानी : सन्दर्भ और प्रकृति	अक्षर प्रकाशन दिल्ली	1966
9•	देवेश ठाकुर	हिन्दी कहानी का विकास	मीनाक्षी प्रकाशन मेरठ	1978
10•	धनंजय (सं.)	समकालीन कहानी : दिशा और दृष्टि	अभिव्यक्ति प्रकाशन इलाहाबाद	1970
11•	धनंजय (सं.)	आज की हिन्दी कहानी	"	1969
12•	पुष्पपालसिंह	समकालीन कहानी : युगबोध का संदर्भ	नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 23 दरियागंज, नयी दिल्ली	1986
13•	प्रहलाद अग्रवाल	हिन्दी कहानी : सातवाँ दशक	मैकमिलन कंपनी, दिल्ली	1975
14•	"	"	प्रगति प्रिंटर्स दिल्ली	1977
15•	यदुनाथ सिंह	समकालीन कहानी के रचनात्मक आशय	ओम प्रकाशन, 30-बी, केवलपार्क एक्सटेंशन, आजादपुर दिल्ली	1987
16•	"	समकालीन हिन्दी कहानी प्रकृति और परिदृश्य	चित्रलेखा प्रकाशन इलाहाबाद	1978

1	2	3	4	5
17•	रघुवीर सिन्हा	आधुनिक हिन्दी कहानी समाजशास्त्रीय दृष्टि	अक्षर प्रकाशन दिल्ली	1977
18•	रंजतोश कुमार	हिन्दी कहानी के आन्दोलन : उपलब्धि और सीमायें	नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली	1986
19•	रमेशचन्द्र लवानिया	हिन्दी कहानी में जीवन मूल्य	अमित प्रकाशन गाजियाबाद	1973
20•	राकेश वत्स	सक्रिय कहानी की भूमिका	अभिषेक पब्लिकेशन्स चण्डीगढ	
21•	राजेन्द्र कुमार	स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी में ग्राम्य जीवन और संस्कृति	परिमल प्रकाशन दिल्ली	1979
22•	राजेन्द्र यादव	कथा यात्रा 1988	अक्षर प्रकाशन नयी दिल्ली	1969
23•	"	एक दुनिया समानान्तर	"	1980
24•	"	कहानी : स्वरूप और संवेदना	नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली	1968
25•	रामदरश मिश्र और नरेन्द्र मोहन	हिन्दी कहानी दो दशक की यात्रा	"	1970
26•	रामदरश मिश्र	हिन्दी कहानी : एक अंतरंग पहचान	"	1977

1	2	3	4	5
27.	लक्ष्मणदत्त गौतम	आधुनिक कहानी साहित्य में प्रगति चेतना	कोणार्क प्रकाशन दिल्ली	1972
28.	लालचन्द्र गुप्त मंगल	अस्तित्ववाद और नयी कहानी	सूर्य प्रकाशन, दिल्ली	1975
29.	"	हिन्दी कहानी का इतिहास	संजीव प्रकाशन दिल्ली	1988
30.	वासुदेव शर्मा	साठोत्तर हिन्दी कहानी : मूल्यों की तलाश	शारदा प्रकाशन, नई दिल्ली	1986
31.	विनय	समकाली कहानी : समान्तर कहानी	मैकमिलन के आफ इंडिया, दिल्ली	1977
32.	विश्वम्भरनाथ उपाध्याय	स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कथा साहित्य	श्रीगीता प्रेस, उदयपुर	1976
33.	वेदप्रकाश अमिताभ	हिन्दी कहानी के सौ वर्ष	मधुबन प्रकाशन, 21, द्वारिकापुरी मथुरा	1987
34.	वेदप्रकाश अमिताभ	हिन्दी कहानी एक अंतर्यात्रा	गिरनार प्रकाशन, महेसाना	1981
35.	शिवशंकर पाण्डेय	स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी : कथ्य और शिल्प	आलेख प्रकाशन, दिल्ली	1978

1	2	3	4	5
36•	सत्यबक्श सिंह	नयी कहानी : कथ्य और शिल्प	अभिनव भारती प्रकाशन, इलाहाबाद	1973
37•	"	नयी कहानी : नये प्रश्न	साहित्यलोक, 86/492, देवनगर, कानपुर	1981
38•	सरबजीत	हिन्दी कहानी : आठवाँ-दशक	संगीत प्रकाशन कुरुक्षेत्र	1987
39•	सावित्रीचन्द्र शोभा असगर वजाहत प्रदीप मांडव	हिन्दी कहानी : एक मूल्यांकन	भाषा प्रकाशन, नई दिल्ली	1978
40•	सुरेन्द्र	नयी कहानी : दशा, दिशा, संभावना	अपोलो प•लि• जयपुर	1966
41•	सुरेश धींगड़ा	हिन्दी कहानी : दो दशक	अभिनव प्रकाशन, दिल्ली	1978
42•	सुरेश सिन्हा	हिन्दी कहानी उद्भव और विकास	अशोक प्रकाशन, दिल्ली	1967
43•	सूबेदार राय	स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी का विकास	अनुभव प्रकाशन, श्रीनगर, कानपुर	1981

पत्रिकायें (हिन्दी)

1.	आधार	नवम्बर, 1964 (मासिक)
2.	इतवारी पत्रिका	5-8-1964
3.	कल्पना	सितम्बर, 1962
4.	कल्पना	अगस्त, 1968
5.	कहानी वर्ष "17" अंक	जनवरी, 1970
6.	धर्मयुग	28-5-1967
7.	नई कहानियाँ	मार्च, 1968
8.	माया (मासिक)	नवम्बर, 1976
9.	लहर	सितम्बर - अक्तूबर, 1982
10.	लहर	अक्तूबर - नवम्बर, 1978
11.	लहर	दिसम्बर - जनवरी 1979
12.	विग्रह	फरवरी 1967
13.	शिरोमणि कथा	जनवरी, 1990
14.	साम्य (मासिक)	सितम्बर, 1988
15.	सारिका	16-31 जुलाई, 1984
16.	सारिका	16 - 29 फरवरी, 1982
17.	सारिका	नवम्बर , 1972
18.	सारिका	दिसम्बर, 1975
19.	सारिका	दिसम्बर, 1974

20• सारिका मार्च, 1975

21• सारिका अगस्त, 1965

22• सारिका फरवरी, 1972

23• संचेतना दिसम्बर, 1981

24• हंस फरवरी, 1989

1	2	3	4	5

कहानी संग्रह ‖ तेलुगु ‖

1.	अप्पलनायुडु	पोडु-पोरु	विरसम, श्रीकाकुलम यूनिट	1988
2.	अब्बूरि छायादेवी	अब्बूरि छायादेवी कथलु	उदयमा पब्लिकेशन्स हैदराबाद	1991
3.	अभ्युदय प्रकाशन	अभ्युदय कथलु	अभ्युदया कार्यालय विजयवाडा	1949
4.	करुणा कुमार	सन्नजीवालु	संस्कृति निलयम 88, कचेरि रोड मैलापुर, मद्रास-4	1961
5.	कालीपट्नम रामाराव	कालीपट्नम रामा-राव कथलु	आर.के.पब्लिकेशन्स, विशाखपट्नम	1986
6.	के.सभा	नीटिदीपालु	चित्तूरु जिल्ला रचयितल सहकार प्रचरण संघम, चित्तूरु	1981
7.	केतुविश्वनाथ रेड्डी	केतुविश्वनाथ रेड्डी कथलु	विशालान्ध्रा बुक हौस, हैदराबाद।	
8.	कोलकलूरि इनाक	सूर्युडु तलेत्ताडुं	पद्मावती आर्ट प्रिंटर्स, हैदरगुडा, हैदराबाद	1988

1	2	3	4	5
9•	कोलक्लूरि इनाक	उरबावि	ज्योतिग्रंथमाल 129, तपोनगर, अनंतपुरम-515004	1983
10•	पोकोलु सुन्दर रामय्या	मंचिकथा	विशालान्ध्रा, बुक हौस, हैदराबाद	
11•	दुर्गानन्द (सं)	कथावीथि	दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, हैदराबाद ।	1977
12•	डॉ•रामीलिंगम	तेलुगु कथा	साहित्य अकादमी, दिल्ली	1990
13•	डॉ•रामीलिंगम	ओक तरंम तेलुगु कथा	"	1994
14•	नग्नमुनि	विलोमकथलु	विमुक्ति प्रकाशन, एम•एस• 87, मलक्पेट,हैद - 36•	1979
15•	नवीन वासिरेड्डी	तेलंगाना पोराट कथलु	जनसाहिती सांस्कृतिक समाख्या, विजयवाडा	1982
16•	"	तेलुगु कथा (1960-85)	हैदराबाद बुक्स्रेस, 1-1-342 विवेकनगर हैदराबाद	

1	2	3	4	5
17.	नागेश्वर राव रालूरि हितश्री (सं)	नूत्पदहार्लु	कल्याणि पब्लिकेषन्स विजयवाडा	1981
18.	पापिनेनि शिवशंकर	मट्टिगुंडे	विशालान्ध्रा बुक हैदराबाद	1992
19.	पुष्पलनर सिंहम (तेलंगाना अंतरंग कथलु)	मुद्रा	"	
20.	पेद्दिबोटल सुब्ब रामय्या	पेद्दिबोट्ल सुब्बरामय्य कथलु	"	1990
21.	बलिवाड कांताराव	बलिवाड कान्ता राव कथलु	गायत्री प्रिंटर्स, मारुतीनगर, विजयवाडा-4	
22.	बुच्चिबाबु	बुच्चिबाबु कथलु	पल्लवि पब्लिकेषन्स येलूरु रोड, विजय-वाडा - 2	1994
23.	"	नन्नुगुरिचिं कथराय्यु	"	1994
24.	भार्गवीराव (सं)	इंकाना इक्यैसागवु (दलित कहानियाँ)	विशालान्ध्रा बुकहौस हैदराबाद	1994
25.	मुनिपल्लेराजु	मुनिपल्ले राजुकथलु	"	1992
26.	वाकाटिपांडु रंगा राव	'वाकाटुपांडुरंगा राव कथलु'	"	1990

1	2	3	4	5
27•	वाकाटिपांडुरंगा राव और पुराणम सुब्रह्मण्य शर्मा	"कथा भारती " तेलुगु कथा निकलु	नेशनल ट्रस्ट इंडिया	1973
28•	शारदा अशोक वर्धन	शारदा अशोकवर्धन कथलु	विशाख साहिती 6-3-195, न्यूबोय-गूडा, सिकन्द्राबाद	1991
29•	सदानंद शारदा	जाडि	विशालान्ध्रा बुक हौस, हैदराबाद	1987

आलोचनात्मक ग्रन्थ ‖ तेलुगु ‖ :-

1•	बलेकूरि प्रसाद	दलित साहित्यम	दलित स्त्री साहित्य परिषद, विजयवाडा	1993
2•	के•के•रंगानाथाचार्युलु	आधुनिक तेलुगु साहित्यम लो विभिन्न धोरणुलु	आन्ध्रा सारस्वत परिषद, हैदराबाद	1981
3•	कोलकलूरि इनाक	साहित्य व्यासालु	सी•एल•एस; बुकशाप स्टेशन रोड, हैदराबाद	1974
4•	दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा	कथावीथि	दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, हैदराबाद	1976

1	2	3	4	5
5•	पो•यशोधा रेड्डी	कथाचरित्रा	सुधर्मा पब्लिकेषन्स 3-4-574, नारायण-गुडा, हैदराबाद	1989
6•	पुप्पल नरसिंहम (सं)	कथावेदिका	विशालान्ध्रा पब्लि-शिंगहाउस, बैंकस्ट्रीट हैदराबाद - 1	1992
7•	पुराणम् सुब्रह्मण्य शर्मा (लेख संग्रह)	तेलुगु कथा सामाजिक स्पृश	आन्ध्र सारास्वत समिति, मछलीपटनम	1974
8•	पेर्वारमजगन्नाथम (लेख संग्रह)	अभ्युदय कवित्वानंतर धोरणुलु	साहितीबंधु बृंदम, वरंगल्लु	1987
9•	पोरंकि दक्षिणामूर्ति	कथानिका स्वरूप स्वभावालु	विशालान्ध्रा पब्लिशिंग हाउस, बैंकस्ट्रीट, हैदराबाद - 1	1988
10•	मल्लादि सुब्बम्मा (लेख संग्रह)	स्त्रील लैंगिकता लैंगिक स्वेच्छा	स्त्री विमोचना शिक्षण केन्द्रम, 9.एम•ऐ•जी• कालेनी,मेहदीपट्नम, हैदराबाद	1990
11•	मुदिगोंड शिवप्रसाद	उद्यमदर्शनम	रसगंगोत्री 2-2-647/132 बी, सेन्ट्रल एक्सैस कालनी, हैदराबाद	1990

1	2	3	4	5
12.	मेरुव वेंकटेश्वर राव	स्वातंत्र्यानंतरा साहित्यम लो तेलुगु कथा	नोलकमलबुक डिस्ट्रीब्यूटर्स, सुल्तानबजार, हैदराबाद ।	1993
13.	युव भारती (लेख संग्रह)	महति	युवभारती साहित्य सांस्कृतिक संस्था तिलकरोड, हैदराबाद	1972
14.	युव भारती (लेख संग्रह)	ई. दशाब्दमलो तेलुगु साहित्यम	"	1990
15.	वडील सुन्दरेश्वर	नूरेइल साहित्यम लो कोन्नि धोरणुलु हक्पदालु	नवयुगाबुक डिस्ट्रीब्यूटर्स, सुल्तानबजार हैदराबाद	1990
16.	वेदगिरिरामबाबु	कथा सदस्सु कोत्त-वदीलका	विशालान्ध्रा पब्लीशिंग हाउस, बैंकस्ट्रीट, हैदराबाद	1994
17.	वै.रामकृष्ण राव	आधुनिकान्ध्रा साहित्यम लो चैतन्यश्रवन्ती	साहिती सांस्कृतिक संस्था, हैदराबाद	1987

पत्रिकायें (तेलुगु)

1•	अरुणतारा	मासिक	जनवरी, 1981
			मार्च, 1982
			जून, 1982
			जून, 1984, 1986
			अक्तूबर और दिसम्बर 1986
2•	आन्ध्रज्योति	दैनिक	3-1-1991
			14-6-1980
			21-6-1988
			14-6-1988
			6-3-1987
			2-6-1989
3•	आन्ध्र ज्योति	साप्ताहिक	
4•	आन्ध्र प्रभा	दैनिक	31-7-1995
	"	"	13-11-1995
	"	"	6-11-1995
	"	"	28-8-1995
	"	"	5-2-1996
5•	आन्ध्र प्रभा	साप्ताहिक	13-12-1989
	"	"	16-4-1969
6•	ईनाडु	दैनिक	12-2-1989
	"	"	13-5-1990

7.	उदयम	दैनिक	16-6-1988
8.	प्रजातंत्रा	दैनिक	29-1-1978
9.	प्रजासाहिती	मासिक	मार्च, 1979
10.	प्रजासाहिती	मासिक	अगस्त 1982
11.	अभ्युदय	मासिक	जून-अगस्त 1992
12.	सृजना	मासिक	सितम्बर, 1979
			दिसम्बर 1983
			जनवरी 1984
			मई 1984
			मार्च 1985
			अप्रैल 1985
			जनवरी 1985
13.	विशालान्ध्रा	दैनिक	2-4-1961
			16-4-1961
			23-4-1961
			30-4-1961
			7-5-1961
			14-5-1961

इनके अलावा तेलुगु (मासिक), स्त्री स्वेच्छा (मासिक) इंडियाटुडे, वार्ता आदि अनेक पत्रिकाओं में अब भी अनेक लेख निकल रही हैं। साथ-साथ हर महीने अनेक समारोह भी कहानी साहित्य पर हो रहे हैं।

अप्रकाशित शोध प्रबंधों की सूची (हिन्दी)

	कहानीकार का नाम	कहानी का नाम		संकलन
	1	2	3	4
1.	अनिता समर्थ	निराला और तिलक की कहानियाँ सम - सामयिक बोध	हैदराबाद विश्व-विद्यालय	1993
2.	आशाराम	स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी हास्य और व्यंग्य प्रधान कहानियाँ	उस्मानिया विश्वविद्यालय	1987
3.	एच.के.वन्दना	नौवें दशक की कहानियों में यथार्थ	दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा	1991
4.	एम.कृष्णमूर्ति	नई कहानी के बाद कुछ चर्चित कहानियों का विश्लेषण	हैदराबाद विश्व-विद्यालय	1990
5.	एम.सलीम बेग	स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी और तेलुगु कथा साहित्य में युवापीढ़ी का तुलनात्मक अध्ययन	श्री.वेंकटेश्वरा विश्वविद्यालय	1991
6.	एलिजबेत फिलिप	मोहन राकेश की कहानियों के नारी पात्र	हैदराबाद विश्व-विद्यालय	1991

1		2	3	4
7.	कमलजीत कौर	राजेन्द्र यादव की कहानियाँ : परम्परा और प्रयोग	हैदराबाद विश्व-विद्यालय	1993
8.	कुमारी सूर्यदेवर ललिता रानी	हिन्दी और तेलुगु लेखिकाओं की कहानियों का तुलनात्मक अध्ययन [1960 तक]	आन्ध्रा विश्व-विद्यालय	1991
9.	चन्द्रा मुखर्जी	संजीव की कहानियों के पात्रों का समाज मनोवैज्ञानिक अध्ययन	हैदराबाद विश्व-विद्यालय	1993
10.	जी.लक्ष्मी कुमार	राजेन्द्र यादव की कहानियों में नारी का व्यावहारिक सन्दर्भ : नारी चित्रण	हैदराबाद विश्व-विद्यालय	1993
11.	पालेपु सुब्बा राव	ज्ञानरंजन की कहानियों में पारिवारिक जीवन का स्वरूप	हैदराबाद विश्व-विद्यालय	1990
12.	पी. रमाकुमारी	स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी में आधुनिकता बोध	द.भा.हि. प्रचार सभा	19

1		2	3	4
13•	बो•वो•जानको	निर्मलवर्मा को कहानियों का रचना संसार	हैदराबाद विश्व-विद्यालय	1983
14•	मोहम्मद गौसुद्दोन	भीष्मसाहनी की कहानियों में यथार्थ बोध	हैदराबाद विश्व-विद्यालय	1992
15•	मंगला पाठक	उषाप्रियंवदा के कथा साहित्य में स्त्री - पुरुष संबंध	हैदराबाद विश्व-विद्यालय	1989
16•	सी•हेच•सुलोचना देवी	मोहन राकेश और पालगिरि सोमयाजुलु की कहानियों में नारी जीवन	हैदराबादविश्व-विद्यालय	1994
17•	सुभाष दामले	अमृतराय के साहित्य में मार्क्सवादी दृष्टि	द•भा•हिन्दी प्रचार सभा	1988
18•	श्रीमति वीणा सिंहा	स्वातंत्र्योत्तर महिला कहानीकार : नरनारी संबंध	हैदराबाद विश्व-विद्यालय	1980

तेलुगु :

1•	एन•नारायण स्वामी	दशाब्द [1936-45] कथानिकलु:सामाजिक जीवनमु	श्री कृष्णदेवराय विश्वविद्यालय	1993

1		2	3	4
2.	एम.अन्नपूर्णा	तिलक कथानिका साहित्यमःवास्त - विकता	श्री कृष्णदेवराय विश्वविद्यालय	1990
3.	एम.मोहनीपल्ले	तिलक कथ्लु ओक परिशीलना	श्री.वेंकटेश्वरा विश्वविद्यालय	1979
4.	एम.साम्राज्यलक्ष्मी	पालगुम्मिपद्मराजु कथ्लु : परिशीलना	"	1984
5.	एम.माधव रेड्डी	राविशास्त्री कथ्लु : प्रभुत्व यंत्रांगमु	हैदराबाद विश्व-विद्यालय	1989
6.	एस.नागमल्लेश्वर राव	तेलंगाना पोराट कथ्लु : परिशीलना	हैदराबाद विश्व-विद्यालय	1990
7.	के.नागेश्वरा चारी	अल्लमराजय्या कथानु-शीलना	श्री कृष्णदेवराय विश्वविद्यालय	1987
8.	के.श्रीदेवी	ओक दशाब्द [1956-65] कथानिक्लु : सामाजिका जीवनमु	"	1993
9.	केतराजु शारदा	श्री मधुरांतक राजा राम कथ्लु : परि - शीलना	श्री.वेंकटेश्वरा विश्वविद्यालय	1990

1		2	3	4
10.	कंदुकूरि अंजय्या	पेरवंडराजु नवललु : ओकपरिशीलना	हैदराबाद विश्वविद्यालय	1986
11.	पत्रहरि उमाराणि	रावूरि भरद्वाजा मुद्रित डैरोलु : परिशीलना	"	1991
12.	जो.चेन्ना रेड्डी	भूषणम कथलु:परि - शीलना	"	1991
13.	जी.प्रभाकर	इरवय्यारेल्ल तेलुगु कथानिका सामाजिक जोवनम	श्री कृष्णदेवराय विश्वविद्यालय	1994
14.	तंगम मुनि रेड्डी	पालो {धागंटिसोम- याजुलु कथलु : ओक परिशीलना	श्री वेंकटेश्वरा विश्वविद्यालय	1987
15.	डो.वर प्रसाद	कालोपट्नम रामाराव कथलु : सामाजिक विश्लेषण	हैदराबाद विश्वविद्यालय	1989
16.	बो.बी.रेड्डी	समकालोन साहित्यम लो स्त्रीवादम	"	1990
17.	ये.मधुलाति रेड्डी	तेलुगु कथा : ग्रामोण जोविता चित्रणमु	श्री वेंकटेश्वरा विश्वविद्यालय	1993

1		2	3	4
18•	के•विजय लक्ष्मी	श्रीलावीरराजु कथलु : परिशीलना	हैदराबाद विश्वविद्यालय	1992
19•	वी•प्रभाकर रेड्डी	के•सभा साहित्यम : समग्र परिशीलना (शोध प्रबंध)	श्री वेंकटेश्वरा विश्वविद्यालय	1989
20•	वी•प्रभाकर रेड्डी	के सभा कथानिकलु : अनुशीलना (लघु शोध-प्रबंध)	,,	1986
21•	सम्मेट विजया	अब्बूरि छायादेवी कथलु : परिशीलना	विश्वविद्यालय	19
22•	सी•गोविन्दराजु	कलुव कुमार कथलु: परिशीलना	श्री वेंकटेश्वरा विश्वविद्यालय	1979
23•	सी•हेच•किशोर	वारालकृष्णमूर्ति कथलु : सामाजिक व्यूह	हैदराबाद विश्वविद्यालय	1994
24•	श्री मुत्याल निर्मला देवी	कोडवटिगंटि कुटुंबराव साहित्यम: मार्क्सिजम	श्री कृष्णदेवराय विश्वविद्यालय	1989
25•	श्रीमती डी•शारदा देवी	कोडवटिगंटि कुटुंब राव कथानिका : साहित्यानुशीलना	नागार्जुना विश्व-विद्यालय	1993